संक्षिप्त सूरसागर

सूची ।

सूरदास का जीवन-चरित और काव्य।



हिन्दू-धर्म और सभ्यता के इतिहास मे, भारतीय और विशेषतः हिन्दी-साहित्य के इतिहास में, सूरदास का नाम अजर अमर रहेगा। जब तक हमारा राष्ट्रीय जीवन है, जब तक हमारी भाषा का अस्तित्व है, जब तक संसार मे कवित्व-प्रतिभा, सौष्ठव, शब्द-विन्यास और शालीनता का मान है तब तक सूरदास सम्मान, प्रशंसा, श्रद्धा और भक्ति के पात्र रहेगे। अभाग्यवश इनके जीवन की घटनाओं का ठीक ठीक पता नहीं लगता। होमर, शेक्सपियर, वाल्मीकि, कालिदास आदि महाकवियों की तरह उनकी कविता ही उनके मानसिक जीवन का ज्वलन्त चित्र है, शेष अन्धकार मे छिपा हुआ है।

सूरदास का परम्परागत जीवन-चरित।

गोकुलनाथ-कृत चौरासी वार्ता, भक्तमाल और टीकाओं में सूरदास का परम्परागत चरित लेखबद्ध है। कहते हैं कि वह एक निर्धन सारस्वत ब्राह्मण रामदास के पुत्र थे और देहली के पास सीदी गांव मे पैदा हुए थे। जन्म के अन्धे थे। आठ बरस की अवस्था मे इनका जनेऊ हुआ। एक बार अपने माता पिता के साथ वे मथुरा गये, लौटने से इन्कार किया। मा बाप बहुत रोये पीटे पर बालक सूरदास ने कहा कि कृष्ण के सहारे मै यही रहूँगा। अन्त मे एक साधु के यहां रह ही गये। एक दिन वे कुए मे गिर गये और छः दिन तक पड़े रहे। सातवें दिन जब किसी ने निकाला तब यह समझ कर कि साक्षात् श्रीकृष्ण ही है और उनकी बांह पकड़ ली। जब वह छुड़ा कर चलने लगे तब सूरदास बोलेः—

दोहा

बांह छोड़ाये जात हैा निबल जानि कै मोहिं ।
हिरदै सों जब जाइहैा मर्द बदौंगो तोहिं[1] ॥

आगरा और मथुरा के बीच जमना किनारे गऊघाट पर, व्रजभूमि के बिल्कुल मध्य मे, सूरदास रहने लगे और कृष्ण की भक्ति मे अपना जीवन बिताने लगे । सुप्रसिद्ध महाप्रभु, भक्ति-मार्ग के उपदेशक, वल्लभाचार्य के शिष्य हो गये और उनके साथ कृष्ण के लीलागार गोकुल मे श्रीनाथ के मन्दिर मे बहुत दिन तक रहे । वल्लभाचार्य के पुत्र गोस्वामी विट्ठलनाथ से भी इनकी मित्रता होगई । इन्हीं विट्ठलनाथ के पुत्र गोकुलनाथ ने अपनी चौरासी वार्ता में सूरदास का संक्षिप्त चरित लिखा है ।

अष्टछाप ।

वल्लभाचार्य के शिष्यो मे चार प्रधान थे—सूरदास, कुम्भनदास, परमानन्ददास और कृष्णदास । विट्ठलनाथ के शिष्यो में चार प्रधान थे—छीतस्वामी, गोविन्दस्वामी, चतुर्भुजदास और नन्ददास । विट्ठलनाथ ने इन आठों को लेकर अष्टछाप की स्थापना की ।

अन्त समय सूरदास पारासोली चले गये । विट्ठलनाथ जी भी उनसे अन्तिम भेट करने को पहुँचे । किसी ने सूरदास से पूछा कि "आपने अपने गुरु का कोई छन्द क्यो नहीं बनाया ?" महात्मा ने उत्तर दिया कि मेरे सब ही छन्द गुरु जी के हैं । तो भी वल्लभाचार्यजी का एक छन्द तत्काल बनाया.—

"भरोसो दृढ़ इन चरनन केरो ।
श्रीवल्लभनख चन्द छटा बिनु सब जग मांझ अँधेरो ॥
साधन और नही या कलि में जासों होत निबेरो ।
सूर कहा कहि दुविधि आंधरो बिना मोल को चेरो ॥"

---

१ सर जार्ज ग्रियर्सन अपने "हिन्दुस्तान की देशी भाषाओ के इतिहास" (Vernacular Literatures of Hindustan) मे इस दोहे पर मुग्ध हैं यद्यपि उन्होने इसके अर्थ का अनर्थ कर डाला है ।

राधा-कृष्ण का एक और भजन गाते गाते सूरदास की आखों में जल भर आया। गोस्वामीजी ने पूछा कि सूरदासजी! नेत्र की वृत्ति कहां है? सूरदासजी ने कहा:—

खंजन नैन रूप रस माते। अतिसै चारु चपल अनियारे पल पिँजरा न समाते॥ चलि चलि जात निकट स्रवनन के उलटि पलटि ताटङ्क फँदाते। सूरदास अजन गुन पट के नातरु अब उड़ि जाते॥

इतना कह कर सूरदास ने शरीर छोड़ दिया।

एक दूसरा जीवन-चरित।

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने हिन्दी-संसार के सामने एक और प्राचीन लेख रक्खा था, जिसमें सूरदास के जीवन का सर्वथा भिन्न वर्णन किया है। यह सूरदास का ही लिखा कहा जाता है और इस प्रकार है:—

प्रथम ही प्रथ जगाते में प्रगट अद्भुत रूप।
ब्रह्मराव बिचारि ब्रह्मा राखु नाम अनूप॥
पानपय देवी दियो शिव आदि सुर सुख पाय।
कहा दुर्गापुत्र तेरो भयो अति सुख दाय॥
पार पायन सुरन के पितु सहित अस्तुति कीन।
तासु वंश प्रशंस में भौ चंद चारु नवीन॥
भूप पृथ्वी राज दीनों तिन्हैं ज्वाला देश।
तनय ताके चार कीन्हो प्रथम आप नरेश॥
दूसरे गुणचंद तासुत शीलचंद सरूप।
वीरचंद प्रताप पूरण भयो अद्भुत रूप॥
रंतभार हमीर भूपत संग खेलत आप।
तासु वंश अनूप भो हरचंद अति विख्यात॥
आगरे रहि गोपचल मे रहो ता सुत वीर।
पुत्र जनमे सात ताके महाभट गंभीर॥
कृष्णचंद उदारचंद जो रूपचंद सुभाइ।
बुधचंद प्रकाश चौथौ चंद भै सुखदाइ॥

देवचंदप्रबोध संसृत चंद ताको नाम ।
भयो सप्तो नाम सूरज चंद मंद निकाम ॥
सो समर करि साहि सेवक गये विधि के लोक ।
रहो सूरजचंद दृग ते हीन भर भर शोक ॥
परो कूप पुकार काहू सुनी ना संसार ।
सातयें दिन आइ यदुपति कियो आप उधार ॥
दियो चख दै कही शिशु सुनु मांग बर जो चाइ ।
हों कहों प्रभु भगत चाहत शत्रु नाश सुभाइ ॥
दूसरो ना रूप देखों देखि राधा श्याम ।
सुनत करुणासिंधु भाषी एवमस्तु सुधाम ॥
प्रबल दच्छिन विप्र कुल ते शत्रु ह्वै है नास ।
अषित बुद्धि बिचारि विद्यामान माने मास ॥
नाम राखे मोर सूरजदास, सूर, सुश्याम ।
भये अंतर्धान बीते पाछली निशि याम ॥
मोहि पनसो इहै ब्रज की बसे सुख चित थाप ।
थपि गोसाई करी मेरी आठ मध्ये छाप ॥
विप्र प्रथजगात को है भाव भूर निकाम ।
सूर है नँदनंदजू को लयो मोल गुलाम ॥

इसके अनुसार सूरदास चन्दबरदाई के वंशज थे, उनके छः भाई मुसलमानों से युद्ध में मारे गये थे, वह स्वयं अंधे थे, कूए में गिरने पर कृष्ण द्वारा निकाले गये थे, उनका नाम सूरजदास था और अष्टछाप में उनकी स्थापना हुई थी[1] ।

---

१ सूरदास के जीवन के लिए देखिए चैारासी वार्ता, भक्तमाल और उनकी टीकाएँ; सरदार-कृत सूरदास के दृष्टिकूट भारतेन्दु हरिश्चन्द्र के लेख, वेंकटेश्वर प्रेस से प्रकाशित सूरसागर में "श्री सूरदास का जीवन-चरित" शीर्षक राधाकृष्णदास का लेख, मिश्रबन्धुविनोद, मिश्रबन्धु-कृत हिन्दी-नवरत्न ।

निष्कर्ष।

दूसरे जीवन-चरित का कोई ऐतिहासिक आधार नहीं है। उसमे मराठा-विजय का उल्लेख है जो सूरदास के लगभग १०० वर्ष पीछे हुई थी। ऊपर जो पद उद्धृत किया गया है वह १८ वीं शताब्दी में बना होगा और इसलिए अप्रामाणिक है।

परम्परागत जीवन-चरित अत्यन्त संक्षिप्त है पर उससे यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि सूरदास का जन्म एक निर्धन ब्राह्मण-कुल मे देहली के पास हुआ था पर वह बचपन में ही व्रज मे आ बसे और सारे जीवन वहीं रहे। व्रजभाषा पर सूरदास ने जो प्रगाढ़ अधिकार दिखाया है वह भी व्रज-निवास का सूचक है। सूरसागर मे उपदिष्ट भक्ति-मार्ग इस कथन का समर्थन करता है कि सूरदास महाप्रभु वल्लभाचार्य के शिष्य थे। वनस्थली के अपूर्व वर्णन से सिद्ध होता है कि सूरदास वनो मे खूब घूमे थे। समुद्र का उल्लेख उन्होंने इतनी बार किया है, और दो एक स्थान पर सामुद्रिक शोभा का ऐसा चित्र खींचा है कि उनके समुद्र-तट जाने का अनुमान होता है। उस समय साधु-संन्यासी द्वारका, जगन्नाथ, रामेश्वर आदि तीर्थों को जाया ही करते थे। सम्भवत. सूरदास भी गये होंगे। सूरदास के समस्त पद गाने के लिए है। प्रत्येक पद का राग उन्होने लिख दिया है। सम्भवतः वह जयदेव की तरह बड़े गायक थे।

होमर और मिल्टन की तरह सूरदास अधे थे—यह परम्परा से सुनते है। उन्होंने कई स्थानों पर इसका उल्लेख किया है। उदाहरणार्थ.—

.. ...सूर कूर आंधरो मैं द्वार पर्यो गाऊँ.. ......

पर इससे इतना ही सिद्ध होता है कि इस पद के लिखने के समय सूरदास अन्धे थे। प्राकृतिक दृश्य का अनुपम चित्र-चित्रण किसी प्रकार यह नही मानने देता कि वह जन्म से ही अन्धे थे। मिल्टन की तरह अवस्था बढ़ने पर ही वे नेत्रविहीन हो गये थे।

जीवन के किसी समय भी सूरदास गृहस्थ थे—इसका कोई ऐति-हासिक प्रमाण नहीं है पर बाललीला, रासलीला, मानलीला आदि के वर्णन से उनके गृहस्थ रहने का अनुमान अवश्य होता है। आंखें फोड़ने के विषय में जो दन्तकथाएं है वे भी इस अनुमान का समर्थन करती है।

सूरदास का समय।

सूरदास के समय का ठीक ठीक निर्णय अभी तक नहीं हो सका। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र के अनुसार वल्लभाचार्य का समय है १५३५ वि० स०—१५८७ वि० सं० और विट्ठलनाथजी का समय है १५७२ वि० सं०—१६४२ वि० सं०। सूरदास इनके समकालीन थे, अतः उनका समय १५३५ वि० सं०—१६४२ वि० सं० के बीच ठहरता है। अपने गुरु वल्लभाचार्य से वे अवश्य छोटे होंगे, अतः उनका जन्मकाल लगभग १५४५ वि० सं० प्रतीत होता है। अपने एक ग्रन्थ साहित्य-लहरी का संवत् उन्होने इस प्रकार दिया है:—

मुनि पुनि रसन के रस लेख।
दसन गौरी नन्द को लिखि सुबल सम्बत पेख॥
नन्दनन्दन मास छै ते हीन त्रितिया बार।
नन्दनन्दन जनमते हैं बाण सुख आगार॥
तृतिय ऋक्ष सुकर्म्म जोग बिचारि सूर नवीन।
नन्दनन्दनदास हित साहित्यलहरी कीन॥

यह बराबर है अक्षयतृतीया वैशाख सं० १६०७ के॥

सूरसारावली मे वे कहते है:—

गुरु प्रसाद होत यह दरसन सरसठि बरस प्रवीन।
शिव विधान तक करउ बहुत दिन तऊ पार नहिं लीन॥

अर्थात् सूरसारावली सूरदास ने ६७ वर्ष की अवस्था मे बनाई।

---

१. देखिए मिश्रबन्धु-कृत हिन्दी-नवरत्न पृ० १४३

यदि जन्म-संवत् १५४५ मानें तो सारावली का संवत् १६१२ निकलता है। मिश्रबन्धुओं का अनुमान है कि साहित्यलहरी और सूरसारावली लगभग एक समय बनी होगी और इस प्रकार सूरदास का जन्मकाल लगभग १५४० सं० है। पर इससे दृढ अनुमान यह है कि सूरदास जो विट्ठलनाथ के भी समकालीन थे उनके पिता वल्लभाचार्य से कम से कम १० वर्ष छोटे रहे होंगे। साहित्यलहरी दृष्टकूटों का संग्रह है। सूरसारावली सूरसागर का संक्षेप है। यह मानने मे कोई आपत्ति नही है कि सारावली साहित्यलहरी के पीछे बनी।

बाबू राधाकृष्णदास ने लिखा है कि मुझे सूरदास के ८० वर्ष तक जीवित रहने का पक्का प्रमाण मिला है। वह प्रमाण लिखा नही है पर यदि उसे मान ले तो सूरदास का मृत्युकाल लगभग १६२५ वि० सं० ठहरता है।

अनुमान से इतना कह सकते है पर जब तक प्राचीन हस्तलिखित ग्रन्थों के भण्डार मे अधिक खोज न हो तब तक निश्चय-पूर्वक कुछ नही कह सकते। सूरसागर के समान बृहद्ग्रन्थ अनेक वर्षों में बना होगा—यह अनुमान से सिद्ध है। एक स्थान पर वे कहते हैः—

राग धनाश्री।

हरि हौं सब पतितन को राव।
को करि सकै बराबरि मेरी सो तौ मोहिं बताव
ब्याध गीध अरु पतित पूतना तिन मे बढि जो और।
तिनमे अजामेल गणिकापति उनमे मै शिरमौर॥
जहॅ तहॅ सुनियत यहै बड़ाई मो समान नहिं आन।
अब रहे आजु कालि के राजा मै तिनमे सुलतान॥
अबलौं तौ तुम विरद बुलायो भई न मोसों भेंट।
तजौं बिरद कै मोहिं उधारों सूर गही कसि फेंट॥

आगरे मे सुलतानों का राज्य १५२६ ई० तक अर्थात् १५८३ वि०

सं० तक रहा। सम्भवतः इसी समय के लगभग उपर्युक्त पद की रचना हुई होगी।

सूरदास के ग्रन्थ।

सूरदास का प्रधान ग्रन्थ **सूरसागर** कहलाता है। स्वयं सूरदास ने कहा है :—

> श्रीमुख चारि श्लोक दिये ब्रह्मा को समुझाइ।
> ब्रह्मा नारद सों कहे नारद व्यास सुनाइ॥
> व्यास कहे शुकदेव सों द्वादश स्कंध बनाइ।
> सूरदास सोई कहै पद भाषा कर गाइ॥

सूरदास ने सैकड़ों बार नम्रतापूर्वक कहा है कि मैं केवल भागवत के अनुसार कथा कहता हूँ। पर यह कोरा अनुवाद नहीं है। कथा-भाग भागवत से अवश्य लिया गया है। पर उसकी कविता सर्वथा स्वतन्त्र प्रणाली पर हुई है। सूरदास की शैली में जितनी मौलिकता है उतनी शायद ही किसी हिन्दी-कवि में होगी। कहते हैं कि सूरसागर में एक लाख पद हैं पर पूरे पद किसी प्रति में नहीं मिलते। शायद यह किंवदन्ती-मात्र है। असली संख्या दस-पाच हज़ार से अधिक न होगी। इस विषय में भी प्राचीन भंडारों के अनुसधान के बाद ही कुछ निश्चय हो सकेगा। राधाकृष्णदास द्वारा सम्पादित संस्करण में ४०१८ पद हैं। इस ग्रन्थ का सार **सूरसारावली** में है। इस ग्रन्थ के दृष्टकूटों में कुछ और मिला कर **साहित्यलहरी** ग्रन्थ बना है। **पदसंग्रह** और **नागलीला** सूरसागर के केवल भाग हैं। **दशम स्कन्ध टीका** इनकी बनाई हुई नहीं मालूम होती। **ब्याहलो** और **नल-दमयन्ती** भी शायद इनकी रचना नहीं है।

भक्तिमार्ग।

महापुरुषों की शक्ति का रहस्य यह है कि वे अपने युग की प्रबल आकांक्षाओं और आदर्शों के प्राणस्वरूप होते हैं। कबीर, नानक, सूरदास और तुलसीदास, अपने अपने ढंग पर, उस भक्तिस्रोत के प्रतिनिधि थे जो १५ वीं और १६ वीं सदी में तीव्र वेग से देश में बह रहा था। भक्ति का तत्त्व है परमात्मा से प्रेम, प्रेम में तल्लीनता और आत्म-समर्पण। भक्त विश्वास करता है कि परमात्मा मेरी भक्ति को स्वीकार करेगा। आन्तरिक भक्ति के सिवा अन्य कर्म-कांड, तीर्थ, मूर्तिपूजा, दान-तर्पण आदि को भक्त व्यर्थ, तुच्छ या गौण समझता है। भक्ति का भाव कोई नया भाव न था। सामवेद ने भक्ति की महिमा गाई है। भगवद्गीता का उपदेश है कि जीवन को परमेश्वर को समर्पण कर दो। बौद्ध-धर्म का महायान पन्थ बुद्ध भगवान् की भक्ति के आधार पर स्थिर है। जैन धर्म भी तीर्थङ्करों की भक्ति पर ज़ोर देता है। पुराण भी भक्ति-भाव से ख़ाली नहीं है। श्रीमद्भागवत ने इस प्रकार भक्ति को सब ज्ञान, कर्म, तप, व्रत, तीर्थ, योग, यज्ञ आदि पर प्रधानता दी है:—

न प्रेतो न पिशाचो वा राक्षसो वा सुरोपि वा।
भक्तियुक्तमनस्कानां स्पर्शने न प्रभुर्भवेत् ॥१७॥
न तपोभिर्न वेदैश्च न ज्ञानेनापि कर्मणा।
हरिर्हि साध्यते भक्त्या प्रमाणं तत्र गोपिकाः ॥१८॥
नृणां जन्मसहस्रेण भक्तौ प्रीतिर्हि जायते।
कलौ भक्तिः कलौ भक्तिर्भक्त्या कृष्णः पुरः स्थितः ॥१९॥
भक्तिद्रोहकरा ये च ते सीदन्ति जगत्त्रये।
दुर्वासा दुःखमापन्न. पुरा भक्तिविनिन्दकः ॥२०॥
अलं व्रतैरलं तीर्थैरलं योगैरलं मखैः।
अलं ज्ञानकथालापैर्भक्तिरेकैव मुक्तिदा ॥२१॥

श्रीमद्भागवत-माहात्म्य अध्याय २ ॥

अस्तु, भक्ति की यह धारा प्राचीन समय से देश में बह रही थी।

मुसल्मान धर्म में भक्ति।

मुसलमानों के आने पर इस धारा ने मुसलमान भक्ति-मार्ग की धारा से संगम किया। मुहम्मद ने उपदेश दिया था कि परमेश्वर एक है। परमेश्वर के प्रेम में मुहम्मद मस्त हो जाता था। आठवीं सदी में खुरासान आबू मुस्लिम आदि संत परमेश्वर के प्रेम मे ऐसे तल्लीन हो गये कि अपने को ही परमेश्वर समझने लगे। परमेश्वर को उन्होंने इस तरह अपना लिया था, परमेश्वर को ऐसा आत्म-समर्पण कर दिया था, परमेश्वर में ऐसे तल्लीन हो गये थे कि भेद-भाव ही मिट गया था। फ़ारस के धुनिया संत हल्लाज ने इस भक्ति-मार्ग को सुव्यवस्थित करके सूफ़ी धर्म का रूप दे दिया। प्रेम में मस्त होकर वह चिल्लाता था कि मैं सत्य हूँ अर्थात् परमेश्वर हूँ, जो वैदान्तिक 'तत्त्वमसि' का स्मरण दिलाता है। हल्लाज लिखता है कि जो कोई तप से अपनी आत्मा को पवित्र कर लेता है, जो कोई सांसारिक कामनाओं से मुक्त हो जाता है वही परमात्मा का स्थान है। उसमे परमेश्वर की आत्मा प्रवेश करती है। जो इस आध्यात्मिक गति को प्राप्त हो गया उस के सब कर्म परमेश्वर के कर्म हैं, वह जो चाहता है, वही होता है। सुप्रसिद्ध मुसलमान विद्वान् और आध्यात्मिक उपदेशक अलग़ज़ाली के समय तक सूफ़ी धर्म सारे इस्लामिक संसार मे फैल गया था। सूफ़ीधर्म वेदान्त और भक्ति-मार्ग का सम्मिश्रण है, परमेश्वर को सर्वव्यापी मानता है और उसकी भक्ति का उपदेश देता है। कुछ सूफ़ी महन्तों का दावा था कि हम परमेश्वर मे मिल गये हैं; परमेश्वर को हमने अपनी आँखों से देखा है; परमेश्वर से हमने वार्तालाप किया है। अपने लेखों मे "हम ऐसा कहते हैं" के स्थान पर वह "परमेश्वर ऐसा कहते है" लिखते है। इस्लाम का वचन है "परमेश्वर की प्रशंसा हो"। इसके बजाय आबू

यज़ीद विस्तामी कहते है "मेरी प्रशंसा हो"। फ़ारस के सूफ़ियों का आदर्श था कि हम 'फ़ना' हो जायँ अर्थात् परमेश्वर के सिवा हमे और कुछ न दीखे, और न कुछ अनुभव हो, हमारे ज्ञान और कर्म सब परमात्मध्यान के समुद्र में मिल जावें।

हिन्दू और मुसलमान भक्ति-मार्ग का मिलाप।

इस प्रकार के सूफ़ी विचार भारतवर्ष मे मुसलमानों के साथ आये। यह समझना भूल है कि यहां मुसलमान लोग हिन्दूधर्म पर अत्याचार ही करते रहे और हिन्दुओ को ज़बरदस्ती मुसलमान बनाते रहे। कुछ दिन उन्होने अवश्य ऐसा किया पर अनुभव ने उन्हे शीघ्र ही जता दिया कि हिन्दू-धर्म का नाश असम्भव है। हिन्दू-सभ्यता से केवल द्रोह करने से काम न चलेगा; समझौता करना पड़ेगा। दूसरे, मुसलमान उतने असहनशील न थे जितना इतिहासकारों ने दिखाया है। १२ सौ वर्ष से ईसाई और मुसलमान जातियों मे ऐसा घोर विद्वेष और संग्राम रहा है कि दोनों ने एक दूसरे के गुणो को भूल कर अवगुणो को खुर्दबीन से देख कर सौ गुना बढ़ा दिया है। ईसाई इतिहासकारों ने मुसलमानों का जो चित्र खींचा है वह सर्वथा सत्य नहीं है। क़ुरान के कुछ पदो मे तलवार से धर्म-प्रचार करने का आदेश अवश्य है पर अन्यत्र विश्वव्यापक प्रेम का आदेश है। न पहले आदर्श का अक्षरशः पालन हुआ और न दूसरे का। छोटे एशिया और स्पेन मे मुसलमानों ने तद्देशीय सभ्यता को नाश करना तो दूर रहा, उल्टा अपनाया और उन्नत किया। यूरोपीय सभ्यता के इतिहास में स्पेनवासी मुसलमान मूरों का नाम अमर रहेगा, उन्होंने अन्धकार के समय यूरुप मे ज्ञान का प्रकाश फैलाया, उन्होंने अरस्तू आदि यूनानी तत्ववेत्ताओ के पठन पाठन का क्रम फिर से जारी किया, उन्होने सबसे पहले विश्वविद्यालय स्थापित किये जहा सैकड़ों ईसाई विद्यार्थियों ने शिक्षा पाई। १२ वीं और १३ वीं सदी में क्रूसेड नामक जो धर्म युद्ध ईसाई योरप

और सल्जुक तुर्की साम्राज्य में हुए थे वह योरप मे बहुत सी नई चीज़े और बहुत से नये विचार ले गये।

७१२ ई० में मुहम्मद बिन क़ासिम ने सिंध पर हमला किया और युद्ध में बर्बरता से काम लिया। पर विजय होने पर सिंध मे शासन-व्यवस्था करते समय उसने हिन्दुओं की धार्मिक आचार-विचार पूजापाठ की स्वतन्त्रता में कोई हस्तक्षेप नहीं किया। ११ वीं सदी में महमूद ग़ज़नवी ने धन के लालच से हिन्दू मन्दिरों को लूटा और मूर्तियों को तोड़ा पर हिन्दुओं मे इस्लाम का प्रचार करने की उसने कोई परवा न की। १३ वीं सदी के मुसलमान राजाओं ने हिन्दुओं पर अनेक अत्याचार किये पर उन्हें शीघ्र ही मालूम होगया कि संसार की कोई शक्ति प्राचीन भारतवर्षीय सभ्यता को नाश नहीं कर सकती। उल्टे मुसलमानो पर हिन्दुओ का प्रभाव पड़ने लगा। पन्द्रहवीं सदी में धार्मिक अत्याचार का एक प्रकार से अन्त होगया। बाद को औरङ्गज़ेब आदि कई राजाओं ने पुरानी असहनशील नीति को पुनरुज्जीवित करने का उद्योग किया पर उनको सफलता नहीं हुई; उल्टी हानि उठानी पड़ी। हिन्दू मुसलमान एक साथ रहना सीख गये, एक दूसरे से शिक्षा लेने लगे, एक दूसरे की कमी को पूरा करने लगे। बहुत से हिन्दुओं ने फ़ारसी और अरबी पढ़ी, बहुत से मुसलमानों ने संस्कृत और हिन्दी पढ़ी। हिन्दू वेदान्त और योग ने मुसलमानों पर बहुत असर डाला। मुसलमान अद्वैतवाद ने हिन्दुओं पर बहुत असर डाला।

दो सभ्यताओं के सम्पर्क से बहुधा नये आन्दोलन उत्पन्न होते हैं अथवा पुराने आन्दोलन नया रूप धारण करते हैं। १५ वीं सदी मे सूफ़ीमत की बड़ी उन्नति हुई और हिन्दुओं में एक परमेश्वरवाद और भक्ति-मार्ग का प्राबल्य हुआ। यों तो वेदान्त के श्रीभाष्य के रचयिता श्रीरामानुजाचार्य ने ११ वीं सदी में ही दक्षिण मे भक्ति का उपदेश दिया था पर दक्षिण में विशुद्ध भक्ति-मार्ग का बहुत प्रचार न हुआ। रामानुजाचार्य के शिष्य हुए देवाचार्य; उनके हुए हरिनन्द, उनके राघवा-

नन्द और उनके रामानन्द। रामानन्द ने दक्षिण से आकर उत्तर में भक्ति-मार्ग का प्रचार किया अथवा यों कहिए कि प्रचार में सहायता दी। भक्ति की महिमा गाते हुए वे कहते हैं कि नीच से नीच मनुष्य भी भक्ति के सहारे परमपद को पहुँच सकता है, पहुँचे हुए भक्तिमार्गियों के लिए मूर्तिपूजा आदि की कोई आवश्यकता नहीं है। संस्कृत को छोड़ कर रामानन्द ने, सर्वसाधारण के हित के लिए, भाषा में उपदेश दिया।

कबीर।

रामानन्द के शिष्य मुसलमान जुलाहे कबीर ने भक्ति-सिद्धान्त को और भी बढ़ाया। कबीर ने हिन्दी-साहित्य की इतनी उन्नति की और अपने समकालीन एवं आगामी सुधारकों और कवियों पर इतना प्रभाव डाला कि उनके उपदेश को समझना आवश्यक है। परमेश्वर से प्रेम—बस यह बड़ी बात है। प्रेम कैसा होना चाहिए:—

साखी

यह तो घर है प्रेम का, खाला का घर नाहिं।
सीस उतारै भुइँ धरै, तब पैठे घर माहिं॥
सीस उतारै भुँइ धरै, ता पर राखै पांव।
दास कबीरा यों कहै, ऐसा होय तो आव॥
प्रेम न बाड़ी ऊपजै, प्रेम न हाट बिकाय।
राजा परजा जेहि रुचै, सीस देइ लै जाय॥
प्रेम पियाला जो पियै, सीस दच्छिना देय।
लोभी सीस न दे सकै, नाम प्रेम का लेय॥
प्रेम पियाला भरि पिया, राचि रहा गुरु ज्ञान।
दिया नगारा सबद का, लाल खड़े मैदान॥
छिनहिं चढ़ै छिन ऊतरै, सो तो प्रेम न होय।
अघट प्रेम पिंजर बसै, प्रेम कहावै सोय॥

प्रेम प्रेम सब कोइ कहै, प्रेम न चीन्है कोय।
आठ पहर भीना रहै, प्रेम कहावै सोय॥
जा घट प्रेम न संचरै, सो घट जानु मसान।
जैसे खाल लोहार की, सांस लेत बिन प्रान॥
प्रेम तो ऐसा कीजिए, जैसे चन्द चकोर।
घीच टूटि भुइँ मां गिरै, चितवै वाही ओर॥
अधिक सनेही माछरी, दूजा अल्प सनेह।
जबहीं जल तें बीछुरै, तबही त्यागे देह॥
जहां प्रेम तहँ नेम नहिँ, तहां न बुधि व्यौहार।
प्रेम मगन जब मन भया, तब कौन गिनै तिथि बार॥
प्रेम भाव इक चाहिये, भेष अनेक बनाय।
भावे गृह में बास कर, भावे बन मे जाय॥
जोगी जंगम सेवड़ा, संन्यासी दुरवेस।
बिना प्रेम पहुँचै नहीं, दुरलभ सतगुरु देस॥
जब लगि मरने से डरै, तब लगि प्रेमी नाहिँ।
बड़ी दूर है प्रेम घर, समुझि लेहु मन माहिँ॥
प्रेम भक्ति का गेह है, ऊँचा बहुत इकंत।
सीस काटि पग तर धरै, तब पहुँचै घर संत॥
परमेश्वर से विरह जीव को व्याकुल कर देता है।

साखी।

बिरहिन देइ सँदेसरा, सुनो हमारे पीव।
जल बिन मच्छी क्यों जिये, पानी मे का जीव॥
बिरह तेज तन में तपै, अंग सबै अकुलाय।
घट सूना जिव पीव मे, मौत ढूँढ़ि फिर जाय॥
बिरह जलंती देखि कर, साँईं आये धाय।
प्रेम बूँद से छिरकि के, जलती लई बुझाय॥

अँखियन तो झाईं परी, पंथ निहार निहार।
जिभ्या तो छाला परा, नाम पुकार पुकार ॥
नैनन तो झरि लाइया, रहट बहै निसु बास।
पपिहा ज्यों पिउ पिउ रटै, पिया मिलन की आस ॥
बिरह बड़ो बैरी भयो, हिरदा धरै न धीर।
सुरत-सनेही ना मिलै, तब लगि मिटै न पीर ॥

बिरहिन ऊभी पंथ सिर, पंथिनि पूछै धाय।
एक सबद कहु पीव का, कब रे मिलैंगे आय ॥
बहुत दिनन की जोवती, रटत तुम्हारो नाम।
जिव तरसै तुव मिलन को, मन नाहीं बिस्राम ॥
बिरह भुवंगम तन डसा, मंत्र न लागै कोय।
नाम बियोगी ना जियै, जिये तो बाउर होय ॥

बिरह भुवंगम पैठि कै, किया कलेजे घाव।
बिरहिन अंग न मोड़िहै, ज्यों भावै त्यों खाव ॥
बिरहा पीव पठाइया, कहि साधू परमोधि।
जा घट तालाबेलिया, ता को लावो सोधि ॥
कबीर सुन्दरि यों कहै, सुनिये कंत सुजान।
बेगि मिलो तुम आइ के, नहीं तो तजिहौ प्रान ॥

कै बिरहिन को मीच दे, कै आपा दिखलाय।
आठ प्रहर का दाझना, मो पै सहा न जाय ॥
बिरह कमंडल कर लिये, बैरागी दो नैन।
माँगैं दरस मधूकरी, छके रहैं दिन रैन ॥

येहि तन का दिवला करौं, बाती मेलौं जीव।
लोहू सींचौं तेल ज्यों, कब मुख देखौं पीव ॥
नैन हमारे बावरे, छिन छिन लोड़ैं तुज्झ।
ना तुम मिलो न मैं सुखी, ऐसी बेदन मुज्झ ॥

अँखिया प्रेम बसाइया, जनि जाने दुखदाय।
नाम सनेही कारने, रो रो रात बिताय ॥
हिरदे भीतर दव बलै, धुवा न परगट होय।
जा के लागी सो लखै, की जिन लाई सोय ॥

परमेश्वर के **नाम** की महिमा अपरम्पार है :—

साखी

आदि नाम पारस अहै, मन है मैला लोह।
परसत ही कंचन भया, छूटा बंधन मोह ॥
आदि नाम बीरा अहै, जीव सकल ल्यौ बूझि।
अमरावै सतलोक लै, जम नहिँ पावै सूझि ॥
आदि नाम निज सार है, बूझि लेहु सो हंस।
जिन जान्यो निज नाम को, अमर भयो सो बंस ॥
आदि नाम निज मूल है, और मन्त्र सब डार।
कह कबीर निज नाम बिनु, बूडि मुआ संसार ॥
कोटि नाम संसार में, ता तें मुक्ति न होय।
आदि नाम जो गुप्त जप, बूझै बिरला कोय ॥२॥
कोटि करम कटि पलक में, जो रंचक आवै नाँव।
जुग अनेक जो पुन्न करि, नहीं नाम बिनु ठाँव ॥
नाम लिया जिन सब लिया, सकल बेद का भेद।
बिना नाम नरकै परा, पढ़ता चारो बेद ॥
पारस रूपी नाम है, लोहा रूपी जीव।
जब जा पारस भेटिहै, तब जिव होसी सीव ॥

परमेश्वर के **स्मरण** से कल्याण होता है:—

साखी।

सुमिरन से सुख होत है, सुमिरन से दुख जाय।
कह कबीर सुमिरन किये, साईं माहिँ समाय ॥

राजा राना राव रंक, बड़ा जो सुमिरै नाम।
कह कबीर बड्डो बड़ा, जो सुमिरै निःकाम॥
सुमिरन की सुधि यो करौ, जैसे कामी काम।
एक पलक बिसरै नहीं, निसु दिन आठो जाम॥
सुमिरन की सुधि यो करौ, ज्यो गागर पनिहार।
हालै डोलै सुरति मे, कहै कबीर बिचार॥
सुमिरन की सुधि यों करौ, ज्यो सुरभी सुत माहिं।
कह कबीर चारा चरत, बिसरत कबहूँ नाहिं॥
सुमिरन की सुधि यो करौ, जैसे दाम कँगाल।
कह कबीर बिसरै नहीं, पल पल लेहि सम्हाल॥
सुमिरन से मन लाइये, जैसे नाद कुरग।
कह कबीर बिसरै नहीं, प्रान तजै तेहि संग॥
सुमिरन से मन लाइये, जैसे दीप पतंग।
प्रान तजै छिन एक में, जरत न मोड़ै अग॥
सुमिरन से मन लाइये, जैसे कीट भिरंग।
कबीर बिसरै आप को, होय जाय तेहि रंग॥
ज्ञान कथै बकि बकि मरै, कोई करै उपाय।
सतगुरु हम से यो कह्यो, सुमिरन करो समाय॥
कबीर सुमिरन सार है, और सकल जंजाल।
आदि अंत मधि सोधिया, दूजा देखा ख्याल॥

शब्द और सामर्थ्य।

कबीर ने शब्द की भी महिमा खूब गाई है[1] और ईश्वर की सामर्थ्य कहते कहते कवित्व-प्रतिभा का परिचय दिया है[2]।

---

१ कबीर-साखी-संग्रह पृष्ठ १०२-६

२ कबीर-साखी-संग्रह पृष्ठ ११३-१४

अवतार और मूर्तिपूजा का खंडन ।

अवतारो मे कबीर को विश्वास न था। मूर्तिपूजा को वे हेय समझते थे और मंदिर मस्जिद को भी थोथा जंजाल।

साखी

पाहन पूजे हरि मिलै, तौ मै पुजूँ पहार।
ता तें यह चाकी भली, पीसि खाय संसार ॥
मूरति धरि धन्धा रचा, पाहन का जगदीस।
मोल लिया बोलै नहीं, खोटा बिस्वा बीस ॥
पाथर ही का देहरा, पाथर ही का देव।
पूजनहारा आंधरा, क्योंकरि मानै सेव ॥
पाहन पानी पूजि कै, सेवा जासी बाद।
सेवा कीजै साध की, सत्तनाम करु याद ॥
पाथर लै देवल चुना, मोटी मूरति माहिं।
पिंड फूटि परबस रहै, सो लै तारै काहि ॥
कबीर दुनिया देहरे, सीस नवावन जाय।
हिरदे माही हरि बसै, तू ताही लौ लाय ॥
मन मथुरा दिल द्वारिका, काया कासी जान।
दस द्वारे का देहरा, ता में जोति पिछान ॥
कांकर पाथर जोरि के, मसजिद लई चुनाय।
ता चढ़ि मुल्ला बांग दे, क्या बहिरा हुआ खुदाय ॥
मुल्ला चढ़ि किलकारिया, अलख न बहिरा होय।
जेहि कारन तू बांग दे, सो दिलही अंदर जोय ॥
तुर्क मसीते हिन्दू देहरे, आप आप को धाय।
अलख पुरुष घट भीतरे, ता का द्वार न पाय ॥
पूजा सेवा नेम ब्रत, गुड़ियन का सा खेल।
जब लगि पिव परसै नहीं, तब लगि संसय मेल ॥

कबीर के मत में तीर्थ और व्रत इत्यादि भी कोरे आडम्बर है।

साखी

जप तप दीखै थोथरा, तीरथ व्रत बिस्वास।
सूआ सेभल सेइ कै, फिर उड़ि चला निरास॥
तीरथ व्रत बिष बेलरी, सब जग राखा छाय।
कबीर मूल निकंदिआ, कौन हलाहल खाय॥
तीरथ व्रत करि जग मुआ, जूड़े पानी न्हाय।
सत्त नाम जाने बिना, काल जुगन जुग खाय॥
न्हाये धोये क्या भया, जो मन का मैल न जाय।
मीन सदा जल मे रहै, धोये बास न जाय॥
और धरम सब करम हैं, भक्ति धरम नि.कर्म।
नदिया हत्यारी अहै, कुवा बावड़ी भर्म॥
बहुत दान जो देत है, करि करि बहुतै आस।
काहू के गज होहिंगे, खइहै सेर पचास॥

यज्ञोपवीत, सुन्नत, छुआछूत का खण्डन।

इसी प्रकार हिन्दुओं के यज्ञोपवीत और मुसलमानों के सुन्नत की घोर निन्दा की गई है, छुआछूत का भेद गर्हणीय ठहराया गया है। संसार को भ्रम में डालनेवाले पण्डित और मुल्लाओं की भी बेतरह ख़बर ली गई है—

साखी

बाम्हन गदहा जगत का, तीरथ लादा जाय।
जजमान कहै मै पुन किया, वह मिहनत का खाय॥
बाम्हन ते गदहा भला, आन देव ते कुत्ता।
मुल्ला तें मुरगा भला, सहर जगावै सुत्ता॥
कबीर बाम्हन की कथा, सो चोरन की नाव।
सब अंधे मिलि बैठिया, भावै तहँ लै जाव॥

कबीर बाम्हन बूड़िया, जनेऊ केरे जोरि।
लख चौरासी मांगि लइ, सतगुरु सेती तोरि॥
कलि का बाम्हन मसखरा, ताहि न दीजै दान।
कुटुम्ब सहित नरकै चला, साथ लिया जजमान॥
पंडित और मसालची, दोनों सूझै नाहिं।
औरन को करैं चांदना, आप अँधेरे माहिं॥

भाषा का पक्षपात।

मातृभाषा को छोड़ कर जो संस्कृत का आश्रय लेते है वे भी कबीर के कोप से नही बचे हैः—

साखी

संस्कृतहिं पंडित कहै, बहुत करै अभिमान।
भाषा जानि तरक करै, ते नर मूढ़ अज्ञान॥
संस्किरत संसार मे, पंडित करै बखान।
भाषा भक्ति दृढावही, न्यारा पद निरबान॥
संसकिरत है कूप जल, भाषा बहता नीर।
भाषा सतगुरु सहित है, सत मत गहिर गँभीर॥

पंडितों और मुल्लाओं के स्थान पर कबीर ने सद्गुरु की स्थापना की। **गुरु-महिमा** ने कबीर के समय से बड़ा बल पाया। ऊपर परमेश्वर के प्रेम और विरह के सम्बन्ध में जो साखियां उद्धृत की है वे गुरु के प्रेम और विरह मे भी लागू है। कहीं तो गुरु को परमेश्वर से भी बढ़ा दिया है।

गुरु गोबिंद दोऊ खड़े, काके लागौं पाय।
बलिहारी गुरु आपने, जिन गोबिंद दियो बताय॥
बलिहारी गुरु आपने, घड़ि घड़ि सौ सौ बार।
मानुष से देवता किया, करत न लागी बार॥
लाख कोस जो गुरु बसै, दीजै सुरत पठाय।
सबद तुरी असवार है, पल पल आवै जाय॥

जो गुरु बसै बनारसी, सिष्य समुन्दर तीर ।
एक पलक बिसरै नहीं, जो गुन होय सरीर ॥
सब धरती कागद करूँ, लेखनि सब बनराय ।
सात समुँद की मसि करूँ, गुरु गुन लिखा न जाय ॥
गुरु मानुष करि जानते, ते नर कहिये अंध ।
महा दुखी संसार में, आगे जम के बंध ॥
भवसागर जल बिष भरा, मन नहिं बाधै धीर ।
सबल सनेही गुरु मिला, उतरा पार कबीर ॥

इसी प्रकार सैकडों साखियों और शब्दो मे सद्गुरु की महिमा गाकर पाखंडी गुरु को धिक्कारा है । शिष्यों को सद्मार्ग मे रखने के लिए **सत्सङ्गति** का उपदेश दिया है ।

सत्संग ।

कबीर संगत साध की, जौ की भूसी खाय ।
खीर खाड़ भोजन मिलै, साकट संग न जाय ॥
कबीर संगत साध की, ज्यों गधी का बास ।
जो कछु गधी दे नहीं, तौ भी बास सुबास ॥
ऋद्धि सिद्धि मागौं नहीं, मांगौं तुम पै येह ।
निसु दिन दरसन साध का, कह कबीर मोहिं देय ॥
राम बुलावा भेजिया, दिया कबीरा रोय ।
जो सुख साधू संग मे, सो बैकुंठ न होय ॥
जा पल दरसन साधु का, ता पल की बलिहारि ।
सत्त नाम रसना बसै, लीजै जनम सुधारि ॥
ते दिन गये अकारथी, संगति भई न संत ।
प्रेम बिना पसु जीवना, भक्ति बिना भगवंत ॥
एक घड़ी आधी घड़ी, आधी हू से आध ।
कबीर संगति साध की, कटै कोटि अपराध ॥

कुसंग की वैसी ही घोर निन्दा की है।

तत्पश्चात् कबीर ने काम, क्रोध, लोभ, मोह, मान इत्यादि को छोड़ने का उपदेश दिया है, शील, क्षमा, सन्तोष, धीरज, दीनता, दया, सत्य, विचार, विवेक इत्यादि सद्गुणों को ग्राह्य बताया है[1]।

रैदास, धना, सेन, पीपा, धरमदास।

अपने गुरु-भाइयों पर अर्थात् रामानन्द के अन्य शिष्य रैदास चमार, धना जाट, सेन नाई, राजा पीपा पर कबीर का बड़ा प्रभाव पड़ा। उनमे कबीर की प्रतिभा नही है पर उनके पदों और भजनों में कबीर के भाव, विचार और आदर्श बराबर झलकते है। कबीर के प्रधान शिष्य धरमदास ने भी भक्तिपूर्वक गुरु का अनुकरण किया है[2]।

इस सुधार-परम्परा का प्रवाह नानक की रचना में सतत स्मरणीय महत्त्व पाता है। नानक के भजनों मे वही एकेश्वरवाद है, भक्ति अर्थात् सुमिरन, शब्द, नाम—सद्गुरु, सत्सङ्ग की वही महिमा है, जप तप,

---

१ कबीर के जीवन और उपदेश के लिए देखिए कबीरकसौटी, बीजक (जिसके अनेक संस्करण प्रकाशित हुए है), कबीरसाखीसंग्रह (बेल्वेडियर प्रेस, प्रयाग), अयोध्यासिंह उपाध्याय द्वारा सङ्कलित कबीर-वचनावली। सिक्खों के आदिग्रन्थ में कबीर के बहुत से भजन दिये हुए हैं। बेल्वेडियर प्रेस द्वारा प्रकाशित कबीरशब्दावली के अधिकांश शब्द कबीर के नही हैं। वेङ्कटेश्वर प्रेस द्वारा प्रकाशित बोधसागर के, पहले भाग को छोड़ कर, शेष भागों की रचना भी कबीर की नहीं है। राजपूताना मे कई सज्जनों के पास कबीर की बहुत सी अप्रकाशित रचना मौजूद है।

२ पद उद्धृत करने के लिए यहा स्थान नहीं है। जिज्ञासु आदि-ग्रन्थ, रैदास की बानी, धरमदास की बानी, नाभाजी का भक्तमाल एवं अन्य भक्तमाल देखें।

तीर्थव्रत, मूर्तिपूजा, पुरोहितगीरी, कुसङ्ग आदि का वही खंडन है जो हम कबीर के ग्रन्थ में देख चुके है। नानक के शिष्य अङ्गद के विषय मे भी यही कहा जा सकता है[१]। दादूदयाल का भी यही हाल है[२]।

ईसवी पन्द्रहवीं सदी और सोलहवीं सदी के कुछ वर्षों तक भक्ति-मार्ग का यह क्रम रहा। एक-निराकार परमेश्वर की भक्ति, गुरु की भक्ति, सदाचार—यही दुन्दुभी बजती रही।

भक्तिमार्ग में परिवर्तन।

पर निराकार की पूजा भावुक जनता को सन्तोष नहीं देती। बुद्ध भगवान् ने ईश्वर को नही माना पर उनके अनुयायियों ने उनको ही ईश्वर बना कर पूजा है। जैनधर्म किसी को सृष्टि का कर्त्ता हर्ता नही मानता पर जैनी साकार तीर्थङ्करों को परमेश्वर के समान पूजते है। मुसलमानों के यहाँ परमेश्वर पृथ्वी पर अवतार नही ले सकता पर वे पैगम्बर मुहम्मद की भक्ति करते है। बहुत से मुसलमान साकार पीरों को पूजते है। ईसाइयों ने तो ईसामसीह को परमेश्वर के पद तक पहुँचा दिया है। रोमनकैथलिक ईसाई आज भी मरियम और अनेक सन्त महन्तों को मानते और पूजते है। देहान्त के कुछ वर्ष बाद कबीर और नानक साहब भी अपने शिष्यो की कल्पना मे परब्रह्म के अवतार हो गये। बात यह है कि मानवी हृदय अपने देवता से निकट सन्निकर्ष चाहता है, अपने ध्येय को अपने पास बुलाना चाहता है। मानवी आत्मा प्रेम के लिए लालायित है, प्रेम के लिए तड़पता है, परमेश्वर को भी प्रेमी समझता है। यदि परमेश्वर प्रेमी है तो उसे सातवें आसमान से उतर कर प्रेमपात्र के पास आकर प्रेमी की तरह रहना चाहिए। उद्धव के द्वारा निराकार की भक्ति और योग का सँदेशा पाकर गोपियों ने दोनों की ही दिल्लगी उड़ा दी।

---

१ नानक और अङ्गद के लिए देखिए आदि-ग्रन्थ।

२ देखिए दादूदयाल की बानी।

मानवी हृदय की प्रेम-पिपासा ने प्रत्येक निराकारी मत को कुछ साकार रूप दे दिया है। १५ वी सदी के जिस भक्ति का निरूपण ऊपर हुआ है वह १६ वीं सदी मे कुछ बदल गया। निराकार परमेश्वर के स्थान पर साकार परमेश्वर की भक्ति प्रचलित हुई। यह अभिप्राय नही है कि पन्द्रहवीं सदी मे साकार भक्ति नहीं थी अथवा १६ वीं मे निराकार भक्ति का सर्वथा लोप हो गया। हमारा अर्थ केवल यह है कि एक समय मे एक प्रवृत्ति प्रबल थी, दूसरे समय मे दूसरी प्रवृत्ति। यों तो सैकडों वर्ष पहले पुराणों मे अवतारों का सिद्धान्त प्रतिपादित हो चुका था पर १६ वीं सदी मे इसका विशेष प्राबल्य हुआ। भक्ति का विश्लेषण कुछ अस्वाभाविक सा मालूम होता है पर आचार्यों ने पांच भाव माने हैः—शान्त, दास, वात्सल्य, सख्य और शृङ्गार। तुलसीदास में दासभाव है, सूरदास मे वात्सल्य, सख्य और शृङ्गार-भाव है।

एक और परिवर्तन भक्तिमत मे हुआ। सब नये पन्थो पर सनातन-धर्म का प्रभाव थोड़े दिन में अवश्य पड़ता है। कबीर और कबीर के समकालीन उपदेशकों ने सनातन-धर्म के देवी-देवता, तीर्थ-व्रत इत्यादि का निराकरण किया था पर आगामी सदी मे भक्तिमार्ग ने उनका ग्रहण कर लिया। अतएव भक्तिमार्ग के एकेश्वरवाद मे कुछ अन्तर पड़ गया। अब अधिकांश भक्तिपन्थावलम्बी यह मानने लगे कि परमेश्वर तो एक है, सर्वोपरि है पर अनेक देवी-देवता भी हैं जिनकी पूजा मनुष्य के ऐहिक और पारलौकिक सुख को बढ़ा सकती है। परमेश्वर की भक्ति धर्म का प्रधान अङ्ग है। पूर्ण भक्त को और कोई साधन न चाहिए पर अपूर्ण भक्तो को परमात्म-भक्ति के साथ तीर्थ, व्रत, जप, तप आदि का भी अवलम्बन हानिकर नहीं है।

१५ वीं सदी का भक्तिमार्ग एक निराकार ईश्वर के सिवा और किसी को न मानता था। १६ वीं सदी में वह एक परमेश्वर को प्रधान मानता था पर उसके अनेक अवतार मानता और अन्य देवों को भी

मानता था। १५ वी सदी का भक्तिमार्ग एक-मात्र भक्ति का उपदेश देता था। १६ वी सदी मे वह भक्ति को प्रधान मानता था पर अन्य साधनों का निराकरण नही करता था। भक्तिपन्थ के अन्य लक्षण वैसे ही बने रहे। वही गुरु-महिमा, सत्सङ्ग-महिमा, सदाचार, प्रचलित भाषा का प्रयोग जो कबीर, नानक आदि के पन्थ मे मिलते है नये भक्तिमार्ग मे दृष्टिगोचर है। यहा भी वर्णव्यवस्था पर अधिक ज़ोर नहीं दिया जाता, छुआछूत का भेद बहुत नही माना जाता। 'हरि को भजै सो हरि का होई' यही नया सिद्धान्त है।

चैतन्य, मीराबाई, एकनाथ, तुकाराम, रामदास इत्यादि।

चैतन्य ने बङ्गाल मे, मीराबाई ने राजपूताना मे, एकनाथ, तुकाराम, रामदास आदि ने महाराष्ट्र मे इसी मार्ग का उपदेश दिया है। पद उद्धृत करने के लिए यहा स्थान नहीं है पर उनके ग्रन्थावलोकन से विषय स्पष्ट हो जायगा। सूरदास का समस्त सूरसागर, तुलसीदास का समस्त रामचरितमानस और विनयपत्रिका इसके ज्वलन्त उदाहरण है।

सूरदास के सिद्धान्त।

सनातन-धर्म ने परमेश्वर के २४ अवतार माने है। उनमे दस मुख्य है। उनमे भी दो मुख्य है—राम और कृष्ण। १६ वी १७ वी सदी के भक्तिमार्गी उपदेशकों और कवियों ने इन दो मे से एक की भक्ति गाई है। रामभक्ति तुलसीदास[1] का स्मरण कराती है, कृष्णभक्ति सूरदास का स्मरण दिलाती है। अस्तु, सूरदास के मुख्य सिद्धान्त ये है:—कृष्णावतार की भक्ति, कृष्णभक्ति मे मगन हो जाना, आपेको भूल जाना, भक्ति के सामने सब कुछ भूल जाना, कृष्णविरह में व्याकुल होना; अन्य देवों और साधनों की गौणता, गुरु-महिमा, सत्सङ्ग-महिमा।

---

१ तुलसीदास रामभक्ति के पहले कवि न थे। वे कहते है —

कलि के कविन्ह करउँ परनामा। जिन वरने रघुपति गुनग्रामा॥
जे प्राकृत कवि परम सयाने। भाषा जिन्ह हरिचरित बखाने॥

सूरदास की कविता ।

पर सूरदास मुख्यतः सिद्धान्ती या उपदेशक नहीं है । वे प्रधानतः कवि हैं, गायक है । भागवत के कथानक के आधार पर उन्होंने सर्वथा स्वतन्त्र मौलिक रीति पर एक बृहत् और उत्कृष्ट काव्य की रचना की है । कविता का रहस्य भावुकता, तल्लीनता या मस्ती है जिसका रहस्य स्वाभाविकता है । कवि बनते नही है, पैदा होते है । प्रकृति ने जिसे प्रबल भाव दिये है, जिसे जोश दिया है वह कवि है । भावों से, जोश से, प्रेम से जब उसका हृदय भर जायगा वह आप से आप कविता कह उठेगा । उपमा, अलङ्कार, पदलालित्य इत्यादि का विचार करने की उसे आवश्यकता नहीं है—ऐसे विचार से तो कृत्रिमता आ जावेगी । जो सच्चा कवि है उसकी रचना आपसे आप इन गुणों से विभूषित होगी । जो कवि नही है उसकी रचना इन गुणों से यत्किञ्चित् विभूषित रहने पर भी कविता न होगी । स्वाभाविक कविता का प्रवाह स्वाभाविक होगा, कृत्रिम न होगा, अतएव सादा होगा, बनावटी क्लिष्टता से रहित होगा । जब व्याध ने क्रौंच पक्षियों को तीर से मारा तब आदि-कवि वाल्मीकि के दयार्द्र चित्त के भाव आप से आप एक सुन्दर सुष्ठु श्लोक के रूप मे प्रकट हुए । सच्ची कविता की उत्पत्ति का यह सर्वोत्तम दृष्टान्त है । वाल्मीकि, व्यास और कालिदास प्राकृतिक कवि थे—अतएव उनकी रचना जोश से भरी है, प्राकृतिक झरने की तरह बहती है, बनावट से दूर है । हिन्दी मे सूरसागर और तुलसीकृत रामायण स्वाभाविक, सादी कविता के सर्वोत्कृष्ट उदाहरण है ।

सूरदास और तुलसीदास ।

प्रधान कवित्व गुणो मे दोनों महाकवि समान हैं, सिद्धान्तो मे भी बहुधा सहमत है पर कतिपय अंशो में एक दूसरे से भिन्न हैं । तुलसीदास ने आद्योपान्त एक कथा कही है—तेज़ी के साथ । अनेक विषयों का विशद वर्णन किया है पर एक ही बात को अनेक रीति पर कहने

का उन्हे अवकाश नहीं है। सूरदास ने कृष्ण की पूरी कथा नहीं गाई; जितनी कथा कही है उसके कुछ अंश तो अत्यन्त विस्तार से कहे हैं, दुहराये है, तिहराये हैं, एक ही बात दस दस बीस बीस भजनों में बयान की है और शेष अंश योंही कुछ पदों में टाल दिये है। यह कोई दोष नहीं है, यह कविता की एक रीति है। सूरदास ने बाल-लीला, माखन-लीला, गौचारण-लीला, चीरहरण-लीला, रास-लीला, कृष्ण-गवन, उद्धवगोपी-सवाद प्रधानत. गाये है। यह सब दशम स्कंध पूर्वार्ध मे है जिसका परिमाण शेष स्कंधों के कुल परिमाण से बहुत ज़्यादा है[1]।

प्राकृतिक दृश्यो का वर्णन तुलसीदास ने कहीं विस्तार से नहीं किया, सूरदास ने सर्वत्र विस्तार से किया है और हिन्दी मे सबसे अच्छा किया है। रूप का वर्णन तुलसीदास ने किया है पर सूरदास ने अपने पात्रो के और विशेषत. राधा और कृष्ण के रूप का अत्यन्त विशद, मनोहर, चमत्कारिक वर्णन किया है[1]।

तुलसीदास ने अपने काव्य मे सांसारिक प्रेम को अल्पातिअल्प स्थान दिया है। सूरदास ने कृष्ण और गोपियों में सांसारिक प्रेम कराकर क़लम तोड़ दी है[1]। तुलसीदास को सदा यह ध्यान रहता है कि हमारे राम परब्रह्म हैं। सूरदास ने एक बार कृष्ण को अवतार मानकर उन्हें मनुष्य बना दिया है, उनसे मनुष्य का सा बर्ताव कराया है। कृष्ण और राधा, कृष्ण और रुक्मिणी के प्रेम के बारे में कोई कुछ नहीं कह सकता पर अन्य गोपियों का प्रेम सांसारिक सदाचार की सीमा को उल्लंघन कर गया है। हम कह चुके है कि सदाचार भक्ति-मार्ग का एक प्रधान लक्षण है, तो सूरदास के व्यतिक्रम का कारण क्या है? स्वयं उन्होंने दो बातें कही है—एक तो यह कि गोपियां वास्तव मे श्रुतियों की अवतार थीं जो परब्रह्म से रमण करना चाहती थीं; दूसरी यह कि वह अप्सराओं की अवतार थीं जो कृष्णावतार के समय ब्रह्मा

१—उदाहरणों के लिए देखिए संक्षिप्त सूरसागर।

के आदेश से भूलोक में आई थीं। भागवत मे शङ्का उठने पर शुकदेवजी ने यही कहा :—

धर्मव्यतिक्रमो दृष्ट ईश्वराणां च साहसम्।
तेजीयसां न दोषाय वन्हेः सर्वभुजो यथा॥

अर्थात्, तुलसीदास के शब्दो मे "समरथ को नहिं दोष गुसाई"। यह बात भी स्मरण रखना चाहिए कि व्रजनिवास के समय कृष्ण निरे बालक थे। सूरसागर पढ़ने पर तो यह धारणा होती है कि गोपियां कृष्ण के प्रेम मे ऐसी मग्न हो गईं, कृष्ण में ऐसी समा गईं कि सदाचार का प्रश्न ही मिट गया। कविता के जोश मे कवि ने सांसारिक आचार विचार को बहुत पीछे छोड़ दिया। मानों जिस लोक मे गोपी लीला हो रही है उसमे सांसारिक सदाचार के नियम लागू ही नही हैं। जो हो यह मानना पडगा कि इस प्रकार की रास-लीला का प्रभाव भविष्य में अच्छा नहीं हुआ। स्वयं सूरदास कई स्थानो पर अश्लील हो गये हे। तथापि उनकी प्रतिभा उनके अवगुण को ढक लेती है। पढ़ते समय हमे अनुभव होता है कि कवि का भाव शुद्ध है, वह केवल प्रेम में मतवाला होकर आपे से बाहर हो गया है। पर सूरदास के उत्तराधिकारियों मे न तो प्रतिभा का और न विशुद्धता का अनुभव होता हैं।[१]

व्रज-भाषा।

सौभाग्य से सूरदास के समय तक हिन्दी भाषा परिपक्व हो चुकी थी। यों तो प्रतिभा का चमत्कार प्रत्येक बोली के द्वारा प्रकट हो सकता हैं पर परिपक्व भाषा के साधन से सोने मे सुहागा हो जाता है। पूर्वी हिन्दी, छत्तीसगढ़ी, खड़ीबोली, पंजाबी आदि हिन्दी की सब बोलियों में सच्ची उत्कृष्ट कविता हुई है पर व्रज-भाषा की मधुरता व्रज-

---

१ सूरदास और तुलसीदास के जीवन, उपदेश, काव्य, ऐतिहासिक महत्त्व इत्यादि की सविस्तर आलोचना इन पंक्तियों के लेखक के "सूरदास" और "तुलसीदास" शीर्षक ग्रन्थो में की जायगी।

भाषा ने ही है। आगरा मथुरा, वृन्दावन, गोकुल के आस पास देहात मे जो लोग घूमे है वे इस मर्म को समझ सकते है। ईस्ट इंडियन रेलवे के यात्रियों ने भी शायद टूंडला और हाथरस के बीच स्टेशनों पर चढ़ने उतरनेवाले यात्रियों की बोली मे एक अनिर्वचनीय मनोहरता का अनुभव किया होगा। व्रजभाषा की मनोहर मधुरता सूरदास मे पराकाष्टा को पहुँच गई है। कृष्ण के क्रीडास्थल की यही भाषा है—यह स्मरण करने पर कविता और भी चित्ताकर्षक है।

एक तो भाषा ऐसी, दूसरे सूरदास की चमत्कारिक प्रतिभा, तीसरे कृष्णप्रेम जिससे बढ़कर कविता के लिए कोई विषय नही है, चौथे, गाने के योग्य भजनों की रचना-शैली, इन कारणो से सूरदास का काव्य संसार के श्रेष्ठतम दो चार काव्यों मे से एक है, सम्भवतः सर्वश्रेष्ठ है। जैसा रघुराजसिंह ने कहा है :—

कवित्त ।

कविकुल कोक कंज पाइके किरिन काव्य विकसे चिनोदित ह्वै नेरे और दूर के। सूखि गो अज्ञानपंक मन्द भो मयंक मोह विषय विकार अन्धकार मिटै कूर के॥ हरि की विमुखताइ रजनी पराइ गई मूक भये कुकवि उलूक रस भूक के। छायो तेज पुहुमि मे रघुराज रूर हरिजन जीव मूर सूर उदय होत सूर के॥ १॥ मतिराम, भूषण, बिहारी, नीलकंठ, गग, बेनी, शम्भु, तोष, चिन्तामणि, कालिदास की। ठाकुर, नेवाज, सेनापति, शुकदेव, देव, पजन, घनआनन्द, घनश्यामदास की॥ सुन्दर, मुरारि, बोधा, श्रीपतिहूँ, दयानिधि, युगल, कबिन्द, त्यो गोविन्द केशवदास की। भनै रघुराज और कविन अनूठी उक्ति मोहिं लगी जूठी जानि जूंठी सूरदास की॥ २॥ अखिल अनूठी उक्ति युक्ति नहिं झूठी नेकु सुधाहू ते सरस सरस को सुनावतो। उद्धत विराग भाग सहित अनेक राग हरि को अदाग अनुराग को सिखावतो। जगत उजागर अमलपद आगर सु नट नागर ध्याय सूरसागर कों गावतो। भाषै रघुराज राधामाधव को रास रस कौन प्रगटावतो जो सूर नहिं आवतो॥ ३॥

संस्कृत के कवि कालिदास, भारवि, दण्डिन् और माघ के विषय में कहावत है :—

उपमा कालिदासस्य, भारवेरर्थगौरवम् ।
दण्डिनः पदलालित्यं, माघे सन्ति त्रयो गुणाः ॥

हिन्दी-कवियों के विषय में किसी ने ठीक कहा है :—

उत्तम पद कवि गंग के उपमा को बरबीर ।
केसव अरथ गंभीरता सूर तीनि गुन धीर ॥

जैसा कि कुछ और कवियों ने कहा है :—

'सूर सूर, तुलसी ससी, उड़गन केसवदास ।
अब के कबि खद्योत सम, जहँ तहँ करत प्रकास' ॥
'कबिता करता तीनि हैं, तुलसी, केसव, सूर ।
कबिता खेती इन लुनी, सीला बिनत मँजूर' ॥
'तत्व तत्व सूरा कही, तुलसी कही अनूठी ।
बची खुची कबिरा कही, और कही सब झूठी' ॥
'किधौं सूर को सर लग्यो, किधौं सूर की पीर ।
किधौं सूर को पद लग्यो, तन मन धुनत सरीर' ॥

१६ वीं सदी से लेकर आज तक के हिन्दी-साहित्य पर सूरदास का प्रभाव दृष्टिगोचर है। सैकड़ों कवि और लेखक उनके ऋणी हैं।

सूरसागर के संस्करण ।

सूरसागर के दो संस्करण प्रकाशित हुए हैं, एक तो नवलकिशोर प्रेस, लखनऊ से और दूसरा वेंकटेश्वर प्रेस, बम्बई से। दोनों के क्रम में बड़ा अन्तर है। वेंकटेश्वर संस्करण का सम्पादन हिन्दी के सुप्रसिद्ध विद्वान् लेखक बा० राधाकृष्णदास ने "अनेक शुद्ध प्रतियों से संशोधित करके," भूमिका सहित, किया था। निस्सन्देह वह हिन्दी-साहित्य का एक रत्न है पर इसमें भी छापे की बहुत सी ग़लतियां हैं, अनेक स्थानों पर पाठ भी अशुद्ध मालूम होता है। नम्बरों में भी कहीं कहीं गड़बड़ है। हस्त-लिखित प्रतियां अनेक पुस्तकालयों में विद्यमान हैं। यदि कोई

सज्जन अनुसन्धान करके एक सम्पूर्ण और शुद्ध पाठ प्रकाशित करें तो साहित्य-संसार का बड़ा उपकार करेंगे।

संक्षिप्त सूरसागर।

सूरसागर के दोनों ही संस्करण बड़ी, मोटी जिल्दों में है, महँगे है और अब कुछ दुष्प्राप्य भी है। सूरदास की कविता का आनन्द सब उठाना चाहते है पर बड़ी पोथी पढ़ने का न सबको अवकाश है, न सबको सुविधा है। अस्तु, संक्षिप्त सूरसागर की आवश्यकता थी। इस पुस्तक में लखनऊ और बम्बई दोनों संस्करणों को देख कर यथासम्भव शुद्ध पाठ दिया है। बनारस, जयपुर, और जोधपुर में मुझे हस्त-लिखित प्रतियां देखने का अवसर मिला था। कहीं कहीं उनसे भी सहायता ली गई है पर उक्त स्थानों में थोड़े ही दिन रहने के कारण सारे पाठ की तुलना न हो सकी। संक्षेप में राधाकृष्णदासजी के संस्करण के नम्बर रक्खे गये है। आशा है कि संक्षेप को पढ़ कर बहुत से पाठक पूर्ण ग्रन्थ को पढ़ेंगे अथवा पूर्ण ग्रन्थ के कुछ भाग अवश्य पढ़ेंगे। उनको इन नम्बरों से कुछ सहायता मिलेगी। कहीं कहीं बम्बई संस्करण में नम्बर गड़बड़ हो गये है। अतएव संक्षेप में दो एक स्थानों पर अन्तर हो गया है।

कथा-संक्षेप।

संक्षेप में छुटे हुए पदों की कथा अत्यन्त संक्षेप से कह दी गई है। पाठकों को कथाक्रम समझने में कोई असुविधा न होगी।

तुलनात्मक पद्धति।

श्रीमद्भागवत और लल्लूजीलाल-कृत प्रेमसागर के अध्यायों का बराबर हवाला दे दिया गया है। बहुत से स्थानों पर सूरदास के भाव और शैली की तुलना कराने के लिए कबीर, तुलसी, केशव, आनन्दघन, नन्ददास, सुन्दर इत्यादि इत्यादि हिन्दी-कवियों से पद उद्धृत कर दिये है। तुलनात्मक पद्धति ही साहित्य-परिशीलन की सच्ची पद्धति है। संस्कृत-टीकाओं से मालूम होता है कि प्राचीन समय में विद्यार्थी एक

कवि का अध्ययन करते हुए दूसरे कवियों की रचना से बराबर मिलान करते जाते थे। आज-कल पाश्चात्य विश्वविद्यालयों मे यही रीति प्रचलित है। साहित्य का मर्म समझने का यह सर्वोत्तम उपाय है। इस संक्षेप के लिए विस्तीर्ण हिन्दी-साहित्य-क्षेत्र से बहुत से पद जमा किये थे। पर पुस्तक का कलेवर इतना बढ़ने लगा कि थोड़े ही उद्धृत हो सके।

संकलन की कठिनाई।

सूरसागर से संकलन करना बड़ा कठिन है। यह समझ मे नहीं आता कि क्या छोड़ा जाय और क्या सम्मिलित किया जाय। विशेषतः दशम स्कंध पूर्वार्ध मे ऐसी मधुर और भावपूर्ण, ऐसी अनुपम कविता है कि कोई भी पद छोड़ने को जी नही चाहता। यदि सङ्कलन करना ही हो तो निस्सन्देह मतभेद के लिए बहुत अवकाश है। बहुत मनन करने पर मुझे मुख्य मुख्य कथाओ के जो पद सर्वोत्तम प्रतीत हुए वे चुन लिये। परन्तु "भिन्नरुचिर्हि लोक."।

ऊपर सङ्केत कर चुके है कि आवेश के कारण सूरदास के कुछ पदो मे अश्लीलता का स्पर्श है। अभाग्यवश यह पद सर्वोत्कृष्ट पदो मे से है। शायद यह सक्षेप बालक-बालिकाओ के भी हाथ पड़े; इस विचार से इनको सङ्कलन मे स्थान नहीं दिया। परिपक्व अवस्था के कविता-प्रेमी सम्पूर्ण ग्रन्थ का अवलोकन कर सकते है। अन्य कारणो से भी यह उचित है कि पाठक सम्पूर्ण ग्रन्थ का परिशीलन करें। सक्षेप का परिश्रम तभी सफल है जब उससे सौर कविता के पठन-पाठन की उन्नति हो।

प्रयाग।
वसन्त-पञ्चमी,
संवत् १९७९

बेनीप्रसाद

॥ अथ संक्षिप्त सूरसागर ॥

प्रथम स्कन्ध ।

राग बिलावल ॥

चरण कमल बंदौं हरि राई । जाकी कृपा पंगु गिरि लंघै अंधे को सब कुछ दरशाई ॥ बहिरो सुनै मूक पुनि बोलै रंक चलै शिर छत्र धराई ॥ सूरदास[2] स्वामी करुणामय बार बार बन्दौं तेहि पांई ॥ १ ॥



राग धनाश्री ॥

प्रभु को देखो एक सुभाई । अति गंभीर उदार उदधि सरि जान शिरोमणि राई ॥ तिनका सों अपने उनको गुण मानत मेरु समान । सकुचि समुद्र गनत अपराधहि बूँद तुल्य भगवान ॥ वदन प्रसन्न कमल ज्यों सम्मुख देखत हौं हो जैसे । विमुख भये अकृपिण निमिष हूँ फिर चितयो तो तैसे ॥ भक्त विरह कातर करुणामय डोलत पाछे लागे । सूरदास[2] ऐसे स्वामी को देहि सु पीठ अभागे ॥ ८ ॥

भाषा कवियों ने यह भाव संस्कृत से लिया है यथा :—

१ मूकं करोति वाचालं पङ्गु लङ्घयते गिरिम् ।
यत्कृपा तमहं वन्दे परमानन्दमाधवम् ॥

देखिए तुलसीकृत रामायण बालकांड ।
मूक होइ वाचाल, पंगु चढ़े गिरिवर गहन ।
जासु कृपा सुदयालु, द्रवौ सकल कलिमल दहन ॥

२ लगभग सब पदों में कवि ने सूरदास, सूर अथवा कोई ऐसा ही स्वनामसूचक शब्द रख दिया है ।

राग धनाश्री ॥

राम भक्तवत्सल निज बानो। जाति गोत कुल नाम गनत नहिं रंक होय कै रानो[1] ॥ ब्रह्मादिक शिव कौन जात[2] प्रभु

---

१ पन्द्रहवीं, सोलहवीं, सत्रहवीं शताब्दी के सब भक्त कवियों ने इस भाव पर ज़ोर दिया है कि परमेश्वर भक्ति के सामने जाति-पाँति को कुछ नहीं गिनता।

जाति-पाँति पूछै नहिं कोई। हरि को भजै सो हरि का होई ॥

विनयपत्रिका में तुलसीदासजी ने इस भाव को इस तरह व्यक्त किया है:—

भजन २१५ ॥

श्रीरघुवीर की यह बानि।
नीचहूँ सो करत नेह सुप्रीति मन अनुमानि ॥
परम अधम निषाद पाँवर कौन ताकी कानि।
लियो सो उर लाइ सुत ज्यों प्रेम की पहिचानि ॥ २ ॥
गीध कौन दयालु जो विधि रच्यो हिंसा सानि।
जनक ज्यो रघुनाथ ता कहँ दियो जल निज पानि ॥ ३ ॥
प्रकृति मलिन कुजाति सवरी सकल अवगुन खानि।
खात ताके दिये फल अति रुचि बखानि बखानि ॥ ४ ॥
रजनिचर अरु रिपु विभीषन सरन आयो जानि।
भरत ज्यो उठि ताहि भेटत देहदसा भुलानि ॥ ५ ॥
कौन सुभग सुसील बानर जिनहिं सुमिरत हानि।
किये ते सब सखा पूजे भवन अपने आनि ॥ ६ ॥
राम सहज कृपालु कोमल दीन हित दिन दानि।
भजहि ऐसे प्रभुहि तुलसी कुटिल कपट न ठानि ॥ ७ ॥

२ ब्रह्मा, शिव इत्यादि किसके पैदा किये हुए है ?

हौं अजान नहिं जानो ॥ महता जहाँ तहाँ प्रभु नाही सो द्वैता क्यों मानो ॥ प्रगट खंभ तै दई दिखाई यद्यपि कुल को दानो[1] । रघुकुल राघो कृष्ण सदाही गोकुल कीनो थानो ॥ वरणि

---

१ हिरण्यकशिपु के पुत्र भक्त प्रह्लाद की कथा प्रसिद्ध है। नाभाजी ने भी प्रह्लाद का स्मरण किया है। "सुठि सुमिरन प्रह्लाद प्रथू पूजा कमला चरननि मन ॥ १४ ॥ प्रियादास ने यह टीका की है।" सुमिरण साँचो कियो लियो देखि सब ही में एक भगवान कैसे काटे तरवार है। काटियो खड्ग जल बोरी सकती है जाकी ताहि को निहारे चहुँ ओर सों अपार है। पूँछे ते बतायो खम्भ तहाँ ही दिखायो रूप प्रगट अनूप भक्त बानिहि सों प्यार है ॥ दुष्ट डारथो मारि गरे आते लई डारि तऊ क्रोध को न पार कहा कियो यों विचार है ॥ ९९ ॥ डरे शिवादि सब देख्यो नही क्रोध ऐसो आवत न ढिग कोउ लक्ष्मी हू को त्रास है ॥ तब तो पठायो प्रह्लाद अहलाद महा अहो भक्ति भाव पग्यो आयो प्रभु पास है ॥ गोद मे उठाइ लियो सीस पर हाथ दियो हियो हुलसायो कहि बानी बिनै रास है ॥ आई जग दया लागी परी श्रीनृसिंहजू को अरथो यों छुटावो करथो माया ज्ञान नाश है ॥ १०० ॥ पुराणों में यह कथा विस्तार से लिखी है। देखिए सूरसागर सप्तमस्कन्ध पद १–६ यथा—

ऐसी को सकै करि बिना मुरारी। कहत प्रह्लाद के धारि नरसिंह वपु निकसि आये तुरित खंभ फारी ॥ हिरण्यकश्यपु निरखि रूप चक्रत भयो बहुरि कर लै गदा असुर धायो। हरि गदायुद्ध तासों कियो भली विधि बहुरि सध्या समय होन आयो ॥ गहि असुर धाइ पुनि निज जंघ पर नखनि सों उदर डास्यो विदारी। देखि यह सुरन वर्षा करी पुहुप की सिद्ध गंधर्व जय ध्वनि उचारी ॥ बहुरि बहु भाइ प्रह्लाद अस्तुति करी ताहि दै राज वैकुण्ठ सिधाये। भक्त के हेत हरि धरथो नरसिंह वपु सूर जन जानि यह शरन आये ॥

देखिए श्रीमद्भागवत सप्तम स्कन्ध अध्याय २–१० ।

न जाय भजन की महिमा बारम्बार बखानो[1] । ध्रुव रज-

---

१ रामनाम की महिमा के लिए देखिए तुलसीकृत रामायण बाल-काण्ड दोहा १८—२८ इंडियन प्रेस संस्करण पृष्ठ १५—१६ ॥ देखिए विनयपत्रिका भजन २२७ नाम राम रावरोई हितु मेरे । स्वारथ पर-मारथ साथिन्ह सों भुज उठाइ कहौं टेरे ॥ इत्यादि ॥

भजन ६५—७०, २२८ इत्यादि । दोहावली में भी गुसाईंजी ने नाम भजन की महिमा गाई है । जैसे,

राम नाम सुमिरत सुयस भाजन भये कुजात ।
कुतरु कुसुरपुर राज मग लहत भुवन विख्यात ॥ १६ ॥
स्वारथ सुख सपनेहु अगम परमारथ परवेश ।
राम नाम सुमिरत मिटहिं तुलसी कठिन कलेश ॥ १७ ॥
राम नाम अवलम्ब बिनु परमारथ की आश ।
वर्षत वारिद बूंद गहि चाहत चढ़न अकास ॥ २० ॥
बिगरी जन्म अनेक की सुधरै अबहीं आज ।
होहिं राम को राम जपु तुलसी तजि कुसमाज ॥२२॥ इत्यादि

दादूदयाल ने भी अपनी बानी व साखी के सुमिरन और चेतावनी अङ्ग में नाम और भजन की महिमा गाई है । जैसे:—

दादू नीका नाव है , तीन लोक ततसार ।
राति दिवस रटिबो करो , रे मन इहै विचार ॥
दादू राम अगाध है , बेहद लख्या न जाइ ।
आदि अंत नहिं जाणिये , नाव निरंतर गाइ ॥
निमिष न न्यारा कीजिए , अंतर थै उरि नाम ।
कोटि पतित पावन भये , केवल कहता राम ॥
दादू दुखिया तब लगै , जब लग नाव न लेहि ।
तबही पावन परम सुख , मेरी जीवन येहि ॥

अहनिसि सदा सरीर मे , हरि चिंतत दिन जाइ ।
प्रेम मगन लयलीन मन , अतर गति ल्यै लाइ ॥
राम कहे सब रहत है , नखसिख सकल सरीर ।
राम कहे बिन जात है , मूरख मनवां चेत ॥
राम सबद मुख ले रहै , पीछे लागा जाइ ।
मनसा वाचा कर्मना , तेहि तत सहत समाइ ॥

कबीर साहब कहते है :—

आदि नाम पारस अहै , मन है मैला लोह ।
परसत ही कंचन भया , छूटा बन्धन मोह ॥
आदि नाम बीरा अहै , जीव सकल लो बूझि ।
अमरावै सतलोक लै , जम नहि पावै जूझि ॥
आदि नाम निज सार है , बूझि लेहु सो हंस ।
जिन जान्यो निज नाम को , अमर भयो सो वंस ॥
आदि नाम निज मूल है , और मंत्र सब डार ।
कह कबीर निज नाम बिनु, बूड़ि मुआ संसार ॥
सुमिरन से सुख होत है , सुमिरन से दुख जाय ।
कह कबीर सुमिरन किये , साईं माहि समाय ॥
सुमिरन से मन लाइये , जैसे दीप पतंग ।
प्रान तजै छिन एक मे , जरत न मोड़े अंग ॥
सुमिरन से मन लाइये , जैसे कीट भिरंग ।
कबीर बिसरै आपको , होय जाय तेहि रंग ॥
सुमिरन से मन लाइए , जैसे पानी मीन ।
प्रान तजै पल बीछुरे , सत कबीर कहि दीन ॥

स्वामी रामानन्द के दूसरे शिष्य रैदास कहते है :—

थोथा मंदिर भोग बिलासा । थोथी आन देव की आसा ॥
साचा सुमिरन नाम बिसासा । मन वच कर्म कहै रैदासा ॥

पूत[1] विदुर दासी सुत[2] कौन कौन अरगानो ॥ युग युग विरद

---

१ स्वायम्भू मनु के प्रपौत्र और उत्तानपाद के पुत्र, बालक ध्रुव, को एक बार उनकी विमाता ने पिता की गोद से अपमानपूर्वक उठा दिया कि तुम मुझसे उत्पन्न नहीं हो। ध्रुव अपनी माता की आज्ञा लेकर तप करने को वन की ओर चल दिये। राजा ने बहुत समझाया और प्रलोभन दिया पर वह न माने। घोर तप करके वह अचल लोक पहुँचे। इनकी कथा पुराणों मे और भक्तमालाओं मे है। इनके जीवन पर कई नाटक अर्वाचीन काल मे बने है।

२ विदुरजी के पिता व्यासजी थे पर उनकी माता एक दासी थी। यह बड़े भक्त हुए और सर्वत्र आदर के पात्र हुए। हस्तिनापुर मे श्रीकृष्ण ने दुर्योधन के यहाँ भोजन न करके इनके यहा भोजन किया। विदुरनीति अब तक प्रसिद्ध है। सूरदास ने आगे चल कर श्रीकृष्ण के, विदुर के घर मे भोजन करने की कथा गाई है। दुर्योधन से कुछ बातें करने के बाद कृष्ण ने उद्धव से कहा (सूरसागर सप्तम स्कन्ध) :—

उद्धव चलो विदुर के जाइयै। दुर्योधन के कौन काज जहाँ आदर भाव न पाइयै॥ गुरुमुख नहीं बडे अभिमानी कापै सेव कराइयै। टूटी छानि मेघ जल वरषै टूटे पलँग बिछाइयै॥ चरण धोइ चरणोदक लीनो त्रिया कहँ प्रभु आइयै। सकुचति फिरति जु वदन छिपावै भोजन कहा मँगाइयै॥ तुम तो तीनि लोक के ठाकुर तुम ते कहा दुराइयै। हम तौ प्रेम प्रीति के गाहक भाजी शाक चखाइयै॥ हँसि हँसि खात कहत मुख महिमा प्रेम प्रीत्ति अधिकाइयै। सूरदास प्रभु भक्तन के वश भक्तन प्रेम बढ़ाइयै॥ १२७॥

हरि ठाढ़े रथ चढे दुवारे। तुम दारुक आगे ह्वै देखहु भक्त भवन किधौं अनत सिधारे॥ सुनि सुंदरि उठि उत्तर दीनो कौरव सुत कछु काज हँकारे। तहँ आये यदुपति कहियत है कमल नयन हरि हि[illegible]

यहै चलि आयो भक्तन हाथ बिकानो[1] । राजसूय में चरण पखारे श्याम लये कर पानो[2] ॥ रसना एक अनेक श्याम गुण कहँ लौं करों बखानो । सूरदास प्रभु की महिमा है साखी वेद पुरानो ॥ ११ ॥



राग बिलावल ॥

काहू के कुल तन न विचारत । अविगत की गति कहि न

हमारे ॥ तिहि को मिलन गयो मेरो पति ते ठाकुर हैं प्रभू हमारे । सूर प्रभू सुनि संभ्रम धाए प्रेम मगन तन बसन बिसारे ॥ १२८ ॥

प्रभुजू तुम हो अन्तर्यामी । तुम लायक भोजन नहिं गृह में अरु नाही गृह स्वामी । हरि कह्यो साग पत्र जो मोहिं प्रिय अमृत या सम नाहीं । बारंबार सराहि सूर प्रभु शाक विदुर घर खाहीं ॥ १२९ ॥

भगवान् दुर्योधन संवाद । राग सोरठ ॥

क्यों दासीसुत के पाँव धारे । भीषम कर्ण द्रोण मंदिर तजि मम गृह तजे मुरारे ॥ सुनियत दीन हीन वृषलीसुत जाति पाँति ते न्यारे । तिनके जाइ कियो तुम भोजन यदुवंशी सब लाजनि मारे ॥ हरिजू कहैं सुनो दुर्योधन सोइ कृपण मम चरण बिसारे । वेई भक्त भागवत वेई राग द्वेष ते न्यारे ॥ सूरदास प्रभु नंदनंदन कहैं हम ग्वालन जुठिहारे ॥१३०॥

१ राम भगत हित नर-तनु धारी । सहि संकट किय साधु सुखारी ॥ (तुलसीकृत रामायण बालकाण्ड) ।

२ युधिष्ठिर ने जो यज्ञ किया था उसमें श्रीकृष्ण ने अभ्यागतों के चरण धोने का काम अपने ऊपर लिया था ॥

परतु है[1] व्याध[2] अजामिल[3] तारत ॥ कौन धौं जाति अरु पाँति विदुर की ताही के प्रभु धारत । भोजन करत दुष्ट घर उनके राज मान भँग टारत[4] ॥ ऐसे जन्म करम के ओछे ओछेही अनुसारत । यहै सुभाव सूर के प्रभु को भक्त वछल प्रण पारंत ॥१२॥



राग गौरी ॥

करुणामय तेरी गति लखि न परै । धर्म अधर्म अधर्म धर्म करि अकरन करन करै ॥ जय अरु विजय कर्म कहा कीनो ब्रह्म शराप दिवायो । असुर योनि ता ऊपर दीनी धर्मउ छेद

---

१ देखिए टिप्पणी १ पृष्ठ २ ।

२ वाल्मीकि ऋषि पहले व्याध थे और लूट-मार करना उनका व्यवसाय था । एक दिन कुछ ऋषियों के कहने से जिनको वह लूटना चाहते थे, उन्होंने अपने कुटुम्बियों से पूछा कि तुम लोग हमारे कर्म फल के साथी हो या नही ? उन्होंने उत्तर दिया नहीं । वाल्मीकि उसी समय विरक्त हो गये और राम का उलटा नाम जपते जपते परमभक्ति को पहुँचे । तब उन्होंने संस्कृत रामायण की रचना की ।

३ पापी अजामिल की स्त्री ने, कुछ अतिथि ऋषियों के उपदेशानुसार अपने पुत्र का नाम नारायण रक्खा । मरते समय अजामिल ने पुत्र को पुकारा । नाम सुनते ही नारायण के दूत आये और पापी को परमधाम ले गये । इसकी कथा पुराणों और भक्तमालाओ मे है ।

देखिए सूरसागर षष्ठ स्कन्ध श्रीमद्भागवत षष्ठ स्कन्ध अध्याय १—३ ।

४ देखिए टिप्पणी २ पृष्ठ ६ ।

करायो[1] ॥ पिता वचन खंडे सो पापी सो प्रह्लादहि कीनो । निकसे खंभ बीच ते नरहरि ताहि अभय पद दीनो[2] ॥ दान धर्म बहु कियो भानु सुत सो तुव विमुख कहायो । वेद विरुद्ध सकल पांडव सुत सो तुम्हरो मन भायो ॥ यज्ञ करत वैरोचन को सुत वेद विमल विधि कर्मा । सो छलि बाँधि पताल पठायो कौन

---

१ गुसाईं तुलसीदासजी ने इनकी कथा का इतना संकेत किया है —

द्वारपाल हरि के प्रिय दोऊ । जय अरु विजय जानि सब कोऊ ॥

वह भगवान की आज्ञा के बिना किसी को भीतर न जाने देते थे । एक बार उन्होंने सनकादि ऋषि को भी रोका । उन्होंने क्रुद्ध होकर शाप दिया कि तुम राक्षस होओ । पश्चात् कृपा करके उन्होंने कहा कि तीसरे जन्म में तुम्हारी मुक्ति होगी । इस प्रकार,

विप्रशाप तें दोनों भाई । तामस असुरदेह तिन पाई ।
कनक कशिपु अरु हाटक लोचन । जगत विदित सुरपति मद मोचन ।
विजयी समर वीर विख्याता । धरि वराहवपु एक निपाता ।
हुइ नर हरि पुनि दूसर मारा । जन प्रहलाद सुयश विस्तारा ॥

भये निशाचर जाइ ते, महावीर बलवान ।
कुंभकर्ण रावण सुभट, सुरविजयी जग जान ॥

मुक्त न भयेउ हते भगवाना । तीन जन्म द्विज वचन प्रमाना ।
एक बार तिनके हित लागी । धरेउ शरीर भक्त अनुरागी ॥
(तुलसीकृत रामायण, बालकांड ।)

देखिए श्रीमद्भागवत तृतीय स्कन्ध अध्याय १५–१६ ।

२ देखिए टिप्पणी १ पृष्ठ ३ ।

कृपानिधि धर्मा[१] ॥ द्विज कुल पतित अजामिल विषयी[२] गणिका[३] नेह लगायो । सुत हित नाम लियो नारायण सो वैकुंठ पठायो । पतिव्रता जालंधर युवती सो पतिव्रत ते टारी[४] । दुष्ट पुंश्चली अधम सु गणिका सुवा पढ़ावत तारी ॥ मुक्त हेतु योगी श्रम कीनो असुर विरोधहिं पावै । अविगति गति करुणामय तेरी सूर कहा कहि गावै ॥ ४५ ॥



राग सारंग ॥

तुम हरि साँकरे के साथी । सुनत पुकार परम आतुर ह्वै

---

१ प्रह्लाद का पौत्र बलि इन्द्र को जीत कर स्वर्ग का राज्य करने लगा । इन्द्र की माता अदिति की स्तुति से प्रसन्न होकर भगवान् ने वामनरूप धारण किया और बलि से तीन पैर पृथ्वी का दान माँगा । बलि के प्रतिज्ञा करने पर वामन ने अपना रूप ऐसा बढ़ाया कि एक पैर से आकाश और दूसरे से पृथ्वी नाप ली और तीसरे पैर के लिए स्थान माँगा । बलि ने अपने को ही नपा लिया । भगवान् प्रसन्न हुए और पाताल मे बलि के द्वार पर पहरा देने लगे । देखिए श्रीमद्भागवत अष्टम स्कन्ध अध्याय १५–२३ ।

२ देखिए पृष्ठ ६ टिप्पणी ५

३ जीवन्ति नामी महापापी गणिका ने एक तोता पाला और उसे राम नाम पढ़ाया । नाम पुकारने के प्रभाव से दोनों ने मोक्ष पाई ।

४ महाप्रतापी दैत्य जालन्धर का बल क्षीण करने के लिए भगवान् ने कपटरूप धारण कर उसकी पतिव्रता स्त्री से पैर दबवाये । परपुरुष स्पर्श से उसका तेज जाता रहा और जालन्धर का वध सम्भव हो गया ।

दौरि छुड़ायो हाथी[1] ॥ गर्भ परीक्षित रक्षा कीनी वेद उपनिषद साखी[2] । बसन बढ़ाय द्रुपद तनया के सभा माँझ पत राखी ॥

---

१ जल प्रविष्ट गजराज का पैर मगर ने पकड़ लिया । दोनों में १००० दिव्य वर्ष तक युद्ध हुआ । विकल होकर हाथी ने भगवान् को पुकारा । गरुड़ पर चढ़ कर भगवान् चले । रास्ते में शीघ्रता के कारण उतर पड़े और पैदल ही दौड कर मगर समेत हाथी को बाहर खींच लिया । भगवान् ने चक्र से मगर का मुख फाड कर हाथी की रक्षा की । देखिए सूरसागर अष्टम स्कन्ध, श्रीमद्‌भागवत अष्टम स्कन्ध अध्याय २–४ ।

२ प्रथमस्कन्ध के १६८ वे पद मे सूरदास ने परीक्षित गर्भ-रक्षा का इस तरह वर्णन किया है :—

हरि हरि हरि हरि सुमिरन करौ । हरि चरणारबिन्द उर धरौ ॥ हरि परीक्षितै गर्भ मँझार । राखि लियो निज कृपा अधार । कहौ सु कथा सुनौ चितलाई । जो हरि भजै रहै सुख पाई ॥ भारत युद्ध बितत जब भयो । दुर्योधन अकेल तहँ रह्यो ॥ अश्वत्थामा तापै जाई ॥ ऐसी भांति कह्यो समुझाई ॥ हमसों तुमसों बाल मिताई । हमसों कछु न भई मित्राई ॥ अब जो आज्ञा मोको होई । छाँड़ि बिलम्ब करों अब सोई ॥ राज्य गये को दुःख न सोई । पांडव राज भयो जो होई ॥ उनके मुए हीय सुख होई । जो करि सकौ करौ अब सोई । हरि सर्वज्ञ बात यह जान । पांडु सुतनि सों कह्यो बखान ॥ आज सरस्वति तट रहौ सोई । पै यह बात न जानै कोई । पांडव हरि की आज्ञा पाइ । तजि गृह रहे सरस्वति जाइ ॥ काहूसों यह कहि न सुनाई । वहाँ जाइ सब रैन बिताई । अश्वत्थामा तब इहा आए । द्रौपदीसुत तहाँ सोवत पाए ॥ उनको शिर लै गयो उतारि । कह्यो दुर्योधन आयो मारि ॥ बिन देखे ताको सुख छयो । देखेते दूनो दुख भयो ॥ ए बालक तैं वृथा जु मारे । पुनि कुरु-पति तजि प्राण सिधारे ॥ अश्वत्थामा भय करि भग्यो । इहाँ लोग सब सोवत जग्यो । द्रौपदि देखि सुतन दुख पायो । अर्जुन सों यह वचन

राज रवनि गाई व्याकुल ह्वै दै दै सुत को धीरक। मागधि हति राजा सब छोरे ऐसे प्रभु परपीरक॥ कपट स्वरूप धरयो जब कोकिल नृप प्रतीत करि मानी। कठिन परी तबहीं तुम प्रकटे रिपु हति सब सुख दानी॥ ऐसे कहौं कहाँ लौं गुण गण लिखत अंत नहिं पइयै। कृपासिंधु उनहीं के लेखे मम लज्जा निर्वहियै॥ सूर तुम्हारी ऐसी निबही संकट के तुम साथी। ज्यों जानौं त्यों करौं दीन की बात सकल तुम हाथी॥ ५३॥



राग कान्हरा॥

दीनानाथ अब बार तुम्हारी। पतित उधारन बिरद जानिकै बिगरी लेहु सँभारी॥ बालापन खेलत ही खोयो युवा विषय रस माते। वृद्ध भये सुधि प्रगटी मो को दुखित पुकारत

सुनायो॥ अश्वत्थामा जब लगि मारौं। तब लगि अन्न न मुख मे डारौं॥ हरि अर्जुन रथ पर चढ़ि धाये। अश्वत्थामा पै चलि आये॥ अश्वत्थामा अस्त्र चलायो। अर्जुनहू ब्रह्मास्त्र पठायो॥ उन दोनों से भई लराई। तब अर्जुन दोउ लए बुलाई॥ अश्वत्थामा को गहि लाए। द्रौपदि शीश मुठी मुकराए॥ याके मारे हत्या होई। मूयो जिवत न देख्यो कोई॥ अश्वत्थामा बहुरि खिसाई। ब्रह्मअस्त्र को दियो चलाई॥ गर्भ परीक्षित जारन गयो। तब हरि ताहि जरन नहिं दियो। रूप चतुर्भुज गर्भ मँझार। ताको तासों लियो उबार॥ जन्म परीक्षित को जब भयो। कह्यो चतुर्भुज अब कहँ गयो॥ पुनि जब हरि को देखौं जोई। पाइ संतोष सुखी होउ सोई। राजा जन्म समय को देखि। मन मे पायो हर्ष विशेखि॥ गर्भ परीक्षित रक्षा करी। सोई कथा सकल बिस्तरी। श्रीभगवान कृपा जिहि करै। सूर सो मारे काके मरै॥ १६८॥

देखिए श्रीमद्भागवत प्रथम स्कन्ध, अध्याय ८।

ताते॥ सुतनि तज्यो तिय तज्यो भ्रात तजि तन त्वच भई जु न्यारी। श्रवण न सुनत चरण गति थाकी नैन भये जलधारी॥ पलित केश कफ कंठ विरोध्यौ कल न परी दिन राती। माया मोह न छाड़ै तृष्णा ए दोऊ दुख दाती॥ अब या व्यथा दूरि करिबे को और न समरथ कोई। सूरदास प्रभु करुणासागर तुमते होइ सु होई[1]॥ ५६॥



राग सारंग॥

ताते तुमरो भरोसो आवै। दीनानाथ पतित पावन यश वेद उपनिषद गावै। जो तुम कहौ कौन खल तारयो तौ हौं बोलों साखी॥ पुत्र हेतु हरि लोक गयो द्विज सक्यो न कोऊ राखी॥ गणिका किये कौन व्रत संयम शुक हित नाम पढ़ावै। मनसा करि सुमिरयो गज बपुरो ग्राह परमगति पावै॥ बकी जो गई घोष मे छल करि यशुदा की गति दीनी[4]। और कहत श्रुति वृषभ व्याधि की जैसी गति तुम कीनी॥ द्रुपदसुताहि दुष्ट दुर्योधन सभा माहिं पकरावै। ऐसो कौन और करुणामय

---

१ जैसा कि पहले कह चुके है, इस समय के भक्त कवियो में बहुधा परमेश्वर को आत्म-समर्पण के भाव मिलते है। कबीर की साखी, दादू की बानी, नानक के भजन, तुलसीदास की विनयपत्रिका सबमे यही झलक है।

२ देखिए टिप्पणी ३ पृष्ठ ८।

३ देखिए टिप्पणी ४ पृष्ठ ८।

४ बकी—कंस की आज्ञा से—बालक कृष्ण को मारने आई थी।

५ वृषभ भी कंस की आज्ञा से बालक कृष्ण को मारने आया था।

वसन प्रवाह बहावै ॥ दुखित जानिकै सुत कुबेर के तिहि लगि आप बँधावै[2] । ऐसो को ठाकुर जन कारन दुख सहि भलो मनावै ॥ दुर्वासा दुर्योधन पठयो पंडव अहित विचारी । सुमिरत तीनों लोक अघाए न्हात भज्यो कुश डारी । देव राज मख भंग जानिकै बरस्यो ब्रजपर आई ॥ सूर श्याम राखे सब निज कर गिरि लै भए सहाई[3] ॥ ६३ ॥



राग गूजरी ॥

कृपा अब कीजिए बलि जाउँ । नाहिं मेरे और कोऊ बलि चरण कमल बिन ठाउँ ॥ हौं असोच अकृत अपराधी सन्मुख होत लजाउँ । तुम कृपालु करुणानिधि केशव अधम उधारन नाउँ ॥ काके द्वार जाइहौं ठाढ़ो देखत काहि सुहाउँ । अशरण

---

१ सभा में दुर्योधन की आज्ञा से दुःशासन ने पाण्डवपतियों द्वारा जुए में हारी हुई द्रौपदी का चीर खींचा। श्रीकृष्ण की महिमा से चीर बढ़ता ही चला गया।

२ कुबेर के लडके नलकूबर एक बार कैलास पर गङ्गाजी मे स्त्रियों के साथ जलक्रीड़ा कर रहे थे। अकस्मात् नारदजी आ निकले। तब भी इन्होंने वस्त्र न पहिने। नारदजी ने शाप दिया कि गोकुल मे जाकर वृक्ष होओ। गोपियों की शिकायत पर माखनचोर श्रीकृष्णजी को जब यशोदा ने उलूखल से बाँध दिया तब बालक ने उलूखल को दोनों वृक्षो के बीच में डाल कर ऐसा झटका दिया कि दोनों वृक्ष टूट गये और नलकूबर प्रकट हो गये। श्रीकृष्ण की स्तुति करके उन्होने भक्ति का वरदान पाया। देखिए सूरसागर एव संक्षिप्त सूरसागर दशमस्कन्ध पूर्वार्द्ध।

३ सूरसागर एवं संक्षिप्त सूरसागर दशमस्कन्ध पूर्वार्द्ध।

श्रीमद्भागवत दशम स्कन्ध पूर्वार्द्ध अध्याय १०।

शरण नाम तुमरो हौं कामी कुटिल सुभाउँ॥ कलँकी औार मलीन बहुत मैं सेंतैमेंत बिकाउँ। सूर पतित पावन पद अंबुज क्यों सो परिहरि जाउँ[1]॥ ६६॥



राग धनाश्री॥

अब मैं नाच्यों बहुत गुपाल। काम क्रोध को पहिरि चोलना कंठ बिषय की माल॥ महामोह को नेपुर बाजत निंदा शब्द रसाल। भरम भये मन भयो पखावज चलत कुसंगत चाल॥ तृष्णा नाद करत घट भीतर नाना विधि दे ताल। माया को कटि फेंटा बाँध्यो लोभ तिलक दियो भाल॥ कोटिक कला काँछि देखराई जल थल सुधि नहिं काल। सूरदास की सबै अविद्या दूरि करो नँदलाल॥ ६२॥



राग मारू॥

मेरी तौ गति पति तुम अंतहि दुख पाऊँ। हौं कहाइ

---

१ माधव मो समान जगमाहीं।
सब विधि हीन मलीन दीन अति लीन विषय कोउ नाहीं॥१॥
तुम सम हेतु रहित कृपाल आरत हित ईश न त्यागी।
मैं दुख सोक विकल कृपाल केहि कारन दया न लागी॥२॥
नाहिं न कछु औगुन तुम्हार अपराध मोर मैं माना।
ज्ञानभवन तनु दियहु नाथ सोइ पाय न मैं प्रभु जाना॥३॥
वेनु करील श्रीखंड बसंतहि दूषन मृषा लगावै।
सार रहित हतभाग्य सुरभि पल्लव सो कहु किमि पावै॥४॥
सब प्रकार मै कठिन मृदुल हरि दृढ़ विचार जिय मोरे।
तुलसिदास प्रभु मोह सृङ्खला छूटिहि तुम्हरे छोरे॥५॥
तुलसीकृत विनयपत्रिका, भजन ११४।

तिहारो अब कौन को कहाऊँ। कामधेनु छाँड़ि कहा अजा[1] जा दुहाऊँ। हय[2] गयंद[3] उतरि कहा गर्दभ चढ़ि धाऊँ॥ कंचन मणि खोलि डारि काँच कर बँधाऊँ। कुंकुम को तिलक मेटि काजर मुख लाऊँ॥ पाटंबर अंबर तजि गूदर पहिराऊँ। अंब को फल छाँड़ि कहाँ सेवर को धाऊँ॥ सागर की लहर छाँड़ि खार कत अन्हाऊँ। सूर कूर आँधरो मै द्वार पर्‌यो गाऊँ॥ १०५॥



राग सारंग॥

तुम्हारी भक्ति हमारे प्रान। छूटि गये कैसे जन जीवत ज्यों पानी बिन प्रान। जैसे मगन नाद सुनि सारँग बधत बधिक तनु बान। ज्यों चितवे शशि ओर चकोरी देखत ही सुखमान॥ जैसे कमल होत परिफूलित देखत दरशन भान। सूरदास प्रभु हरि गुण मीठे नित प्रति सुनियत कान॥ १०६॥



(शुकदेवजी की उत्पत्ति और व्यास अवतार वर्णन के बाद कवि राम नाम का माहात्म्य कहता है।)

नाम माहात्म्य वर्णन॥ राग कान्हरा॥

बड़ी है राम नाम की ओट। शरण गये प्रभु काढ़ि देत नहिं करत कृपा के ओट॥ बैठत सभा सबै हरि जू की कौन बड़ो को छोट। सूरदास पारस के परसे मिटत लोह के खोट[4]॥ १२०॥

---

१ बकरी। २ घोड़े। ३ हाथी।

४ देखिए टिप्पणी १ पृष्ठ ४।

राग धनाश्री ॥

सोई भलो जो रामहिं गावै । श्वपच प्रसन्न होइ बड़ सेवक बिनु गुपाल द्विज जन्म न भावै ॥ वाद विवाद यज्ञ व्रत साधै कतहूँ जाइ जन्म डहकावै । होइ अटल जगदीश भजन में सेवा तासु चारि फल पावै ॥ कहूँ ठौर नहिं चरण कमल बिनु भृंगी ज्यों दशहूँ दिशि धावै । सूरदास प्रभु सत समागम आनँद अभय निशान बजावै ॥ १२१ ॥



(यहा सूरदास ने महाभारत की कुछ कथा कही है—श्रीकृष्ण का विदुर के यहा भोजन करना, उद्धव-संवाद, दुर्योधन-संवाद, महाभारत, भीष्म-प्रतिज्ञा, भीष्म-मरण, श्रीकृष्ण का द्वारिका को जाना, पाण्डवो का हिमालय जाना, परीक्षित-गर्भ-रक्षा, परीक्षित-कलियुग-सवाद, ऋषि द्वारा परीक्षित को शाप, परीक्षित को ऋषियों द्वारा उपदेश—यह सब संक्षेप से कहा है । चित्त-बुद्धि-संवाद और मन-बुद्धि-संवाद के बाद मन-प्रबोध प्रारम्भ होता है ।)

राग सारंग ॥

छाँड़ि मन हरि विमुखन को सङ्ग । जिनके सङ्ग कुबुद्धि उपजति है परत भजन मे भंग ॥ कहा होत पय पान कराये विष नहिं तजत भुजंग । कागहि कहा कपूर चुगाये श्वान न्हवाये गंग ॥ खर को कहा अरगजा लेपन मर्कट भूषण अंग । गज को कहा न्हवाये सरिता बहुरि धरै खहि छंग ॥ पाहन पतित बाँस नहिं बेधत रीतो करत निषंग । सूरदास खल कारी कामरि चढ़त न दूजो रंग ॥ २११ ॥

द्वितीय स्कन्ध ।

राग बिलावल ॥

हरि हरि हरि सुमिरन करौ । हरि चरणारविंद उर धरौ ॥ शुकदेव हरिचरणन चित लाई । राजासों बोल्यो या भाई ॥ तुम कह्यो सप्त दिवस मम आय[1] । कहो हरि कथा सुनौ चितलाय ॥ चिंता छाँड़ि भजो यदुराई । सूर तरो हरि के गुण गाई ॥ १ ॥



राग सारङ्ग ॥

जो सुख होत गोपालहिं गाये । सो नहिं होत जप तप के कीने कोटिक तीरथ न्हाये ॥ दिये लेत नहिं चारि पदारथ चरण कमल चित लाये । तीनि लोक तृण सम करि लेखत नंदनँदन उर आये ॥ बंशीबट वृन्दावन यमुना तजि वैकुंठ को जाये । सूरदास हरि को सुमिरन करि बहुरि न भव चलि आये[2] ॥२॥

---

१ कलियुग के वश होकर राजा परीक्षित ने योगमग्न लोमस ऋषि के गले में एक मरा साप डाल दिया । ऋषि के पुत्र ने समाचार सुन कर शाप दिया कि आज से सातवें दिन अपराधी को साप डसेगा । यह खबर पाकर राजा स्वयं गङ्गातट पर मरने के लिए आ बैठा । बहुत से ऋषि राजा के पास आये । श्रीशुकदेवजी राजा को धर्मशास्त्र सुनाने लगे । राजा परीक्षित की कथा के लिए देखिए श्रीमद्भागवत प्रथम स्कन्ध, अध्याय १५–१६ । महाभारत आदिपर्व । सूरसागर प्रथम स्कन्ध । प्रेमसागर ॥

२ पन्द्रहवीं, सोलहवीं और सत्रहवी सदी मे भारतवर्ष मे सर्वत्र भक्तिमार्ग का उपदेश हो रहा था । कबीर, रैदास, दादू, नानक, अङ्गद

राग केदारा ॥

सोइ रसना जो हरिगुण गावै । नैन की छबि यहै चतुरता ज्यों मकरन्द मुकुन्दहि ध्यावै ॥ निर्मल चित्त तौ सोई साँचो कृष्ण बिना जिय और न भावै । श्रवणनि की जु यहै अधिकाई सुनि रसकथा सुधारस प्यावै ॥ कर तेई जो श्यामहिं सेवैं चरणनि चलि वृन्दावन जावै । सूरदास जैये बलि ताके जो हरिजूसे प्रीति बढ़ावै ॥ ३ ॥



राग सारङ्ग ॥

जब ते रसना राम कह्यो । मानो धर्म साधि सब बैठ्यो पढ़िबे मे धौं कहा रह्यो ॥ प्रगट प्रताप ज्ञान गुरु गमते दधिमथि घृत लै

आदि महात्माओं ने तीर्थ, मूर्तिपूजन, तप इत्यादि की मुक्त कण्ठ से निन्दा की है। सूरदास, तुलसीदास आदि महात्माओं ने कर्मकाण्ड की निन्दा नही की पर भक्ति को सर्वोपरि माना है।

रामायण के उत्तरकाण्ड में रामचन्द्रजी काकभुशुण्ड से कहते हैं:—

पुनि पुनि सत्य कहहुँ तोहि पाहीं । मोहि सेवक सम प्रिय कोउ नाहीं ॥
भगति हीन विरंचि किन होई । सब जीवहु समप्रिय मोहि सोई ॥
भगतिवंत अति नीचहु प्रानी । मोहि प्रानप्रिय असमय वानी ॥

फिर—

कलिजुग केवल हरिगुन गाहा । गावत नर पावहिं भव थाहा ॥
कलिजुग जोग न जज्ञ न ज्ञाना । एक अधार रामगुन ज्ञाना ॥
सब भरोस तजि जो भजि रामहिं । प्रेम समेत गाव गुन ग्रामहिं ॥
सोइ भव तर कछु संशय नाहीं । नाम प्रताप प्रगट कलि माहीं ॥

गीता में भी कहा है:—

अनन्यांश्चिन्तयन्तो मां ये जनाः पर्य्युपासते ।
तेषां नित्याभियुक्तानां योगक्षेमं वहाम्यहम् ॥

तज्यो मह्यो। सार को सार सकल सुख को सुख हनूमान शिव जानि कह्यो॥ नाम प्रतीत भई जा जनकी लै आनन्द दुःख दूरि दह्यो। सूरदास धन धन वे प्राणी जो हरि को व्रत लै निबह्यो॥ ४॥



अनन्यभक्तिमहिमा॥ राग सारङ्ग॥

गोविंद सो पति पाइ कहा मन अनत लगावै[2]। गोपाल भजन बिन सुख नहीं जो चहुँ दिश धावै॥ पति को व्रत जो धरै त्रिया

---

१ शिवजी ने पार्वती से कहा है:—

परमेश्वरनामानि सन्त्यनेकानि पार्वति।
परन्तु रामनामेदं सर्वेषामुत्तमोत्तमम्॥
नारायणादिनामानि कीर्तितानि बहून्यपि।
आत्मा तेषां च सर्वेषां राम-नाम प्रकाशकः॥

अन्यच्च,

राम रामेति रामेति रमे रामे मनोरमे।
सहस्रनाम तत्तुल्यं रामनाम वरानने॥

इस प्रकार:—

सहस नाम सम सुनि शिववानी। जपि जेईं पिय संग भवानी।

२ नाहिं नै नाथ अवलम्ब मोहिं आन की।
करम मन वचन पन सत्य करुनानिधे,
एक गति राम भवदीय पद त्रान की॥ इत्यादि
तुलसीकृत विनयपत्रिका भजन २०९।

और कहँ ठौर रघुवंसमनि मेरे।
पतितपावन प्रनतपाल असरन सरन बांकुरे विरद विरुदैत केहि केरे॥ इत्यादि
भजन २१०।

सो शोभा पावै। आन पुरुष को नाम लेत तिय पतिहि लजावै॥ गणिका ते उपजै सुपूत कौन को कहावै॥ बसत सुरसरीतीर मंदमति कूप खनावै॥ जैसे श्वान कुलाल के पाछे उठि धावै। आन देव हरि तजि भजै सो जन्म गँवावै[1]॥ फल की आशा चित्त धारि जो वृक्ष बढ़ावै। महामूढ़ सो मूल तजि शाखा जल नावै॥ सहज भजै नंदलाल को सो सब शुचि पावै। सूरदास हरिनाम लिये दुखनिकट न आवै॥ ५॥



राग कान्हरा॥

जाको मन लाग्यो नँदलालहिं ताहि और नहिं भावै हो। ज्यों गूँगो गुर खाइ अधिक रस सुख सवाद न बतावै हो॥ जैसे सरिता मिलै सिंधु को बहुरि प्रवाह न आवै हो। ऐसे सूर कमल लोचनते चित नहिं अनत डुलावै हो॥ ६॥



राग बिहाग।

जो मन कबहुँक हरि को जाँचै। आन प्रसंग उपासना छाँडै

---

१ दादूजी कहते हैः—पतिवरता के एक है, विभिचारणि के दोय।
पतिवरता विभिचारिणी मेला क्यों करि होय॥
नारी सेवक तब लगैं, जब लग साईं पास।
दादू परसै आन को, ताकी कैसी आस॥
आदिग्रन्थ में गुरु नानक कहते हैं :—
रंडियां एह न आंखियन, जिनके चलन भतार।
रंडियां सेई नानका, जिन बिसरिया करतार॥

मन वच क्रम अपने उर साँचै[1] ॥ निशि दिन श्याम सुमिरि यश गावै कल्पन मेटि प्रेमरस पाचै । यह व्रत धरै लोक में बिचरै सम करि गनै मह मणि काचै ॥ शीत उष्ण सुख दुःख नहिं मानै हानि भये कछु शोच न राचै । जाइ समाइ सूर वा निधि मे बहुरि न उलटि जगत में नाचै ॥ ७ ॥



राग सारङ्ग ॥

कह्यो शुक श्रीभागवत विचारि । हरि की भक्ति विरद है युग युग आन धर्म दिन चारि ॥ चिता तजौ परीक्षित राजा सुन सुख साखि हमारि । कमल नयन की लीला गावत कटत अनेक बिकारि ॥ सतयुग सतत्रेता तप कीनो द्वापर पूजा चारि । सूर भजन कलि केवल कीजै लज्जा कानि निवारि[2] ॥ ८ ॥

---

१ टिप्पणी २ पृष्ठ १८ और टिप्पणी २ पृष्ठ २० ।

२ कृतजुग त्रेता द्वापर, पूजा मख अरु जोग ।
जो गति होइ सो कलि हरि, नाम ते पावहिं लोग ॥

कलिजुग जोग न जज्ञ न ज्ञाना । एक अधार रामगुन गाना ।
सब भरोस तजि जो भज रामहिं । प्रेम समेत गाव गुन ग्रामहिं ।
सोइ भव तर कछु संसय नाहीं । नाम प्रताप प्रगट कलि माहीं ।
कलि कर एक पुनीत प्रतापा । मानस पुन्य होइ नहिं पापा ॥
कलिजुग सम जुग आन नहिं, जो नर कर विस्वास ।
गाइ राम गुनगन विमल, भव तर बिनहिं प्रयास ॥

(तुलसीकृत रामायण उत्तरकांड ।)

कलि नाम कामतरु राम को ।
दलनिहार दारिद दुकाल दुख दोष घोर धन धाम को ॥ इत्यादि
तुलसीकृत विनयपत्रिका भजन १५६ ।

राग बिलावल ॥

गोविन्द भजन करो इहि बारा। शंकर पार्वती उपदेशत तारक मंत्र लिख्यो श्रुतिद्वारा॥ अश्वमेध यज्ञ जो कीजै गया बनारस अरु केदारा। रामनाम सरि तऊन पूजै जो तनु गारो जाइ हिवारा॥ सहसबार जो बेनी परसौ चन्द्रायण सौ बारा। सूरदास भगवंत भजन बिनु यम के दूत खरे है द्वारा[1] ॥ ६ ॥



राग केदारा ॥

है हरि नाम को आधार। और इहि कलिकाल नाही रह्यो विधि व्यवहार॥ नारदादि शुकादि मुनि मिलि कियो बहुत विचार। सकल श्रुति दधि मथित काढ्यो इतोई घृतसार॥ दशो दिश ते कर्म रोक्यो मीन को ज्यों जार। सूर हरि को सुयश गावत जाहि मिटे भव भार[2] ॥ १० ॥

(नाम महिमा के संक्षिप्त कथन के बाद भक्ति साधन का उपदेश करते हैं।)



राग धनाश्री ॥

सबै दिन एक से नहिं जात। सुमिरन ध्यान कियो करि हरि को जब लगि तन कुशलात॥ कबहूँ कमला चपला पाके

---

१ द्वापर मे ही श्रीकृष्ण ने गीता मे कहा था —

सर्वधर्मान् परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज।
अहं त्वां सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः॥

अ० १८ श्लोक ६६।

२ टिप्पणी २ पृष्ठ २२।

टेढ़े टेढ़े जात। कबहुँक मग मग धूरि टटोरत भोजन को। बिलखात॥ या देही के गर्व बावरो तदपि फिरत इतरात। बाद विवाद सबै दिन बीते खेलत ही अरु खात॥ हौं बड़ हौं बड़ बहुत कहावत सूधे कहत न बात। योग न युक्ति ध्यान नहिं पूजा वृद्ध भये अकुलात॥ बालापन खेलत ही खोयो तरुणापन अलसात। सूरदास औसर के बीते रहिहौं पुनि पछितात॥ २२॥



॥ राग नट॥

अपुनपो आपुनही बिसर्‌यो। जैसे श्वान काँच मंदिर में भ्रमि भ्रमि भूसि मर्‌यो॥ हरि सौरभ मृग नाभि बसत है द्रुम तृण सूँघि मर्‌यो। ज्यों सपने में रंक भूप भयो तस करि अरि पकर्‌यो॥ ज्यों केहरि प्रतिबिंब देखिकै आपुन कूप पर्‌यो। ऐसे गज लखि स्फटिक शिला में दशननि जाइ अर्‌यो॥ मर्कट मुट्ठि छाँड़ि नहिं दीनी घर घर द्वार फिर्‌यो॥ सूरदास नलनीको सुबटा कहि कौने जकर्‌यो॥ २६॥

(परमेश्वर के विराट्‌रूप और आरती का यहाँ वर्णन है)[1]



अथ नृपविचार॥ राग गूजरी॥

श्रीशुक के सुनि वचन नृप[2] लाग्यो करन विचार। झूठे नाते जगत के सुत कलत्र परिवार॥ चलत न कोऊ सँग चलै मोरि रहैं मुख नार। आवत गाढ़े काम हरि देखो सूर विचार॥ २६॥

---

१ श्रीमद्‌भागवत द्वितीय स्कन्ध अध्याय ६।

२ राजा परीक्षित।

नृप को वचन शुकदेव के प्रति ॥ राग गूजरी ॥

नमो नमो करुणानिधान । चितवत कृपा कटाक्ष तुम्हारी मिटि गयो तम अज्ञान ॥ मोह निशा को लेश रह्यो नहिं भयो विवेक विहान । आतम रूप सकल घट दरश्यो उदय कियो रवि ज्ञान ॥ मैं मेरी अब रही न मेरे छुट्यो देह अभिमान । भावै परो आजु ही यह तनु भावै रहो अमान ॥ मेरे जिय अब यहै लालसा लीला श्रीभगवान । श्रवण करौं निशि बासर हित सों सूर तुम्हारी आन ॥ ३३ ॥



अथ शुकदेव वचन ॥ राग सारंग ॥

कह्यो शुक सुनो परीक्षित राव । ब्रह्म अगोचर मन वाणी ते अगम अनंत प्रभाव ॥ भक्तन हित अवतार धारि जो करि लीला संसार । कहौं ताहि जो सुनै चित्त दै सूर तरै सो पार[1] ॥ ३४ ॥



अथ नारद-ब्रह्मा-संवाद ॥ राग बिलावल ॥

नारद ब्रह्मा को शिरनाई । कह्यो सुनो त्रिभुवन पतिराई ॥ सकल सृष्टि यह तुमते होई । तुम सम द्वितिया और न कोई ॥ तुम हौ धरत कौनको ध्यान । यह तुम मोसों कहो बखान ॥ कह्यो कर्त्ता हर्ता भगवान । सदा करत मैं तिनको ध्यान ॥ नारद सों कह्यो विधि या भाई । सूर कह्यो त्योंहीं शुक गाई[2] ॥ ३५ ॥

---

१ श्रीमद्भागवत द्वितीय स्कन्ध चतुर्थ अध्याय ।

२ श्रीमद्भागवत द्वितीय स्कन्ध पञ्चम अध्याय ।

अथ चतुर्विंशति अवतार-वर्णन ॥ राग धनाश्री ॥

जो हरि करै सो होई कर्त्ता नाम हरी। ज्यों दर्पण प्रति-बिंब त्यों सब सृष्टि करी ॥ आदि निरंजन निराकार कोउ हुतो न दूसर। रचो सृष्टि विस्तार भई इच्छा इक औसर ॥ त्रिगुण तत्त्वते महातत्त्व महातत्त्वते अहंकार। मन इन्द्रिय शब्दादि पची ताते किये विस्तार ॥ शब्दादिकते पंचभूत सुन्दर प्रगटाये। पुनि सबको रचि अंड आप मे आप समाये ॥ तीन लोक निज देह में राखे करि विस्तार। आदि पुरुष सोई भयो जो प्रभु अगम अपार ॥ नाभि कमल ते आदि पुरुष मोको प्रगटायो। खोजत युग गए बीति नाल को अंत न पायो ॥ तिन मोसो आज्ञा करी रचि सब सृष्टि उपाई। स्थावर जंगम सुर असुर रचे सबै मैं आई ॥ मच्छ कच्छ बाराह बहुरि नरसिंह रूप धरि। वामन बहुरो परशुराम पुनि राम रूप करि ॥ वासुदेव सोइ भयो बुध भयो पुनि सोई सोई। कल्की होइ है और न द्वितिया कोई ॥ ए दश है अवतार कहौं पुनि और चतुर्दश। भक्तबछल भगवान् धरे वपु भक्तनि के वश ॥ अज अविनाशी अमर प्रभु जन्मे मरै न सोई। नटवर कला करत सकल बूझै बिरला कोई ॥ सनकादिक पुनि व्यास बहुरि भए हंसरूपहरि। पुनि नारायण ऋषभदेव बहुर्यो धन्वंतरि ॥ नारद दत्तात्रेय हरि यज्ञ पुरुष वपु धारि कपिल मोहनी पृथु हयग्रीव सुध्रुव उद्धारि ॥ भूमि रेणु कोऊ गनै और नक्षत्र न समुझावै। कह्यो चहे अवतार अंत सोउ नहिं पावै ॥ सूर कहौ क्यों कहि सकै जन्म कर्म अवतार। कहै कछुक गुरु कृपा ते श्रीभागवत अनु-सार[1] ॥ ३६ ॥ (ब्रह्मा ने अपनी उत्पति का निर्देश किया है)

---

१ श्रीमद्भागवत द्वितीय स्कन्ध, अध्याय ६ और ७।

तृतीय स्कन्ध ।

तृतीय स्कन्ध में उद्धव-विदुर-संवाद के होने पर विदुर, सनकादि ऋषि, महादेव, सप्तऋषि, चार मनु, देवता और राक्षसों की उत्पत्ति का और वाराह अवतार का बहुत संक्षिप्त वर्णन है। तब कपिलमुनि के अवतार का निर्देश है।

देवहूति माता ने कपिलमुनि से आत्मज्ञान पूछा। कपिल ने धर्म का वर्णन किया और भक्ति का निर्देश किया। तब "देवहूति कह भक्ति सु कहिए। जाते हरिपुर वासा लहिए ॥१२॥

भक्ति प्रश्न ॥

राग बिलावल ॥

अरु सुभक्ति कीजै किहिं भाई। सोऊ मोको देहु बताई ॥ माता[1] भक्ति चारि परकार। सत रज तम गुण सुधा सार ॥ भक्ति एक पुनि बहु विधि होई। ज्यों जल रंग मिलि रंगसु होई ॥ भक्ति सात्विकी चाहत मुक्त। रजोगुणी धन कुटुम्ब अनुरक्त ॥ तमोगुणी चाहै या भाई। मम बैरी क्यों ही मरजाई ॥ सुधा भक्ति मोक्ष को चाहे। मुक्तिहुँ को नाहीं अवगाहै। मन क्रम वच मम सेवा करै ॥ मन ते भव आशा परिहरै ॥ ऐसो भक्त सदा मोहिं प्यारो। इक छिन जाते रहौं न न्यारो ॥ ताके मैं हित मम हित सोई ॥ जा सम मेरो और न कोई। त्रिविध भक्ति मेरे है जोई ॥ जो माँगै तिहि देहुँ मैं सोई ॥ भक्त अनन्य कछू नहिं माँगै ॥ ताते मोहिं सकुच अति लागै ॥ ऐसो भक्त जानि है

---

१ कपिलमुनि बोले।

जोई। जाके शत्रु मित्र नहिं दोई ॥ हरि माया सब जग संतापै। ताको माया मोह न व्यापै[1] ॥ १३ ॥

---

१ गीता मे सप्तम अध्याय में कुछ भिन्न प्रकार से भक्ति के चार भेद कहे हैं। श्रीकृष्ण कहते हैं :—

चतुर्विधा भजन्ते मां जनाः सुकृतिनोऽर्जुन।
आर्तो जिज्ञासुरर्थार्थी ज्ञानी च भरतर्षभ ॥
उदाराः सर्व एवैते ज्ञानीत्वात्मैव मे मतम्।..॥ १८॥

बहुधा भक्ति के नौ भेद कहे हैं :—

श्रवणं कीर्तनं विष्णोः स्मरणं पादसेवनम्।
अर्चनं वन्दनं दास्यं सख्यमात्मनिवेदनम् ॥

हिन्दी मे इसका बड़ा ही सरस वर्णन सत्रहवी शताब्दी के कवि सुन्दरदास ने ज्ञानसमुद्र में किया है यथा:—

श्रीगुरुरुवाच। चौपाई छन्द।

शुनि शिष नउधा भक्ति विधानं। श्रवण कीर्तन समरण जान ॥
पादसेवन अर्चन वन्दन। दासभाव सख्यत्व समर्पन ॥ ६ ॥

१—श्रवण। चंपक छंद।

शिष तोहि कहौं श्रुति बानी। सब संतनि साखि बखानी।
द्वै रूप ब्रह्म के जानै। निर्गुन और सगुन पिछानै ॥ ११ ॥
निर्गुन निज रूप नियारा। पुनि सगुन संत अवतारा ॥
निर्गुन की भक्ति सु-मन सौं। संतनि की मन अरु तन सौं ॥ १२ ॥
येकाग्र हि चित्त जु राखै। हरिगुन सुनि रस चाखै ॥
पुनि सुनै संत के बैना। यह श्रवण भक्ति मन चैना ॥ १३ ॥

२—कीर्त्तन।

हरि गुन रसना मुख गावै। अतिसै करि प्रेम बढ़ावै ॥
यह भक्ति कीर्तन कहिये। पुनि गुरु प्रसाद तै लहिये ॥ १४ ॥

चतुर्थ स्कन्ध में यज्ञपुरुष-अवतार, पार्वती-विवाह, ध्रुवचरित्र, पृथु और पुरंजन की कथाएँ है ।

३—स्मरण ।

अब समरन दोइ प्रकारा । इक रसना नाम उचारा ॥
इक हृदय नाम ठहरावै । यह समरन भक्ति कहावै ॥ १५ ॥

४—पादसेवन ।

नित चरण कँवल महिं लोटै । मनसा करि पाव पलोटै ॥
यह भक्ति चरन की सेवा । समुझावत है गुरु देवा ॥ १६ ॥

५—अर्चना । गीता छंद ।

अब अरचना को भेद सुनि शिष देऊँ तोहि बताइ ।
आरोपिकै तहँ भाव अपनो सेइये मन लाइ ॥
रचि भाव को मंदिर अनूपम अवल मूरति माहि ।
पुनि भावसिंघासन विराजै भाव बिनु कछु नाहिं ॥१७॥
निज भाव की तहां करै पूजा, बैठि सनमुख दास ।
निज भाव की सब सौज आनै, नित्य स्वामी पास ॥
पुनि भाव ही कै कलस भरि धरि, भावनीर न्हवाइ ।
करि भाव ही के बसन बहु विधि, अग अग बनाइ ॥१८॥
तहँ भाव चंदन भाव केसरि भाव करि घसि लेहु ।
पुनि भाव ही करि चरचि स्वामी तिलक मस्तक देव ॥
लै भाव ही के पुष्प उत्तम गुहै माल अनूप ।
पहिराइ प्रभु को निरखि नख सिख भाव खेवै धूप ॥ १९ ॥
तहँ भाव ही लै धरै भोजन भाव लावै भोग ।
पुनि भावही करिकै समर्प्यै सकल प्रभु कैं योग ॥
तहाँ भाव ही को जोइ दीपक भाव घृत करि सींचि ।
तहाँ भाव ही की करै थाली धरै ताके बीचि ॥ २० ॥
तहाँ भाव ही की घंट झालरि संख ताल मृदङ्ग ।
तहां भाव ही के शब्द नाना रहै अतिशय रङ्ग ॥

पञ्चम स्कन्ध में ऋषभदेव और जड़भरत का वर्णन है ।
षष्ठ स्कन्ध मे अजामिल की कथा है और गुरु महिमा गाई है ।

यह भाव ही की आरति करि करै बहुत प्रनाम ।
तब स्तुति बहु बिधि उच्चरै धुनि सहित लै लै नाम ॥ २१ ॥

अथ स्तुति । मोतीदाम छन्द ।

अहो हरि देव न जानति सेव । अहो हरि राई परौं तौ पाइ ।।
सुनौ यह गाथ गहौ मम हाथ । अनाथ अनाथ अनाथ अनाथ ॥२२॥

६—बंदना । लीलाछन्द ॥

बदन दोई प्रकार कहौं शिष संभलियं ।
दंड समान करै तन सौ तन देउ दियं ॥
त्यौं मन सौ तन मध्य प्रभू करि पाइ परै ।
या विधि दोइ प्रकार सुबन्दन भक्ति करै ।। ३१ ।।

७—दासत्व । हंसाल छन्द

नित्य भय सौं रहै हस्त जोरे कहै । कहा प्रभु मोहिं आज्ञा सु होई ।।
पलक पतिव्रता पति वचन खंडै नहीं । भक्ति दासत्व शिष जानि सोई ॥३२॥

८—सख्यत्व । डुमिला छन्द ।

सुनि शिष्य सखापन तोहि कहों, हरि आतम कै नित संग रहै ।
पल छांड़त नाहिं समीप सदा, जितही जितको यह जीव बहै ॥
अब तू फिरिकै हरि सों हित राखहि, होइ सखा दृढ़ भाव गहै ।
इमि सुन्दर मित्रभ मित्र तजै, यह भक्ति सखापन वेद कहै ॥३३।

९—आत्मसमर्पण । कुण्डली छन्द ।

प्रथम समर्पन मन करै, दुतिय समर्पन देह ।
तृतीय समर्पन धन करै, चतु' समर्पन गेह ॥
गेह दारा धन, दास दासी जन ।
बाज हाथी गनं, सर्व दै यौं भनं ॥
और जे मे मनं, है प्रभू ते तनं ।
शिष्य बानी सुनं, आतमा अर्पनं ॥ ३४ ॥

सप्तम स्कन्ध ।

हिरण्यकशिपु के पुत्र प्रह्लाद को गर्भ में ही नारदजी का उपदेश सुन कर ज्ञान हो गया था और राम नाम पर भक्ति हो गई थी। बालकपन में उन्होंने राम नाम को छोड़ कर और कुछ पढ़ना स्वीकार न किया।

श्रीनृसिंहरूप अवतार वर्णन ॥ राग बिलावल ॥

षंडामर्क रहे पचिहाल। राजनीति कह्यो बारम्बार॥ कह्यो प्रह्लाद पढ़त मैं सार। कहाँ पढ़ावत और जंजार॥ जब पाँड़े इत उत कहिं गए। बालक सब इकठौरे भए॥ कह्यो यह ज्ञान कहाँ तुम पायो। नारद माता गर्भ सुनायो॥ सबनि कह्यो देहु हमैं सिखाइ। सबहुनकै मति ऐसी आइ॥ कह्यो सबनि से तब समुझाई। सब तजि भजो चरण रघुराई॥ रामहि राम पढ़ो रे भाई। रामहिं जहँ तहँ होत सहाई॥ इहाँ कोऊ काहूको नाहिं। असंबंध मिलत जगमाहिं॥ काल अवधि जब पहुँचे आई। चलते बेर कोउ संग न जाई॥ सदा संघाती श्रीयदुराई। भजिए ताहि सदा लवलाई॥ हर्ता कर्ता आपै सोई। घट घट व्यापि रह्यो है जोई॥ ताते द्वितिया और न कोई। ताके भजे सदा सुख होई॥ दुर्लभ जन्म सुलभही पाई। हरि न भजै सो नरकहि जाई॥ यह जिय जानि विषय परिहरो। राम नाम ही सदा उच्चरो॥ शत संवत मनुष्य की आई। आधी तो सोवत ही जाई॥ कछु बालापनहीं में बीते। कछु विरधापन माहिं व्यतीते॥ कछु नृप सेवा करत बिहाई। कछु इक विषय भोग मे जाई॥ ऐसेही जो जन्म सिराई। बिन हरिभजन नरक में जाई॥ बालपनो गए ज्वानी आवै। वृद्ध भये मूरख पछतावै॥ तीनों

पन पुनि ऐसहि जाई। ताते अबहिं भजो यदुराई॥ विषय भोग सब तन में होई। बिनु नर जन्म भक्ति नहिं होई॥ जाने करै सो पशुसम होई। ताते भक्ति करो सब कोई॥ जब लगि काल न पहुँचै आई। हरि की भक्ति करौ चितलाई॥ हरि व्यापक है सब संसार। ताहि भजो ऐसी बिचार॥ शिशु किशोर वृद्ध तनु होई। सदा एक रस आतम सोई॥ जानि ऐसो तनु मोहै त्यागो। हरि चरणारविंद अनुरागो॥ माटी में जो कंचन परै। त्योंही आतमतनु संचरै॥ कंचन ते जो माटी तजै। त्यों तनु मोह छांडि हरि भजै॥नर सेवा ते जो सुख होई। क्षणभंगुर थिर रहै न सोई॥ हरि की भक्ति करो चित लाई। होइ परम-सुख कबहुँ न जाई॥ नीच ऊँच हरि गिनत न दोइ। यह जिय जानि भजो सब कोइ॥ असुर होइ सुर भावै होई। जो हरि भजै पिआरो सोई॥ रामहि राम कहो दिन रात। नातर जन्म अकारथ जात॥ सौ बातन की एकै बात। सब तजि भजो द्वारकानाथ॥ सब चेटियन ऐसी मन आई। रहे सबै हरिपद चित लाई॥ हरि हरि नाम सदा उच्चारैं। विद्या और न मन मे धारैं॥ २॥

प्रह्लाद की हरिभक्ति से रुष्ट होकर हिरण्यकशिपु ने उसको मारने के बहुत उपाय किये पर कोई उपाय सफल न हुआ। तलवार खींच कर उसने प्रह्लाद से पूछा कि बता अब तेरा राम कहां है? प्रह्लाद ने कहा कि सब जगह है मोमे, तोमे या खम्भ में। खम्भ में से नृसिंह निकले जिन्होंने हिरण्यकशिपु को रात और दिन के बीच में गोद में लेकर नखो से मार डाला। इसके बाद सूरदास ने नारदजी की उत्पत्ति कही है।

अष्टम स्कन्ध ।

आठवे स्कन्ध मे गजमोचन-अवतार, कच्छप-अवतार, समुद्रमथन, मोहिनीरूप, वामन-अवतार और मत्स्य-अवतार का वर्णन है ।

नवम स्कन्ध ।

नवे स्कन्ध में राजा पुरुरवा, च्यवन, हलधर, राजा अम्बरीष और सौभर ऋषि की कथा है । तत्पश्चात् मृत्युलोक मे गङ्गाजी के आने का वर्णन है । परशुराम-अवतार के बाद कवि ने राम-अवतार के कारणों का निर्देश किया है । इस स्कन्ध मे संक्षेप से पूरा रामचरित्र[1] कहा गया है ।

बालकांड श्रीरामजन्म-वर्णन ॥ राग कान्हरा ॥

आजु दशरथ के आँगन भीर । आए भुव भार उतारन कारन प्रगटे श्याम शरीर ॥ फूले फिरत अयोध्यावासी गनत न त्यागत चीर । परिरम्भण हँसि देत परस्पर आनँद नैननि नीर ॥ त्रिदश नृपति ऋषि व्योम विमाननि देखत रहे न धीर । त्रिभुवननाथ दयालु दरश दै हरि सबन की पीर ॥ देत दान राख्यो न भूप कछु महा बड़े नग हीर । भये निहाल सूर सब याचक जे याचे रघुबीर[2] ॥ १४ ॥

---

१ श्रीमद्भागवत के नवम स्कन्ध के दसवे अध्याय मे रामचरित्र का संक्षिप्त निर्देश किया गया है ।

२ गृह गृह बाज बधाव शुभ, प्रगटेउ सुखमा कंद ।
हरषवन्त सब जहँ तहा, नगर नारि नर वृन्द ॥
(तुलसीकृत रामायण बालकांड ।)

राग कान्हरा ॥

अयोध्या बाजत आज बधाई। गर्भ मुच्यो कौशल्या माता रामचन्द्र निधि आई॥ गावैं सखी परस्पर मंगल ऋषि अभिषेक कराई। भीर भई दशरथ के आँगन साम वेद ध्वनि गाई॥ पूछत ऋषिहि अयोध्या को पति कहि हो जन्म गुसाईं। बुद्धवार नौमी तिथि नीकी चौदह भुवन बड़ाई॥ चारि पुत्र दशरथ के उपजे तिहूँ लोक ठकुराई। सदा सर्वदा राज राम को सूरदादि तहाँ पाई॥ १५॥[1]



राग कान्हरा ॥

रघुकुल प्रगटे हैं रघुबीर। देश देश ते टीका आयो रतन कनक मनि हीर॥ घर घर मगल होत बधाई अति पुरबासिन भीर। आनँद मगन भये सब डोलत कछू न शोध शरीर॥ मागध बंदी सूत लुटाए गउ गयंद हय चीर। देत अशीश सूर चिरजियो रामचन्द्र रणधीर[1]॥ १६॥

(इसके बाद विश्वामित्र के साथ राम लक्ष्मण का जाना, ताडका-वध, धनुष-यज्ञ, विवाह आदि का निर्देश है। दशरथ ने रामचन्द्र को तिलक देने का सामान किया। कैकेयी ने विघ्न डाला। रामचन्द्रजी वन जाने को तैयार हुए। सीताजी ने भी साथ चलने की ठानी। राम ने बहुत समझाया पर वह न मानीं। बोलीं:—)

---

१ मागध सूत वन्दि गण गायक। पावन गुण गावहिं रघुनायक।
सर्वस दान दीन्ह सब काहू। जेहिं पावा राखा नहिं ताहू॥
मृगमद चन्दन कुंकुम सींचा। मची सकल वीथिन बिच कीचा॥
(तुलसीकृत रामायण बालकांड)।

जानकी वचन श्रीराम जू प्रति ॥ राग केदारा ॥

ऐसी जिय जिनि धरो रघुराई । तुमसों तजि प्रभु मोसी दासी अनंत न कहूँ समाई ॥ तुमरो रूप अनूप भानु ज्यों जब नैननि भरि देखौं । ता छिन हृदय कमल परिफुल्लित जन्म सफल करि लेखौं[१] ॥ तुमरे चरन कमल सुखसागर यह व्रत हों प्रतिपलिहौं । सूर सकल सुख छाँड़ि आपुनो वन बिपदा सँग चलि हौं ॥ ३४ ॥

राम, सीता और लक्ष्मण वन को चले । गङ्गा-तट पर पहुँच कर लक्ष्मण ने नाव मँगाई ॥



लक्ष्मण-केवट-सवाद ॥ राग मारू ॥

रे भैया केवट ले उतराई । रघुपति महाराज इत ठाढ़े तें कित नाव दुराई ॥ अबहिं शिलाते भई देव गति जब पगु रेणु छुआई । हौं कुटुंब काहे प्रतिपारौं वैसी यह ह्वै जाई ॥ जाके चरन रेणु की महिमा सुनियतु अधिक बड़ाई । सूरदास प्रभु अगनित महिमा वेद पुराननि गाई ॥ ३८ ॥



केवट-विनय ॥ राग कान्हरा ॥

नवका नाही हौं लै आऊँ । प्रगट प्रताप चरण को देखो ताहि कहाँ लौं गाऊँ ॥ कृपासिंधु पै केवट आयो कंपत करत जु बात । चरण परसि पाषान उड़त है मति मेरी उड़ि जात ॥ जो

---

१ नाथ सकल सुख साथ तुम्हारे । सरद विमल विधु वदन निहारे ॥
तुलसीदास, अयोध्याकाड ।

२ इतना सुन कर केवट ने उत्तर दिया ।

यह बधू होय काहू की दार स्वरूप धरे । छूटे देह जाइ सरिता तजि पगसों परस करे ॥ मेरी सकल जीविका यामें रघुपति मुक्ति न कीजै । सूरदास चढ़ो प्रभु पाछे रेणु पखारन दीजै[1] ॥ ३९ ॥

अन्त मे केवट ने पार उतार दिया । जहा जहा राम-सीता-लक्ष्मण जाते थे भीड़ लग जाती थी । स्त्रियाँ सीताजी के पास आकर बाते करती थीं ।



पुरवासी वचन जानकी प्रति ॥ राग रामकली ॥

सखी री कौन तिहारी जात । राजिवनैन धनुष कर लीने

केवट-वचन राम प्रति ॥ राग रामकली ।

1 मेरी नवका जिन चढ़ौ त्रिभुवन पति राई । मो देखत पाहन उडे मेरी काठ कि नाई ॥ मैं खेवीही पार को तुम उलटि मँगाई । मेरो जिय योंही डरै मति होहि शिलहाई ॥ मैं निर्बल मेरे बल नहीं जो और गढ़ाऊँ । मेरो कुटुम्ब माहीं लग्यो ऐसी कहां पाऊँ ॥ मैं निर्धन मेरे धन नहीं परिवार घनेरो । सेमर ढाक पलाश काटि बाँधो तुम बेरो ॥ बार बार श्रीपति कहै केवट नहिं मानै । मन परतीति न आवै उड़तीही जानै ॥ नियरेहीं जल थाह है चलो तुमैं बताऊँ । सूरदास की बिनती नीके पहुँचाऊँ ॥ ४० ॥

माँगी नाव न केवट आना । कहइ तुम्हार मरमु मैं जाना ॥
चरन कमल रज कहँ सब कहई । मानुष करनि मूरि कछु अहई ॥
छुअत सिला भई नारि सुहाई । पाहन ते न काठ कठिनाई ॥
तरनिउँ मुनि घरनी होइ जाई । बाट परइ मोरि नाव उड़ाई ॥
एहि प्रति पालउँ सब परिवारू । नहिं जानउँ कछु अउर कबारू ॥
जौ प्रभु पार अवसि गा चहहू । मोहि पदपदुम पखारन कहहू ॥
पदकमल धोइ चढ़ाइ, नाथ न नाथ उतराई चहहुँ ।
मोहि राम राउरि आन, दसरथ सपथ सब साँची कहहुँ ॥

वदन मनोहर गात ॥ लज्जित रही पुर बधू पूँछे अंग अंग मुसक्यात । अति मृदु वचन पंथ बन विहरत सुनियत अद्भुत बात ॥ सुन्दर नैन कुँवर सुन्दर दोउ सूर किरन कुम्हिलात । देखि मनोहर तीनों मूरति त्रिविध ताप तनु जात ॥ ४१ ॥



सीता सैन, पति जतावन । राग धनाश्री ॥

कहि धौं सखी बटोहीको हैं । अद्भुत बधू लिये सँग डोलत देखत त्रिभुवन मोहैं ॥ परम सुशील सुलक्षण जोरी विधि की रची न होई । काकी अब उपमा यह दीजै देह धरे धौं कोई ॥ इहि मे को पति त्रिया तुम्हारो पुरजन पूछै धाई । राजिवनैन मैनकी मूरति सैनन माहिं बताई ॥ गए सकल मिलि संग दूरि लौं मन न फिरत पुरबास । सूरदास स्वामी के बिछुरत भरि भरि लेत उसाँस[1] ॥ ४२ ॥

वरु तीर मारहि लषन पै जब लगि न पाय पखारिहउँ ।
तब लगि न तुलसीदास नाथ कृपालु पारु उतारिहउँ ॥
(तुलसीकृत रामायण अयोध्याकांड) ।

१ सीय समीप ग्रामतिय जाहीं । पूछत अति सनेह सकुचाहीं ।
राजकुमारि विनय हम करहीं । तिय सुभाय कछु पूछत डरहीं ।
स्वामिनि अविनय छमबि हमारी । विलगु न मानव जानि गँवारी ।
राजकुँअर दोउ सहज सलोने । इन्ह ते लहि दुति मरकत सोने ।
स्यामल गौर किसोर वर , सुंदर सुखमा ऐन ।
सरद सर्वरी नाथ मुख , सरद सरोरुह नैन ॥
कोटि मनोज लजावनि हारे । सुमुखि कहहु को आहिं तुम्हारे ।
सुनि सनेहमय मंजुल बानी । सकुचि सीय मन महँ मुसुकानी ।
तिनहि बिलोकि बिलोकति धरनी । दुहु सकोच सकुचति वर वरनी ।

राम-वियोग से दशरथ ने प्राण तज दिये। ननिहाल से लौटकर भरत को सब समाचार जानने पर बड़ा शोक हुआ। वह राम सीता से मिलने के लिए वन को गये।

राग केदारा ॥

भरत मुख निरखि राम बिलखाने। मुंडित केश शीश बिहबल दोउ उमँगि कंठ लपटाने ॥ तात मरन सुनि श्रवण कृपानिधि धरणि परे मुरझाई। मोह मगन लोचन जलधारा बिपति हृदय न समाई॥ लोटति धरणि परी सुनि सीता समुझति नहिं समुझाई। दारुण दुःख दया ज्यों तृणवन नाहीं बुझति बुझाई॥ दुर्लभ भयो दरश दशरथ को भयो अपराध हमारे। सूरदास स्वामी करुणामय नैन न जात उघारे[1] ॥ ५० ॥

राम के समझाने पर भरत लौट गये। रामचन्द्रजी दक्षिण की ओर चले। लङ्काधिराज रावण सीता को हर ले गया। किष्किन्धा में राम से सुग्रीव से मैत्री हुई। ढूँढ़ते ढूँढ़ते हनूमान्‌जी ने सीताजी को अशोक वाटिका मे देखा।



हनूमान्‌जी बोले :—

राग सारंग ॥

जननी हौं रघुनाथ पठायो। रामचन्द्र आये की तुमको देन

सकुचि सप्रेम बालमृग नैनी। बोली मधुर वचन पिकबैनी।
सहज सुभाय सुभग तन गोरे। नाम लषन लघु देवर मोरे।
बहुरि वदन विधु अंचल ढाँकी। पिय तन चितइ भौंह करि बाँकी।
खंजन मंजु तिरीछे नैननि। निज पति कहेउ तिन्हहि सिय सैननि।

१ (वशिष्ठ ने) नृपकर सुरपुर गवन सुनावा। सुनि रघुनाथ दुसह दुख पावा ॥
मरनहेतु निज नेह बिचारी। भे अति विकल धीर धुरि धारी ॥
(तुलसी अयोध्याकांड)

बधाई आयो ॥ हौं हनुमंत कपट जिनि समुझो बात कहत समुझाई। मुँदरी दूब धरी लै आगे तब प्रतीति जिय आई ॥ अति सुख पाइ उठाइ लई तब बार बार उर भेंटति। ज्यों मलयागिरि पाइ आपनी जरनि हृदय की मेटति ॥ लक्ष्मण पालागन करि पठयो हेतु बहुत करि माता। दई अशीश तरनि सन्मुख ह्वै चिरजीयो दोउ भ्राता ॥ बिछुरन को संताप हमारो तुम दरशन ते काढ्यो। ज्यों रवि तेज पाइ दशहूँ दिशि दोष कुहर को फाढ्यो ॥ ठाढ़े बिनती करत पवनसुत अब जो आज्ञा पाऊँ ॥ अपने देख चले को यह सुख उनहूँ जाइ सुनाऊँ। कल्प समान एकछन राघवकर्म कर्म करि बितवत। ताते हौं अकुलात कृपानिधि ह्वै हैं पैंड़ो चितवत ॥ रावण हतिलै चलो साथही लंका धरौं अपूठी ॥ याते जिय अकुलात कृपानिधि करौं प्रतिज्ञा झूठी[1]। यहाँ जो सब दशा हमारी सूर सो कहियो जाई ॥ बिनती बहुत कहा कहौं रघुपति जिहि बिधि देखौं पाई ॥८५॥

आसुन सों सब पर्वत धोए। जंगम को जड जीवन रोये ॥

केशवदास रामचन्द्रिका दशम प्रकाश, ३२

१ यही भाव तुलसीदास मे भी है। हनूमानूजी सीताजी से कहते है :—

अबहिं मातु मैं जाउँ लेवाई। प्रभु आयसु नहिं राम दोहाई ॥

(तुलसी, सुन्दरकांड)

सभा मे अङ्गद ने रावण से कहा :—

जौं न राम अपमानहिं डरऊँ। तेहि देखत अस कौतुक करऊँ ॥

तोहि पटकि महि सेन हति, चौपट करि तव गाउँ।

तव जुवतीन्ह समेत सठ, जनक सुतहिं लेइ जाउँ ॥

(तुलसी, लङ्काकांड)

सीताराम-पराक्रम-वर्णन उराहनासमेत वेगि मिलाप हित ॥ राग कान्हरा ॥

सुन कपि वे रघुनाथ नहीं। जिन रघुनाथ पिनाक पितान्यो तोर्‍यो निमिष महीं ॥ जिन रघुनाथ फेरि भृगुपति गति डारी काटि तहीं ॥ जिहिं रघुनाथ हार खरदूषण हरे प्राण शरहीं। कै रघुनाथ तज्यो प्रण अपनो योगिन दशा गही ॥ कै रघुनाथ दुखित कानन कै नृप भये रघुकुलहीं ॥ कै रघुनाथ अतुल राक्षस बल दशकंधर डरहीं। छाँड़ी नारि बिचारि पवनसुत लंक बाग बसही ॥ किधौं कुचील कुरूप कुलक्षण तौ कंतहि न चहीं ॥ सूरदास स्वामी सो कहियो अब बिरमियो नहीं ॥८६॥

राम और रावण मे घोर युद्ध हुआ। मेघनाथ ने लक्ष्मण को शक्ति मारकर मूर्छित कर दिया।



श्रीराम करुणा ॥ राग मारू ॥

निरखि मुख राघव धरत न धीर। भये अरुण विकराल कमलदल लोचन मोचत नीर ॥ बारह बरस नींद है साधी ताते विकल शरीर। बोलत नहीं मौन कहा साधी विपति बटावन बीर ॥ दशरथ मरन हरन सीता को रन वीरन की भीर। दूजो सूर सुमित्रा सुतबिनु कौन धरावै धीर ॥ १४१ ॥



अन्यच्च ॥

अबहीं कौन को मुख हेरों। रिपुसैना समूह जल उमड़े काहि संगलै फेरों॥ दुख समुद्र जिहि वार पार नहिं तामे नाव चलाई। केवट थक्यो रह्यो अध बीचक कौन आपदा आई ॥ नाहिंन भरत शत्रुघन सुन्दर जासों चित्त लगायो॥ बीचहि भई और की औरै भयो शत्रु को भायो॥ मैं निज प्राण तजौंगो

सुन कपि तजिहैं जानकी सुनि कै। ह्वैहै कहा बिभीषण की गति यहै सोच जिय गुनि कै॥ बार बार शिर लै लक्ष्मण को निरखि गोद पर राखैं। सूरदास प्रभु दीन बचन यों हनूमानसों भाखैं[1]॥ १४२॥

सुषेण वैद्य की बताई हुई औषधि हनुमानजी पर्वत सहित ले आये। लक्ष्मणजी की मूर्छा दूर हुई। युद्ध मे कुम्भकर्ण, मेघनाद, रावण और सब राक्षस मारे गये। सीताजी को लेकर राम अयोध्या की ओर चले।



राम आगमन श्रवण सुनि भरत रचना करन उत्सव प्रकाश॥ राग वसंत॥

राघव आवति हैं अवधि आजु। रिपु जीते साधे देव काजु॥ प्रभु कुशल बधू सीतासमेत। जस सकल देश आनंद देत॥ कपि शोभित सकल अनेक संग। ज्यौं पूरण शशि सागर तरंग॥ सुग्रीव विभीषण जाम्बवंत। अंगद केदार सुखेन संत॥ नल नील द्विविद केसरि गवछ। कपि कहे मुख्य और अनेक लछ॥ जब कही पवनसुत विविध बात। तब उठी सभा सब हर्ष गात॥ ज्यों पावस ऋतु घन प्रथम घोर। जल जीवक दादुर रटत मोर॥ जब सुने भरत पुर निकट भूप। तब रच्यौ

---

१ तुलसीकृत रामायण में रामविलाप कुछ भिन्न रीति से दिया है:—

सकहु न दुखित देखि मोहि काऊ। बंधु सदा तव मृदुल सुभाऊ॥
जो जनतेउँ वन बन्धु बिछोहू। पिता वचन मनतेउँ नहिं ओहू।
जथा पंख बिनु खग अति दीना। मनि बिनु फनि करिवर कर हीना।
अस मम जिवन बन्धु बिनु तोही। जौं जड़ दैव जियावइ मोही॥
जैहउँ अवध कवन मुँह लाई। नारि हेतु प्रिय भाइ गँवाई॥
(लङ्काकांड)

नगर रचना अनूप ॥ प्रति प्रति गृह तोरण ध्वजा धूप। सजे सकल कलश अरु कदली जूप ॥ दधि हरद दूब फल फूल पान। कर कनकथार त्रिय करत गान ॥ सुनि भरे वेद ध्वनि शंख नाद। सुनि निरखि पुलक आनँद प्रसाद ॥ देखत प्रभु की महिमा अपार। सब बिसारि गये मन बुधि बिकार ॥ जय जय दशरथ कुल कमल भान। जय कुमुद जननि शशि प्रजा प्रान ॥ जय दिव भूतल शोभा समान। जय जय जय सूर न शब्द आन[1] ॥ १६४ ॥

अयोध्या में बड़े आनन्द हुए। माताओं ने राम की आरती की। राज्याभिषेक हुआ। नवम स्कन्ध के शेष भाग में अहिल्या, नहुष, कच और देवयानी की कथा है।

---

१ समाचार पुर वासिन्ह पाये। नर अरु नारि हरषि सब धाये ॥
दधि दुर्बा रोचन फल फूला। नव तुलसीदल मंगल मूला ॥
भरि भरि हेम थार भामिनी। गावत चलीं सिंधुरगामिनी ॥
अवधिपुरी प्रभु आवति जानी। भई सकल शोभा कै खानी ॥
नई सरजू अति निर्मल नीरा। बहइ सुहावन त्रिविध समीरा ॥
सुमन वृष्टि नभ संकुल, भवन चले सुखकंद।
चढ़ी अटारन्हि देखहिं, नगर नारि नर वृंद ॥
कचन कलस विचित्र सँवारे। सबहिं धरे सजि सजि निज द्वारे ॥
वंदनवार पताका केतू। सबन्हि बनाये मंगलकेतू ॥
वीथी सकल सुगंध सिंचाई। गजमनि रचि बहु चौक पुराई ॥
नाना भाँति सुमंगल साजे। हरषि नगर निसान बहु बाजे ॥
करहिं आरती आरति हर कै। रघुकुल कमल विपिन दिन करकै ॥
नारि कुमुदनी अवध सर, रघुपति विरह दिनेस।
अस्त भये विगसत भईं, निरखि राम राकेस ॥
(तुलसी, उत्तरकांड।)

दशम स्कन्ध पूर्वार्ध ।

मथुरा के राजा उग्रसेन का पुत्र कंस बड़ा दुष्ट और राक्षसी स्वभाव का था। उसके और अन्य दुराचारियों के पापों और अत्याचारों से दुखी होकर पृथ्वी विलाप करती हुई ब्रह्माजी के पास गई। ब्रह्माजी ने परमेश्वर का ध्यान किया और हृदयाकाश में यह अलौकिक वाणी सुनी कि परमेश्वर शीघ्र ही पृथ्वी का भार उतारने के लिए अवतार लेंगे। ब्रह्माजी के आदेश से देवताओं ने यदुवंश मे जन्म लिया और अप्सराओं ने गोपियों का रूप धारण किया।

इधर शूरवंशी वसुदेव कंस की बहिन देवकी से विवाह कर घर लौट रहे थे। कंस भी कुछ दूर पहुँचाने के लिए साथ हुआ और रथ हाकने लगा। इतने में कंस के प्रति आकाशवाणी हुई कि "हे मूर्ख, जिस देवकी का रथ तू हाँक रहा है उसका आठवाँ पुत्र तेरा काल होगा"। यह सुन कर कंस बहन की जान लेने पर उद्यत हुआ।

वसुदेव ने बहुत समझाया बुझाया, बहुत अनुनय विनय की और प्रतिज्ञा की कि देवकी के सब पुत्रों को मैं तुम्हें दे दूँगा। तब कंस ने देवकी को बिदा किया। एक एक करके वसुदेव ने अपने सात पुत्र कंस के समर्पण कर दिये। एक एक करके कंस ने सबके प्राण ले लिये। आठवा गर्भ रहते ही कंस के भय का वार पार न रहा। उसने वसुदेव और देवकी को लोहे की जंज़ीरों से जकड़ कर अपने घर मे बन्द कर दिया। चारों ओर सशस्त्र पहरा बैठा दिया। भादों के कृष्णपक्ष की अष्टमी को आधी रात पर बालक का जन्म हुआ। उसके मनोहर मुख को देखकर देवकी पति से बोली[1] :—

राग केदारा ॥

हो पिय सो उपाय कछु कीजै। जेहि तेहि बिधि दुराय

---

1 श्रीमद्भागवत दशम स्कन्ध पूर्वार्द्ध अध्याय 1-3।

लल्लूजीलाल कृत प्रेमसागर।

इह ब लक राखि कंससों लीजै ॥ मनसा वाचा कहत कर्मना नृपतिहि नही पतीजै। बुधि बल छल कल कैसेहूँ करिकै काटि अनत लै दीजै ॥ नाहिन यतनो भाग सो यह रस नित लोचन पट पीजै। सुनहु सूर ऐसे सुत को मुख निरखि निरखि जग जीजै ॥ ५ ॥

(यह सुन कर वसुदेव ने कहा)

राग केदारा ॥

सुन देवकी को हितू हमारे। असुर कंस अपवंश बिनाशन शिर पर बैठे हैं रखवारे ॥ ऐसो को समरथ त्रिभुवन में जो यह बालक नेक उबारै। खड्ग धरे आयो तो देखत अपने कर क्षणमांह पछारे ॥ यह सुनतहि अकुलाइ गिरी धर नैन नीर भरि भरि दोउ डारे। दुखित देखि वसुदेव देवकी प्रगट भये धरिकै भुज चारे ॥ बोलत उठे प्रतिज्ञा प्रभु यह मति उबरै तब मोहिं मारे। अति दुख में सुख दै पितु मातहि सूर को प्रभु नन्दभवन सिधारे ॥ ६ ॥



राग केदारा।

भादों भर की राति अँधियारी। द्वारकपाट कोट भट रोके दशहुँ दिशि कंस भय भारी ॥ गर्जत मेघ महा डर लागत बीच बढ़ी यमुना जल कारी। तबते इहै शोच जिय मेरे क्यों दुरिहै शशिवदन उज्यारी ॥ कतपिय बोल बचन करि राखी बरु ताही दिन जीवनमारी। कहि जाको ऐसो सुत बिछुरै सो कैसे जीवै महतारी ॥ करि न बिलाप देवकी सो कहि दीनदयालु

भक्त भयहारी। छुटिगयो निबिड तबहि गये गोकुल सूर सुमति दै बिपति निवारी॥७॥



(यशोदा की नवजात बालिका को उठा कर और उसके स्थान पर बालक कृष्ण को रखकर वसुदेव चल दिये। देवकी के पास बालिका रोने लगी। पहरेवालों को होश आया। समाचार पाते ही कंस दौड़ा आया और बालिका को मारने को उद्यत हुआ। देवकी ने बड़ी विनय की पर वह न माना। पत्थर पर पछाड़ते ही वह आकाश को चली गई और कंस से कह गई कि तेरा मारनेवाला अन्यत्र जन्म ले चुका है। इधर गोकुल में)

राग बिलावल॥

जागी महरि[1] पुत्रमुख देख्यौ आनँद तूर बजाइ। कंचन कलश हेम द्विजपूजा चंदन भवन लिपाइ॥ दिन दशही ते वर्षै कुसुमनि फूलन गोकुल छाइ। नंद कहै इच्छा सब पूजी मनवांछित फल पाइ॥ आनँदभरे करत कौतूहल उदित मुदित नर नारी। निर्भय भए निशान बजावत देत निशंके गारी॥ नाचत महर मुदित मन कीने। ग्वाल बजावत तारी। सूरदास प्रभु गोकुल प्रगटे मथुरा कंस प्रहारी[2]॥१३॥



राग रामकली॥

हौं एक बात नई सुनि आई। महरि यशोदा ढोटा जायो घर घर होत बधाई॥ द्वारे भीर गोप गोपिन के महिमा वरणि न

१ यशोदा।

२ श्रीमद्भागवत दशम स्कन्ध अध्याय २ और ३।

जाई । अति आनंद होत गोकुल में रत्न भूमि सब छाई ॥ नाचत तरुण वृद्ध अरु बालक गोरस कीच मचाई । सूरदास स्वामी सुखसागर सुन्दर श्याम कन्हाई ॥ हौं सखी नई चाह एक पाई । ऐसे दिनन नंद के सुनियत उपजे पूत कन्हाई ॥ बाजत पवन निशान पंचबिधि रुंज मुरज सहनाई । महर महरि ब्रज हाट लुटावत आनँद उर न समाई ॥ चलौ सखी हमहूँ मिलि जैये वेगि करौ अतुराई । कोउ भूषण पहिर्यो कोउ पहरति कोउ वैसेहि उठि धाई ॥ कंचन थार दूब दधि रोचन गावत चलीं बधाई । भाँति भाँति बनि चली युवति गण यह उपमा मोपै नहि आई ॥ अमर बिमान चढ़े सुर देखत जयध्वनि शब्द सुनाई । सूरदास प्रभु भक्त हेतु हित दुष्टन के दुखदाई ॥ १६ ॥



राग काफी ॥

आजु निशान बाजै नंद महरिके । आनंद मगन नर गोकुल शहर के । आनँदभरी यशोदा उमँगि अंग न समाति आनंदित भई गोपी गावति चहरके ॥ दूब दधि रोचन कनकथार लैलै चलीं मानों इंद्रबधू जुरि पाँतिनि बहरके । आनंदित भए ग्वाल बाल करत विनोद ख्याल भुजभरि धरि अंकम दै वरहरिके ॥ आनंदमगन धेनुथन स्रवै पय फेनु उमँग्यो यमुनजल उछलै लहरके । अंकुरति तरु पात उकठि रहे जे गात वनवेली प्रफुलित कलिन कहरके । आनंदित विप्रसुत मागध याचक गण उमँगे असीस देत तरह तरह हरिके ॥ आनंदमगन सब अमर गगन छाए पुहुप बिमान चढ़े पहर पहरके । सूरदास प्रभु आइ गोकुल प्रगट भए संतन भयो हरष दुष्टजन मन दहरके ॥ २४ ॥

छठी व्यवहार ॥ राग काफी ॥

अति परम सुंदर पालनागढ़ि ल्याव रे बढ़ैया। शीतल चंदन कटाउ धरि खरादि रंग लगाउ विविध चौकी बनाउ रंग रेशम लगाउ हीरा मोती लाल मढ़ैया ॥ विश्वकर्मा सुढार रच्या है काम सुनार मणि गणि लागे अपार नंदमहर सुत काज अढ़ैया। आनि धर्यो नंदद्वार अतिही सुंदर सुढार ब्रजबधू देखैं बारबार शोभा नहिं वारपार धनि धनि धन्य है गढ़ैया ॥ पालनो आयो सबहि अति मनमान्यो नीको सो दिन धराइ सखिन मंगल गवाय रंगमहल में पौढ़्यो हैं कन्हैया ॥ सूरदास प्रभु की मैया यशुमति नँदरानी जोई माँगत सोई लेत बधैया॥३५॥



राग धनाश्री ॥

यशोदा हरि पालने झुलावै। हलरावै दुलराइ मल्हावै जोइ सोइ कछु गावै ॥ मेरे लाल को आउ निदरिया काहे न आनि सुवावै। तू काहे न वेगीसी आवै तो को कान्ह वुलावै ॥ कबहूँ पलक हरि मूंदिलेत हैं कबहुँ अधर फरकावै। सोवत जानि मौन ह्वै ह्वै रही कर करि सैन बतावै ॥ इहि अंतर अकुलाइ उठे हरि यशुमति मधुरै गावै। जो सुख सूर अमर मुनि दुर्लभ सो नँदभामिनी पावै ॥ ३७ ॥



धीरे धीरे कृष्ण बढ़ने लगे। पता पाकर कंस को चिन्ता हुई। उसने कृष्ण के प्राण लेने के लिए पूतना को भेजा।

राग धनाश्री ॥

प्रथम कंस पूतना पठाई। नंदघरनि जहँ सुतलिए बैठी चली तेहि धामहि आई ॥ अति मोहनी रूप धरि लीनो देखत

सबहीके मन भाई। यशुमति रही देखि वाको मुख काकी बधू कौन धौं आई। नंदसुवन तबहीं पहिचानी असुर घरनि असुरन की जाई॥ आपुन वज्र समान भए हरि माता दुखित भई भरपाई। अहो महरि पालागन मेरो हौं तुम्हरो सुत देखन आई। यह कहि गोद लियो अपने तब त्रिभुवनपति मनमन मुसकाई। मुख चूँब्यो गहि कंठ लगाए बिष लपट्यो अस्तन मुख लाई॥ पयसँग प्राण ऐंचि हरि लीन्हें योजन एक परी मुरझाई। त्राहि त्राहि कहि व्रजजन धाए अति बालक क्यों बच्यो कन्हाई। अति आनंद सहित सुत पायो हृदये माँझ रहे लपटाई॥ करवर टरी बड़ी मेरे की घर घर आनंद करत बधाई। सूरश्याम पूतना पछारी यह सुनि जिय डरप्यो नृपराई[1]॥ ४२॥



(तब कंस ने सिद्धर ब्राह्मण को भेजा)

राग बिलावल॥

सिद्धर बाँभन करम कसाई कह्यो कंससों बचन सुनाई। प्रभु मैं तुम्हारो आज्ञाकारी। नंदसुवन को आवों मारी॥ कंस कह्यो तुमते इह होई। तुरत जाहु कर विलँब न कोई॥ शिरधर नंद भवन चलि आयो। यशोदा उठिकै माथो नायो॥ करो

---

१ श्रीमद्भागवत दशम स्कन्ध अध्याय ६।

पूतना का मायावी रूप इस प्रकार वर्णन किया है:—

तां केशबन्धव्यतिषक्तमल्लिकां बृहन्नितम्बस्तनकृच्छ्रमध्यमाम्।
सुवाससं कम्पितकर्णभूषणत्विषोल्लसत्कुन्तलमण्डिताननाम्॥५॥
वल्गु स्मितापाङ्गविसर्गवीक्षितैर्मनो हरन्तीं वनितां व्रजौकसाम्।
अमंसताम्भोजकरेण रूपिणीं गोप्यः श्रियं द्रष्टुमिवागतां पतिम्।६॥

रसोईं मे चलि जावो। तुम्हरे हेतु यमुनाजल ल्यावो ॥ इह कहि यशुदा यमुना गई। सिद्धर कही भली इह भई। उन अपने मनमारन ठानो। हरिजी ताको तबही जानो ॥ ब्राह्मण मारे नही भलाई। अंग याकों मै देउँ नशाई ॥ जबहीं ब्राह्मण हरि-ढिग आयो। हाथ पकर हरि ताहि गिरायो ॥ गोड़ चाप लै जीभ मरोरी। दधि ढरकायो भाजन फोरी ॥ राख्यो कछु तेहि मुख लपटाई ॥ आपु रहे पलना पर आई ॥ रोवन लागे कृष्ण विनानी। यशुमति आइ गई लै पानी ॥ रोवत देखि कह्यो अकु-लाई ॥ कहा कर्‌यो तै विप्र अन्याई ॥ ब्राह्मण के मुख बात न आवै। जीभ होइ तौ कहि समुझावै ॥ ब्राह्मण को घरबाहर कीन्हों। गोद उठाइ कृष्ण को लीन्हों ॥ पुरवासी सब देखन आए। सूरदास हरि के गुण गाए ॥ ४६ ॥



राग बिलावल ॥

सुन्यो कंस पूतना मारी। शोच भयो ताके जिय भारी ॥ कागासुर को निकट बुलायो। तासों कहि सब वचन सुनायो ॥ मम आयसु तुम माथे धरौ। छल बल करि मम कारज करौ ॥ इह सुनिकै तिन्ह माथो नायो। सूर तुरत ब्रज को उठि धायो ॥ ५० ॥



अथ कागासुर को आयबो ॥ राग सारंग ॥

कागरूप एक दनुज धर्‌यो। नृप आयसु लैकर माथे पर हर्षवंत उर गर्व भर्‌यो ॥ कितिक बात प्रभु तुम आयसु लै यह जानो मो जात मर्‌यो। इतनी कहि गोकुल उठि आयो आइ

नंदघर छाजरह्यो ॥ पलना पर पौढ़े हरि देखे तुरत आइ नैन-निसों अर्‍यो। कंठ चापि बहु बार फिरायो गहि फटक्यो नृप पास पर्‍यो ॥ तुरत कंस पूछन तेहि लाग्यो क्यों आयो नहिँ काज सर्‍यो। बीत्यो जाम ज्वाब जब आयो सुनहु कंस तेरो आयु सर्‍यो ॥ धरि अवतार महाबल कोऊ एकहि कर मेरो गर्व हर्‍यो। सूरदास प्रभु कंसनिकंदन भक्तहेतु अवतार धर्‍यो ॥ ५१ ॥



राग बिलावल ॥

मथुरापति जिय अतिहि डेरान्यौ।-सभामाँझ असुरनि के आगे बार बार शिर धुनि पछितान्यौ। व्रज भीतर उपज्यो मेरो रिपु मैं जानी यह बात। दिनही दिन बहु बढ़त जातु है मोको करि है घात ॥ दनुजसुता पूतना पठाई छिनकहि माँझ सँहारी। घीच मरोरि काग सुर दीनो मेरे ढिग फटकारी ॥ अबहींते यह हाल करतुहै दिन दिन होत प्रकास। सेनापतिन सुनाइ बात यह नृपमन भयो उदास ॥ ऐसो कौन मारिहै ताको मोहि कहै सो आय। वाको मारि अपनपौ राखै सूर व्रजहि सो जाइ ॥ ५२



अथ शकटासुर को कंस आज्ञा नांगन ॥- गौड मलार ॥

नृपति बात यह सबनि सुनायो। मुहाँ चही सेनापति कीनो शकटासुर मन गर्व बढ़ायो ॥ दोउ कर जोरि भयो तब ठाढ़ो प्रभु आयसु मैं पाऊँ। ह्याँते जाइ तुरतही मारों कहौ तो जीवत ल्याऊँ ॥ यह सुनि नृपति हर्ष मन कीनो तुरतहि बीरा दीनो। बारंबार सूर कहि ताको आपु प्रशंसा कीनो ॥ ५३ ॥

गौड मल्लार ॥

पान लै चल्यो नृप आन कीन्हों । गयो शिर नाइकै गर्वही बढाइकै शकट को रूपधरि असुर लीन्हों ॥ सुनत घहरानि ब्रजलोग चकृतभए कहा आघात ध्वनि करतु आवै । देखि आकाश चहुँपास दशहुँ दिशा डरे नर नारि तनुसुधि भुलावै ॥ आवु गयो तही जहँ प्रभु रहे पालने करगहे चरण अंगुठ चचोरहि । किलकि किलकि हँसत बाल शोभा लसत जानि तिहि कसत रिपु आयौ भोरहि । नेक फटक्यो लात शब्द भयो आघात गिर्यो भहरात शकटा संहार्यो ॥ सूर प्रभु नंदलाल दनुज मार्यो ख्याल मेटि जंजाल ब्रजजन उबार्यो ॥

राग बिभास ॥

देखो सखी अद्भुत रूप अतूथ । एक अंबुज मध्य देखियत बीस उदधि सुत यूथ ॥ एक शुक है जलचर उभय अर्क अनूप । पंच विराजे एकहि ढिग बहु सखि कौन स्वरूप ॥ शिशुतामें शोभा भई करो अर्थ बिचारी । सूर श्रीगोपाल की छबि राखिय उरधारी ॥ ५४ ॥



(यहा बारह पदों मे सूरदास ने वर्णन किया है कि यशोदा कैसे कृष्ण को पालने में झुलाती थीं और देख देखकर प्रसन्न होती थी ।)

राग बिलावल ॥

मेरो नान्हरिया गोपाल वेगि बड़ो किनि होहि । इहि मुख मधुरे बयनहँसि कबहूँ जननि कहोगे मोहि ॥ यह लालसा अधिक दिन दिनप्रति कबहूँ ईश करै ॥ मो देखत कबहूँ हँसि

माधव पगु द्वै धरनि धरै। हलधर सहित फिरै जब आँगन चरण शब्द सुख पाऊँ॥ छिन छिन क्षुधित जात पयकारन हौं हठि निकट बुलाऊँ। आगम निगम नेति करि गायो शिव उनमान न पायो। सूरदास बालक रसलीला मन अभिलाष बढ़ायो॥ ६६॥



अथ तृणावर्त वध गोडा तोरन॥ राग बिलावल॥

यशुमति मन अभिलाष करै। कब मेरोलाल घुटुरुवन रेंगै कब धरनी पग द्वैक धरै। कब द्वै दंत दूधके देखौं कब तुतरे मुख बैन झरै॥ कब नंदहि कहि बाबा बोलै कब जननी कहि मोहि ररै। कब मेरो अचरा गहि मोहन जोइ सोइ कहि मोसों झगरै। कब धौं तनक तनक कछु खैहै अपने करसों मुखहि भरै॥ कब हँसि बात कहैंगे मोहिसों छबि पेखत दुख दूरि करै। श्याम अकेले आँगन छाड़े आपु गई कछु काज घरै। एहि अंतर अंधवाइ उठी इक गरजत गगन सहित घहरै॥ सूरदास व्रज लोग सुनत ध्वनि जो जहाँ तहाँ सब अतिहि डरै॥ ६७॥



राग सूही॥

अति विपरीत तृणावर्त आयो। बात चक्र मिस व्रजके ऊपरि नंद पँवरिके भीतर धायो॥ पौढ़े श्याम अकेले आँगन लेत उठ्यो आकाश चढ़ायो। अंधधुंध भयोसब गोकुल जो जहाँ रह्यो सो तहाँ छपायो॥ यशुमति आइ धाइ जो देखै श्याम श्याम

करि शोर उठायो । धावहु नंद गोहारी लागौ किनि तेरो सुत अधवाइ उड़ायो ॥ इहि अंतर आकाश ते आवत पर्वतसम कहि सबनि बतायो । मार्‍यो असुर शिलासों पटक्यो आप चढ़े ता ऊपर भायो । दैारे नंद यशोदा दैारी तुरतहि लै हित कंठ लगायो । सूरदास यह कहत यशोदा ना जानैां बिधिनहिं कह भायो[1] ॥ ६८ ॥



राग सारङ्ग ॥

आजु कान्ह करिहै अनप्राशन । मणिकंचन के थार भराए भाँति भाँति के वासन ॥ नंदघरनि सब बधू बुलाई जे सब अपनी जाति । कोउ जिवनार करति कोउ घृत पक षटरस के बहुभाँति ॥ बहुत प्रकार किये सब व्यंजन अनेक वरन मिष्ठान । अति उज्ज्वल कोमल सुठि सुंदर महरि देखि मनमान ॥ यशुमति नंदहि बोलि कह्यो तब महर बुलाइ बहु जाति । आप गए नँद सकल महर

---

१ श्रीमद्भागवत दशम स्कन्ध अध्याय ७ ॥ भागवत की कथा इस प्रकार है कि एक दिन यशोदा को गोद में कृष्ण पर्वत के समान भारी मालूम होने लगे । उनको भूमि पर बिठा कर वह घर के काम में लग गईं । इतने में कंस का भेजा हुआ तृणावर्त राक्षस आँधी बवंडर के रूप में ब्रज पर छा गया और कृष्ण को उठा ले गया । सारे आकाश में धूल छा गई; घोर अन्धकार हो गया, राक्षस का शब्द सब दिशाओं में भर गया । यशोदा कृष्ण को ढूँढ़ने लगी और कहीं न पाकर मूर्छित होगईं । उधर कृष्ण ने तृणावर्त का गला ज़ोर से पकड़ लिया और इतने भारी हो गये कि राक्षस नीचे गिर पड़ा । वह चूर चूर हो गया पर कृष्ण आनन्द से उसकी छाती पर खेलते रहे ॥

घर लै आये सब ज्ञाति ॥ आदर करि बैठाइ सबनिको भीतर गये नँदराइ । यशुमति उबटि न्हवाइ कान्हको पटभूषण पहिराइ ॥ तन झँगुली शिरलाल चौतनी करचूरा दुहुँ पाइ । बार बार मुख निरखि यशोदा पुनि पुनि लेत बलाइ ॥ घरी जानि सुत मुख जुठरावन नंद बैठे लै गोद । महर बोलि बैठारि मंडली आनँद करत विनोद ॥ कंचनथार लै खीर धरी भरि तापर घृत मधु नाइ । नंद लैलै हरि मुख जुठरावत नारि उठी सब गाइ ॥ षट-रस के परकार जहाँलगि लैलै अधर छुवावत । विश्वंभर जगदीश जगतगुरु परसत मुख करुवावत ॥ तनक तनक जल अधर पोंछिकै यशुमति पै पहुँचाए । हर्षवंत युवती सब लैलै मुख चूमति उर लाए ॥ महर गोप सबही मिलि बैठे पनवारे परुसाए । भोजन करत अधिक रुचि उपजी जो जेहिके मन भाए ॥ इहि बिधि सुख विलसत ब्रजवासी धनि गोकुल नर नारी । नंदसुवन की या छबि ऊपर सूरदास बलिहारी ॥ ७८ ॥



राग जैत श्री ॥

लाला हौं वारी तेरे मुख पर । कुटिल अलक मोहन मन बिहँसत भ्रकुटी बिकट नैननि पर । दमकति द्वैद्वै दँतुलिया बिहँ-सति मानौ सीपिज घरु कियो वारिज पर ॥ लघु लघु शिर लट घूँघरवारी लटकि लटकि रह्यो लिलार पर ॥ यह उपमा कहि कापै आवै कछुक कहौं सकुचति हौं हिय पर ॥ नूतनचन्द्र रेख-मधि राजति सुरगुरु शुक्र उदोत परस्पर ॥ लोचन लोल कपोल ललित अति नासिक को मुक्तारद छंदपर । सूर कहा न्यौछावरि करिये अपने लाल ललित लर ऊपर ॥ ८३ ॥

वर्षगाँठ लीला ॥ राग आसावरी ॥

उमँगनि उमँगी है ब्रजनारी कान्ह की बरषगाँठि बरष बरषनि । गावहिं मंगलगान नीके सुर नीकी तान आनंद हरषनि ॥ कंचनमणि जटित थार दधिलोचन फूल डार देखन चली नंदकुमार मिलिवे की तर्सनि ॥ सूरदास प्रभु की बरषगांठि जोरति यह छबि पर तृन तोरति अरस परसनि ॥ ८६ ॥



(कनछेदन लीला के बाद कवि कृष्ण का घुटुग्रन चलना वर्णन करता है ॥)

राग असावरी ॥

खेलत नंद आँगन गोविन्द । निरखि निरखि यशुमति सुख पावति वदन मनोहर चंद ॥ कीट किंकिनी कंठ मणि कि द्युति लट मुकुता भरि भाल । परम सुदेश कंठ केहरि नख बिच बिच वज्र प्रवाल ॥ कर पहुंचियां पायन पैंजनी सुरत न रंजित रजपति । घुटुरन चलत अजिर में विहरत मुखमंडित नवनीत ॥ सूर विचित्र कान्ह की बानक वाणी कहत नहिं बनि आवै । बालदशा अवलोकि सकल मुनि योग विरति बिसरावे[1] ॥ ८८ ॥

---

१ तुलसीदास ने रामचन्द्र का घुटुओं चलना इस प्रकार वर्णन किया है ।—

रघुवर बाल छबि कहौं बरनि ॥ सकल सुख की सींव कोटि मनोज शोभा हरनि ॥ रुचिर नूपुर किङ्किनी मनुहरति रुनु झुन करनि ॥ बसी मानहुँ चरण कमलनि अरुणता तजि तरनि ॥ मन्जुमेचक मृदुल तनु अनुहरति भूषण भरनि ॥ मनहुँ सुभग सिंगार शिशुतरु फरयौ अद्भुत फरनि ॥ भुजनि भुजग सरोज नयननि बदन विधु जित्यौ लरनि ॥ रहे

राग धनाश्री ॥

हौं बलि जाउँ छबीले लालकी॥ धूसरि धूरि घुटुरुवन रेंगनि बोलन वचन रसालकी ॥ छिटकिरहीं चहुँदिशि जु लटुरियाँ लटकन लटकत भालकी॥ मोतिन सहित नासिका नथुनी कंठ कमलदल मालकी॥ कछुक हाथ कछू मुखमाखन चितवनि नैन विशालकी॥ सूर सुप्रभुके प्रेम मगन भई ढिग न तजति ब्रज-बालकी॥ ११६ ॥



कृष्ण का पैरों चलना ॥ राग धनाश्री ॥

चलत देखि यशुमति सुख पावै। ठुमुक ठुमुक धरनी धर रेंगत जननी देखि दिखावै॥ देहरी लौं चलि जात बहुरि फिर फिरि इतहीको आवै। गिरि गिरि परत बनत नहि नाँघत सुर सुनि शोच करावै॥ कोटि ब्रह्मांड करत छिन भीतर हरत विलंब न लावै। ताको लिए नंदकी रानी नानारूप खिलावै॥ तब यशुमति कर टेकि श्यामको क्रमक्रमकै उतरावै। सूरदास प्रभु देखि देखि सुर नर मुनि मन बुद्धि भुलावै॥ ११५॥



(यहां कवि ने कृष्ण के बालवेश का कुछ और वर्णन किया है।)

मक्खन माँगना ॥ राग आसावरी ॥

तनिक दैरी माइ। माखन तनिक दैरी माइ॥ तनिक करपर तनिक रोटी माँगत चरन चलाइ॥ कनक भूपर रतन की रेखा

कुहरन सलिल नभ डामा अपर छिति डरनि॥ लसत कर प्रतिबिम्ब मणि आँगन घुटुरुवनि चलनि॥ जलज सम्पुट सुछवि भरि भरि धरति जनु उर धरनि॥ पुण्य फल अनुभवति सुतहि विलोकि दशरथ घरनि॥ बसति तुलसी हृदय प्रभु किलकनि नटनि लरखरनि॥

नेक पकर्‌यो धाइ। कंपि आगिरि शेष शक्यो उदधि चलो अकुलाइ॥ जा मुख को ब्रह्मादिक लोचै सो माँगत ललचाइ। ईश के वेग दरशदीजै व्रज बालक लेत बलाइ॥ माखन माँगत श्यामसुंदर देत पग पटकाइ॥ तनक मुख की तनक बतियां माँगत हैं तोतराइ॥ मेरे मन को तनिक मोहन लागु मोहि बलाइ॥ श्यामसुन्दर गिरिधरनि ऊपर सूर बलि बलि जाइ॥ १४५॥



राग बिलावल॥

सखीरी नंद नंदन देखु। धूरि धूसरि जटाजु टली हरि किए हरभेषु॥ नीलपाट परोइ मणिगण फणिग धोखे जाइ। खुनखुना करि हँसत मोहन नचत डौंरु बजाइ॥ जलजमाल गोपाल पहिरे कहौ कहाँ बनाइ। मुंडमाला मनोहर गर ऐसी शोभा पाइ॥ स्वाति सुत माला विराजत श्याम तन यों भाइ। मनौं गंगा गौरि डरहरि लिए कंठ लगाइ॥ केहरीके नखहि निरखत रही नारि विचारि। बालशशि मनौ भालते लै उर धर्‌यो त्रिपुरारि॥ देखि अंग अनंग डर्‌प्यो नंदसुत को जान। सूरदास के हृदय बसिरह्यो श्याम शिव को ध्यान॥ १४६॥



(कृष्ण ने कहा कि मा मेरी चोटी कैसी बढ़ेगी। यशोदा ने उत्तर दियाः—)

राग धनाश्री॥

कजरीको पय पिअहु लाल तेरी चोटी बढ़ै। सब लरिकन में सुन सुंदर सुत तो श्री अधिक चढ़ै॥ जैसे देखि और ब्रजबालक त्यों बलवैस बढै। कंस केशि बक वैरिनके उर अनुदिन अनल उठै॥ यह सुनिके हरि पीवन लागे त्यों त्यों लियो लटै। अचवन

पै तातो जब लाग्यो रोवत जीभ उठै ॥ पुनि पीवतही कच टकटोवे झूठे जननि रढै। सूर निरखि मुख हँसत यशोदा सो सुख उर न कढै ॥ १५३ ॥



राग रामकली ॥

यशोदा कबहिं बढ़ैगी चोटी। किती बार मोहिं दूध पिवत भई यह अजहूँ हैं छोटी ॥ तू जो कहति बलकी बेनी ज्यों ह्वै है लाँबी मोटी। काढ़त गुहत न्हवावत ओछत नागिनि सी भ्वै लोटी ॥ काचो दूध पिवावत पचिपचि देत न माखन रोटी। सूर श्याम चिर जीवौ दोउ भैया हरि हलधरकी जोटी ॥ १५४ ॥



अथ चन्द्रप्रस्ताव ॥ राग कान्हरो ॥

ठाढ़ी अजिर यशोदा अपने हरिहि लिये चंदा देखरावत। रोवत कत बलि जाउँ तुम्हारी देखौ धौं भरि नयन जुड़ावत ॥ चितैरहे तब आपुन शशितन अपने कर लै लै जू बतावत। मीठो लगत किधौं यह खाटो देखत अति सुंदर मनभावत ॥ मनमनही हरि बुद्धि करतहैं माताको कहि ताहि मँगावत। लागी भूख चंदमैं खैहौं देहु देहु रिसकरि बिरुझावत ॥ यशुमति कहत कहा मैं कीनौ रोवत मोहन अति दुखपावत। सूर श्याम के यशुदा बोधति गगन चिरैयां उड़त लखावत ॥ १६३ ॥

 

राग कान्हरो ॥

बार बार यशुमति सुत बोधति आउ चंद तोहिं लाल बुलावै। मधु मेवा पकवान मिठाई आपु न खैहै तोहि खवावै ॥

हाथहि पर तोहिं लीने खेलै नहिं धरणी बैठावै । जलभाजन करलै जु उठावति याहीमे तू तनुधरि आवै ॥ जलपुट आनि धरणि पर राख्यो गहि आन्यो वह चन्द्र दिखावै । सूरदास प्रभु हँसि मुसुकाने बार बार दोउ कर नावै ॥ १६६ ॥



राग रामकली ॥

लेहौं री मा चंदा चहौंगो । कहा करौं जलपुट भीतरको बाहर ओकि गहौंगो ॥ इहतौ झलमलात झकझोरत कैसे कै जु लहौंगो । वहतो निपट निकटही देखत वरज्योहौं न रहौंगो ॥ तुमरो प्रेम प्रकट मैं जान्यो बौराए न बहौंगो । सूर श्याम कहै करगहि ल्याऊं शशि तनु दाप दहौंगो ॥ १६८ ॥



राग धनाश्री ॥

लाल यह चंदा ले लैहो । कमलनयन बलिजाइ यशोदा नीचे नेक चितैहो ॥ जा कारण सुन सुत सुंदर वर कीन्हो इती अनैहो । सोइ सुधाकर देखि दमोदर या भाजन मे हैहो ॥ नभते निकट आनि राख्यो है जलपुट जतनन जो गैहो । लै अपने कर काढ़ि दमोदर जो भावै सो कैहो ॥ गगन मँडलते गहि आन्यो है पंछी एक पठै, हौ । सूरदास प्रभु इती बात को कत मेरो लाल हठैहो ॥ १६६ ॥



राग बिहागरो ॥

तुम मुख देखि डरतु शशि भारी । कर करिके हरि हेर्यो चाहत भाजि पताल गयो अपहारी ॥ वह शशितो कैसेहु नहिं आवत यह ऐसी कछु बुद्धि बिचारी । वदन देखि बिधु विधि

सकात मन नैन कंज कुण्डल उजियारी ॥ सुनहु श्याम तुमको शशि डरपत है कहत प शरन तुम्हारी। सूर श्याम विझाने सोए लिए लगाइ छतियाँ महतारी ॥ १७० ॥



✓कृष्ण का जगाना ॥ राग ललित ॥

जागिये गुपाल लाल आनँदनिधि नंदबाल यशुमति कहै बार बार भोर भयो प्यारे। नैन कमलसे विशाल प्रीति वापिका मराल मदन ललित वदन ऊपर कोटि वारिडारे। उगत अरुन विगत शर्वरी शशांक किरनहीन दीन दीपक मलीन छीन दुति समूह तारे ॥ मनहु ज्ञान घनप्रकाश बीते सब भवविलास आस त्रास तिमिर तोष तरनि तेज जारे। बोलत खग मुखर निकर मधुर ह्वै प्रतीति सुनहु परम प्राण जीवन धन मेरे तुम बारे। मनौ वेद बंदी मुनि सूत बृंद मागधगण बिरद वदत जै जै जै जैत कैटभारे ॥ विकसत कमलावलीय चलि प्रफंद चंचरीक गुंजत कल कोमल ध्वनि त्यागि कंज न्यारे। मानौ वैरागपाइ सकल कुलग्रह विहाइ प्रेमवंत फिरत भृत्य गुनत गुन तिहारे ॥ सुनत वचन प्रियरसाल जागे अतिशय दयाल भागे जंजाल विपुल दुख कदम टारे ॥ त्यागे भ्रमफंद द्वंद निरखिके मुखारविंद सूर-दास अति अनंद मेटे मद भारे[1] ॥ १७१ ॥

---

१ तुलसीदास ने रामचन्द्र का जगाना इस प्रकार वर्णन किया है:—

भोर भयेउ जागहु रघुनन्दन। गत व्यलीक भक्तन उर चन्दन ॥
शशिकर हीन छीन द्युति तारे। तमचु २ मुखर सुनहु मेरे प्यारे ॥
विकसित कञ्ज कुमुद विलखाने। लै पराग रस मधुप उड़ाने ॥
अनुज सखा सब बोलन आये। वन्दित अति पुनीत गुण गाये ॥
मनभाव तौ कलेवौ कीजै। तुलसिदास कहँ जूठन दीजै ॥

कृष्ण ने यशोदा से कहा ॥ राग गौरी ॥

मैया मोहिं दाऊ बहुत खिझायो। मोसों कहत मोलको लीनो तू यशुमति कब जायो ॥ कहा कहौ एहि रिसके मारे खेलन हौं नहिं जातु। पुनि पुनि कहत कौन है माता कोहै तुमरो तातु ॥ गोरेनंद यशोदा गोरी तुम कत श्याम शरीर। चुटुकी दैदै हँसत ग्वाल सब सिखै देत बलवीर ॥ तू मोही को मारन सीखी दाउहि कबहुँ न खीझै। मोहन को मुख रिस समेत लखि यशुमति सुनि सुनि रीझै॥ सुनहु कान्ह बलभद्र चबाई जनमतही को धूत। सूर श्याम मो गोधनकी सौं हौं माता तू पूत ॥ १८८ ॥



राग गौरी ॥

खेलन अब मेरी जात बलैया। जबहिं मोहि देखत लरिकन सँग तबहिं खिझत बल भैया ॥ मोसो कहत तात वसुदेवको देवकी तेरी मैया । मोल लियो कछु दे वसुदेव को करि करि जतन बढ़ैया ॥ अब बाबा कहि कहत नंद सों यशुमति को कहै मैया । ऐसेही कहि सब मोहिं खिझावत तब उठि चलो खिसैया ॥ पाछे नंद सुनत हैं ठाढ़े हँसत हँसत उर लैया। सूर नंद बलिं रामहि धिरयो सुनि मनहरष कन्हैया ॥ १६० ॥



(एक गोपी ने कहा)

राग रामकली ॥

मो देखत यशुमति तेरे ढोटा अबहीं माटी खाई। इह सुनिकै रिस करि उठि धाई बाँह पकरि लै आई ॥ इक करसों भुज गहि

गाढ़े करि इक कर लीने साँटी। मारतिहौं तोहिं अबहि कन्हैया वेग न उगलो माटी॥ ब्रज लरिका सब तेरे आगे झूठी कहत बनाई। मेरे कहे नहीं तू मानत दिखरावो मुख बाई॥ अखिल ब्रह्मांड खंडकी महिमा देखरायो मुख माही। सिंधु सुमेरु नदी वन पर्वत चकृत भई मनमाही॥ करते साँटि गिरत नहिं जानी भुजा छाँडि अकुलानी। सूर कहै यशुमति मुख मूँदहु बलि गइ शारँगपानी॥ २२८॥



अथ माखनचोरी प्रथम[1]॥ राग गौरी॥

मैयारी मोहिं माखन भावै। मधु मेवा पकवान मिठाई मोहिं नहीं रुचि आवै॥ ब्रज युवती इक पाछे ठाढ़ी सुनति श्याम की बात। मन मन कहति कबहुँ मेरे घर देखों माखन खात॥ बैठे जाइ मथनियाँ के ढिग मैं तब रही छिपानी। सूरदास प्रभु अंतर्यामी ग्वालि मनहिं की जानी॥ २३३॥



राग गौरी॥

गए श्याम तिहि ग्वालिनि के घर। देख्यो जाइ द्वार नहिं कोई इत उत चितै चले घर भीतर॥ हरि आवत गोपी तब जान्यो आपुन रही छिपाई। सूने सदन मथनियाँ के ढिग बैठिरहे अरगाई॥ माखन भरी कमोरी देखी लैलै लागे खान।

---

१ सूरदास ने अनेक विषयों का दो दो तीन तीन और कहीं कही तो तीन से भी अधिक बार वर्णन किया है। इस संक्षिप्त पुस्तक में एक ही वर्णन से अवतरण लिये है। माखनचोरी प्रथम वर्णन से ली है।

चितै रहत मणि खंभ छाँहतन तासों करत सयान ॥ प्रथम आजु मैं चोरी आयो भल्यो बन्यो है संगु । आपुन खात प्रतिबिंब खवावत गिरत कहत का रंगु ॥ जो चाहो सब देउँ कमोरी अति मीठो कत डारत । तुमहि देखि मैं अति सुख पायो तुम जिय कहा बिचारत ॥ सुनि सुनि बातैं श्यामसुँदर की उमँगि हँसी ब्रजनारी । सूरदास प्रभु निरखि ग्वालि मुख तब भजि चले मुरारी ॥ २३४ ॥



राग गौरी ॥

फूली फिरति ग्वालि मनमेरी । पूछति सखी परस्पर बातैं पायो पर्यो कछु कहै तेरी ॥ पुलकित रोम रोम गद गद मुख वाणी कहत न आवै । ऐसो कहा आहि सो सखीरी मोको क्यों न सुनावै ॥ तनु न्यारो जो एक हमारो हम तुम एकै रूप । सूरदास कहै ग्वालि सखीसों देख्यो रूप अनूप ॥



राग गूजरी ॥

आजु सखी मणि खंभ निकट हरि जहाँ गोरसको गोरी । निज प्रतिबिंब सिखावत ज्यों शिशु प्रगट करै जिनि चोरी ॥ आध विभाग आजुते हम तुम भली बनीहैं जोरी । माखन खाहु कितहि डारतहो छाँड़ि देहु मति भोरी ॥ हिसा न लेहु सबै चाहतहो इहै बात है थोरी ॥ मीठो अधिक परम रुचि लागै देहौं काढ़ि कमोरी ॥ प्रेम उमँगि धीरज न रह्यो तब प्रगट हँसी मुख मोरी । सूरदास प्रभु सकुचि निरखि मुख भजे कुंज गहि खोरी ॥ २३५ ॥

राग रामकली ॥

करत हरि ग्वालन संग बिचार। चोरि माखन खाहु सब मिलि करौ बालबिहार॥ यह सुनत सब सखा हर्षे भली कही कन्हाई। हँसत परस्पर देत तारी सौंह करि नंदराई॥ कहाँ तुम यह बुद्धि पाई श्याम चतुर सुजान। सूर प्रभु मिलि ग्वाल बालक करतहै अनुमान॥ २३७॥



राग गौरी॥

सखा सहित गए माखन चोरी। देख्यौ श्याम गवाक्ष पंथ ह्वै गोपी एक मथति दधि भोरी॥ हेरि मथानी धरी माटते माखन हो उतरात। आपुन गई कमोरी माँगन हरि पाईहु घात॥ पैठे सखन सहित घर सूने माखन दधि सब खाई। छूँछी छाँडि मटुकिया दधि की हँसि सब बाहिर आई॥ आइ गई कर लिये मटुकिया घरते निकरे ग्वाल। माखन कर दधि मुख लपटानो देखि रही नँदलाल॥ काहे आजु ब्रज बालक संगलै माखन कर दधि मुख लपटानो। देखत ते उठि भजे सखा एक इहि घर आइ पिछानो॥ भुज गहिलियो कान्ह इक बालक निकरे ब्रज की खोरि। सूरदास प्रभु ठगिरही ग्वालिनि मनु हरि लियो अजोरि॥ २३८॥



(गोपी ने यशोदा से शिकायत कीः—)

राग गौरी॥

जो तुम सुनहु यशोदा गोरी। नँदनंदन मेरे मंदिर मे आजु करन गए चोरी॥ हौं भई आनि अचानक ठाढ़ी कह्यो भवन में

को री । रहे छपाइ सकुचि रंचक ह्वै भई सहजमति भोरी ॥ जबगहि बाँह कुलाहल कीनो तब गहि चरण निहोरी । लागे लै नैनन भरि आँसू तब मैं कान न तोरी ॥ मोहिं भयो माखनको संशय रीती देखि कमोरी । सूरदास प्रभु देत दिनहुँ दिन ऐसी लरि कस लेरी ॥ २५२ ॥



राग बिलावल ॥

भाजिगये मेरे भाजन फोरी । लरिका सहस एक संग लीने नाचत फिरत सांकरी खोरी ॥ माखन खाइ जगाइ बालकन्ह बनचर सहित बछरुवा छोरी । सकुच न करत फागुसी खेलत गारी देत हँसत मुख मोरी ॥ बात कहाँ तेरे ढोंटाकी सब ब्रज बांध्यों प्रेमकी डोरी । टोनासी पढ़ि नावत शिर पर जो भावत सो लेत अजोरी ॥ आपु खाइ तौ सब हम मानैं औरन देत सिकहरी तोरी । सूर सुतहि देखो नँदरानी अब तोरत चोली बंद जोरी ॥ २८६ ॥



राग बिलावल

तेरो लाल मेरो माखन खायो । दुपहर दिवस जानि घर सूनो ढूँढ़ि ढँढोरि आपही आयो ॥ खोल किवार सूने मंदिर मे दूध दही सब सखन खवायो । सीके काढि खाट चढि मोहन कछु खायो कछु लै ढरकायो ॥ दिन प्रति हानि होत गोरसकी यह ढोटा कौने ढँग लायो । सूरदास कहती ब्रजनारी पूत अनोखो जायो ॥ २६३॥

राग रामकली ॥

माखन खात पराये घर को। नितप्रति सहस मथानी मथिये मेघ शब्द दधि माठ घमरको॥ कितने अहीर जियतहैं मेरे गृह दधि लै मथि बेंचतहैं मही महरको। नव लख धेनु दुहतहै नित प्रति बडो भाग्यहै नंद महरको॥ ताके पूत कहावतहौ जी चोरी करत उघारत फरको। सूर श्याम कितनो तुम खैहौ दधि माखन मेरे जहाँ तहाँ ढरको॥ २६४॥



(पर कृष्ण की माखन चुराने की बान नहीं छूटी। गोपियों ने फिर यशोदा से शिकायत की। यशोदा क्रोध करके बोलीं।—)

हरि दांवरि बधाए। राग गौरी॥

ऐसी रिसमे जो धरि पाऊँ। कैसे हाल करौं धरि हरिके तुमको प्रगट देखाऊँ॥ सटिया लिये हाथ नँदरानी थरथरात रिस गात। मारे बिना आजु जो छांडौं लागै मेरे तात॥ यहि अंतर ग्वालिनि इक औरै धरे बाँह हरि ल्यावति। भली महरि सूधो सुत जायो चोली हार बतावति॥ सिरमें रिस अतिही उपजाई जानि जननि अभिलाष। सूर श्याम भुज गहे यशोदा अब बाँधौं कहि माष॥ ३००॥[1]



राग सोरठ॥

यशुमति रिस करि करि रजु करषै। सुत हित क्रोध देखि माताके मनही मन हरि हरषै॥ उफनत क्षीर जननि करि व्याकुल इहि बिधि भुजा छुड़ायो। भाजन फोरि दही सब डार्यो माखन

१ श्रीमद्भागवत दशमस्कंध पूर्वार्द्ध, अध्याय ६

मुँह लपटायो ॥ लै आई जेवरी अब बाँधौ गरब जानि न बँधायो। आंगुर द्वै घटि होत सबनि सों पुनि पुनि और मँगायो ॥ नारद शाप भये यमलार्ज्जुन इनको अब जो उधारौं[1] । सूरदास प्रभु कहत भक्त हित युग युग मैं तनु धारौं ॥ ३०१ ॥



कृष्ण का उलूखल बन्धन ॥ राग सारंग ॥

बाँधौं आजु कौन तोहि छोरै । बहुत लँगरई कीनी मोसों भुज गहि रजु ऊखलसों जोरै ॥ जननी अति रिस जानि बँधायो चितै वदन लोचन जल ढोरै । यह सुनि व्रज युवती उठि धाई कहत कान्ह अब क्यों नहिं चोरै ॥ ऊखलसों गहि बाँधि यशोदा मारनको साँटी कर तोरै । साँटी पेखि ग्वालिनि पछितानी बिकल भई जहँ जहँ मुख मोरै ॥ सुनहु महरि ऐसी न बूझिये सुत बाँधत माखन दधि थोरै । सूर श्यामको बहुत सतायो चूक परी हमते यह भोरै ॥ ३०५ ॥



(यशोदा ने कहा.—) राग आसावरी ॥

जाहु चली अपने अपने घर । तुमही सब मिलि ढीठ करायो अब आई बँधन छोरन वर ॥ मोहिं अपने बाबाकी सौंहै कान्है अब न पत्याऊँ । भवन जाहु अपने अपने सब लागतिहौं मैं पाऊँ ॥ मोको जिनि बरजो युवती कोउ देखौं हरिके ख्याल । सूर श्यामसों कहति यशोदा बड़े नंदके लाल ॥ ३०६ ॥



(फिर गोपियों ने कहाः—) राग सोरठ ॥

यशोदा तेरो मुख हरि जोवै । कमल नयन हरि हिचिकिन

---

१ यमलार्जुन की कथा के लिये देखिए टिप्पणी २ पृष्ठ १४ ।

रोवै बंधन छोरि जु सोवै ॥ जो तेरो सुत खरोई अचगरो तऊ कोखिको जायो। कहा भयो जो घरके ढोंटा चोरी माखन खायो ॥ कोरी मटुकी दही जमायो जापन पूँजन पायो। तेहि घर देव पितर काहेको जा घर कान्ह रुवायो ॥ जाकर नाम लेत भ्रम छूटै कर्म फंद सब काटै। सो हरि प्रेम जेवरी बाँध्यो जननि साँट लै डाटै ॥ दुखितजानि दोउ सुत कुबेरके ता हित आपु बँधायो। सूरदास प्रभु भक्त हेतु ही देह धारि तहाँ आयो ॥३०७॥



राग सारंग ॥

कबके बाँधे ऊखल दाम। कमल नयन बाहिर करि राखे तू बैठी सुखधाम ॥ हौं निर्दयी दया कछु नाही लागि गई गृह काम। देखि क्षुधा ते मुख कुभिलानो अति कोमल तनु श्याम ॥ छोरहु बेग बडी बिरियाँ भई बीतगये युग याम तेरे त्रास निकट नहिं आवत बोलि सकत नहिं राम ॥ जेहि कारण भुज आप बँधाये वचन कियो ऋषि ताम। ता दिनते यह प्रगट सूर प्रभु दामोदर सो नाम ॥ ३२० ॥



बलराम बचन ॥ राग बिलावल ॥

काहेको यशोदा मैया त्रास्योहै बारो कन्हैया मोहन मेरो भैया कितनो दधि पियतो। हौंतो न भयो घर साँटी दीनी सर सर बाँध्यो कर जेवरी नीके कैसे देखि जियतो ॥ गोपालतो सबनि प्यारो ताकों तैं कीनो प्रहारो जाकोहै मोको गारो अजुगुत कियतो। ठाढो बाँधे बलवीर नैनौंसे ढरतु नीर हरिजूते प्यारो तोको दूध दही घियतो ॥ सूरदास गिरिधरन धरनीधर हलधर यह छबि सदाई रहौमेरे जियतो ॥ ३३२ ॥

राग धनाश्री ॥

तबहिं श्याम इक बुद्धि उपाई। युवतीं गईं घरनि सब अपने गृह कारज जननी अटकाई। आपुन गये यमलार्ज्जुन के तरु परशत पात उठे झहराई। दिय गिर य धरणि दोऊ तरु तब द्वै सुत प्रगटे आई॥ दोउ कर जे रि करत दोउ अस्तुति चारि भुजा तिन्हैं प्रगट देखाई। सूर धन्य व्रज जन्म लियो हरि धरणी की आपदा नशाई॥ ३४२॥



नलकूबरकृत स्तुति ॥ राग बिलावल ॥

धनि गोविंद धनि गोकुल आये। धनि धनि नंद धन्य निशिवासर धनि यशुमति जिन श्रीधर जाये॥ धनि धनि बाल केलि यमुना धनि धनि बन सुरभी वृंद चराये। धनि यह समौ धन्य व्रजवासी धनि धनि वेणु मधुर ध्वनि गाये॥ धनि धनि अनख उरहनो धनि धनि धनि माखन धनि मोहन खाए। धन्य सूर ऊखल तरु गोविंद हमहिं हेत धनि भुजा बँधाए॥ ३४३॥



॥ राग सोरठ ॥

धन्य धन्य ऋषि शाप हमारे। आदि अनादि निगम नहिं जानत ते हरि प्रकट देह व्रज धारे॥ धन्य नंद धनि मातु यशोदा धनि आँगन में खेलनवारे। धन्य श्याम धनि दाम बँधाए धनि ऊखल धनि माखन प्यारे॥ दीनबंधु करुणानिधि हहु प्रभु राखि लेहु हम शरण तिहारे। सूर श्याम के चरण शीश धरि अस्तुति करि निज धाम सिधारे॥ ३४४॥

॥ राग बिलावल ॥

यह जिय जानि गोपाल बँधाये । शाप दग्ध द्वै सुत कुबेरके आनि भये तरु युगल सुहाये ॥ व्याज रुदन लोचन जल ढारत ऊखल दाम सहित चलि आये । विटप भंजि यमलार्ज्जुन तारे करि अस्तुति गोविंद रिझाये ॥ तुम बिनु कौन दीन खलु तारै निर्गुण सगुण रूप धरि आये । सूरदास श्याम गुण गावत हर्षवंत निज पुरी सिधाये ॥ ३४५ ॥



राग रामकली ॥

तरु दोऊ धरणि परे भहराइ । जर सहित अरराइ कै आघात शब्द सुनाइ ॥ भए चकृत लोग सब ब्रजके रहे सकुचि डराइ । कोऊ रहे अकाश देखत कोऊ रहे शिरनाइ ॥ घरिकलौं जकि रहे जहाँ तहाँ देह गति बिसराइ । निरखि यशुमति अजिर देखै बँधे नहिं कन्हाइ ॥ वृक्ष दोउ महि परे देखे महरि कीन्ह पुकार । अबहिं आँगन छोडि आई चर्यो तरुके डार ॥ मैं अभागिनि बाँधि राखे नंद प्राण अधार । शोर सुनि नँद दौरि आये विकल गोपी ग्वार ॥ देखि तरु सब अति डराने हैं बड़े विस्तार । गिरे कैसे बड़ो अचरज नेकु नहीं बयार ॥ दुहूँ तरु बिच श्याम बैठे रहे ऊखल लागि । भुजा छोरि उठायलीने महरि हैं बडे भागि ॥ निरखि युवती अंग हरिके चोट जनि कहुँ लागि । कबहुँ बाँधति कबहुँ मारति महरि बडी अभागि ॥ नयन जल भरि ढारि यशुमति सुतहि कंठ लगाइ । जरहु रिस जिन तुमहिं बाँध्यो लागै मोहिं बलाइ ॥ नंद मोहिं कहा कहैंगे देखि तरु दोउ आइ । मैं मरौं तुम कुशल रहौ दोऊ श्याम हलधर भाइ ॥ आइ घर जो

नंद देखे तरु गिरे दोउ भारि। बांधि राखति सुतहि मेरे देत महरिहि गारि॥ तात कहि तब श्याम दौरे महर लियो अंकवारी। कैसे उबरे कृष्ण त्ते सूर ले बलिहारी॥ ३४६॥



राग नट॥

मेरे मोहन हौं तुमपर वारी। कंठ लगाइ लिये मुख चूमत सुंदर श्याम विहारी॥ काहेको दाम ऊखलसों बाँध्यो है कैसी महतारी। अतिहि उतंग बयारि न लागत क्यों टूटे दोऊ तरु भारी॥ बारंबार विचारि यशोदा यह लीला अवतारी। सूरदास स्वामीकी महिमा कापर जात बिचारी॥ ३४७॥

---

१ यमलार्जुन शाप और उद्धार के लिए देखिये श्रीमद्भागवत दशम स्कंध पूर्वार्द्ध अध्याय १०। भागवत मे नलकूबर ने कृष्ण की जो स्तुति की है वह दूसरे ढङ्ग की है।

कृष्ण कृष्ण महायोगिंस्त्वमाद्य पुरुष पर.।
व्यक्ताव्यक्तमिदं विश्वं रूपतो ब्राह्मणा विदु ॥२९॥
त्वमेक· सर्वभूताना देहास्वात्मेन्द्रियेश्वरः।
त्वमेव कालो भगवान्विष्णुरव्यय ईश्वर ॥३०॥
त्वं महान्प्रकृतिः सूक्ष्मा रजःसत्त्वतमोमयी।
त्वमेव पुरुषोऽध्यक्ष· सर्वक्षेत्रविकारवित् ॥३१॥
यस्यावतारा ज्ञायन्ते शरीरेष्वशरीरिण।
तैस्तैरतुल्यातिशयैर्वीर्यैर्देहिष्वसंगतैः॥ ३४॥
स भवान्सर्वलोकस्य भवाय विभवाय च।
अवतीर्णोऽशभागेन साम्प्रतं पतिराशिषाम्॥ ३५॥
नमः परमकल्याण नमः परममङ्गल।
वासुदेवाय शान्ताय यदूनां पतये नमः॥ ३६॥

कृष्ण का जगाना ॥ राग बिलावल ॥

जागहु जागहु नन्दकुमार। रवि बहु चढ़े रैनि सब निघटी उघरे सकल किवार॥ वारि वारि जलपियति यशोदा उठु मेरे प्राण अधार। घर घर गोपी दह्यो बिलोवहिं कर कंकन भनकार॥ साँझ दुहुन तुम कह्यो गाइको ताते होत अबार। सूरदास प्रभु उठे सुनतही लीला अगम अपार॥ ३६६॥



राग सारंग॥

जोरति छाक प्रेमसों मैया। ग्वालन बोलि लए अध जेंवत उठि दौरे दोउ भैया॥ तबहींते भोजन नहिं कीनो चाहत दियो पठाई। भूखे भए आजु दोउ भैया आपहि बोलि मँगाई॥ सद माखन साजो दधि मीठो मधु मेवा पकवान। सूर श्यामको छाक पठावति कहति ग्वारि सों जान॥ ३६३॥



(यशोदा ने)

राग सारंग॥

घर ही की यक ग्वारि बोलाई। छाक समग्री सबै जोरि कै वा के कर दै तुरत पठाई। कह्यो ताहि वृन्दावन जैये तू जानति सब प्रकृति कन्हाई। प्रेम सहित लै चली छाक वह कहाँ वे हैं भूखे दोउ भाई॥ तुरत जाइ वृन्दावन पहुँची ग्वाल बाल कहुँ कोउ न बताई। सूर श्याम को टेरति डोलति कत हौं लाल छाक मैं ल्याई॥ ३६४॥



राग कान्हरो॥

फिरत बन बन बृंदावन बंशीबट संकेत बट नट नागर

कटि काछे खौरि केसरिकी किये । पीत वसन चंदन तिलक मोर मुकुट कुंडल श्याम घन यह छबि लिये ॥ तनु त्रिभंग सुगंध अंग निरखि लज्जत रति अनंग ग्वाल बाल लिये संग प्रमुदित सब हिये । सूर श्याम अति सुजान मुरली ध्वनि करत गान ब्रजजन मनको सुख दिये ॥ ३६७ ॥



राग कान्हरो ।

हरिको टेरति फिरति गुआरि । आई लेहु तुम छाक आपनी बालक बल बनवारि ॥ आजु कलेऊ करत बन्यो नहिं गैयन संग उठि धाए । तुम कारण बन छाँक यशोदा मेरेहि हाथ पठाए ॥ यह बानी जब सुनी कन्हैया दौरिगए तेहि काजू । सूर श्याम कह्यो नीके आइ भूख बहुतही आजू ॥ ३६८ ॥



बहुत फिरी तुमकाज कन्हाई । टेरि टेरि मैं भई बावरी दोउ भैया तुम रहे लुकाई ॥ जे सब ग्वाल गए ब्रज घरको तिनसों कहि तुम छाक मँगाई । लवनी दधि मिष्टान्न जोरिकै यशुमति मेरे हाथ पठाई ॥ ऐसी भूखमाँझ तू ल्याई तेरी केहिविधि करौं बड़ाई । सूर श्याम सब सखन पुकारत आवहु क्यों न छाँक है आई ॥ ३६९ ॥



राग सारङ्ग ॥

गिरिपर चढ़ि गिरि वर धर टेरे । अहो सुबल श्रीदामा भैया ल्यावहु गाइ खरिकके नेरे ॥ आई छाँक अवार भई है नैसुकु

वैया पिअहुँ सबेरे। सूरदास प्रभु बैठि शिलनि पर भोजन करैं ग्वाल चहुँ फेरे॥ ४००॥



राग सारङ्ग॥

ग्वाल मंडलीमें बैठे हैं मोहन बड़की छहियाँ दुपहरीकी बिरियाँ संगलीने। एक मथत दोहनी दूध एक बँटावत फल चबैनें॥ एक निकरि हरिभगरि लेत ऐस बनि आपनी कमरके आसन कीने। जेंवतहैं अरु गावत कान्ह सारंगीकी तान लेत सखनिके मध्य बिराजत छाँक लेत कर छीने। सूरदास प्रभुको मुख निरखत सुर रीभि हेरैं सुमननि वरषत सभीने॥ ४०४॥



राग सारङ्ग॥

ग्वालन करते कौर छुँड़ावत। जूंठो लेत सबनके मुखको अपने मुखलै नावत॥ षटरसके पकवान धरे सब तामें नहिं रुचि पावत। हाहा करि करि माँगि लेत है कहत मोहिं अति भावत॥ यह महिमा एई पे जानैं जाते आप बँधावत। सूर श्याम स्वपने नहिं दरशत मुनिजन ध्यान लगावत॥ ४०५॥



राग सारङ्ग॥

ब्रजवासी पटतर कोउ नाहिं। ब्रह्म सनक शिव ध्यान न पावत इनकी जूंठनि लैलै खाहिं॥ धन्य नंद धनि जननि यशोदा धन्य जहाँ अवतार कन्हाई। धन्य धन्य बृंदाबनके तरु जहाँ विहरत त्रिभुवनके राई॥ हलधर कह्यो छाँक जेंवत संग मीठो लगत सराहत जाई। सूरदास प्रभु विश्वंभर हैं ते ग्वालनके कौर अघाई॥ ४०६॥

चकई भौरा खेलनसमै ॥ राग बिलावल ॥

दै मैया भँवरा चकडोरी। जाइ लेहु आरे पर राखो काल्हि मोल ले राखै कोरी॥ लै आये हँसि श्याम तुरतही देखिरहे रँगरँग बहु डोरी। मैया बिना और को राखै बार बार हरि करत निहोरी॥ बोलि लिए सब सखा संगके खेलत श्याम नंदकी पोरी। तैसेइ हरि तैसइ सब बालक कर भँवरा चकरिनि की जोरी॥ देखति जननि यशोदा यह छबि विहँसत बार बार मुख मोरी। सूरदास प्रभु हँसि हँसि खेलत ब्रजवनिता तृण डारत तोरी॥ ४५६॥



(श्रीकृष्ण बड़े होने लगे। गोपियाँ उनके रूप पर मोहित होने लगीं।)

राग कान्हरो ॥

मेरे हियरे माँझ लागै मनमोहन लैगयो मन चोरी। अबहीं इहि मारगह्वै निकसे छबि निरखत तृण तोरी॥ मोर मुकुट श्रवणन मणि कुंडल उर बनमाला पीत पिछोरी। दशन चमक अधरन अरुणाई देखत परी ठगोरी॥ ब्रज लरिकन सँग खेलत डोलत हाथ लिए फेरत चकडोरी। सूर श्याम चितवत गए मो तन तन मन लिए अजोरी॥ ४६०॥



श्रीराधाकृष्णजी का प्रथम मिलाप। राग टोडी ॥

खेलन हरि निकसे ब्रजखोरी। कटि कछनी पीतांबर ओढ़े हाथ लिए भौंरा चकडोरी॥ मोर मुकुट कुंडल श्रवणन वर दशन दमक दामिनि छबि थोरी। गए श्याम रवितनयाके तट अंग

लसति चंदनकी खोरी॥ औचकही देखी तहाँ राधा नयन विशाल भाल दिए रोरी। नील बसन फरिया कटि पहिरे बेनी पीठि रुचिर झकझोरी॥ संग लरिकिनी चलि इत आवति दिन थोरी अति छबि जन गोरी। सूर श्याम देखतही रीझे नैन नैन मिलि परी ठगोरी॥ ४६२॥



राग टोडी॥

बूझत श्याम कौन तू गोरी। कहाँ रहित काकी है बेटी देखी नहीं कहूँ ब्रज खोरी॥ काहेको हम ब्रजतन आवति खेलति रहति आपनी पौरी। सुनति रहति श्रवणनि नँद ढोटा करत रहत माखन दधि चोरी॥ तुम्हरो कहा चोरि हम लेहैं खेलन चलौ संग मिलि जोरी। सूरदास प्रभु रसिक शिरोमणि बातन भुरइ राधिका भोरी॥ ४६३॥



राग धनाश्री।

प्रथम सनेह दुहुँन मन जान्यो। सैन सैन कीनी सब बातैं गुप्त प्रीति शिशुता प्रगटान्यो॥ खेलन कबहुँ हमारे आवहु नंद सदन ब्रज गाँउ। द्वारे आइ टेरि मोहिं लीजो कान्ह है मेरो नाँउ॥ जो कहिये घर दूरि तुम्हारो बोलत सुनिये टेर। तुमहि सौंह वृषभानु बबाकी प्रात साँझ एक फेर॥ सूधी निपट देखियत तुमकौं ताते करियत साथ। सूर श्याम नागर उत नागरि राधा दोउ मिलि गाथ॥ ४६४॥



राग नट॥

सैननि नागरी समुझाई। खरिक आवहु दोहनी लै यहै मिस

छल पाई ॥ गाइ गनती करन जैहैं मोहिं लै नँदराइ । बोलि बचन प्रमाण कीने दुहुँन आतुरताइ ॥ कनक वदन सुढार सुंदरि सकुचि मुख मुसुकाइ । श्याम प्यारी नैन राचे अति विशाल चलाइ ॥ गुप्त प्रीति जु प्रगट कीन्हो हृदय दुहुँन छिपाइ । सूर प्रभुके वचन सुनि सुनि रही कुँवरि लजाइ ॥ ४६५ ॥



राग सारंग ॥

गइ वृषभानुसुता अपने घर । संग सखी सों कहति चली यह को जैहै खेलन इनके दुर ॥ बड़ी बेर भइ यमुना आप खीझति ह्वैहै मैया । वचन कहति मुख हृदय प्रेम सुख मन हरि लियो कन्हैया ॥ माता कही कहाँ हुती प्यारी कहाँ अबार लगाई । सूरदास तब कहति राधिका खरिक देखि मैं आई ॥ ४६६ ॥



राग रामकली ॥

नागरि मनहि गई अरुझाइ । अति विरह तनु भई व्याकुल घर न नेक सुहाइ ॥ श्याम सुन्दर मदनमोहन मोहनी सी लाइ । चित्त चंचल कुँवरि राधा खान पान भुलाइ ॥ कबहुँ विलपति कबहुँ बिहँसति सकुचि बहुरि लजाइ । मात पितुको त्रास मानति मन बिना भई बाइ ॥ जननिसों दोहनी माँगति बेगि दे री माइ । सूर प्रभुको खरिक मिलिहौं गए मोहिं बोलाइ ॥ ४६७ ॥



राग धनाश्री ॥

मोहिं दोहनी दै री मैया । खरिक मोहिं अबही ह्वै आई अहिर दुहुत अपनी सब गैया ॥ ग्वाल दुहत तब गाइ हमारी

जब अपनी दुहिलेत। घरिक मोहिं लगिहै खरिकामे तू आवै जनि हेत॥ शोचति चली कुँवरि घरहीते खरिका गइ समुहाइ। कब देखौं वह मोहन मूरति जिन मन लियो चुराइ॥ देखो जाइ तहाँ हरि नाहीं चकृत भई सुकुमारि। कबहूँ इत कबहूँ उत डोलत लागी प्रीति खुम्हारि॥ नंद लिए आवत हरि देखे तब पायो विश्राम। सूरदास प्रभु अंतर्यामी कीन्ह्यो पूरण काम॥४६८॥



राग धनाश्री॥

नंद गये खरिकै हरि लीन्हे। देखि तहाँ राधिका ठाढ़ी श्याम बुलाइ लई तहँ चीन्हे॥ महर कह्यो खेलहु तुम दोऊ दूरि कहूँ जनि जैहौ। गनती करत ग्वाल गैयनकी मुहिं नियरे तुम रहियो॥ सुनु बेटी वृषभानु महरकी कान्हहि लिये खिलाइ। सूर श्यामको देखे रहिहौ मारै जनि कोउ गाइ॥ ४६९॥



राग नट॥

नंद बबाकी बात सुनौ हरि। मोहिं छाँड़िकै कबहुँ जाहुगे ल्याऊंगी तुमको धरि॥ भली भई तुम्हें सौंपिगये मोहिं जान न देहौं तुमको। बाँह तुम्हारी नेकु न छडिहौं महरि खीझिहैं हमको॥ मेरी बाँह छाँडिदे राधा करत उपर फट बातैं। सूर श्याम नागर नागरिसों करत प्रेमकी घातैं॥ ४७०॥



राग नट॥

नीवी ललित गही यदुराई। जबहिं सरोज धरो श्रीफलपर तब यशुमति गइ आई॥ तत्क्षण रुदन करत मनमोहन मनमे

बुधि उपजाई । देखो ढीठ देति नहिं माता राखो गेंद चुराई ॥ काहेको झकझोरत नोखे चलहु न देउ बताई । देखि विनोद बाल सुतको तब महरि चली मुसिकाई ॥ सूरदासके प्रभुकी लीला को जानै इहि भाई ॥ ४७१ ॥



राग धनाश्री ॥

बातनमें लइ राधा लाइ । चलहु जैये विपिन वृंदा कहत श्याम बुझाइ ॥ जब जहाँ तन भेष धारौं तहाँ तुम हित जाइ । नेकहू नहिं करौं अंतर निगम भेद न पाइ ॥ तुव परशि तन ताप मेटौं काम द्वंद्व बहाइ । चतुर नागरि हँसि रही सुनि चंद्र वदन नवाइ ॥ मदनमोहन भाव जान्यो गगन मेघ छिपाइ । श्याम श्यामा गुप्त लीला सूर क्यों कहै गाइ ॥ ४७२ ॥



अथ सुख विलास ॥ राग गौड मलार ॥

गगन गरजि घहराइ जुरी घटा कारी । पौन झकझोर चपला चमकि चहूँ ओर सुवन तन चितै नंद डरत भारी ॥ कह्यो वृषभानुकी कुँवरिसों बोलिकै राधिका कान्ह घर लिये जारी । दोऊ घर जाहु संग नभ भयो श्याम रंग कुँवर गह्यो वृषभान वारी ॥ गये वन घन ओर नवल नँदनंदकिशोर नवल राधा नए कुंज भारी । अंग पुलकित भए मदन तिनतन जए सूर प्रभु श्याम श्यामविहारी ॥ ४७३ ॥



राग कामोद ॥

नयो नेहु नयो गेहु नयो रस नवल कुँवरि वृषभानु किशोरी। नयो पीतांबर नई चूनरी नई नई बूँदनि भीजति गोरी ॥ नए

कुंज अति पुंज नए द्रुम सुभग यमुन जल पवनहिलोरी। सूरदास प्रभु नवलरस विलसत नवल राधिका यौवन भोरी ॥ ४७४ ॥



राग कान्हरा ॥

नवल गुपाल नवेली राधा नये प्रेमरस पागे। नव तरुवर बिहार दोऊ क्रीडत आपु आपु अनुरागे॥ शोभित शिथिल वसन मनमोहन सुखवत सुखके वागे। मानहुँ बुझी मदनकी ज्वाला बहुरि प्रजा नर लागे॥ कबहुँक बैठि अंश भुज धरिकै पीक कपोलनि दागे। अति रसराशि लुटावत लूटत लालच लगे सभागे॥ मानहुं सूर कल्पद्रुमकी निधि लै उतरी फल आगे। नहिं छूटति रति रुचिर भामिनी ता सुखमें दोउ पागे ॥ ४७५ ॥



राग मलार ॥

उतारतहै कंठनिते हार। हरिहर मिलत होतहै अंतर यह मन कियो बिचार॥ भुजावाम पर कर छबि लागति उपमा अंत न पार। मनहु कमल दल कमल मध्यते यह अद्भुत आकार॥ चुंबत अंग परस्पर जनु युग चंद करत हितवार। रसन दशन भरि चापि चतुर अति करत रंग विस्तार॥ गुणसागर अरु रससागर निधि मानत सुख व्यवहार। सूर श्याम श्यामा नव-सर मिलि रीझे नंदकुमार ॥ ४७६ ॥



राग कान्हरा ॥

नवल किशोर नवल नागरिया। अपनी भुजा श्याम भुज

ऊपर श्याम भुजा अपने उर धरिया ॥ क्रीड़ा करत तमाल तरुन तर श्यामा श्याम उमँगि रस भरिया । यों लपटाइ रहे उर उर ज्यों मरकत मणि कंचन मे जरिया ॥ उपमा काहि देउँ को लायक मन्मथ कोटि वारने करिया । सूरदास बलि बलि जोरी पर नंदकुँवर वृषभानु कुंवरिया ॥ ४७७ ॥



श्रीराधिकाजी का यशोदा गृह गवन ॥ राग आसावरी ॥

को जानै हरि की चतुराई । नयन सैन संभाषन कीनो प्यारी की उर तपनि बुझाई ॥ मनही मन दोउ रीझि मगन भए अति आनँद उर में न समाई । कर पल्लव हरि भाव बतावत एक प्राण द्वै देह बनाई ॥ जननी हृदय प्रेम उपजायो कहति कान्हसों लेहु बुलाई । सूर श्याम गहि बांह राधिका ल्याए महरि निकट बैठाई ॥ ४९० ॥



राग सूही ॥

देखि महरि मनहीं जु सिहानी । बोलि लई बूझति नँदरानी कुँवर कहति मधुरे मधुवानी ॥ व्रजमें तोहिं कहूँ नहिं देखी कौन गाउँ है तेरो । भली करी कान्हहि गहि ल्याई भूल्यो तो सुत मेरो ॥ नयन विशाल बदन अति सुंदर देखत नीकी छोटी । सूर महरि सविता सों बिनवति भली श्यामकी जोटी ॥ ४९१ ॥



राग नट ॥

नामु कहा है तेरो प्यारी । बेटी कौन महरकी है तू कहि सु कौन तेरी महतारी ॥ धन्य कोख जिहि तोको राख्यो धन्य

घरी जिहि तू अवतारी। धन्य पिता माता धनि तेरी छवि निरखति हरिकी महतारी॥ मैं बेटी वृषभानु महरकी मैया तुमको जानति। यमुना तट बहु बार मिलन भयो तुम नाहिन पहिंचानति॥ ऐसी कहि वाको मैं जानति वै तो बड़ी छिनारि। महर बड़ो लंगर सब दिनको हँसत देति मुख गारि॥ राधा बोलि उठी बाबा कछु तुमसों ढीठ्यो कीनी। ऐसे समरथ कब मैं देखे हँसि प्यारी उर लीनी॥ महरि कुँवरिसों यह करि भाषति आउ करौं तेरि चोटी। सूरदास हरषी नँदरानी कहति महरि हम जोटी॥ ४९२॥



राग गौरी॥

यशुमति राधाकुँवरि सँवारति। बड़े बार श्रीवंत शीशके प्रेम सहित लै लै निरवारति॥ माँग पारि बेनीहि सँवारति गूँथी सुंदर भांति। गोरे भाल बिंदु चंदन मनौं इंदु प्रांत रवि क्रांति॥ सारी चीर नई फरिया लै अपने हाथ बनाइ। अंचल सों मुख पोंछि अंग सब आपुहि लै पहिराइ॥ तिल चाँवरी बतासे मेवा दिये कुँवरि की गोद। सूर श्याम राधा तन चितवत यशुमति मन मन मोद॥ ४९३॥



अथ श्याम राधा खेलन समय॥ राग कल्याण॥

खेलो जाइ श्याम सँग राधा। यह सुनि कुँवरि हरष मन कीन्हों मिटि गई अंतर बाधा॥ जननी निरखि चकित रही ठाढ़ी दंपति रूप अगाधा। देखति भाव दुहुँनको सोई जो चित करि अवराधा॥ संग खेलत दोउ झगरन लागे शोभा बढ़ी अबाधा।

मनहु तड़ित घन इंदु तरनि है बाल करत रस साधा ॥ निरखत विधि भ्रम भूलि पर्‌यो तब मन मग करत समाधा। सूरदास प्रभु और रच्यो विधि शोच भयो तनदाधा ॥ ४६४ ॥



राग केदारा ॥

विधि के आन विधिको शोचु। निरखि छबि वृषभानु तनया सकल मम कृत पोचु ॥ रामा गौरी उर्वशी रति इंदिरा विभव समेति। तुल्यादि दिनमनि कहा सारँग नहिं उपमा देति ॥ चरण निरखि निहारि नख छवि अजित देखैं तोकि। चित्त गुण महिमा न जानत धीर राखति रोकि ॥ सूर आन विरंचि विरचे भक्त निज अवतार। अबल के बल सबल देखि अधीन सकल शृँगार[1] ॥ ४६५ ॥



राधा गृहगवन ॥ राग नट ॥

राधे महरिसों कहि चली। आनि खेलौ रहसि प्यारी श्याम तुम हिलमिली ॥ बोलि उठे गुपाल राधा सकुच जिय कत करति। मैं बुलाऊं नहीं आवति जननि को कत डरति ॥ मैया यशोदा देखि ताको करति कितनो छोहु। सुनत हरिकी बात प्यारी रही मुख तन जोहु ॥ हँसि चली वृषभानु तनया

---

१ व्रज नव तरुणि कदम्ब मुकुटमणि श्यामा आजु बनी।
नख शिख लौं अंग अंग माधुरी मोहे श्याम धनी ॥
यों राजत कवरी गूंथित कच कनक कञ्ज वदनी।
चिकुर चन्द्रिकनि बीच अरध विधु मानहुँ ग्रसत फनी ॥
हितहरिवंश।

भई बहुत अबार। सूर प्रभु चितते टरत नहिं गई घरके द्वार ॥ ४९६ ॥



राग बिहागरो ॥

बूझति जननी कहाँ हुती प्यारी। किन तेरे भाल तिलक रचि दीन्हों किहि कच गूंदि मांग सिर पारी ॥ खेलत रही नंद के आंगन यशुमति कही कुँवरि ह्यां आ री। तिल चावरी गोद करि दीनी फरिया दई फारि नव सारी ॥ मेरो नाउँ बूझि बाबा को तेरो बूझि दई हँसि गारी। मो तन चितै चितै ढोटा तन कछु सवितासों गोद पसारी ॥ यह सुनि कै वृषभानु मुदित चित हँसि हँसि बूझति बात दुलारी। सूर सुनत रससिंधु बढ़यो अति दंपति मनमें यहै विचारी ॥ ४९७ ॥



राग गौरी ॥

मेरे आगे महरि यशोदा मैया री तोहिं गारी दीन्ही। वाकी बात सबै मैं जानति वे जैसी तैसी मैं चीन्ही ॥ तोको कहि पुनि कह्यो बबाको बड़ो धूर्त वृषभान। तब मैं कह्यो ठग्यो कब तुमको हँसि लागी लपटान ॥ भली कही तैं मेरी बेटी लयो आपनो दाउ। जो मुहि कह्यौ सबै उनके गुण हँसि हँसि कहति सुभाउ ॥ फेरि फेरि बूझति राधासों सुनति हँसति सब नारि। सूरदास वृषभानु घरनि यशुमति को गावति गारि ॥ ४९८ ॥



राग गौरी ॥

कहत कान्ह जननी समुझाई। जहाँ तहाँ डारे रहत खिलौना राधा जनि लैजाइ चुराई ॥ साँझ सवारे आवन लागी चितै

रहति मुरली तन आइ । इनही मे मेरो प्राण बसतु है तेरे भाए नेकु न माइ ॥ राखि छुपाइ कह्यो करि मेरो बलदाऊ को जनि पतिआइ । सूरदास यह कहति यशोदा को लैहै मोहि लगै बलाइ ॥ ४९९ ॥



राग आसावरी ॥

मेरे लालके प्राण खिलौना ऐसो को लैजैहै री । नेक सुनन जो पैहौं ताको सो कैसे ब्रज रैहै री ॥ बिनदेखे तू कहा करैगी सो कैसे प्रगटै है री । अजहुँ राखि उठाइ री मैया माँगे ते कहा दैहै री ॥ आवतही लैजैहै राधा पुनि पाछे पछितैहै री । सूरदास तब कहत यशोदा बहुरि श्याम बिरुझैहै री ॥५००॥



(कृष्ण और यशोदा की बातचीत)

अथ गोचारन ॥ राग रामकली ॥

आज मैं गाइ चरावन जैहौं । बृन्दावनके भाँति भाँति फल अपने कर मैं खैहौं ॥ ऐसी अबहिं कहो जनि बारे देखौ अपनी भाँति । तनक तनक पाँइ चलिहौ कैसे आवत ह्वैहै राति ॥ प्रात जात गैयाँ लै चारन घर आवतहैं साँझ । तुम्हरो कमल वदन कुम्हिलैहै रेंगत घामहिं माँझ ॥ तेरी सौं मोहिं घामु न लागत भूख नहीं कछु नेक । सूरदास प्रभु कह्यो न मानत परे आपनी टेक ॥ ५०६ ॥



(कृष्ण ने बहुत ज़िद की । सबेरे आँख बचा कर ग्वालों के साथ जाने लगे । यशोदा ने देख लिया और रोकना चाहा । पर वह न माने । तब यशोदा ने उनको जाने की आज्ञा दी और बलदाऊ के सुपुर्द कर दिया)

राग बिलावल ॥

खेलत श्याम चले ग्वालनसँग । यशुमति कहति इहै घर

आई देखौ हरि कीने जेजेरँग ॥ प्रातहि ते लागे यहि ढँग अपनी टेक पर्‌यो है। देखौ जाइ आजु बनको सुख कहा परोसि धर्‌यो है ॥ माखन रोटी अरु शीतल जल यशुमति दियो पठाइ। सूर नंद हँसि कहत महरि सों आवत कान्ह चराइ ॥५०६॥



राग सारंग ॥

हरि जूको ग्वालिनि भोजन ल्याई। वृंदा विपिन विशद यमुनातट शुचि ज्योंनार बनाई ॥ सानि सानि दधि भातु लियो कर सुहृद सबनि कर देत। मध्य गुपाल मंडली मोहन छाँक बाँटिकै लेत ॥ देवलोक देखत सब कौतुक बाल केलि अनु-रागी। गावत सुनत सुनत सुख करि मनौ सूर दुरित दुख भागी ॥ ५१० ॥



राग सारंग ॥

वृंदावन देख नंदनंदन अतिहि परम सुख पायो। जहाँ जहाँ बाल गाइ सँग डोलत तहँ तहँ आपुन धायो ॥ बलदाऊ मोको जित छाँड़ो संग तुम्हारे पैहों ॥ कैसेहुँ आज यशोदा छाँड़्यो कालिह न आवन पैहों ॥ सोवत मोको हेरि लेइगें बाबानंद दुहाई। सूर श्याम बिनती करै बलसों सखन समेत सुनाई ॥ ५११ ॥



(बन में घूमते २ कृष्ण और बलदाऊ ने धेनुक राक्षस और उसके परिवार को मारा और तब घर लौटे)

राग गौरी ॥

आजु हरि धेनु चराये आवत। मोर मुकुट वनमाल विराजत

पीतांबर फहरावत ॥ जिहि जिहि भाँति ग्वाल सब बोलत सुनि श्रवणन मन राखत। आपुन टेरिलेत नान्हे सुर हरषत मुख पुनि भाषत ॥ देखत नंद यशोदा रोहिणि अरु देखत ब्रज लोग। सूर श्याम गाइन सँग आये मैया लीनो आग ॥ ५१४ ॥



राग गौरी ॥

यशुमति दौरि लए हरि कनियां। आजु गयो मेरो गाइ चरावन हौं बलिगई निछुनियाँ। मो कारण कछु आन्यो है बलि बनफल तोरि कन्हैया। तुमहिं मिले मैं अति सुख पायो मेरे कुँवर कन्हैया ॥ कछुक खाहु जो भावै मोहन देरी माखन रोटी। सूरदास प्रभु जीवहु युग युग हरि हलधर की जोटी ॥५१५॥



(कंस ने कृष्ण को मारने का एक नया उपाय सोचा। उसने ब्रज मे नन्द से जमुनाजी के कमल मँगाये जहां भयङ्कर कालिय सांप रहता था। उसने सोचा कि कृष्ण अवश्य कमल लेने जायँगे और सांप अवश्य उन्हे डस लेगा। कंस का सन्देशा पाकर व्रज में हाहाकार मच गया। कृष्ण को भी पता लगा। एक दिन वह, बलदाऊ, श्रीदामा और बहुत से लडके जमुना किनारे गेंद खेलने गये। गेंद श्रीदामा की थी। कृष्ण के हाथ से वह कालीदह में जा गिरी जहां कमल थे और कालिय सर्प था। श्रीदामा अपनी गेंद के लिए कृष्ण का फेंट पकड़ कर ज़िद करने लगा। कृष्ण फेंट छुड़ाकर कदम्ब के पेड़ पर चढ़ गये। श्रीदामा रोने लगा और यशोदा के पास शिकायत करने जाने लगा। कृष्ण ने कहा, "लो, अपनी गेंद लो" और यह कह कर कालीदह मे कूद पड़े। कृष्ण को जल में डूबते देख सब ग्वाले हाहाकार करने लगे)

राग गौरी।

हाइ हाइ करि सखनि पुकार्यो। गेंद काज यह करी

श्रीदामा नंदमहर को ढोटा मार्‌यो ॥ यशुमति चली रसोई भीतर तबहिं ग्वालि इक छींकी। ठठकि रही द्वारे पर ठाढ़ी बात नहीं कछु नीकी ॥ आइ अजिर निकसी नँदरानी बहुरो दोष मिटाइ। मंजारी आगे ह्वै निकसी पुनि फिरि आँगन आइ ॥ व्याकुल भई निकसि गई बाहिर कहाँ धौं गयो कन्हाई। बाँयें काग दहिने खर शूकर व्याकुल घर फिरि आई ॥ खन भीतर खन बाहिर आवति खन आँगन इहि भाँति। सूर श्याम को टेरत जननी नेक नही मन शांति ॥ ५६१ ॥



राग गौरी ॥

देखे नंद चले घर आवत। पैठत पौरि छींक भई बायें रोइ दाहिने धाह सुनावत ॥ फटकत श्रवन श्वान द्वारे पर गररी करत लराई। माथे पर ह्वै काग उड़ानो कुसगुन बहुतक पाई ॥ आए नंद घरहि मन मारे व्याकुल देखी नारि। सूर नंद युवती सों बूझत बिन छवि वदन निहारि ॥ ५६२ ॥



राग नट ॥

नंद घरनि सों बूझत बात। वदन झुराय गयो क्यों तेरो कहाँ गयो बल मोहन तात ॥ भीतर चली रसोई कारण छींक परी तब आँगन आइ। पुनि आगे ह्वै गई मंजारी और बहुत कुसगुन मैं पाइ ॥ मोहि भए कुसगुन घर पैठत आजु कहा यह समुझि न जाइ। सूर श्याम गए आजु कहाँ धौं बार बार बूझत नँदराइ ॥ ५६३ ॥

राग नट ॥

महरि महर मन गए जनाइ। खन भीतर खन आँगन ठाढ़े खन बाहर देखत हैं जाइ ॥ यहि अंतर सब सखा पुकारत रोवत आए ब्रज को धाइ। आतुर गए नंद घरही को महरि महर सों बात सुनाइ॥ चकित भई दोउ बूझन लागे कहौ बात हमको समुझाइ। सूर श्याम खेलतहि कदम चढ़ि कूदि परे काली दह जाइ ॥ ५६४ ॥



राग सोरठ ॥

सपनो परगट कियो कन्हाई। सोवत ही निशि आजु डराने हम सों यह कहि बात सुनाई॥ धरणि परी मुरझाइ यशोदा नंद गए यमुना तट धाइ। बालक सब नंदहि सँग धाए ब्रज घर जहँ तहँ शोर मचाइ॥ त्राहि त्राहि करि नंद पुकारत देखत ठौर गिरे भहराइ। लोटत धरणि परत जल भीतर सूर श्याम दुख दियो बुढ़ाइ॥ ५६५ ॥



राग गौरी ॥

ब्रजबासी यह सुनि सब आए। कहाँ पर्‌यो गिरि कुँवर कन्हाई बालक लै सो ठौर दिखाये॥ सूनो गोकुल कियो श्याम तुम यह कहि लोग उठे सब रोइ। नंद गिरत सबहिन धरि राख्यो पोंछत वदन नीर लै धोइ॥ ब्रजबासी तब कहत नंद सों मरण भयो सब ही को आइ। सूर श्याम बिनु को बसि है ब्रज धृग जीवन तिहुँ भुवन कहाइ॥ ५६६ ॥

राग गौरी ॥

महरि पुकारति कुँवर कन्हाई । माखन धर्‌यो तिहारेहि कारण आजु कहाँ अवसेर लगाई ॥ अति कोमल तुम्हरे मुख लायक तुम जेंवहु मेरे नैन जुड़ाइ । धौरी दूध औटि है राख्यो अपने कर दुहिगए बनाइ ॥ बरजति ग्वारि यशोदा को सब यह कहि कहि नीके हैं यदुराइ । सूर श्याम सुत विरह मात के यह वियोग बरण्यो नहिं जाइ ॥ ५६७ ॥



राग गौरी ॥

माखन खाहु लाल मेरे आई । खेलत आजु अबार लगाई ॥ बैठहु आइ संग दोउ भाई । तुम जेंवहु मैया बलि जाई ॥ सद माखन अति हित मैं राख्यो । आजु नहीं नेकहु तै चाख्यो ॥ प्रातहि ते मैं दियो जगाइ । दँतवनि करि जु गए दोउ भाइ ॥ मै बैठी तुव पंथ निहारों । आवहु तुम पर तनु मनु वारों ॥ ब्रज युवती सब सुनि यह बानी । रोवत धरणि परीं अकुलानी ॥ शोकसिंधु बूड़ी नँदरानी । सुधि बुधि तन की सबै भुलानी ॥ सूर श्याम लीला यह कीन्हो । सुख के हेत जननि दुख दीन्हो ॥५६८॥



राग नट ॥

चौंकि परी तन की सुधि आई । आजु कहा ब्रज शोर मचायो तब जान्यो दह गिर्‌यो कन्हाई ॥ पुत्र पुत्र कहि कै उठि दौरी व्याकुल यमुना तीरहि धाई । ब्रज बनिता सब संगहि लागीं आइ गए बल अग्रज भाई ॥ जननी व्याकुल देखि प्रबोधत धीरज करि नीके यदुराई । सूर श्याम को नेक नहीं डर जिनि तू रोवै यशुमति माई ॥ ५६९ ॥

राग बिलावल ॥

ब्रजवासी सब उठे पुकारी। जल भीतर कहा करत मुरारी ॥
संकट में तुम करत सहाय। अब क्यों नहीं बचावत आय ॥
मात पिता अतिही दुख पावत। रोइ रोइ सब कृष्ण बुलावत ॥
हलधर कहत सुनहु ब्रजवासी। वै अन्तर्यामी अविनासी ॥
सूरदास प्रभु आनँदरासी। रमासहित जलही के वासी ॥५७०॥

(इधर कृष्ण अत्यन्त कोमल शरीर धारण कर सर्प के पास गये। ठोकर मार कर उसे जगाया। वह कृष्ण के शरीर पर लपट गया। कृष्ण ने अपना शरीर इतना बढ़ाया कि साप के अङ्ग टूटने लगे और वह त्राहि त्राहि पुकारने लगा। आर्तनाद सुनकर कृष्ण ने फिर शरीर सकोड़ लिया। चकित होकर सर्पराज ने कृष्ण की स्तुति की और कमल फूल ला दिये। दोपहर के बाद जमुना तट पर खड़े ब्रजवासियों को कृष्ण सर्प के फन पर नाचते हुए अगणित कमलों के साथ आते हुए दीख पड़े। ब्रजवासियों के आनन्द का वार पार न रहा। देवताओं ने दुन्दुभी बजाई। कमल-फूल कंस के पास भेज दिये गये। इस प्रकार कृष्ण ने ब्रज को कस के क्रोध और आक्रमण से बचाया[1]।)



दावानल के पानकी लीला ॥ राग कान्हरा ॥

दावानल ब्रजजन पर धायो। गोकुल ब्रज वृंदावन तृण द्रुम चाहत है चहुँपास जरायो ॥ घेरत आवत दसहुँ दिशाते अति कीन्हे तनु क्रोध। नरनारी सब देखि चकित भए दावा लग्यो चहुँ कोध ॥ वह तो असुर घात किये आवत धावत पवन

---

१ कालियदह की कथा के लिए देखिए श्रीमद्‌भागवत दशम स्कन्ध, पूर्वार्ध, अध्याय १६–१७। लल्लूजीलाल कृत प्रेमसागर, अध्याय १७।

समाजु । सूरदास ब्रजलोग कहत इह उठ्यो दवा अति आजु ॥ ६७७ ॥



राग कान्हरा ॥

आइ गई दव अतिहि निकटही । यह जानत अब ब्रज न बाँचिहै कहत सबै चलिये जलतटही ॥ करि बिचार उठि चलन चहत हैं जो देखैं चहुँ पास । चकृत भए नर नारि जहाँ तहाँ भरि भरि लेत उसास ॥ झरझरात भहरात लपट अति देखि-अत नहीं उबार । देखत सूर अग्नि अधिकानी नभलौ पहुँची झार ॥ ६७८ ॥



राग कान्हरा ॥

दसहुँ दिसाते बरत दवानल आवत है ब्रजजन पर धायो । ज्वाला उठी अकाश बराबरि घात आपने करि सब पायो ॥ बीरा लै आयो सनमुखते आदर करि नृपकंस पठायो । जारि करौं परलय क्षणभीतर ब्रज बपुरो केतिक कहवायो ॥ धरणि अकाश भयो परिपूरण नेक नहीं कहुँ संधि बचायो । सूरश्याम बलरामहि मारन गर्व सहित आतुर ह्वै आयो ॥ ६७९ ॥



राग कान्हरा ॥

ब्रजके लोग उठे अकुलाइ । ज्वाला देखि अकाश बराबरि दशहुँ दिशा कहुँ पारु न पाइ ॥ झरहरात बनपात गिरत तरु धरणी तरकि तड़ाकि सुनाइ । जल बरषत गिरिवर तर बाचे अब कैसे गिरि होतु सहाइ ॥ लटकि जात जरि जरि द्रुम बेली

पटकत बांस कांस कुशताल। उचटत फर अंगार गगनलौं सूर निरखि ब्रजजन बेहाल ॥ ६८० ॥



राग कान्हरा।

नंदघरनि यह कहति पुकारे। कोउ बरषत कोउ अगिनि जरावत दई पर्‌यो है खोज हमारे॥ तब गिरिवर कर धर्‌यो कन्हैया अब न बांचि है मारत जारे। जेंवन करन चली जब भीतर छींक परी तिय आजु सवारे॥ ताको फल तुरतहि यक पायो सो उबर्‌यो भयो धर्म सहारे। अब सबको संहार होत है छींक किये ये काज बिचारे॥ कैसेहु ए बालक दोउ उबरे पुनि पुनि सोचति परी खँभारे। सूर श्याम यह कहत जननिसों रहि री माँ धीरज उरधारे॥ ६८१ ॥



राग गौड़॥

भहरात झहरात दावानल आयो। घेरि चहुँ ओर करि शोर अंधेर बन धरनि अकाश चहुँपास छायो॥ बरत बन बाँस थरहरत कुश कांस जरि उड़त है भांस अति प्रबल धायो। झपटि झपटत लपट पटकि फूल फूटत फटि चटकि लट लटकि द्रुम नवायो॥ अति अगिनि झार भार धुंधार करि उचटि अंगार झंझार छायो। बरत बनपात भहरात झहरात अररात तरु महा धरणी गिरायो॥ भए बेहाल सब ग्वाल ब्रजबाल तब शरन गोपाल कहिकै पुकार्‌यो। तृणाकेशी शकट बकी बक अघासुर वामकर गिरि राखि ज्यों उबार्‌यो॥ नेक धीरज करौ जियहि कोऊ जिनि डरौ कहा यह सरे लोचन मुदायो। मुठी

भरि लियो सब नाय मुखही दियो सूर प्रभु पियो दावा ब्रजजन बचायो ॥ ६८२ ॥



राग गुंड ॥

दावानल अचयो ब्रजराज ब्रजजन जरत बचायो। धरणि आकाशलौं ज्वाल माला प्रबल घेरि चहुँ पास ब्रजवास आयो॥ भये बेहाल सब देखि नंदलाल तब हँसतही ख्याल तत्काल कीन्हों। सबाने मूँदे नयन ताहि चितये सैन तृषा ज्यों नीर दव अचै लीन्हों ॥ लखो अब नैनभरि बुझिगई अग्निझारि चितै नर नारि आनंद भारी। सूर प्रभु सुख दियो दवानल पीलियो कहत सब ग्वाल धनि धनि मुरारी ॥ ६८४ ॥



राग बिहागरा ॥

चकित देखि यह कहि नर नारी। धरणि अकास बराबरि ज्वाला झपटत लपट करारी ॥ नहि बरष्यो नहिं छिरक्यो काहू कहुँ धौ गयो बिलाइ। अति आघात करत वन भीतर कैसे गयो बुझाइ ॥ तृणकी आगि बरतही बुझिगई हँसि हँसि कहत गुपाल। सुनहु सूर वह करनि कहनि यह ऐसे प्रभु के ख्याल[1] ॥ ६८५ ॥



गौचारन ॥ (यशोदा कृष्ण को जगाती है) राग बिलावल ॥

जागिए गोपाललाल प्रगट भई हंसमाल मिट्यो अंधकाल

---

१ दावानल की कथा के लिए देखिए श्रीमद्भागवत दशम स्कन्ध पूर्वार्ध, अध्याय १७।

उठौ जननी मुख दिखाई। मुकुलित भए कमलजाल कुमुदवृंद बन बिहाल मेटहु जंजाल त्रिविध ताप तन नसाई॥ ठाढ़े सब सखा द्वार कहत नंदके कुमार टेरत हैं बार बार आइये कन्हाई। गैयनि भई बड़ी बार भरि भरि पै थननि भार बछरागन करैं पुकार तुम बिनु यदुराई॥ तातै यह अटक परी दुहुँनकाज सौंह करी उठि आवहु क्यों न हरी बोलत बलभाई। मुखते पट झटकि डारि चंद्रवदन दे उघारि यशुमति बलिहारि वारिज-लोचन सुखदाई॥ धेनुदुहन चले धाइ रोहिणी तब लै बुलाइ दोहनी मुहिं दै मँगाइ तबही लै आई। बछरा थन दियो लगाइ दुहत बैठिकै कन्हाइ हँसत नंदराइ तहाँ मात दोउ आई॥ दोहनि कहुं दूधधार सिखवत नंद बार बार यह छबि नहिं वार पार नंद घर बधाई। तब हलधर कह्यो सुनाइ गाइन बन चलौ लिवाइ मेवा लीनो मँगाइ विविधरस मिठाई॥ जेंवत बलराम श्याम संतनके सुखदधाम धेनुकाज नहिं विश्राम यशुदाजल ल्याई। श्याम राम मुख पखारि ग्वालबाल लिये हँकारि यमुना-तट मन बिचारि गाइन हँकराई॥ शृंग वेणू नाद करत मुरली मुख अधर धरत जननी मन हरत ग्वाल गावत सुरसाई। वृंदा-वन तुरत जाइ धेनु चरति तृण अघाइ श्याम हरषपाइ निरखि सूरज बलि जाई॥ ७०५॥



मुरलीस्तुति॥ राग सारंग॥

जब हरि मुरली अधर धरत। खग मोहे मृगयूथ भुलाने निरखि मदन छबि छरत। पशु मोहे सुरभीहु थकीं तृणदंतहि टेक रहत॥ शुक सनकादि सकल मन मोहे ध्यानिउ ध्यान बहत। सूरदास भाग्य हैं तिनके जो या सुखहि लहत॥ ७०६॥

राग बिहागरा ॥

कहौ कहा अंगन की सुधि बिसरि गई। श्याम अधर मृदु सुनत मुरलिका चकृत नारि भई॥ जो जैसे सो तैसे रहि गई सुख दुख कह्यो न जाइ। लिखी चित्रसी सूर सो रहि गई एकटक पल बिसराइ॥ ७०७॥



राग मलार ॥

सुनत वन मुरली ध्वनि की बाजन। पपिहा गुंज कोकिल वन कुंजत अरु मोरन के गाजन॥ यही शब्द सुनिअत गोकुल मे मोहन रूप विराजन। सूरदास प्रभु मिली राधिका अंग अंग करि साजन[1]॥ ७०८॥

---

[1] हिन्दी के बहुत से कवियों ने कृष्ण-मुरली की महिमा गाई है। नन्ददास जिनके विषय मे प्रसिद्ध है कि "और सब गढ़िया, नन्द-दास जड़िया", कहते है :—

तब लीनी कर कमल जोगमाया सी मुरली,
अघटत घटना चतुर बहुरि अधरन सुर जुरली।
जाकी धुनि ते निगम अगम प्रगटित बड़ नागर,
नाद ब्रह्म की जानि मोहनी सब सुखसागर।
पुनि मोहन सों मिली कछू कलगान कियो अस,
वामविलोचन बालत्रियन मनहरन होय जस।
मोहन मुरली नाद स्रवन कीनो सब किनहूँ,
यथा यथा विधिरूप तथा विधि परस्यौ तिनहूँ।

इत्यादि, रासपञ्चाध्यायी, पहिला अध्याय।

किती न गोकुल कुलवधू, काहि न केहि सिख दीन।
कौन तजी न कुल गली, ह्वै मुरली सुर लीन॥ बिहारी सतसई।

कृष्ण के रूप का वर्णन ॥ राग बिलावल ॥

श्याम हृदय वर मोतिन माला। विथकित भई निरखि व्रज-बाला। श्रवण थके सुनि वचन रसाला। नैन थके दरशन नँदलाला॥ कंबुकंठ भुज नैनबिसाला। करके उर कंचन नग जाला॥ पल्लव हस्त मुद्रिका भ्राजै। कौस्तुभमणि हृदयस्थल

मुरली सुनत वाम काम ज़ुर लीन भई,
धाई धुर लीक सुनि विधी विधुरनि सों।
पावस न, दीसी यह पावस नदी सी,
फिरै उमड़ी असंगत तरंगित उरनि सों।
लाज काज सुख, सुखसाज, बंधन समाज,
नांघि निकसीं निसंक, सकुचै नहीं गुरनि सों,
मीन ज्यों अधीनी गुन कीनी खैचि लीनी "देव",
वंसीवार वंसी डार वंसी के सुरनि सों॥
मंद, महामोहक, मधुर सुर सुनियत,
धुनियत सीस वधी वांसी है री वांसी है।
गोकुल की कुल वधू को कुल सम्हारै नही,
दो कुल निहारै, लाज नासी है री नासी है॥

इत्यादि २ ॥ देव ॥

मोहन वसुरी सौं कछू मेरौ वस न वसाइ।
सुर रसरी सौं श्रवन मगु बाँधि मनै लै जाइ॥ २१४॥
अब लग वे धन मन हते द्दग अनियारे बान।
अब वंसी वेधन लगी सह सुरन सौं प्रान॥ २१६॥
करत त्रिभंगी मोह नहिं मुरली लग अधरान।
क्यों न तजै ताके सुनै और सबै कुलकान॥ २१६॥

रसनिधि (रतनहज़ारा)।

छाजै ॥ रोमावली बरणि नहिं जाई । नाभिस्थल की सुंदरताई ॥ कटि किंकिणी चंद्रमणि संयुत । पीतांबर कटितट छबि अद्भुत ॥ युगल जंघकी पटतर कोहै । तरुनी मन धीरज को जोहै ॥ जान जानुकी छबि न सँभारै । नारि निकर मन बुद्धि बिचारै ॥ रत्न जटित कंचनकल नेपुर । मंदमंद गति चलत मधुर सुर ॥ युगल कमल पद नखमणि आभा । संतनि मन संतत यह लाभा ॥ जो जेहि अंग सो तहाँ भुलानी । सूरश्याम गति काहु न जानी ॥ ७११ ॥

कौन ठगोरी भरी हरि आज बजाई है बाँसुरिया रस भीनी,
तान सुनी जिनहीं जिनहीं तिनहीं तिन लाज बिदा कर दीनी ।
घूमे खरी खरी नन्द के वार नवीनी कहा अरु बाल प्रवीनी,
या व्रजमंडल में 'रसखान' सु कौन भटू जुलटू नहिं कीनी ॥

रसखान ।

सुन सखि, फिर वह मनोमोहिनी माधव मुरली बजती है;
कोकिल अपनी कंठ कला का गर्व सर्वथा तजती है ।
मलयानिल मेरे कानों में उस ध्वनि को पहुँचाती है,
सदा श्याम की दासी हूँ मैं, सुध बुध भूली जाती है ॥

बँगला कवि मधुसूदनदत्त कृत विरहिणी व्रजाङ्गना ।

(अनुवादक—"मधुप")

सुन पड़ा स्वर ज्यों कलवेणु का, सकल ग्राम समुत्सुक हो उठा ।
हृदययन्त्र निनादित हो गया, तुरत ही अनियन्त्रित भाव से ॥ १२ ॥
वयवती युवती बहु बालिका, सकल बालक वृद्ध वयस्क भी ।
विवश से निकले निज गेह से, स्वदृग का दुख मोचन के लिये ॥ १३ ॥

अयोध्यासिंह उपाध्याय कृत प्रियप्रवास, प्रथमसर्ग ।

राग गौरी ॥

नँदनंदन मुख देख्यो माई। अंग अंग छबि मनहु उये रवि ससि अरु समर लजाई ॥ खंजन मीन कुरंग भृंग वारिज पर अति रुचिपाई। श्रुतिमंडल कुंडल विवि मकर सु बिलसत सदन सदाई॥ कंठ कपोत कीर विद्रुम पर दारिम कननि चुनाई। दुइ सारंग बाहन पर मुरली आई देत दोहाई॥ मोहे थिर चर विटप बिहंगम व्यौम बिमान थकाई। कुसमंजुलि वरषत सुर ऊपर सूरदास बलिजाई॥ ७१२॥



राग कल्याण ॥

बने विसाल हरि लोचन लोल। चितै चितै हरि चारु विलोकनि मानहुँ माँगत है मन ओल॥ अधर अनूप नासिका सुंदर कुंडल ललित सुदेश कपोल। मुख मुसकात महाछबि लागत श्रवण सुनत सुठि मीठे बोल॥ चितवत रहत चकोर चंद्र ज्यों नेक न पलक लगावत डोल। सूरदास प्रभु के वश ऐसे दासी सकल भई बिनु मोल॥ ७१६॥



राग बिलावल ॥

देखि सखी हरि अंग अनूप। जानु युगल युग जंघ बिराजत को वरणै यह रूप॥ लकुट लपेटि लटकि भए ठाढ़े एक चरण धर धारे। मनहुँ नीलमणि खंभ काम रचि एक लपेटि सुधारे॥ कबहुँ लकुटते जानू हरिलै अपने सहज चलावत। सूरदास मानहु करभाकर बारंबार डोलावत॥ ७१८॥

राग नटनारायण ॥

कटितटि पीत वसन सुदेष । मनहुँ नवघन दामिनी तजि रही सहज सुवेष ॥ कनक मणि मेखला राजत सुभग श्यामल अंग । मनो हंस रिसाल पंगति नारि बालक संग ॥ सुभग कटि काछनी राजत जलज केसरि खंड । सूर प्रभु अंग निरखि माधुरि मदन तनु पर्‌यो दंड ॥ ७१६ ॥



(कृष्ण के अग अग को देख कर गोपियां विचारने लगीं)

राग नट ॥

राजत रोम राजिव रेष । नील घन मनों धूमधारा रही सूक्षमशेष । निरखि सुंदर हृदय पर भृगुपद परम सलेष । मनहुँ शोभित अभ्रअंतर शंभु भूषण भेष ॥ मुक्तमाल नक्षत्र गणसम अर्धचंद्र विशेष ॥ सलज उज्ज्वल जलद मलयज प्रबल बलनि अलेश ॥ केकी कच सुरचापकी छबि दशन तड़ित सपेष । सूर प्रभु अवलोकि आतुर तजे नैन निमेष ॥ ७२१ ॥



राग आसावरी ॥

चतुर नारि सब कहति बिचारि । रोमावली अनूप विराजति यमुनाकी अनुहारि । उर कलिंद ते धँसि जलधारा उदर धरणि पर वाह । जातिचली अति ते जलधारा नाभि हृदय अवगाह ॥ भुजादंड तट सुभग घटा घन बन माला तरुकूल । मोतिनमाल दुहूंघा मानो फेन लहरि रसफूल ॥ सूर श्याम रोमावली की छबि देखति करति बिचारि । वुद्धि रचति तरि सकति न शोभा प्रेम विवश ब्रजनारि ॥ ७२३ ॥

राग नट ॥

श्यामकर मुरली अतिहि विराजत। परसत अधर सुधारस प्रगटत मधुर मधुर सुर बाजत ॥ लटकत मुकुट भौंह छवि मटकत नैन सैन अति छाजत। ग्रीव नवाइ अटकि बंसी पर कोटि मदन छवि लाजत ॥ लोल कपोल झलक कुंडल की यह उपमा कछु लागत। मानहुँ मकर सुधारस क्रीड़त आप आप अनुरागत। वृंदावन विहरत नँदनंदन ग्वालसखा सँग सोहत। सूरदास प्रभु की छवि निरखत सुर नर मुनि सब मोहत ॥ ७३१ ॥



राग सारंग ॥

वंसी बन कान्ह बजावत। आइ सुनो श्रवणनि मधुरे सुर राग रागिनी ल्यावत ॥ सुर श्रुति तान बँधान अमित अति सप्तअतीत अनागत आवत। जनु युग जुरि बरवेष सजलमथि बदनपयोधि अमृत उपजावत ॥ मनो मोहनी भेष धरे धर मुरली मोहन मुख मधु प्यावत। सुर नर मुनि वश किये राग रस अधर सुधारस मदन जगावत ॥ महामनोहर नाथ सूर थिर चर मोहे मिलि मरम न पावत। मानहु मूक मिठाई के गुन कहि न सकत मुख शीश डोलावत ॥ ७३४ ॥



(इसी ध्वनि मे मुरली की और महिमा गाकर गोपिया कहती है—)

राग सारंग ॥

ऐसो गुपाल निरखि तन मन धन वारौं। नवल किशोर मधुर मूरति शोभा उर धारौं ॥ अरुन तरुन कमलनैन मुरली कर राजै। ब्रजजन मन हरन बेन मधुर मधुर बाजै ॥ ललित

त्रिभंग सोतन बनमाला सोहै। अति सुदेश कुसुमपाग उपमा को कोहै॥ चरणहनित नेपुर कटि किंकिणीकल कूजै॥ मकराकृत कुंडल छबि सूर कौन पूजै॥ ७४६॥



राग सारंग॥

सुंदर मुख की बलि बलि जाउँ। लावनिनिधि गुणनिधि शोभानिधि निरखि निरखि जीवत सब गाउँ॥ अंग अंग प्रति अमित माधुरी प्रगटित रस रुचि ठाउँ ठाउँ॥ तामें मृदु मुसुकानि मनोहर न्याय कहत कबि मोहन नाउँ॥ नैन सैन दैदै जब हेरत तापर हों बिनमोल बिकाउँ। सूरदास प्रभु मदन मोहन छबि यह शोभा उपमा नहिं पाउँ॥ ७४७॥



राग सूही॥

मैं बलिजाउँ श्याम मुख छबि पर। बलि बलि जाउँ कुटिल कच विथुरी बलि बलि जाउँ भृकुटि लिलाटतर॥ बलि बलि जाउँ चारु अवलोकनि बलिहारी कुंडल की। बलि बलि जाउँ नासिका सुललित बलिहारी वा छबि की॥ बलि बलि जाउँ अरुन अधरन की विद्रुम बिंब लजावन। मैं बलि जाउँ दशन चमकन की वारौं तड़ित नसावन॥ मैं बलि जाउँ ललित ठोढ़ी पर बलमोतिन की माल। सूर निरखि तन मन बलिहारौं बलि बलि यशुमति लाल॥ ७४८॥



राग कनहरा॥

अलकन की छबि अलिकुल गावत। खंजन मीन मृगज लज्जितभए नैन नचावनि गतिहि न पावति॥ मुख मुसकानि

आनि उर अंतर अंबुज बुधि उपजावत । सकुचत अरु विगसित वा छबि पर अनुदिन जनम गवांवत ॥ पूरण नहीं सुभग श्यामल को यद्यपि जलधर ध्यावत । वसन समान होत नहिं हाटक अग्निझांपदे आवत ॥ मुकतादाम बिलोकि बिलखि करि अवलि बलाक बनावत । सूरदास प्रभु ललित त्रिभंगी मनमथ मनहि लजावत[1] ॥ ७४१ ॥

---

[1] नन्ददास ने कृष्ण के रूप का वर्णन इस प्रकार किया है :—

नीलोत्पल दल श्याम अंग नवजोवन भ्राजै,
कुटिल अलक मुख कमल मनों अलि अवनि विराजै ।
सुन्दर भाल विसाल दिपति मनों निकर निसाकर,
कृष्ण भक्ति प्रतिबिम्ब तिमिर को कोटि दिवाकर ।
कृपा रंग रस अयन नयन राजत रतनारे,
कृष्णरसामृत पान अलस कछु घूम घुमारे ।
स्रवण कृष्ण रस भरन गंड मंडल भल दरसे,
प्रेमानन्द मिलि त सु मन्द मुसिकन मधु बरसे ।
उन्नत नासा अधरबिम्ब सुक की छबि छीनी,
तिन बिच अद्‌भुत भांति लसत कछु इक मसभीनी ।
कम्बु कण्ठ की रेख देखि हरिधर्म्म प्रकासे,
काम, क्रोध, मद, लोभ, मोह जिहि निरखत नासें ।
उरवर पर अति छबि की भीरा बरनि न जाई,
जेहि भीतर जगमगति निरन्तर कुँवर कन्हाई ।
सुन्दर उदर उदार रोमावलि राजत भारी,
हिय सरवर रस भरी चली मनों उमगि पनारी ।
ता रस की कुण्डिका नाभि सोभित अस गहरी,
त्रिवली तामें ललित भांति जनों उपजत लहरी ।

(कृष्ण का रूप देख देख कर, कृष्ण की मुरली सुन सुन कर, राधा मोहित हो गई, सब गोपियाँ मोहित हो गईं, देवताओं से प्रार्थना करने लगीं कि कृष्ण हमारे पति हों)

चीरहरण लीला ॥ राग आसावरी ॥

गौरीपति पूजति ब्रजनारि। नेम धर्मसों रहति क्रिया युत बहुत करति मनुहारि ॥ इहै कहति पति देहु उमापति गिरिधर

अति सुदेस कटिदेस सिंह सोभित सघनन अस,
जोबनमद आकरसत बरसत प्रेम सुधारस।
गूढ जानु आजानु बाहु मदगज गति लोलैं,
गङ्गादिक न पवित्र करन अवनी में डोलैं।
रासपञ्चाध्यायी, पहिला अध्याय।

निम्नलिखित पद मेवाड़ की सुप्रसिद्ध भक्त मीराबाई का कहा जाता है:—

बसो मेरे नैनन में नन्दलाल।
मोहनि मूरति साँवरि सूरत नैना बने विसाल।
अधर सुधारस मुरली राजित उर वैजन्ती माल ॥
छुद्र घंटिका कटि तटि सोभित नूपुर शब्द रसाल।
मीरा प्रभु संतन सुखदाई भक्त वछल गोपाल ॥ इत्यादि इत्यादि।

दोउ कानन कुण्डल मोर पखा सिर सोहै दुकूल नयो चटको।
मनिहार गरे सुकुमार धरे नट भेस अरे पिय को टटको ॥
सुभ काछनी बैजनी पामन आमन मै न लगै झटको।
वह सुन्दर को रसखान अली जु गलीन मैं आइ अबै अटको ॥
जा दिन तें वह नन्द को छोहरो या बन धेनु चराइ गयो है।
मीठि ही ताननि गोधन गावत बैन बजाइ रिझाइ गयो है ॥
वा दिन सो कछु टोना सों कै रसखानि हिये में समाइ गयो है।
कोउ न काहू की कानि करै सिगरो ब्रज बीर बिकाइ गयो है ॥

नंद कुमार। शरनराखिलेवहु शिवशंकर तनहि नशावत मार॥ कमल पुहुपमा तूल पत्र फल नाना सुमन सुवास। महादेव पूजति मन बच क्रम करि सूर श्याम की आस॥ ८०५॥

मकराकृत कुण्डल गुञ्ज की माल वे लाल लसै पग पावरियां।
बछरानि चरावन के मिस भावतो दै गयो भावती भाँवरियाँ॥
रसखानि बिलोकत ही सिगरी भई बावरियाँ व्रज डांवरियाँ।
सजनि इहिं गोकुल मे विष सों बिगरायो है नन्द के सांवरियाँ॥

रसखान।

तिलक भाल वनमाल, अधिक राजत रसाल छवि।
मोर मुकुट की लटक, छटक बरनत अटकत कवि॥
पीतांबर फहराय, मधुर मुसक्यान कपोलन।
रच्यो रुचिर मुख पान, तान गावत मृदु बोलन॥
रति कोटि काम अभिराम अति, दुष्ट निकंदन गिरिधरन।
आनन्दकन्द व्रजचन्द प्रभु, जय जय जय अशरन शरन॥
मोर मुकुट नग जटित, कर्ण कुण्डल मणि झलकै।
मृगमद तिलक ललाट, कमल लोचन दल पलकै॥
घूघरवाली अलक, कंठ कौस्तुभ विराजै।
पीत वसन वनमाल, मधुर मुरली धुन बाजै॥
करत कोटि शुभ आभरन, चन्द सूर्य देखत लजत।
ते ब्रह्मदेव दे भक्तजन, श्यामरूप प्रीतम सजत॥

केशवदास।

अति समुत्तम अंग समूह था, मुकुर मंजुल औ मनभावना।
सतत थी जिसमें सुकुमारता, सरसता प्रतिविम्बित हो रही॥१७॥
विलसता कटि मे पट पीत था, रुचिर वस्त्रविभूषित गात था।
लस रही उर में वनमाल थी, कल दुकूल अलंकृत कंध था॥१८॥

राग रामकली ॥

शिवसों विनय करति कुमारि । जोरिकर मुख करति अस्तुति बड़े प्रभु त्रिपुरारि ॥ शीत भीत न करत सुंदरि कृश भई सुकुमारि । छहौ ऋतु तप करति नीके गृहको नेह बिसारि ॥ ध्यानधरि करजोरि लोचन मूँदि इक इक याम । बिनय अंचल छोरि रविसों करति हैं सब वाम ॥ हमहिं होहु कृपालु दिनमणि तुम विदित संसार । काम अति तनु दहत दीजै सूर श्याम भर्तार ॥ ८०६ ॥



राग नटनारायण ॥

रविसों बिनय करति कर जोरैं । प्रभु अंतर्यामी यह जानी हम कारण जप तप जल खोरैं ॥ प्रगटभए प्रभु जल ही भीतर देखि सबन को प्रेम । मींजत पीठि सबनि की पाछे पूरण कीन्हे नेम ॥

मकर केतन के कलकेतु से, लसित थे वर कुण्डल कान मे ।
घिर रही जिनके सब ओर थी, विविध भावमयी अलकावली ॥१९॥
मुकुट था शिर का शिखि पुच्छ का, अति मनोहर मंडित माधुरी ।
असित रत्न समान सुरंजिता, सतत थी जिसकी वरचन्द्रिका ॥२०॥
विशद उज्ज्वल उन्नत भाल मे, विलसती कलकेसर खौर थी ।
असित पंकज के दल मे लसे, रजसुरंजित पीत सरोज-ज्यों ॥२१॥
अयोध्यासिंह उपाध्याय कृत प्रियप्रवास, प्रथम सर्ग ॥

एक प्रकार से रसनिधि कृत लगभग सारा 'रतनहजारा' कृष्णरूप का वर्णन है । रघुराजसिंह ने रुक्मिणी-परिणय मे कृष्णरूप का अच्छा वर्णन किया है । देखिए पृष्ठ ५८–६० ।

संस्कृत के एवं भारतवर्ष की सब प्रचलित भाषाओं के सैकड़ों कवियों ने इस विषय पर कविता की है ।

फिरि देखै तो कुंवर कन्हाई रुचिसों मींजत पीठि । सूर निरखि सकुचीं व्रज युवती परी श्यामतनु डीठि ॥ ८०७ ॥



राग देवगंधार ॥

अति तप देखि कृपा हरि कीन्हों । तनकी जरनि दूरि भई सबकी मिलि तरुणिन सुख दीन्हों ॥ नवलकिशोर ध्यान युवती मन ऊहै प्रगट दिखायो । सकुचि गई अँग बसन सँभारति भयो सबनि मनभायो । मन मन कहति भयो तप पूरण आनँद उर न समाई । सूरदास प्रभु लाज न आवति युवतिन मांझ कन्हाई ॥ ८०८ ॥



राग सारंग ॥

हँसत श्याम व्रजघरको भागे । लोगनको यह कहति सुनावति मोहन करन लँगरई लागे ॥ हम अस्नान करत जल भीतर आपुन मींजत पीठि कन्हाई । कहा भयो जो नंदमहरसुत हमसों करत अधिक ढीठाई ॥ लरिकाईं तबहींलौं नीकी चारि वरष की पांच । सूर जाइ कहिहैं यशुमतिसों श्याम करत प नाच ॥ ८०९ ॥



राग सारग ॥

प्रेम बिबस सब ग्वालि भईं । उरहन दैन चलीं यशुमति के मनमोहनके रूप रईं ॥ पुलकि अंग अँगिया उर दरकी हार तोरि कर आपु लईं । अंचल चीर घात नख उर करि यहि मिष करि नँदसदन गईं ॥ यशोमति माइ कहा सुत सिखयो

हमको जैसे हाल कियो। चोली फारि हार गहि तोरयो देखो उर नखघात दियो॥ आंचर चीर अभूषण तोरे घेरि धरत उठि भागि गयो। सूर महरि मन कहति श्याम धौं ऐसे लायक कबहिं भयो॥ ८१०॥



(गोपिया यशोदा से शिकायत कर रही थीं कि बालक कृष्ण आ गये। वह लज्जित होकर घर लौट गईं। सब गोपियाँ देवताओं से प्रार्थना करती रहीं कि कृष्ण हमारे पति हों। एक दिन जब वह जमुनाजी में नहा रही थीं, कृष्ण उनके कपड़े उठा कर पेड़ पर जा बैठे। उनके बहुत प्रार्थना करने पर और बाहर निकल कर हाथ उठा कर सूर्य को प्रणाम करने पर कृष्ण ने उनके वस्त्र उनको दिये। उनकी जैसी भावना थी बालक कृष्ण वैसे ही रूप में उनके सामने प्रगट हुए। कृष्ण गोपियों से छेड़छाड़ करने लगे। ऊपर से वह खीझती थीं, यशोदा से शिकायत करती थीं, पर मन में वह बहुत प्रसन्न होती थीं। जब वह पानी भरने जाती तब कृष्ण मार्ग मे खडे हो जाते थे[1])।

अथ पनघट का प्रस्ताव॥ राग अडाना॥

हौं गई ही यमुनजल लेन माई हो सांवरेसे मोही। सुरग केसरि खौरि कुसुमकी दाम अभिराम कंठ कनककी दुलरी झलकत पीतांबरकी खोही॥ नान्ही नान्ही बूँदनमें ठाढ़ोरी बजावै गावै मलार की मीठी तान मैं तो लालाकी छबि नेकहु

१ चीरहरणलीला के लिए देखिए लल्लूजीलाल कृत प्रेमसागर, अध्याय २३। निम्न श्रेणी के बहुत से कवियों ने अतिशय शृङ्गार-रस-पूर्ण कविता में यह कथा कही है। परन्तु कुछ कवियों ने कहा है कि श्रीकृष्ण ने गोपियों को शिक्षा दी थी। जल में वरुण देवता का वास है। जो कोई जल में नंगा नहाता है उसका सारा धर्म बह जाता है।

न जोही। सूर श्याम मुरि मुसकानि छबी री अँखियनमें रही तब न जानोहो कोही॥ ८३८॥



राग अड़ाना॥

चटकीलो पट लपटानो कटि बंसीवट यमुनाके तट नागरनट। मुकुट लटकि अरु भ्रुकुटी मटक देखौ कुंडलकी चटकसों अटकि परी दृगनि लपट॥ आछी चरणनि कंचन लकुट ठटकीली बन-माल करटेके द्रुमडार टेढ़े ठाढ़े नँदलाल छवि छाइ घट घट। सूरदास प्रभु की बानक देखे गोपी ग्वाल टारे न टरत निपट आवै सोंधे की लपट॥ ८३९॥



राग सुघराई॥

बजावै मुरली की तान सुनावै यहिविधि कान्ह रिझावै। नटवर वेष बनाये चटक सों ठाढ़ो रहै यमुनाके तीर नित नव मृग निकट बोलावै॥ ऐसो को जो जाइ यमुनते जल भरि ल्यावै। मोरमुकुट कुंडल बनमाला पीतांबर फहरावै॥ एक अंग शोभा अवलोकत लोचन जल भरि आवै। सूर श्यामके अंग अंगप्रति कोटि काम छबि छावै॥ ८४०॥



राग पूरबी॥

पनघट रोके रहत कन्हाई। यमुना जल कोउ भरन न पावत देखतही फिरिजाई॥ तबहिं श्याम इक बुद्धि उपाई आपुन रहे छुपाइ। तब ठाढ़े जे सखा संग के तिनको लिये बोलाइ॥ बैठारे ग्वालन को द्रुमतर आपुन फिरि फिरि देखत। बड़ी बार भई कोउ न आई सूर श्याम मन लेखत॥ ८४१॥

राग देवगंधार ॥

युवति एक आवति देखी श्याम। द्रुम की ओट रहे हरि आपुन यमुनातट गई वाम ॥ जल हलोरि गागरि भरि नागरि जबहीं शीश उठायो ॥ घरको चली जाइ ता पाछे सिरते घट ढरकायो ॥ चतुर ग्वालि कर गह्यो श्याम को कनक लकुटिआ पाई। औरनिसों करि रहे अचगरी मोसों लगत कन्हाई ॥ गागरि लै हँसिदेत ग्वालि कर रीतो घट नहिं लैहौं। सूर श्याम ह्यां आनि देहु भरि तबहिं लकुट कर दैहौं ॥ ८४२ ॥



राग कल्याण ॥

लकुट करकी हौं तब देहौं घट मेरो जब भरिदैहौ। कहा भयो जो नंद बड़े वृषभानु आन हमहूं तुमसी हैं समसरि मिलि करि कैहौ ॥ एक गाँव एक ठाँवको वास एक तुम कैहौ क्यों मैं सैहौं। सूर श्याम मै तुम न डरैहौं जवाबको जवाब दैहौं ॥ ८४३ ॥



राग कल्याण ॥

घट भरिदेहु लकुट तब देहौं। हमहूं बड़े महरकी बेटी तुमको नहीं डरैहौं। मेरी कनक लकुटिआ दैरी मैं भरिदेहौं नीर। बिसरि गई सुधि ता दिन की तोहि हरे सबन के चीर ॥ यह बाणी सुनि ग्वारि विवस भई तनु की सुधि बिसराइ। सूर लकुट कर गिरत न जानी श्याम ठगौरी लाइ ॥ ८४४ ॥



राग हमीर ॥

घट भर दियो श्याम उठाइ। नेक तनु की सुधि न ताको चली ब्रज समुहाइ ॥ श्याम सुंदर नयन भीतर रहे आनि

समाइ। जहाँ जहाँ भरि दृष्टि देखौं तहाँ तहां कन्हाइ॥ उतहिते एक सखी आई कहति कहा भुलाइ। सूर अबहीं हँसत आई चली कहा गँवाइ॥ ८४५॥



(इस प्रकार जब कृष्ण ने अनेक गोपियों को छेड़ा तब वह यशोदा के पास शिकायत लेकर पहुँची।)

राग बिलावल॥

सुनहु महरि तेरो लाड़िलो अति करत अचगरी। यमुन भरन जल हम गईं तहां रोकत डगरी॥ सिरते नीर ढराइ देत फोरि सब गगरी। गेंडुरि दई फटकारिकै हरि करत है लँगरी॥ नित प्रति ऐसेई ढंग करे हमसों कहै धगरी। अब बस बास नहीं बनै यहि तुव व्रजनगरी॥ आपु गयो चढ़ि कदमही चितवत रहि सिगरी। सूरश्याम ऐसेही सदा हमसों करै झगरी॥ ८५८॥



राग रामकली॥

सुतको बरजि राखहु महरि। डगर चलन न देत काहुहि फोरि डारत ढहरि॥ श्यामके गुण कछु न जानति जाति हमसों गहरि। इहै लालच गाइ दस लिए बसत है व्रज थहरि॥ यमुना-तट हरि देखे ठाढ़े डरनि आवै वहरि। सूर श्यामहि नेकु बरजहु करत हैं अति चहरि॥ ८५९॥



राग रामकली॥

तुमसों कहति सकुचति महरि। श्यामके गुण नहीं जानति जाति हमसों गहरि॥ नेकहूँ नहिं सुनति श्रवणनि करति है हम

चहरि। जल भरन कोउ नहीं पावति रोकि राखत डहरि॥ अति अचगरी करत मोहन फटकि गेंडुरी दहरि। सूर प्रभु को कहा सिखयो रिसनि युवती झहरि॥ ८६०॥



राग धनाश्री॥

कहा करौं मो सों कहौ तुमहीं। जो पाऊँ तौ तुमहि देखाऊं हाहा करिहौ अबहीं॥ तुमहूं गुण जानतिहौ हरिके ऊखल बाँधे जबहीं। सँटिया लै मारन जब लागी तब बरज्यो मोहिं सबहीं॥ लरिकाईते करत अचगरी मैं जाने गुण तबहीं। सूर हाल कैसे करिहौं हरि आवै धौं हरि अबही॥ ८६१॥



राग सारंग॥

मैं जानतिहौं ढीठ कन्हैया। आवन तौ घर देहु श्यामको जैसी करौं सजैया॥ मोसों करत ढिठाई मोहन मैं वाकी हौं मैया। और न काहूको वह मानै कछु सकुचत बलभैया॥ अब जो जाउँ कहाँ तेहि पावों कासों देइ धरैया। सूर श्याम दिन दिन लंगर भयो दूरि करौं लँगरैया॥ ८६२॥



राग सूही॥

युवति बोधि सब घरहि पठाई। यह अपराध मोहिं बकसौ री इहै कहतिहौ मेरी माई॥ इतते चली घरनि सब गोपी उतते आवत कुँवर कन्हाई। बीचहि भेंट भई युवतिन हरि नैनन जोरत गए लजाई॥ जाहु कान्ह महतारी टेरति बहुत बड़ाई करि

हम आई । सूर श्याम मुख निरखि निरखि हँसि मैं कैहौं जननी समुझाई ॥ ८६३ ॥



राग नट ॥

सकुचत गए घर को श्याम । द्वारहीते निरखि देख्यो जननी लागी काम ॥ इहै बाणी कहति मुखते कहाँ गयो कन्हाई । आप ठाढ़े जननि पाछे सुनत है चित लाई ॥ जल भरन युवती न पावैं घाट रोकत जाइ । सूर सब के फोरि गागरि श्याम गयो पराइ ॥ ८६४ ॥



राग नटनारायण ॥

यशुमति यह कहिकै रिस पावति । रोहिणि करति रसोईं भीतर कहि कहि तिनहि सुनावति ॥ गारी देत बहू बेटिन को वै धाई ह्यां आवति । हाहा करति सबनिसों मैंही कैसेहु खूंट छुँड़ावति ॥ जाति पातिसों कहा अचगरी यह कहि सुतहि धिरावति । सूर श्याम को सिखवत हारी आरेहु लाज न आवति ॥ ८६५ ॥



राग सारंग ॥

तू मोही को मारन जानति । उनके चरित कहा कोउ जानै उनहि कही तू मानति ॥ कदमतीरते मोहिं बुलायो गढ़ि गढ़ि बातैं बानति । मटकत गिरी गागरी सिरते अब ऐसी बुधि ठानति ॥ फिरि चितई तू कहां रह्यो कहि मैं नहिं तोको जानति । सूर सुतहि देखतही रिसगई मुख चूमति उर आनति ॥८६६॥

राग गौरी ॥

झूठहि सुतहि लगावति खोरि । मैं जानति उनके ढँग नीके बातैं मिलवति जोरि ॥ वे यौवनमद की सब माती कहाँ मेरो तनक कन्हाई । आपुहि फोरि गागरी सिरते उरहन लीन्हे आई ॥ तू उनके ढिग जाति कितहि है वै पापिनि सब सारि । सूर श्याम अब कह्यो मानि तू हैं सब ढीठ गुवारि ॥ ८६७ ॥



राग मोहन ॥

मोहन बाल गोबिंदा माई मेरो कहा जानै चोरि । उरहन लै युवती सब आवति झूठी बतियाँ जोरि ॥ कोऊ कहति गेंडुरि मेरि लीन्ही कोऊ कहति गगरी गये फोरि । कोऊ चोली हार बतावति कान्हहु हये भोरि ॥ अब आवै जो उरहन लैके तौ पठऊँ मुँह मोरि । सूर कहाँ मेरो तनक कन्हाई आपुन यौवन जोरि ॥ ८६८ ॥



राग कान्हरो ॥

ब्रज घर घर यह बात चलावत यशुमति को सुत करत अचगरी यमुना जल कोउ भरन न पावत ॥ श्याम बरन नटबर बपु काछे मुरली राग मलार बजावत । कुंडल छबि रवि किरनहूँते द्युति मुकुट इंद्र धनुते शोभावत ॥ मानत काहुन करत अचगरी गागरि धरि जल भुइँ ढरकावत । सूर श्याम को मात पिता दोउ ऐसे ढँग आपुनहिं पढ़ावत ॥ ८६९ ॥



राग गौरी ॥

करत अचगरी नंदमहर को । सखा लिये यमुनातट बैठो

निबहत नहिं सब लोग डहर को ॥ कोऊ खिझो कोऊ कितने बरजो युवतिन के मन ध्यान । मन क्रम वचन श्यामसुंदर ते और न जानति आन ॥ इह लीला सब श्याम करत हैं ब्रज युवतिन के हेत । सूर भजे जेहि भाव कृष्ण को ताको सोइ फल देत ॥ यमुनाजल कोउ भरन न पावै । आपुन बैठे कदम डार चढ़ि गारी दैदै सबनि बोलावै ॥ काहू की गगरी गहि फोरत काहू सिरते नीर ढरावै । काहू सों करि प्रीति मिलतु है नैनसैन दे चितहि चुरावै ॥ बरबसही अँकवारि भरत धरि काहूसों अपनो मन लावै । सूर श्याम अति करत अचगरी कैसेहुँ काहू हाथ न आवै ॥ ८७० ॥



राग नट ॥

राधा सखियन लई बोलाइ । चलहु यमुनाजलहि जैये चलीं सबं सुखपाइ ॥ सबनि एक एक कलस लीन्हों तुरत पहुँची जाइ । तहाँ देख्यो श्याम सुंदर कुँवरि मन हरषाइ ॥ नंदनंदन देखि रीझे चितै रहे चितलाइ । सूर प्रभु की प्रिया राधा भरत जल मुसुकाइ ॥ ८७१ ॥



(घड़ा भर के राधा घर की ओर चली ।)

राग जयतश्री ॥

गागरि नागरि लिये पनिघट ते चली घरहि आवै । ग्रीवा डोलत लोचन लोलत, हरि के चितहि चुरावै ॥ ठठकति चलै मटकि मुँह मोरे बंकट भौंह चलावै मनहु काम सैना अँग शोभा अंचल ध्वज फहरावै ॥ गति गयंद कुच कुंभ किंकिनी मनहुँ घंट झहनावै । मोतिनहार जलाजल मानौं खुमीदंत

झलकावै ॥ मानहु चंद महावत मुख पर अंकुश बेसरि लावै। रोमावली सूँड़ि तिरनीलौं नाभि सरोवर आवै ॥ पग जे हरि-जंजीरनि जकर्‌यो यह उपमा कछु पावै। घटजल झलकि कपोलनि किनुका मानों मदहि चुवावै ॥ बेनी डोलति दुहुँ नितंब पर मानहुँ पूँछ हलावै। गज सिरदार सूर को स्वामी देखि देखि सुख पावै ॥ ८७६ ॥



राग मलार ॥

मेरी गैल न छाँड़ै साँवरो मैं क्यों करि पनघट जाउँ री। यहि सकुचनि डरपति रहों मोहिं धरै न कोउ नाउँ री ॥ जित देखों तित दीखे री रसिया नंदकुमार री। इत उत नैन चुराइ कै मोहिं पलकन करत जुहार री ॥ लकुट लिये आगे चलै हो पंथ संवारत जाइ री। मोहि निहोरो लाइ कै वह फिरि चितवै मुसुकाइ री ॥ सौ कंचुकि अंचरा उचै मेरो हियरा तकि लल-चाइ री। यमुना-जल भरि गागरि लै जब सिर चलत उचाइ री ॥ गागरि मारै कांकरी सों लागे मेरे गात री। गैल माँझ ठाढ़ो रहै मोहिं खुंबरै आवत जात री ॥ हौं सकुचनि बोलों नहीं लोकलाज की शंक री। मो तन छ्वैवै हरि चलै वह छबि भरतु है अंक री ॥ निकट आइ मुख निरखि के सकुचे बहुरि निहारि री। अब ढँग ओढ़ी ओढ़नी पीतांबर मोपै वारि री ॥ जब कहुँ लग लागे नहीं तब वाको जिव अकुलाइ री। तब हठि मेरी छाँह सों वह राखै छाँह छुआइ री ॥ को जानै कित होत है री घर गुरुजन की शोर री। मेरो जिव गाँठी बंध्यो पीतांबर की छोर री ॥ अब लौं सकुच अटक

रही अब प्रगट करौं अनुराग री । हिलि मिलि कै सँग खेलि हौं मानि आपनो भाग री ॥ घर घर ब्रजबासी सबै कोउ किन करै पुकारि री । गुप्त प्रीति परगट करौं कुल की कान नियारि री ॥ जब लगि मन मिलयो नहीं तब नची चाप के नाच री । सूर श्याम सँग ही रहौं सब करौं मनोरथ साँच री ॥ ८८० ॥



राग गौरी ॥

परयो तब ते ठग मूरि ठगौरी । देख्यो मैं यमुना-तट बैठो ढोटा यशुमतिको री ॥ अति साँवरो भरयो सो साँचे कीन्हे चंदन खोरी । मन्मथ कोटि कोटि गहि वारौं ओढ़े पीत पिछोरी ॥ दुलरी कंठ नयन रतनारे मो मन चितै हरयो री । बिकट भ्रुकुटि की ओर कोर ते मन्मथ बाण धरयो री ॥ दमकत दशन कनककुंडल मुख मुरली गावत गौरी । श्रवणन सुनत देह गति भूली भई विकल मति बौरी ॥ नहिं कल परत बिना दरशन ते नयननि लगी ठगौरी । सूर श्याम चित टरत न नेकहु निशि दिन रहत लगौरी ॥ ८८३ ॥



राग सारंग ॥

देखन दै पिय मदन गोपालहि । हा हा हो पिय पा लागति हों जाइ सुनौं बन बेनु रसालहि ॥ लकुट लिये काहे को त्रासत पति बिन मति बिरहनि बेहालहि । अति आतुर आरोधि अतिक दुख तोहिं कहा डर तिन यम कालहि ॥ मन तौ पिय पहिले ही पहुँच्यो प्राण तहाँ चाहत चित चालहि । कहि तू अपने स्वारथ सुख को रोकि कहा करि है खल खालहि ॥

लेहु सँभारि सु खेह देह की को राखै इतने जंजालहि। सूर सकल सखियन ते आगे अबहीं मूढ़ मिलति नँदलालहि ॥ ८६८ ॥



(इस तरह सब गोपियाँ मोहित होकर कृष्ण के दर्शन और मिलाप के लिए लालायित रहती थीं[1]। इस समय नन्द ने अपने कुलदेव इन्द्र की पूजा का महोत्सव किया और सब गोपों को निमन्त्रण दिया।)

राग सूही ॥

बाजति नंद अवास बधाई। बैठे खेलत द्वार आपने सात वरष के कुँवर कन्हाई ॥ बैठे नंद सहित वृषभानुहि और गोप बैठे सब आई। थापे देत घरन के द्वारे गावति मंगल नारि सुहाई ॥ पूजा करत इन्द्र की जानी आप श्याम तहाँ अतुराई। बूझत बार बार हरि नंदहिं कौन देव की करत पुजाई। इन्द्र बड़े कुल देव हमारे उनते सब यह होत बड़ाई। सूर श्याम तुम्हरे हित कारण यह पूजा हम करत सदाई ॥ ६१२ ॥



(पर कृष्ण ने कहा कि मुझे एक बडे अवतारी पुरुष ने स्वप्न में कहा है कि यह तुम किसकी पूजा करते हो। तुम गोवर्द्धन पर्वत की पूजा करो। तब व्रजवासियों ने बड़ी धूमधाम से गोवर्द्धन-पूजा का महोत्सव किया)

राग केदारो ॥

बिनती करत सकल अहीर। सकल भरि भरि ग्वाल लै लै सिखर डारत छीर ॥ चल्यौ बहि चहुँ पास ते पय सुरसरी

---

*१ कृष्ण के प्रति गोपियों के प्रेम के लिए देखिए श्रीमद्भागवत दशम स्कन्ध पूर्वार्ध अध्याय २१—२२। लल्लूजीलाल कृत प्रेमसागर अध्याय २४। और बहुत से कवियों ने भी इस विषय पर रचना की है।

जल टारि। बसन भूषन लै चढाए भीर अति नर नारि। मूँदि लोचन भोग अर्प्यो प्रेम सों रुचि भारि॥ सबनि देखी प्रगट मूरति सहस भुजा पसारि॥ रुचि सहित गिरि सबनि आगे करनि लै लै खाइ। नंदसुत महिमा अगोचर सूर क्यों कहै गाइ॥ ६२८॥



राग गौड मलार॥

गोपनंद उपनंद वृषभानु आए। बिनय सब करत गिरि-राजसों जोरि कर गए तनु पाप तुव दरश पाए॥ देवता बड़ो तुम प्रगट दरशन दियो प्रकट भोजन कियो सबनि देख्यो। प्रकट बाणी कही राजगिरि तुम सही और नही तिहूँ भुवन कहूँ पेख्यो॥ हँसत हरि मनहि मन तकत गिरिराज तन देव परसन भए करो काजा॥ सूर प्रभु प्रगट लीला कही सबनि सों चले घर घरनि अपने समाजा॥ ६३९॥



(अपने स्थान पर गोवर्द्धन की पूजा देख कर इन्द्र ने विचार किया:—)

राग सारंग॥

ब्रज के बासिन मो बिसरायो। भली करी बलि मेरी जो कछु सो लै सब पर्वतहि जिमायो॥ मोसों गर्व कियो लघु प्राणी ना जानिये कहा मन आयो। त्रिदस कोटि अमरन को नायक जानि बूझि इन मोहिं भुलायो॥ अब गोपन भूतल नहिं राखौं मेरी बलि मोको न चढ़ायो। सुनहु सूर मेरे मारत धौं पर्वत कैसे होत सहायो॥ ६४२॥

राग सोरठ ॥

प्रथमहि देउ गिरिहि बहाइ । बज्रघातनि करौं चूरन देउ धरणि मिलाइ ॥ मेरी इन महिमा न जानी प्रगट देउ दिखाइ । जल बरषि ब्रज धोइ डारौं लोग देउँ बहाइ ॥ खात खेलत रहे नीके करि उपाधि बनाइ । बरष दिवस मोहिं देत पूजा दई सोऊ मिटाइ ॥ रिस सहित सुरराज लीन्हें प्रबल मेघ बुलाइ । सूर सुरपति कहत पुनि पुनि परौ ब्रज पर धाइ ॥ ६४३ ॥



राग मेघ मलार ॥

सुनत मेघ वर्तक साजि सैन लै आए । जलवर्त बारिवर्त पवनवर्त बज्रवर्त आगिवर्तक जलद संग ल्याए ॥ घहरात तरतरात गररात हहरात पररात झहरात माथ नाये । कौन ऐसो काज बोले हम सुरराज प्रलय के साज हमको बुलाए ॥ बरष दिन संयोग देत मोकों भोग क्षुद्रमति ब्रज लोग गर्व कीनो । मोहिं गए बिसराइ पूज्यो गिरिवर जाइ परौ ब्रज पर धाइ आयसु यह दीनों ॥ कितक ब्रज के लोग रिस करत किहिं योग गिरि लियो भोगफल तुरत पैहैं । सूर सुरपति सुन्यो बयो जैसो लुन्यो प्रभु कहा गुन्यो गिरिसहित वैहैं ॥ ६४४ ॥



राग मलार ॥

बिनती सुनहु देव मघवापति । कितिक बात गोकुल ब्रज-वासी बार बार रिस करत जाहि अति ॥ आपुन बैठि देखियो कौतुक बहुतै आयसु दीनों । छिन मे बरषि प्रलय जल पाटौं खोज़ु रहै नहिं चीनों ॥ महाप्रलय हमरे जल बरषै गगन

रहे भरि छाइ । अछय वृच्छ बट बढ़तु निरंतर कहा ब्रज गोकुल गाइ ॥ चले मेघ माथे कर धरि कै मन में क्रोध बढ़ाइ । उमड़त चले इन्द्र के पायक सूर गगन रहे छाइ ॥ ६४५ ॥



राग गौड़ मलार ॥

मेघ दल प्रबल ब्रज लोग देखैं । चकित जहाँ तहाँ भए निरखि बादर नए ग्वाल गोपाल डरि गगन पेखैं ॥ ऐसे बादर सजल करत अति महाबल चलत घहरात करि अंधकाला । चकृत भये नंद सब महर चकृत भए चकृत नर नारि हरि करत ख्याला ॥ घटा घन घोर घहरात अररात दररात सररात ब्रजलोग डरपे । तड़ित आघात तरात उतपात सुनि नर नारि सकुचि तनु प्राण अरपै ॥ कहा चाहत हौन भई न कबहूं जौन कबहूँ आँगन भौंन बिकल डोलै । मेटि पूजा इद्र नंदसुत गोविंद सूर प्रभु करै आनंद कलोलै ॥ ६४६ ॥



राग गौड़ मलार ॥

सैनसाजि ब्रज पर चढ़ि धावहि । प्रथम बहाइ देउ गोवर्धन ता पाछे ब्रज खोदि बहावहि ॥ अहिरन करी अवज्ञा प्रभु की सो फल उन कहँ तुरत देखावहि । इंद्रहि पेलि करी गिरि पूजा सलिल बरषि ब्रज नाउँ मिटावहि ॥ बल समेत निशि वासर बरषहु गोकुल बोरि पताल पठावहि । सूरदास सुरपति आज्ञा यह भूतल कतहूँ रहन न पावहि ॥ ९४७ ॥



राग मेघमलार ॥

बादर घुमड़ि उमड़ि आए ब्रज पर बर्षत कारे धूमरे घटा

अति ही जल। चपला अति चमचमाति ब्रजजन सब डरडरात टेरत शिशू पिता मात ब्रज गलबल॥ गर्जत ध्वनि प्रलयकाल गोकुल भयो अंधकार चकृत भए ग्वाल बाल घहरत नभ करत चहल। पूजा मेटि गोपाल इंद्र करत इहै हाल सूर श्याम राखहु अब गिरिवर बल॥ ६४८॥



राग गौड़ मलार॥

गिरि पर बरषन आए बादर। मेघवर्त जलवर्त सैन सजि आये लै लै आदर॥ सलिल अखंड धार धर टूटत कियो इंद्र मन सादर। मेघ परस्पर यहै कहत हैं धोइ करहु गिरि खादर॥ देखि देखि डरपत ब्रजबासी अतिहि भए मन कादर। यहै कहत ब्रज कौन उबारै सुरपति किए निरादर॥ सूर श्याम देखे गिरि अपने मेघनि कीनो दादर। देव आपनो नहीं सँभारत करत इंद्र सों ठादर॥ ६४९॥



राग मलार॥

गए बितताइ ब्रज नरनारि। धरत सैंतत धाम बासन नाहिं सुरति सम्हारि॥ पूजि आए गिरि गोबर्धन देति पुरुषनि गारि। आपनो कुलदेव सुरपति धर्‌यो ताहि बिसारि॥ दियो फल यह गिरि गोबर्धन लेहु गोद पसारि। सूर कौन सम्हारि लै है चढ़्यो इंद्र प्रचारि॥ ६५०॥

राग सोरठ॥

ब्रज के लोग फिरत बितताने। गैयन लै बन ग्वाल गए ते धाए आवत ब्रजहि पराने॥ कोऊ चितवत नभतन चकृत ह्वै

कोउ गिरि परत धरनि अकुलाने । कोऊ लै ओट रहत वृक्षन की अंध धुंध दिशि विदिशि भुलाने ॥ कोउ पहुँचे जैसे तैसे गृह कोउ ढूंढ़त गृह नहिं पहिचाने । सूरदास गोबर्धन पूजा कीने कर फल लेहु बिहाने ॥ ९५१ ॥



राग नट ॥

तरपत नभ डरपत ब्रज लोग । सुरपति की पूजा बिसराई लै दीनो पर्वत को भोग ॥ नंदसुवन यह बुधि उपजाई कौन देव कह्यो पर्वत योग । सूरदास गिरि बड़ो देवता प्रगट होइ ऐसे संयोग ॥ ९५२ ॥



राग नट ॥

ब्रज नर नारि नंद यशुमति सों कहत श्याम ए काज करे । कुल देवता हमारे सुरपति तिनको सब मिलि मेटि धरे ॥ इंद्रहि मेटि गोवर्धन थाप्यो उनकी पूजा कहा सरे । सैंतत फिरत जहाँ तहाँ बासन लरिकनु लै लै गोद भरे ॥ को करि लेइ सहाइ हमारो प्रलय काल के मेघ अरे । सूरदास प्रभु कहत नारि नर क्यों सुरपति पूजा बिसरे ॥ ९५३ ॥



राग बिलावल ॥

राखि लेहु गोकुल के नायक । भीजत ग्वाल गाइ गोसुत सब विषम बूंद लागत जनु सायक ॥ बरषत मूसलधार सैनापति महामेघ मघवा के पायक । तुम बिनु ऐसो कौन नंदसुत

यह दुख दुसह मिटावन लायक ॥ अघ मर्दन वकवदन विदारन वकी विनाशन सब सुखदायक। सूरदास प्रभु ताकी यह गति जाके तुमसे सदा सहायक ॥ ९५४ ॥



राग मेघ मलार ॥

गगनमेघ घहरात थहरात गात। चपला चमचमाति चमकि नभ भहरात राखि ले क्यों न ब्रजनंद तात॥ सुनत करुणा बैन उठे हरि चले ऐन नैनकी सैन गिरि तन निहार्‌यो। सबनि धीरज दियो उचकि मंदर लियो कह्यो गिरिराज तुमको उबार्‌यो॥ करज के अग्र भुजवाम गिरिवर धरो नाम गिरिधर पर्‌यो भक्त काजै। सूर प्रभु कहत ब्रजवासिन सों राखि तुम लिए गिरिराज राजै ॥ ९६० ॥



राग मलार ॥

वाम कर जु टेक्यो ब्रजराज। गोपी गाइ ग्वाल गोसुत सब दुख बिसार्‌यो सुख करत समाज॥ आनँद करत सकल गिरिवरतर दुख डार्‌यो सब ही बिसराइ। चकृत भए देखत यह लीला सबै परत हरि चरणन धाइ॥ गिरिवर टेकि रहे बायें कर दक्षिण कर लियो सखनि उठाइ। कान्ह कहत ऐसो गोबर्धन देख्यो कैसो कियो सहाइ॥ गोप बाल नंदादिक जहँ लौं नंद सुअन लिए निकट बुलाइ। सूरदास प्रभु कहत सबनि सों तुमहूं मिलि टेकौ गिरि आइ॥ ९६२ ॥

राग मलार ॥

गिरि जनि गिरे श्याम के करते। करत बिचार सबै ब्रजबासी भय उपजत अति डरते॥ लै लै लकुट ग्वाल सब धाए करत सहाय उठे हैं तुरते। यह अति प्रबल श्याम अति कोमल रवकि रवकि उर परते॥ सप्त दिवस कर पर गिरि धार्‌यो बर्षा बरषि हार्‌यो अंमरते। गोपी ग्वाल नंदसुत राख्यो बरषत मेघधार जल धरते॥ यमलार्जुन दोउ सुत कुवेर के तेउ उखारे जर ते। सूरदास प्रभु इंद्रगवन कियो ब्रज राख्यो है वर ते॥ ९६३॥



राग मलार ॥

बरषत मेघवर्त ब्रज ऊपर॥ मूसल धार सलिल बरषतु है बूँद न आवत भू पर॥ चपला चमकि चमकि चकचौंधति करति शब्द आघात। अंधाधुंध पवनवर्तक घन करत फिरैं उत्पात॥ निशि सम गगन भयो आच्छादित बरषि बरषि झर इंदु। ब्रजबासी सुख चैन करत हैं कर गिरिवर गोविंद॥ मेघ बरषि जल सबै बढ़ाने द्विगुन गए सिराइ। वैसो ई गिरिवर वैसे ई ब्रजबासी दूनो हरष बढ़ाइ॥ सात दिवस जल बर्षि निशा दिन ब्रज घर घर आनंद। सूरदास ब्रज राखि लियो धरि गिरिवर नँदनंदन॥ ९६७॥



राग धनाश्री ॥

कहा होत जल महा प्रलय को। राख्यो सैंति सैंति जेहि कारज बचत नही बहुतन को॥ भुव पर एक बूंद नहिं पहुँची निझरि गए सब मेह। बासर सात अखंडित धारा

वरषत हारे देह ॥ बहुन भयो बिननीर सबनि को नाम रह्योहै बादर। सूर चले फिरि अमर राज पर ब्रजते भए निरादर ॥९७१॥

राग मलार ॥

मघवनि हारि मानि मुख फेरेउ। नीके गोप बड़े गोबर्धन जब नीके ब्रजहेरेउ ॥ नीके गाइ बच्छ सब नीके नीके बाल गोपाल। नीको बन वैसी ये यमुना मन मन भयो बिहाल ॥ गोकुल ब्रज वृंदावन मारग नेक नहीं जलधार। सूरदास प्रभु अगणित महिमा कहा भयो जलसार ॥ ९७२ ॥



(इन्द्र कृष्ण की शरण आया, पैरों पर गिर पड़ा और बहुत बहुत स्तुति करने लगा। कृष्ण ने उसे क्षमा करके विदा कर दिया। कृष्ण ने तब पर्वत से हाथ हटा लिया और फिर धूमधाम से गोवर्द्धन-पूजा का समारोह किया। नन्द, यशोदा और सब गोप गोपियाँ कृष्ण को प्रेम से बधाइयाँ देने लगे)

राग सोरठ ॥

गिरिवर कैसे लियो उठाई। कोमल कर चाँपति यशुदा यह कहि लेत बलाई ॥ महाप्रलय जल तापर राख्यो एक गोवर्धन भारी। नेक नहीं हाल्यो नख पर ते मेरो सुत अहंकारी ॥ कंचनथार दूध दधि रोचन सजि तमोर लै आई। हरषति तिलक करति मुख निरखति भुजभरि कंठ लगाई ॥ रिस करि कै सुरपति चढ़ि आयो देतो ब्रजहि बहाई। सूर श्याम सों कहति यशोदा गिरिधर बड़ो कन्हाई ॥ १००१ ॥

राग सोरठ ॥

धरणीधर क्यों राख्यो दिन सात । अतिहि कोमल भुजा तुम्हारी चाँपति यशुमति मात ॥ ऊँचो अति बिस्तार भार बहु यह कहि कहि पछितात । वह अघात तेरे तनक तनक कर कैसे राख्यो तात ॥ मुख चूमति हरि कंठ लगावति देखि हँसत बल भ्रात । सूर श्याम को केतिक बात यह जननी जोरति नात[1] ॥१००२॥

---

१ गोवर्द्धन लीला के लिए देखिए श्रीमद्भागवत दशम स्कन्ध, पूर्वाध, अध्याय २४—२५ । सूरदास की कविता भागवत की कविता से कितनी बढ़ी चढ़ी है यह सूरकृत वर्षा-वर्णन को निम्नलिखित वर्णन के साथ मिलाने से मालूम हो जायगा ।

श्रीशुक उवाच ॥ इत्थं मघवताऽऽज्ञप्ता मेघा निर्मुक्तबन्धना. ॥
नन्दगोकुलमासारै. पीडयामासुरोजसा ॥ ८ ॥
विद्योतमाना विद्युद्भि स्तनन्त स्तनयित्नुभिः ॥
तीव्रैर्मरुद्गणैर्नुन्ना ववृषुर्जलशर्कराः ॥ ९ ॥
स्थूणास्थूला वर्षधारा मुञ्चत्स्वभ्रेष्वभीक्ष्णश. ॥
जलौघै. प्लाव्यमाना भूर्नादृश्यत नतोन्नतम् ॥ १० ॥
अत्यासारातिवातेन पशवो जातवेपना ॥
गोपा गोप्यश्च शीतार्ता गोविन्दं शरणं ययु. ॥११॥
शिरः सुतांश्च कायेन प्रच्छाद्यासारपीडिताः ॥
वेपमाना भगवतः पादमूलमुपाययुः ॥ १२ ॥
कृष्ण कृष्ण महाभाग त्वन्नाथं गोकुलं प्रभो ॥
त्रातुमर्हसि देवान्नः कुपिताद्भक्तवत्सल ॥ १३ ॥

दशम स्कन्ध पूर्वाध, अध्याय २५ ।

देखिए लल्लूजीलालकृत प्रेमसागर, अध्याय २४—२७ । हिन्दी के अनेक कवियों ने गोवर्द्धन-लीला का वर्णन किया है ।

(इसके बाद सूरदास ने यही गोवर्द्धन-लीला, अपनी रीति के अनु-सार दूसरे भजनों मे गाई है। कुछ दिन बाद वरुण देवता नन्द को हर ले गया। कृष्णजी उनको छुड़ा लाये। सब लोगों ने समझा कि यह कोई बड़े अवतार है)

अथ दानलीला ॥ राग रामकली ॥

नँदनंदन इक बुद्धि उपाई। जे जे सखा प्रकृति के जाने ते सब लए बोलाई॥ सुबल सुदामा श्रीदामा मिलि और महर सुत आए। जो कछु मंत्र हृदय हरि कीन्हौं ग्वालन प्रगट सुनाए॥ ब्रज युवती नित प्रति दधि बेचन बनि बनि मथुरा जाति। राधा चंद्रावलि[1] ललितादिक बहु तरुणी यक भाँति॥ कालिंदी तट कालि प्रात ही द्रुम चढ़ि रह्यो लुकाइ। गोरस लै जबहीं सब आवैं मारग रोकहु जाइ॥ भली बुद्धि इह रची कन्हाई सखनि कह्यो सुख पाइ। सूरदास प्रभु प्रीति हृदय की सब मन गए जनाइ॥ १०७३॥

राग रामकली॥

प्रातहि उठी गोप कुमारि। परस्पर बोली जहाँ तहाँ यह सुनी बनवारि॥ प्रथम ही उठि सखा आये नंद के दरबार। आइये उठि कै कन्हाई कह्यो बारंबार॥ ग्वाल टेर सुनत यशोदा कुँवर दियो जगाइ। रहे आपुन मौन साधे उठे तब अकुलाइ॥ मुकुट शिर कटि कसि पीतांबर मुरली लीन्ही हाथ। सूर प्रभु कालिंदी तट गए सखा लीने साथ॥ १०७४॥

---

१ चन्द्रावली सखी पर भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने 'चन्द्रावली' नामक एक नाटक लिखा है।

राग रामकली ॥

भली करी उठि प्रातहि आए। मैं जानत सब ग्वारि उठी जब तब तुम मोहिं बोलाए ॥ अब आवति है हैं दधि लीन्हें घर घर ते ब्रजनारी । हँसे सबै करतारी दै दै आनँद कौतुक भारी ॥ प्रकृति प्रकृति अपने ढिग राखे संगी पांच हजार। और पठाइ दिये सूरज प्रभु जे जे अतिहि कुमार ॥ १०७५ ॥



राग बिलावल ॥

हँसत सखनि यह कहत कन्हाई। जाइ चढ़ौ तुम सघन द्रुमनि पर जहँ तहँ रहो छिपाई ॥ तब लौं बैठि रहौ मुंह मूंदे जब जानहु अब आई । कूदि परोगे द्रुमनि द्रुमनि ते दै दै नंद दोहाई ॥ चकित होहिं जैसे युवतीगण डरनि जाहिं अकुलाई । बेनु बिषान मुरलि ध्वनि कीजो शंख शब्द घहनाई ॥ नित प्रति जाति हमारे मारग इह कहियो समुझाई। सूर श्याम माखन दधि दानी यह सुधि नाहिन पाई ॥ १०७६ ॥



राग बिलावल ॥

श्याम सखन ऐसो समुझावत । ब्रज ब्रनिता ललितादिक इनको देखि बहुत सुख पावत ॥ कालि जात यह मारग देखी तब यह बुद्धि उपाई । अब आवति ह्वै है बनि बनि सब मोही सों चित लाई ॥ तुम सों कछू दुरावत नाही कहत प्रगट करि बात। सुनहु सूर लोचन मेरे बिनु राधा मुख अकुलात ॥१०७७॥

राग बिलावल ॥

ब्रजयुवती मिलि करति बिचार। चलो आजु प्रातहि दधि बेचन नित तुम करति अबार॥ तुरत चलो अबहीं फिरि आवैं गोरस बेचि सवारैं। माखन दधि घृत साजति मटुकी मथुरा जान बिचारैं॥ षटदस सहस शृंगार करति हैं अंग अंग सब निरखि सँवारति। सूरदास प्रभु प्रीति सबनि की नेक न हृदय बिसारति॥ १०७८॥



राग धनाश्री॥

युवती अंग शृंगार सँवारति। बेनी गूँथि माँग मोतिन की शीशफूल सिर धारति॥ गोरे भाल बिंद सेंदुर पर टीका धर्‍यो जराउ। बदन चंद्र पर रवि तारागण मानों उदित सुभाउ॥ सुभग श्रवण तरिवन मणि भूषित यह उपमा नहिं पार। मनहुँ काम रचि फंद बनाए कारण नंदकुमार॥ नासा नथ मुकुता की शोभा रह्यो अधर तट जाई। दाड़िम कनशुक लेत बन्यो नहिं कनक फंद रह्यो आई॥ दमकत दशन अरुण धरणी तर चिबुक डिठौना भ्राजत। दुलरी अरु तिलरी बंद तापर सुभग हमेल बिराजत॥ कुच कंचुकी हार मोतिन अरु भुजन बिजयठे सोहत। डारन चुरी करन फुंदनाबनि कंज पास अलि जोहत॥ क्षुद्रघंटिका कटि लहँगा रंग तन तन सुख की सारी। सूर ग्वालि दधि बेचन निकरी पग नूपुर ध्वनि भारी॥ १०७९॥



राग नट नारायणी॥

दधि बेचन चली ब्रजनारि। शीश धरि धरि माट मटुकी

बड़ी शोभा भारि ॥ निकसि ब्रज के गईं गोंड़े हरष भई सुकुमारि । चलीं गावति कृष्ण के गुण हृदय ध्यान बिचारि ॥ सबन के मन जो मिलै हरि कोउ न कहति उघारि । सूर प्रभु घट घट के व्यापी जानि लई बनवारि ॥ १०८० ॥



राग जयतश्री ॥

हरि देखी युवती आवति जब । सखन कह्यो तुम जाइ चढ़ौ द्रुम बैठि रहौ दुरि जहाँ तहाँ सब ॥ चढ़े सबै द्रुम डार ग्वालगण सुनत श्याम मुख बानी । धोखे धोखे रहे सबै हम श्याम भली यह जानी ॥ नव शत साजि शृंगार युवति सब दधि मटुकी लिये आवत । सूर श्याम छबि देखत रीझे मन मन हरष बढ़ावत ॥ १०८१ ॥



राग धनाश्री ॥

सखा और सँग लिये कन्हाई । आपुन निकसि गये आगे को मारग रोक्यो जाई ॥ यहि अंतर युवती सब आईं बन लाग्यो कछु भारी । पाछे युवति रही तिन टेरत अबहिं गई तुम हारी ॥ तरुणी जुरि यक संग भईं सब इत उत चलीं निहारत । सूरदास प्रभु सखा लिये सँग ठाढ़े इहै बिचारत ॥ १०८२ ॥



राग गौरी ॥

ग्वारिन तब देखे नँदनंदन । मोर मुकुट पीतांबर काछे खौरि किये तनु चंदन ॥ तब यह कह्यो कहाँ अब जैहौ आगे कुँवर कन्हाई । यह सुनि मन आनंद बढ़ायो मुख कहैं बात डराई ॥

कोउ कोउ कहति चलौ री जाई कोउ कहै फिरि घर जाइ। कोउ कोउ कहति कहा करि है हरि इनको कहाँ पराइ॥ कोउ कोउ कहति कालि ही हम को लूटि लई नँदलाल। सूर श्याम के ऐसे गुण हैं घरहि फिरौ ब्रजबाल ॥ १०८३ ॥



राग सोरठ ॥

ग्वालन सैन दियो तब श्याम। कूदि कूदि सब परहु द्रुमन ते जात चली घर बाम॥ सैन जानि तब ग्वाल जहाँ तहँ द्रुम द्रुम डार हलाए। बेनु बिषान शंख मुरली ध्वनि सब एक शब्द बजाए॥ चकृत भईं तरु तरु प्रति देखति डारनि डारनि ग्वाल। कूदि कूदि सब परे धरणि में घेरि लई ब्रजबाल॥ नित प्रति जात दूध दधि बेचन आजु पकरि हम पाई। सूर श्याम को दान देहु तब जैहौं नंद दोहाई॥ १०८४ ॥



राग नट ॥

ग्वारिनि यह भली नहीं करति। दूध दधि घृत नितहि बेचति दान देते डरति॥ प्रात ही लै जाति गोरस बेचि आवति राति। कहौ कैसे जानिये तुम दान मारे जाति॥ कालिंदीतट श्याम बैठे हमहिं दियो पठाइ। यह कह्यो हरि दान मागहुँ जाति नितहि चुराइ॥ तुम सुता वृषभानु की वै बड़े नंदकुमार। सूर प्रभु को नाहिं जानति दान हाट बजार ॥१०८५॥



राग कान्हरा ॥

यह सुन हँसीं सकल ब्रजनारी। आनि सुनहु री बात नई इक सिखये हैं महतारी॥ दधि माखन खैबे को चाहत माँगि लेहु

हम पास। सूधे बात कहौ सुख पावैं बाँधन कहत अकास॥ अब समुझी हम बात तुम्हारी पढ़े एक चटसार। सुनहु सूर यह बात कहौ जिनि जानति नंदकुमार॥१०८६॥



राग धनाश्री॥

बात कहति ग्वालिनि इतराति। हम जानी अब बात तुम्हारी सूधे नहिं बतराति॥ इहै बड़ो दुख गाँव बास को चीन्हे कोउ न सकात। हरि मांगत है दान आपनो कहत माँगि किन खात॥ हाट बाट सब हमहिं उगाहत अपनो दान जगात। सूरदास को लेखो दीजै कोउ न कहै पुनि बात॥ १०८७॥



राग कान्हरा॥

कौन कान्ह को तुम कहा मांगत। नीके करि सबको हम जानति बातैं कहत अनागत॥ छाँड़ि देहु हमको जनि रोकहु वृथा बढ़ावति रारि। जैहै बात दूरिलौं ऐसी परिहै बहुरि खँभारि॥ आजुहि दान पहरि ह्यां आए कहां दिखावहु छाप। सूर श्याम वैसेहि चलौ ज्यों चलत तुम्हारो बाप॥ १०८८॥



राग कान्हरा॥

कान्ह कहत दधिदान न दैहौ। लेहौं छीनि दूध दधि माखन देखतही तुम रैहौ॥ सब दिन को भरि लेहुँ आजुही तब छाड़ौं मैं तुम को। उघटतिहै तुम मात पितालौं नहिं जानो तुम हम को॥ हम जानतिहैं तुम को मोहन लैलै गोद खिलाए। सूर श्याम अब भए जगाती वै दिन सब बिसराए॥ १०८९॥

राग कान्हरा ॥

अजहूं मांगिलेहु दधि दैहौं । दूध दही माखन जो चाहो सहज खाहु सुख पैहौ ॥ तुम दानी ह्वै आप हम पर यह हम को नहिं भावत । करौ तहीं लौ निबहै जोइ जाते सब सुख पावत ॥ हम को जान देहु दधि बेंचन पुनि कोउ नाहि न लैहै । गोरस लेत प्रातही सब कोउ सूर धर्यो पुनि रैहै ॥ १०६० ॥



राग कान्हरा ॥

दान दिये बिन जान न पैहौ । जब देहौं ढराइ सब गोरस तबहिं दान तुम दैहौ ॥ तुमसों बहुत लेनहै मोको यह लै ताहि सुनावहु । चोरी आवति बेंचि जाति सब पुनि गोरस बहुरो कहँ पावहु ॥ माँगत छाप कहा दिखराऊँ को नहिं हम को जानत । सूर श्याम तब कह्यो ग्वारिसों तुम मोको क्यों मानत ॥१०६१॥



राग रामकली ॥

कहा हमहिं रिस करत कन्हाई । इह रिस जाइ करौ मथुरा पर जहाँ है कंस बसाई ॥ हम अब कहा जाइ गुहरावैं बसत तुम्हारे गाउँ । ऐसे हाल करत लोगन के कौन रहै यहि ठाउँ ॥ अपने घर के तुम राजा हौ सब को राजा कंस । सूर श्याम हम देखत ठाढ़े अब सीखे ए गंस ॥ १०६२ ॥



राग देवगंधारी ॥

का पर दान पहिरि तुम आए । चलहु जु मिलि उनही में जैए जिन तुम रोकन पंथ पठाए ॥ सखासंग लीन्हे जु सेंति के फिरत

रैनि दिन बन में धाए। नाहि न राज कंस को जान्यो बाट रोकते फिरत पराए॥ लीन्हे छीनि बसन सबहीके सबही लै कुंजनि अरुझाए। सूरदास प्रभु के गुण ऐसे दधि के माट भूमि ढरकाए॥ १०६३॥



राग सूही॥

जाइ सबै कंसहि गुहरावहु। दधि माखन घृत लेत छँड़ाए आजुहि मोहि हजूर बोलावहु॥ ऐसे को कह मोहिं बतावति पल भीतर गहिमारौं। मथुरापतिहि सुनोगी तुमही जब वाके धरि केस पछारौं॥ बार बार दिन हमहिं बतावत अपनो दिन न बिचारो। सूर इंद्र ब्रज तबहिं बहावत तब गिरि राखि उबारो॥ १०६४॥



राग गूजरी॥

गिरि वर धर्‌यो अपने घर को। ताही के बल तुम दान लेतहौ रोंकि रहतहौ हमको॥ अपनेही मुख बड़े कहावत हमहू जानति तुमको। इह जानत पुनि गाइ चरावत नितप्रति जातहौ बन को॥ मोर मुकुट मुरली पीतांबर देखो आभूषन सब बन को। सूरदास कांधे कामरिहू जानति हाथ लकुट कंचन को॥ १०६५॥



राग बिलावल॥

यह कमरी कमरी करि जानति। जाके जितनी बुद्धि हृदय में सो तितनी अनुमानति॥ या कमरी के एक रोम पर वारौं चीर नील पाटंबर। सो कमरी तुम निंदति गोपी जो तीनि लोक

आडंबर ॥ कमरी के बल असुर सँहारे कमरिहि ते सब भोग। जाति पाँति कमरी सब मेरी सूर सबहि यह योग ॥ १०९६ ॥



राग बिलावल ॥

धनि धनि यह कामरिहो मोहन श्यामलाल की। इहै ओढ़ि जात बनहि इहै सेज करतहौं तुम मेह बूंद निरवारन इहै छांह घाम की ॥ इहै उठि गुन करत है पुनि शिशिर शीत इहै हरति गहने लै धरति ओट कोट वाम की। इहै जाति इहै पाँति परिपाटी यह सिखवति सूरदास प्रभु के यह सब विशराम की ॥ १०९७ ॥



राग बिलावल ॥

अब तुम सांची बात कही। एते पर युवतिन को रोकत,माँगत दान दही ॥ जो हम तुमहि कह्यो चाहतही सो श्रीमुख प्रगटायो। नीके जाति उघारि आपनी युवतिन भले हँसायो ॥ तुम कमरी के ओढ़नहारे पीतांबर नहिं छाजत। सूरदास कारे तनु ऊपर कारी कमरी भ्राजत ॥ १०९८ ॥



राग बिलावल ॥

मोसों बात सुनहु ब्रजनारि। एक उपखान चलत त्रिभुवन में तुमसों आजु उघारि ॥ कबहूँ बालक मुँह न दीजिए मुँह न दीजिए नारि। जोइ मन करै सोइ करि डारै मूँड़ चढ़त है भारि ॥ बात कहत अठिलात जाति सब हँसत देति कर तारि। सूर कहा ए हमको जानै छाछिहि बेचन हारि ॥ १०९९ ॥

राग बिलावल ॥

यह जानति तुम नंदमहरसुत । धेनु दुहत तुमको हम देखति जबहि जात खरिकहि उत ॥ चोरी करत रहौ पुनि जानति घर घर ढूँढ़त भांड़े । मारग रोकि भये अब दानी वै ढँग कबते छांड़े ॥ और सुनहु यशुमति जब बाँधे तब हम कियो सहाइ । सूरदास प्रभु यह जानति हम तुम व्रज रहत कन्हाइ ॥ ११०० ॥



राग आसावरी ॥

को माता को पिता हमारे । कब जनमत हम को तुम देख्यो हँसी लगत सुनि बात तुम्हारे ॥ कब माखन चोरी करि खायो कब बाँधे महतारी । दुहत कौनकी गैया चारत बात कही यह भारी ॥ तुम जानति मोहिं नंद ढुटौना नंद कहाँ ते आए । मैं पूरन अविगति अविनाशी माया सबनि भुलाए ॥ यह सुनि ग्वालि सबै मुसकानी ऐसेउ गुणहौ जानत । सूर श्याम जो निदर्यो सबही मात पिता नहिं मानत ॥११०१॥



राग सोरठ ॥

तुमको नंदमहर भरुहाए । माता गर्भ नही तुम उपजे तौ कहौ कहाँ ते आए ॥ घर घर माखन नही चुरायो ऊखल नहीं बँधाए । हाहाकरि यशुमति के आगे तुमको नाहिं छुड़ाये ॥ ग्वालिन संग संग बृंदावन तुम नहिं गाइ चराये । सूर श्याम दस मास गर्भधरि जननि नहीं तुम जाये ॥ ११०२ ॥

राग टोडी ॥

भक्तहेतु अवतार धर्‌यो । कर्म धर्म के बस मैं नाहीं योग जग्य मन मैं न कर्‌यो ॥ दीनगुहारि सुनौ श्रवणनि भरि गर्व वचन सुनि हृदयजरौं । भाव अधीन रहौं सबहीके और न काहू नेक डरौं ॥ ब्रह्मकोटि आदिलौं व्यापक सबको सुख दै दुखहि हरौं । सूर श्याम तब कही प्रगटही जहाँ भाव तहँ ते न टरौं ॥ ११०३ ॥



राग धनाश्री ॥

कान्ह कहाँ की बात चलावत । स्वर्ग पताल एक करि राखौ युवतिन को कहि कहा बतावत ॥ जो लायक तौ अपने घर को बन भीतर डरपावत । कहा दान गोरस को हैहै सबै न लेहु देखावत ॥ रीती जान देहु घर हमको इतनेही सुखपावत । सूर श्याम माखन दधि लीजै युवतिन कत अरुझावत ॥ ११०४ ॥



राग धनाश्री ।

माखन दधि कह करौं तुम्हारो । मैं मन मे अनुमान करौं नित मोसों कैहै बनिज पसारो ॥ काहे को तुम मोहिं कहतहौ जोबन धन ताको करि गारो । अब कैसे घर जान पाइहौ मोको यह समुझाइ सिधारो ॥ सूर बनिज तुम करत सदाई लेखो करिहौं आजु तिहारो ॥ ११०५ ॥



राग सूहबी ॥

ऐसी कहौ बनिज को अटकी । मुख मुख हेरि तरुनि मुसकानी नैन सैन दै दै सब मटकी ॥ हमहू कह्यो दान दधि को कहा माँगत कुँवर कन्हाई । अबलौं कहा मौन धरि बैठे तबहीं

नहीं सुनाई ॥ हँसि वृषभानुसुता तब बोली कहा बनिज हम पास। सूर श्याम लेखो करि लीजै जाहिं सबै ब्रजबास ॥५॥



राग बिलावल ॥

कहौ तुमहि हम को कहा बूझति। लैलै नाम सुनावहु तुमहीं मोसों कहा अरूझति ॥ तुम जानति मैं हूँ कछु जानत जो जो माल तुम्हारे। डारि देहु जापर जो लागै मारग चलौ हमारे ॥ इतनेही को सोर लगायो अब समझी यह बात। सूर श्याम के बचन सुनहु री कछु समुझतिहौ घात ॥११०६॥



राग बिलावल ॥

इनहीं धौं बूझौ यह लेखो। कहा कहेंगे श्रवणनि सुनिये चरित नेक तुम देखो ॥ मन मन हरषभईं सब युवती मुख ये बात चलावति। ज्यों ज्यों श्याम कहत मृदुबानी त्यों त्यों अति सुख पावति ॥ कोउ काहू को भेद न जानत लोग सकुच उर मानत। सूरदास प्रभु अंतर्यामी अंतर्गति की जानत ॥११०७॥

राग बिलावल ॥

कहो कान्ह कहाँ गथहै हमसों। जा कारण युवती सब अटकीं सो बूझतहैं तुमसों ॥ लौंग नारियर दाख सुपारी कहा लादे हम आवैं। हींग मिरच पीपरि अजवाइनि ये सब बनिज कहावैं ॥ कूट काइफर सोंठि चिरैता कटजीरा कहुँ देखत। आलमजीठ लाख सेंदुर कहुँ ऐसे हि बुधि अवरेखत ॥ बाइ-

बिरंग बहेरा हरैं कहुँ बैल गोंद व्यापारी। सूर श्याम लरिकाई भूली जोबन भए मुरारी ॥११०८॥



राग सूही ॥

कवन बनिज कहि मोहिं सुनावति। तुम्हरो गथ लादो गयंद पर हींग मिरच पीपरि कहा गावति॥ अपनो बनिज दुरावतहौ कत नाउँ लियो यतनोही। कहा दुरावतीहौ मो आगे सब जानत तुव गोही॥ बहुत मोल को बाबा तुम्हरो कैसे दुरत दुराए। सुनहु सूर कछु मोल लेहिंगे कछु इक दान भराए॥ ११०९॥



राग टोडी॥

दधि को दान मेटि यह ठान्यो। सुनहु श्याम अति चतुर भएहौ आजु तुमहि हम जान्यो॥ जो कछु दूध दह्यो हम देती लै खाते तुम ग्वाल। सोऊ खोइ हाथ ते बैठे हँसति कहति ब्रज-बाल॥ यह सुनि श्याम सबनि करते दधि मटकी लई छुँड़ाइ। आपन खाइ सखन को दीन्हो अति मन हरष बढ़ाइ॥ कछु खायो कछु भुँइ ढरकायो चितै रही ब्रजनारि। सूर श्याम बन भीतर युवती नए ढंग करत मुरारि॥१११०॥



राग रामकली॥

प्यारी पीतांबर उर झटक्यो। हरि तोरी मोतिन की माला कछु गर कछु कर लटक्यो॥ ढीठो करन श्याम तुम लागे जाइ

गही कटि फेट। आपु श्याम रिस करि अंकमभरि भई प्रेम की भेट॥युवतिन घेरि लियो हरि को तब भरि भरि धरि अँकवारि। सखा परस्पर देखत ठाढ़े हँसत देत किलकारि॥ हाँक दियो करि नंद दोहाई आइ गए सब ग्वाल। सूर श्याम को जानत नाहीं ढीठ भई हैं बाल॥११११॥



राग भैरव॥

हम भईं ढीठ भले तुम्ह ग्वाल। दीन्हों ज्वाब दई को चैहो देखौ री यह कहा जंजाल॥ बनभीतर युवतिन को रोंकत हम खोटी तुम्हरे ये हाल। बात कहन को यों आवतहै बड़े सुधर्मा धर्महिपाल॥ साखि सखा की ऐसिय भरिहौ तब आवहुगे जीति भुआल। आये हैं चढ़ि रिस करि हमपर सूर हमहि जानत बेहाल॥ १११२॥



राग बिलावल॥

जानी बात तुम्हारी सबकी। लरिकाईं के ख्याल तजौ अब गई बात वह तब की॥ मारग रोंकत रहे यमुन को तेहि धोखे हौ आये। पावहुगे पुनि कियो आपनो युवतिन हाथ लगाये॥ जो सुनिहैं यह बात मात पितु तब हमसे कहा कैहै। सूर श्याम मोतिन लर तोरी कौन ज्वाब हम दैहैं॥ १११३॥



राग बिलावल नट॥

आपुन भईं सबै अब भोरी। तुम हरि को पीतांबर झटक्यो उन तुम्हरी मोतिन लर तोरी॥ माँगत दानज्वाब नहिं देती ऐसी

तुम जोबन की जोरी। डर नहिं मानति नँदनंदन को करति आनि झकझोराझोरी ॥ यक तुम नारि गँवारि भलीहौ त्रिभुवन में इनकी सरि को री। सूर सुनहु लेहैं छँड़ाइ सब अबहिं फिरौंगी दौरी दौरी ॥ १११४ ॥



राग नट ॥

कहा बड़ाई इनकी सरि मैं। नंद यशोदा के प्रतिपाले जानति नीके करि मैं ॥ तुम्हरे कहे सबन डर मान्यो हरिहि गई अति डरि मैं। बसुदेव डारि रातिही भागे आये हैं शुभ घरि मैं ॥ अंग अंग को दान कहत हैं सुनत उठी रिस जारि मैं। तब पीतांबर झटकि लियो मैं सूर श्याम को धरि मैं ॥ १११५ ॥



राग गौरी ॥

याते तुम को ढीठ कही। श्यामहि तुम भई झिरकनहारी एते पर पुनि हारि नहीं ॥ तब ते हमहिं देतहौ गारी हम को दाहति आपु दही। बनिज करति हमसों झगरतिहौ कहा कहैं हम बहुत सही ॥ समुझि परी अब कछु जिय जान्यो ताते हौ सब मौन रही। सूर श्याम ब्रज ऊपर दानी यहि मारग अब तुम निबही ॥ १११६ ॥



राग कल्याण ॥

तुम देखत रैहौ हम जैहैं। गोरस बेंचि मधुपुरी ते पुनि येही मारग ऐहैं ॥ ऐसेही बैठे सब रैहौ बोले ज्वाब न दैहैं

धरि लेहैं यशुमति पै हरि को तब धौं कैसे कैहैं ॥ काहे को मोतिनलर तोरी हम पीतांबर लैहैं। सूर श्याम इतरात इते पर घर बैठे तब रैहैं ॥ १११७ ॥

राग कल्याण ॥

मेरे हठ क्यों निबहन पैहौ। अब तो रोकि सबनि को राख्यो कैसे करि तुम जैहौ। दान लेउँगो भरि दिन दिन को लेखो करि सब दैहौं। सौंह करत हौं नंदबबा की मैं कैहौं तब जैहौं ॥ आवत जात रहत येही पथ मोसों बैर बढ़ैहौ। सुनहु सूर हमसों हठ मांडति कौन नफा करि लैहौ ॥ १११८ ॥



राग कान्हरो ॥

कौन बात यह कहत कन्हाई। समुझति नही कहा तुम माँगत डरपावत करि नंद दोहाई ॥ डरपावहु तिनको जे डरपहिं तुमते घटि हम नाहीं। मारग छाँड़ि देहु मनमोहन दधि बेचन हम जाहीं ॥ भली करी मोतिनलर तोरी यशुमति सों हम लैहै। सूरदास प्रभु इहाँ बनत नहिं इतनो धन कहा पैहैं ॥ १११९ ॥



राग कान्हरो ॥

एक हार मोहिं कहा देखावति। नखशिख ते अँग अंगनि- हारहु ए सब कतहि दुरावति ॥ मोतिन माँग जराइको टीको कर्णफूल नकबेसर। कंठसिरी दुलरी तिलरी को और हार एक नवसर ॥ सुभग हमेल कनक अँगिया नग नगन जरित की चौकी। बाहुढाड कर कंकन बाजूबंद येते पर तौकी ॥ छुद्रघंटिका पग-

नूपुर जेहरि बिछिया सब लेखौ। सहज अंग शोभा सब न्यारी कहत सूर ये देखौ॥ ११२०॥



राग जैतश्री॥

याहू में कछु बाँट तुम्हारो। अचरज आइ सुनहु री माई भूषण देखि न सकत हमारो॥ कहो ढिठाई हिए ते आपुन की यशुमति की नंद। घाट धर्यो तुम इहै जानिकै करत ठगन के छंद॥ जितनो पहिरि आपु हम आई घर है याते दूनो। सूर श्याम हौ बहुत लोभाने बन देख्यो धौं सूनो॥ ११२१॥



राग गौरी॥

बाँट कहा अब सबै हमारो। जब लौं दान नहीं हम पायो तब लौं कैसे होत तिहारो॥ आभूषण की कौन चलावत कंचन-घट काहे न उघारो। मदनदूत मोहिं बात सुनाई इनमें भर्यो महारस भारो॥ एक ओर यह अंग अभूषण सब एक ओर यह दान बिचारो। सुनहु सूर कहा बाट करैं हम दान देहु पुनि जहाँ सिधारो॥ ११२२॥



राग कल्याण॥

श्याम भए ऐसे रसनागर। दिन द्वै घाट रोकि यमुना को युवतिन में तुम भए उजागर॥ काँधे कामरि हाथ लकुटिया गाइ चरावन जाते। दही भात की छाक मँगावत ग्वालन सँग मिलि खाते॥ अब तुम कर नवलासी लीने पीतांबर कटि

सोहत। सूर श्याम अब नवल भए म नवल नारि मन मोहत ॥ ११२३ ॥



राग गौरी ॥

दान देत की झगरो करिहौ। प्रथमहि यह जंजाल मिटावहु ता पाछे तुम हमहि निदरिहौ॥ कहत कहा निदरेसेहौ तुम सहज कहति हम बात। आदि बुन्यादि सबै हम जानति काहेको सतरात॥ रिस करि करि मटुकी सिर धरि धरि डगरि चली सब ग्वालिनि। सूर श्याम अंचल गहि झरकी जैहौं कहा बंजारिनि॥ ११२४॥



राग कल्याण ॥

अब तुमको मैं जान न दैहो। दान लेउँ कौड़ी कौड़ी करि बैर आपनो लैहों॥ गोरस खाइ बच्यो सो डार्यो मटुकी डारी फोरि। दैदै गारि नारि झकझोरी चोली के बँद तोरि॥ हँसत सखा कर तारी दैदै बन मे रोकी नारि। सुनत लोग घर ते आवहिंगे सकिहौ नही सम्हारि॥ घर के लोगनि कहा डरावत कंसहि आनि बुलाइ। सूर सबै युवतिन के देखत पूजा करौं बनाइ॥ ११२५॥



राग गौरी ॥

जो तुमही हौ सब के राजा। तो बैठो सिंहासन चढ़ि कै चमर छत्र सिर भ्राजा॥ मोर मुकुट मुरली पीतांबर छाँड़ि देहु नटवर को साजा। बेनु बिषान शृंग क्यों पूरत बाजै नौबति

बाजा ॥ यह जो सुनै हमहु सुख पावै संग करै कछु काजा। सूर श्याम ऐसी बातैं सुनि हमको आवति लाजा ॥ ११२६ ॥



राग कल्याण ॥

तुम्हारे चित रजधानी नीकी। मेरे दास दासनि के चेरे तिनको लागति फीकी ॥ ऐसी कहि मोहिं कहा सुनावति तुमको इहै अगाध। कंस मारि सिर छत्र धराओं कहा तुच्छ यह साध॥ तबही लौं यह सग तिहारो जब लगि जीवत कंस। सूर श्याम के मुख यह सुनि तब मन मन कीन्हों संस ।। ११२७ ॥



राग जैतश्री ॥

भली करी हरि माखन खायो। इहै मानि लीनी अपने शिर उबरो सो ढरकायो ॥ राखी रही दुराइ कमोरी सो लै प्रगट देखायो। यह लीजै कछु और मँगावैं दान सुनत रिस पायो ॥ दान दिये बिनु जान न पैहौ कब मैं दान छुटायो। सूर श्याम हठ परे हमारे कहो न कहा लदायो ॥ ११२८ ॥



राग धनाश्री ॥

लैहौं दान इनन को तुमसों। मत्त गयंद हंस हमसों हैं कहा दुरावति तुमसों ॥ केहरि कनक कलश अमृत के कैसे दुरै दुरावति। विद्रुम हेम बज्र के किनुका नाहिन हमहि सुनावति॥ खग कपोत कोकिला कीर खंजनहूं शुक मृग जानति ॥ मणि कंचन के चित्र जरे हैं एते पर नहिं मानति। सायक चाप तुरय

बनिजति हौ लिये सबै तुम जाहू ॥ चंदन चमरसुगंध जहाँ तहँ कैसे होत निबाहू ॥ यह बनिजति वृषभानु सुता तुम हम सों बैर बढ़ावति । सुनहु सूर पते पर कहति हैं हम धौं कहा लदावति ॥ ११२९ ॥



राग सोरठ ॥

यह सुनि चकृत भईं ब्रजबाला । तरुणी सब आपुस में बूझति कहा कहत गोपाला ॥ कहाँ तुरग कहाँ गज केहरि कहाँ हंस सरोवर सुनिए । कंचन कलश गढ़ाये कब हम देखे धौं यह गुनिये ॥ कोकिल कीर कपोत बनन मे मृग खंजन शुक संग । तिन को दान लेत है हम सों देखहु इनको रंग ॥ चंदन चौर सुगंध बतावत कहाँ हमारे पास । सूरदास जो ऐसे दानी देखि लेहु चहुँ पास ॥ ११३० ॥



राग गुन्करी ॥

भूलि रहे तुम कहाँ कन्हाई । तिन को नांउ लेत हम आगे जो सपने कहुँ दृष्टि न आई ॥ हैवर गैवर सिंह हंसवर खग मृग कहँ हैं हम लीन्हें । सायक धनुष चक्र सुनि चकृत चमर न देखे चीन्हें ॥ चंदन और सुगंध कहत हो कंचन कलश बतावहु । सूर श्याम ये सब जो है हैं तबहिं दान तुम पावहु ॥ ११३१ ॥



राग गूजरी ॥

इतने सबै तुम्हारे पास । निरखि न देखहु अंग अंग अब चतुराई के गाँस ॥ तुरतही निरुवारि डारहु करति कहत अबेर ।

तुम कहो कछु हमहूँ बोलैं घरहि जाहु सबेर। कनक तुम पर-तच्छ देखहु सजे नवसत अंग। सूर तुम सों रूप जोबन धर्यो एकहि संग ॥ ११३२ ॥



राग बिलावल ॥

प्रगट करौं सब तुमहिं बतावैं। चिकुर चमर घूँघट है बरबर भुवसारंग देखावैं ॥ बाण कटाक्ष नयन खंजन मृग नासा शुक उपमांड। तरिवनचक्र अधर विद्रुम छबि दशन बज्र कन-ठांउ ॥ ग्रीव कपोत कोकिला बाणी कुच घट कनक सुभाउ। जोबन मद रस अमृत भरे हैं रूप रंग झलकाउ ॥ अंग सुगंध बसन पाटंबर गनि गनि तुमहि सुनाउ। कटि केहरि गयंद गति शोभा हंस सहित यकताउँ ॥ फेर किये कैसे निबहति है घरहि गए कहा पाउँ। सुनहु सूर यह बनिज तुम्हारे फिरि फिरि तुमहि मनाउँ ॥ ११३३ ॥



राग नट ॥

माँगत ऐसे दान कन्हाई। अब समुझी हम बात तुम्हारी प्रगट भई कछु धौं तरुनाई। यहि लालच अँकवारि भरत हौ हार तोरि चोली झटकाई। अपनी ओर देखि धौं लीजै ता पाछे करियै बरिआई ॥ सखा लिये तुम घेरत पुनि पुनि बन भीतर सब नारि पराई। सूर श्याम ऐसी न बूझियै इनि बातनि मर्यादा जाई ॥ ११३४ ॥



राग नट ॥

हम पर रिस करति ब्रजनारि। बात सूधे हम बतावत

आपु उठत पुकारि ॥ कबहुँ मर्यादा घटावति कबहुँ दै है गारि । प्रातते झगरो पसारो दान देहु निवारि ॥ बड़े घर की बहू बेटी करति वृथा झवारि । सूर अपनो अंश पावै जाहिं घर झख-मारि ॥ ११३५ ॥



राग सारग ॥

तुमहि उलटि हम पर सतराने ॥ जो कछु हमको कहन बूझिए सो तुम कहि आगे अतुराने ॥ यह चतुराई कहा पढ़ी हरि थोरे दिन अति भये सयाने । तुमको लाज होत की हमको बात परै जो कहुँ महराने ॥ ऐसो दान आैर पै माँगहु जो हम सों कहो छबिछाने । सूरदास प्रभु जान देहु अब बहुरि कहैागे कालि बिहाने ॥ ११३६ ॥



राग सारंग ॥

श्यामहि बोलि लियो ढिग प्यारी । ऐसी बात प्रगट कहुँ कहिये सखनि मांझ कत लाजन मारी ॥ एक ऐसेहि उपहास करत सब तापर तुम यह बात पसारी । जातिपाँति के लोग हँसिहिंगे प्रगट जानिहैं श्याम भतारी ॥ लाजन मारत हैा कत हमको हाहा करति जाति बलिहारी । सूर श्याम सर्वज्ञ कहावत मात पितासों द्यावत गारी ॥ ११३७ ॥



राग सारग ॥

जबहि ग्वारि यह बात सुनाई । सखा सबनि तबहीं लखि लीन्हीं सदा श्याम की प्रकृति सुभाई । सुनहु प्यारि इक

बात सुनावों जो तुम्हरे मन आवै। तुम प्रति अंग अंग की शोभा देखत हरि सुख पावै॥ तुम नागरी नवल नागर वै दोऊ मिलि करौ बिहार। सूर श्याम श्यामा तुम एकै कहा हँसिहै ससार॥ ११३८॥



राग नट॥

नंदसुवन यह बात कहावत। आपुन जोबन दान लेत हैं तापर जोइ सोइ सखनि सिखावत॥ वै दिन भूलि गए हरि तुमको चोरी माखन खाते। खीझतही भरिनयन लेतहै डरडरात भजि जाते॥ यशुमति जब ऊखलसों बांधति हमही छोरति जाइ। सूर श्याम अब बड़े भयेहौ जोबनदान सुहाइ॥ ११३९॥



राग टोडी॥

लरकाई की बात चलावति। कैसी भई कहा हम जानै नेकहु सुधि नहिं आवति॥ कब माखन चोरी करि खाये कब बांधे धौं मैया। भले बुरे को मात पिता तन हरषतही दिन जैया॥ अपनी बात खबरि करि देखहु न्हात यमुन के तीर। सूर श्याम तब कहत सबनिके कदम चढ़ाए चीर॥ ११४०॥



राग गूजरी॥

सबै रही जलमाँझ उघारी। बार बार हाहाकरि थाकीं मैं तट लिये हँकारी॥ आई निकसि बसन बिनु तरुनी बहुत करी मनुहारी। कैसे हास भए तब सबके सो तुम सुरति बिसारी॥

हमहि कहति दधि दूध चुराये अरु बाँधे महतारी। सूर श्याम के भेद वचन सुनि हँसि सकुची ब्रज नारी॥ ११४१॥



राग गूजरी॥

कहा भए अति ढीठ कन्हाई। ऐसी बात कहत सकुचत नहि कह धौं अपनी लाज गवाई॥ जाहु चले लोगनिके आगे झूठी बानी कहत सुनाई। तुम हँसि कहत ग्वाल सुनिके सब घर घर कैहैं जाई॥ बहुत होहुगे दसहि बरस के बात कहत हौ बनै बनाई। सूर श्याम यशुमति के आगे इहै बात सब कैहैं जाई॥ ११४२॥



राग हमीर॥

झूठी बात कहा मै जानौं। जो हमको जैसेहि भजै री ताको तैसेहि मानौं। तुम पति कियो मोहिको मनदै मैंहौं अंतर्यामी॥ योगी को योगी ह्वै दरसौं कामी को ह्वै कामी॥ हम को तुम झूठे करि जानति तौ काहे तप कीन्हों। सुनहु सूर अब निठुर भई कत दान जात नहिं दीन्हों॥ ११४३॥



राग गौरी॥

दान सुनत रिस होइ कन्हाई। और कहौ सो सब सहि लैहैं जो कछु भली बुराई॥ महतारी तुम्हरी के वै गुण उरहन देत रिसाई। तुम नीके ढँग सीखे बन मे रोकत नारि पराई॥ आव न जाव न पावत कोऊ तुम मग में घटवाई। सूर श्याम हमको विरमावत खीझत बहिनी माई॥ ११४४॥

राग गौरी ॥

काहेको तुम भेर लगावति। दान देहु घर जाहु बेंचि दधि तुमहीको यह भावति॥ प्रीति करौ मोसों तुम काहे न बनिज करति ब्रजगाउँ। आवहु जाहु सबै यहि मारग लेत हमारो नाउँ॥ लेखो करौ तुमहि अपने मन जोइ देहो सोइ लेहौं। सूर सुभाइ चलहुगी जब तुम पुनिधौं मैं कह कैहौं॥ ११४५॥



राग कान्हरो ॥

सुनहु आइ हरि के गुण माई। हम भई बनिजारिनि आपुन दानि भए कुँवर कन्हाई॥ कहा बनिज लै आई धौं हम ताको मांगत दान। कालिहि के ढँग पुनि आए हैं नहिं जानत कछु आन॥ तुम गवाँरि पही मग आवति जानि बूझि गुण इनिके। सूर श्याम सुंदर बहु नायक सुखदायक सबहिन के॥ ११४६॥



राग टोडी ॥

काहे को हमसों हरि लागत। बातहि कछू खोल रस नाहीं को जानै कहा मांगत॥ कहा स्वभाउ पर्यो अबहीते इनि बातन कछु पावत। निपट हमारे ख्याल परे हरि बन में नितहि खिझावत॥ पैंड़ो देहु बहुत अब कीनों सुनत हँसहिगे लोग। सूर हमहिँ मारग जिनि रोकहु घर ते लीजे ओग॥ ११४७॥



राग सूही ॥

अब लौं इहै करौ तुम लेखो। मोको पेसी बुद्धि बतावत

करकंकण दर्पण लै देखो ॥ आपुहि चतुरि आपुही सब कछु हमको करति गवाँर । औगहै लेत फिरो इनके घर ठाढ़े ह्वै हैं द्वार ॥ घाट छांडि जैहो तब लैहीं ज्वाब नृपति कहा दैहों । जा दिन ते यहि मारग आवति ता दिन ते भरिलेहों ॥ इनिकी बुद्धि दान हम पहिरो काहेन घर घर जैहौ । सूर श्याम तब कहत सखिन सों जान कौन बिधि पैहौ ॥ ११४८ ॥



राग टोडी ॥

भली भई नृप मान्यो तुमहू । लेखो करै जाइ कंसहि पै चले संग तुम हमहू ॥ अबलो हम जानीही घरही पहिर्यो है तुम दान । कालि कह्यो हो दान लेन को नंदमहर की आन ॥ तो तुम कंस पठाएहैं ह्याँ अब जानी यह बात । सूर श्याम सुनि सुनि यह बानी भौंह मोरि मुसकात ॥ ११४९ ॥



राग आसावरी ॥

कहा हँसत मोरत हो भौंह । सोई कह्यो मनहि कहि आई तुमहि नंद की सौंह ॥ और सौंह तुमको गोधन की सौंह माइ यशुमति की । सौंह तुमहि बलदाऊ की है कहो बात वा मन की ॥ बार बार तुम भौंह सकोर्यो कहा आपु हँसि रीझे । सूर श्याम हम पर सुख पायो की मनही मन खीझे ॥ ११५० ॥



राग रामकली ॥

हँसत सखन सों कहत कन्हाई । मैया की बाबा की दाऊजी की सौंह दिवाई ॥ कहति कहा काहे हँसि हेर्यो काहे भौंह सकोर्यो ।

यह अचरज देखौ तुम इनिको कब हम बदन मरोर्‌यो ॥ ऐसी बातनि सौंह दिवावति अधिक हँसी मोहिँ आवत । सूर श्याम कहि श्रीदामा सों तुम काहे न समुझावत ॥ ११५१ ॥



राग धनाश्री ॥

श्रीदामा गोपिन समुझावत। हँसत श्याम के तुम कहा जान्यो काहे सौंह दिवावत ॥ तुमहूँ हँसो आपने सँग मिलि हम नहिं सौंह दिवावै। तरुनिन की यह प्रकृति अनैसी थोरेहि बात खिसावैं ॥ नान्हे लोगनि सौंह दिवावहु वै दानी प्रभु सबके। सूर श्याम को दान देहु री माँगत ठाढ़े कब के ॥ ११५२ ॥



राग जैतश्री ॥

हम जानति वै कुँवर कन्हाई। प्रभु तुम्हरे मुख आजु सुनी हम तुम जानत प्रभुताई ॥ प्रभुता नहीं होति इनि बातनि मही दही के दान। वै ठाकुर तुम सेवक उनके जान्यों सबको ज्ञान ॥ दधि खायो मोतिन लर तोर्‌यो घृत माखन सोउ लीजै। सूरदास प्रभु अपने सदका घरहि जान हम दीजै ॥ ११५३ ॥



राग जैतश्री ॥

तुम घर जाहु दान को दैहै। जेहि बीरा दै मोहिं पठायो सो मोसों कहा लैहै ॥ तुम गृह जाइ बैठि सुखकरिहौ नृप गारी को खैहै। अबहीं बोलि पठावैं गोरी तासन्मुख को जैहै ॥ जान कहै तुमको तुम जैहौ बिधिना कैसे सैहै। सूर मोहिं अटक्यो है नृपवर तुम बिनु कौन छँड़ैहै ॥ ११५४ ॥

राग जैतश्री ॥

नृप को नाँउ लेत तेही मुख जेहि मुख निंदा कालि करी । आपुन तौ राजनि के राजा आजु कहा सुधि मनहि परी ॥ भले श्याम ऐसी तुम कीनी कहा कंस को नाउँ लियो । जब हम सौंह दिवावन लागीं तबहिं कंस पर रोष कियो ॥ जाको निंदि बंदियै सो पुनि वह ताको निदरै । सूर सुनी वह बात कालि की तब जानी इनि कंस डरै ॥ ११५५ ॥



राग आसावरी ॥

कहा कहति कछु जानि न पायो । कब कंसहि धौं हम कर जोर्यो कब वाको हम माथ नवायो ॥ कबहूँ सौंह करत देख्यो मोहिं लेत कबहुँ मुखनाऊँ । निपटहि ग्वारि गँवारि भई तुम बसति हमारे गाऊँ ॥ कहा कंस कितने लायक को जाको मोहिं देखावति । सुनहु सूर यहि नृप के हमहैं इह तुम्हरे मन आवति ॥ ११५६ ॥



राग टोडी ॥

कौन नृपति जाके तुमहौ । ताको नाउँ सुनावहु हमको यह सुनिकै अति पावभौ ॥ यह संसार भुवन चौदह भरि कंसहिते नहिं दूजो । सो नृप कहाँ रहत सुनि पावैं तब ताहीको पूजो ॥ कहा नाउँ केहि गाँउ बसतहै ताहीके ह्वै रहिए । सूरदास प्रभु कहै बनेगी झूठे हमहि निदरिए ॥ ११५७ ॥



राग टोडी ॥

मोसों सुनहु नृपति को नाउँ । तिहू भुवन भरि गम्य है

जाको नर नारी सब गाउँ ॥ गण गंधर्व वश्य वाही के अवर नहीं सरि ताहि ॥ उनकी अस्तुति करौ कहाँ लगि मैं सकुचत हौं जाहि ॥ तिनहीको पठयो मैं आयो दियो दान को वीरा। सूर रूप जोबन धन सुनिकै देखत भयो अधीरा ॥ ११५८ ॥



राग गौरी ॥

पाई जाति तुम्हारे नृप की जैसे तुम तैसे वोऊ हैं। कहाँ रहे दुरिजाइ आजुं लौं पई ढंग गुण के सोऊ हैं॥ यह अनुमान कियो मन मे हम एक हि दिन जनमे दोऊ हैं। चोरी अपमारग बटपार्यो इनि पटतर के नहिं कोऊ हैं॥ श्याम बनी अब जोरी नीकी सुनहु सखी मानत तोऊ हैं। सूर श्याम जितने रँग काछत युवती जन मन के गोऊ हैं ॥ ११५९ ॥



राग गौरी ॥

ठगति फिरति ठगिनी तुम नारि। जोइ आवति सोइ सोइ कहडारति जाति जनावति दै दै गारि ॥ फँसिहारिनि बटपारिनि हम भई आपुन भए सुधर्मा भारि। फंदाफाँसि कमानबानसों काहू डारत देख्यो मारि॥ जाके मन जैसोई बरतै मुखबानी कहिदेत उघारि। सुनहु सूर प्रभु नीके जान्यो ब्रज युवती तुम सब बटपारि ॥ ११६० ॥



राग सूही ॥

अपने नृप को इहै सुनायो। ब्रजनारी बटपारिनि हैं सब चुगली आपुहि जाइ लगायो ॥ राजा बड़े बात यह समुझी

तुमको हमपर धौंस पठायो। फँसिहारिनि कैसे तुव जानी हम कहुँ नाहिं न प्रगट देखायो॥ ब्रजबनिता फँसिहारी जो सब महतारी काहे न गनायो॥ फंदा फांसि धनुष विष लाडू सूर श्याम नहिं हमहिं बतायो॥ ११६१॥



राग भैरव॥

फंदा फाँसि बतावहु जो। अंगनि धरे छुपाइ जहाँ जो प्रगट करौ सब दीन्हौं तो॥ प्रथमहि शीश मोहिनी डारति ऐसे ताहि करत बसहौ। बिषलाडू दरसावति ले पुनि देह दसा पुनि विसरति ज्यों॥ ता पाछे फंदा गर डारति एहि भाँतिनि करि मारतिहौ। सुनहु सूर ऐसे गुण तुम्हरे मोसों कहा उचारतिहौ॥ ११६२॥



राग भैरव॥

प्रगट करौ यह बात कन्हाई। बान कमान कहाँ केहि मार्‍यो काके गर हम फाँसि लगाई॥ काके सिर पढ़ि मंत्र दियो हम कहाँ हमारे पासदिनाई। मिलवत कहाँ कहाँकी बातैं हँसत कहति अति गइ सकुचाई॥ तब मानैं सब हमहुँ बतावहु कहो नहीं जो नंद दोहाई। सूर श्याम तब कह्यो सुनहुगी एक एक करि देउँ बताई॥ ११६३॥



राग रागिनी॥

मोसों कहा दुरावति नारि। नयनसैन दै चितहि चुरावति इहै मंत्र टोना सिरडारि॥ भौंह धनुष अंजन गुन

बान कटाक्षनि डारति मारि। तरिवन श्रवन फाँसि गर डारति कैसेहुँ नहीं सकत निरवारि॥ पीन उरोज मुख नैन चखावति इह विष मोदक जातन भारि। घालति छुरी प्रेम की बानी सूरदास को सकै सँभारि॥ ११६४॥



राग टोडी॥

अपनो गुण औरनि सिर डारत। मोहन जोहन मंत्र यंत्र टोना सब तुम पर वारत॥ तनुत्रिभंग अंग अंगमरोरनि भौंह बंक करि हेरत। मुरली अधर बजाइ मधुर सुर तरुनी मृगवन घेरत॥ नटवर भेष पीतांबर काछे छैलभए तुम डोलत। सूर श्याम रावरे ढंग ए अवरनि को ढँग बोलत॥ ११६५॥

राग टोडी॥

जानी बात मौन धरि रहिए। इहै जानि हम पर चढि आए जो भावै सो कहिए॥ हम नहिं बिलग तुम्हारो मान्यों तुम जनि कछु मन आनो। देखहु एक दोइ जनि भाषहु चारि देखि दुइगानो॥ दोबल देति सबै मोहीको उन पठयो मैं आयो। सूर रूप जोबन की चुगली नैननि जाइ सुनायो॥ ११६६॥



राग बिलावल॥

तब रिस करिकै मोहिं बोलायो। लोचन दूत तुमहिं इहि मारग देखत जाइ सुनायो सोइ सबमहलन ते सुनि बानी जोबन महलनि आयो। अपने कर बीरा मोहिं दीन्हौं तुरत मोहिं पहिरायो॥ बैठ्योहै सिंहासन चढ़िकै चतुराई उपजायो। मनतरंग

आज्ञाकारी भृत तिनको तुमहि लगायो ॥ तिनको नाम अनंग नृपतिवर सुनहु बात सुख पायो। सूर श्याम मुखबात सुनत यह युवतिन तनु बिसरायो ॥ ११६७ ॥



राग सूही ॥

ब्रज युवती सुन मगन भई। यह बानी सुनि नंदसुवन मुख मन व्याकुल तन सुधिहु गई ॥ को हम कहाँ रहति कहाँ आई युवतिन के यह सोच पर्‌यो। लागी काम नृपति की साँटी जोबन रूपहि आनि अर्‌यो ॥ तृपित भई तरुनी अनंगडर सकुचि रूप जोबनहिं दियो। सूर श्याम अब शरन तुम्हारे हृदय सबनि यह ध्यान कियो ॥ ११६८ ॥



राग जयतश्री ॥

मन यह कहति देह बिसरायो। यह धन तुमही को सँचि राख्यो तेहि लीजै सुखपायो ॥ जोबनरूप नहीं तुम लायक तुमको देत लजाति। ज्यों बारिध आगे जल किनिका बिनय करति यहि भाँति ॥ अमृत रस आगे मधुरंचक मनहिं करत अनुमान। सूर श्याम शोभा की सीवा को पटतर को आन ॥ ११६९ ॥



राग जयतश्री ॥

अंतर्यामी जानिलई। मन में मिले सबनि सुख दीन्हों तब तनु की कछु सुरति भई ॥ तब जान्यो बन मे हम ठाढ़ी तनु निरख्यो मन सकुचि गई। कहति परस्पर आपुस में सब कहां रहीं हम काहि

रई ॥ श्याम बिना ये चरित करै को यह कहिकै तनु सौंप दई। सूरदास प्रभु अंतर्यामी गुप्तहि जोबनदान लई ॥ ११७० ॥



राग रामकली ॥

यह कहि उठे नंदकुमार। कहा ठगीसी रही बाला पर्यो कौन बिचार ॥ दान को कछु कियो लेखो रही जहाँ तहाँ सोचि। प्रगट करि हमको सुनावहु मेटि जोरो दोचि ॥ बहुरि यहि मग जाहुआवहु राति सांझ सकार। सूर ऐसो कौन जो पुनि तुमहि रोकनहार ॥ ११७१ ॥



राग गूजरी ॥

हमहिं और सो रोकै कौन। रोकनहारो नंदमहर सुत कान्ह नाम जाको है तौन ॥ जाके बल है काम नृपति को ठगत फिरत युवतिन को जौन। टोना डारि देत सिर ऊपर आपु रहत ठाढ़ो है मौन ॥ सुनहु श्याम ऐसी न बूझिए बानि परी तुमको यह कौन। सूरदास प्रभु कृपा करहु अब कैसेहु जाहि आपने भौन ॥११७२॥



राग सूही ॥

दान मानि घर को सब जाहु। लेखो मैं कहुँ कहुँ जानत हौं तुम समुझे सब होत निबाहु ॥ पछिलो देहु निवारि आजु सब पुनि दीजो जब जानौ कालि। अब मैं कहत भलीहौं तुमसों जो तुम मोको मानौ ग्वालि ॥ वृंदावन तुम आवत डरपति मैं दैहौं तुमको पहुँचाइ। सुनहु सूर त्रिभुवन बस जाके सो प्रभु युवतिन बस आइ ॥ ११७३ ॥

राग सूही ॥

को जानै हरि चरित तुम्हारे। जब हूँ दान नही तुम पायो मन हरि लिये हमारे।। लेखो करि लीजै मनमोहन दूध दह्यो कछु खाहु। सद्माखन तुम्हरेहि मुख लायक लीजै दान उगाहु ॥ तुम खैहौ माखन दधि मोहन हम सब देखि देखि सुख पावैं सूर श्याम तुम अब दधि दानी काहे कहि प्रगट सुनावैं ॥ ११७४ ॥



राग गुंड ॥

कान्ह माखन खाहु हम सब देखैं। सद्य दधि दूध ल्याई अवटि अबहि हम खाहु तुम सफल करि जन्म लेखैं ॥ सखा सब बोलि बैठारि हरि मंडली बनहिं के पात दोना लगाये । देत दधि परुसि ब्रजनारि जेंवत कान्ह ग्वाल सँग बैठि अति रुचि बढ़ाये ।। धन्य दधि ध य माखन धन्य गोपिका धन्य राधा वश्य है मुरारी । सूर प्रभु के चरित देखि सुरगन थकित कृष्ण सँग सुख करति घोषनारी ॥ ११७५ ॥

राग जैतश्री ॥

माखन दधि हरि खात ग्वाल सँग । पातनि के दोना सबके कर लेत पतोखनि मुख मेलत रँग ॥ मटुकिन ते लैलै परुसति हैं हर्ष भरी ब्रजनारि । यह सुख तिहूँ भुवन कहुँ नाहीं दधि जेंवत बनवारि ॥ गोपी धन्य कहति आपुन को धन्य दूध दधि माखन । जाको कान्ह लेत मुख मेलत कियो सबनि संभाषन ॥ जो हम साध करति अपने मन सो सुखपायो नीके । सूर श्याम पर तन मन वारति आनँद जी सबही के ॥ ११७६ ॥

राग देवगंधार ॥

गोपिका अति आनंदभरी। माखन दधि हरि खात प्रेम सों निरखति नारि खरी ॥ कर लैलै मुख परस करावत उपमा बढ़ी सुभाइ। मानहु कंज मिलतहूँ शशि को लिये सुधा करौ करआइ॥ जा कारण शिव ध्यान लगावत शेष सहसमुख गावत। सोई सूर प्रगट ब्रजभीतर राधा मनहि चुरावत॥ ११७७॥



राग रामकली ॥

राधा सों माखन हरि माँगत। औरनि की मटुकी को खायो तुम्हरो कैसो लागत॥ ले आई वृषभानुसुता हँसि सद्लोनी है मेरो। लै दीन्हों अपने कर हरिमुख खात अल्प हँसि हेरो॥ सब-हिन ते मीठो दधि है यह मधुरे कह्यो सुनाइ। सूरदास प्रभु सुख उपजायो ब्रजललना मन भाइ॥ ११७८॥



राग रामकली ॥

मेरे दधि को हरि स्वाद न पायो। जानत इन गुजरिनि को सोहै लयो छिड़ाइ मिलि ग्वालनि खायो॥ धौरी धेनु दुहाइ छानि पय मधुर आँच में अवटि सिरायो। नई दोहनी पोंछ पखारी धरि निर्धूम खीरनि पर तायो॥ ता में मिलि मिश्रित मिश्रीकरि दै कपूर पुट जावन नायो। सुभग ढकनियाँ ढाँपि बाँधि पट जतन राखि छीके समदायो॥ हौं तुम कारण लै आई गृह मारग में न कहूँ दरशायो। सूरदास प्रभु रसिक-शिरोमणि कियो कान्ह ग्वालनि मन भायो॥ ११७९॥

राग नट ॥

गोपिन हेतु माखन खात। प्रेम के बस नंदनंदन नेक नहीं अघात ॥ सबै मटुकी भरी वैसेहि प्रेम नहीं सिरात। भाव हृदये जान मोहन खात माखन जात ॥ एकनि कर दधि दूध लीने एकनि कर दधि जात। सूर प्रभु को निरखि गोपी मनही मनहि सिहात ॥ ११८० ॥



राग बिहागरो ॥

गोपी कहति धन्य हम नारि। धन्य दूध धनि दधि धनि माखन हम परुसति जेंवत गिरिधारि ॥ धन्य घोष धनि निशि धनि वह धनि धनि गोकुल प्रगटे बनवारि। धन्य सुकृत पाछिलो धन्य धनि धन्य नंद यशुमति महनारि ॥ धनि धनि ग्वाल धन्य बृंदावन धन्य भूमि यह अति सुखकारि। धन्य दान धनि कान्ह मँगैया धन्य सूर तृण द्रुम बन डारि ॥ ११८१ ॥



राग नट ॥

गण गंधर्व देखि सिहात। धन्य ब्रजललनानि कर ते ब्रह्म माखन खात ॥ नहीं रेख न रूप नहिं तनु बरन नहिं अनुहारि। मातु पितु दोऊ न जाके हरत मरत न जारि ॥ आपु करता आपु हरता आपु त्रिभुवननाथ। आपही सब घट के व्यापी निगम गावत गाथ ॥ अंग प्रति प्रति रोम जाके कोटि कोटि ब्रह्मंड। कीट ब्रह्म पर्यन्त जल थल इनहि ते यह मंड ॥ विश्व विश्वंभरन एई ग्वालसंग बिलास। सोई प्रभु दधि दान माँगत धन्य सूरजदास ॥ ११८२ ॥

राग रामकली ॥

कंसहेतु हरि जन्म लियो। पापहि पाप धरा भई भारी तब हम सबनि पुकारकियो॥ शेषशैन जहँ रमा संग मिलि तहाँ अकाश भई यह बानी। असुर मारि भुवभार उतारौं गोकुल प्रगटौं आनी॥ गर्भ देवकी के तनु धरिहौं यशुमति को पय पीहौं। पूरब तप बहु कियो कष्ट करि इनि को बहुत ऋनी हौं॥ यह बानी कहि सूर सुरन को अब कृष्णअवतार। कह्यो सबनि ब्रज जन्म लेहु सँग हमरे करहु बिहार॥ ११८३॥



राग गौरी ॥

ब्रह्म जिनिहि यह आयसु दीन्हों। तिन तिन संग जन्म लियो ब्रज मे सखी सखा करि परगट कीन्हों॥ गोपी ग्वाल कान्ह दोइ नाहीं ये कहु नेक न न्यारे। जहाँ जहाँ अवतार धरत हरि ये नहिं नेक बिसारे॥ एकै देह बिहार करि राखे गोपी ग्वाल मुरारि। यह सुख देखि सूर के प्रभु को थकित अमर सँग नारि॥ ११८४॥



राग गौरी ॥

अमरनारि अस्तुति करै भारी। एक निमिष ब्रजवासिन को सुख नहिं तिहुँ भुवन बिचारी॥ धन्य कान्ह नटवर बपु काछे धन्य गोपिका नारी। एक एक ते गुण रूप उजागरि श्याम भावती प्यारी॥ परुसति ग्वारि ग्वाल सब जेंवत मध्य कृष्ण सुखकारी। सर श्याम दधि दानी कहि कहि आनँद घोषकुमारी॥ ११८५॥

राग टोड़ी ॥

सुनहु सखी मोहन कहा कीन्हों। एक एक सों कहति बात यह दान लियो की मन हरि लीन्हों ॥ यह तौ नाहिं बदी हम उनसों बूझहु धौं यह बात। चकृत भईं बिचार करत यह बिसरि गई सुधि गात ॥ उमचि जाति तबहीं सब सकुचति बहुरि मगन ह्वै जाति। सूर श्याम सों कहौं कहा यह कहत न बनत लजाति ॥ ११६० ॥



राग धनाश्री ॥

श्याम सुनहु एक बात हमारी। ढीठो बहुत कियो हम तुम सों सो बकसो हरि चूक हमारी ॥ मुख जो कही कटुक सब बानी हृदय हमारे नाही। हँसि हँसि कहति खिझावति तुमको अति आनँद मन माही ॥ दधि माखन को दान और जो जानो सबै तुम्हारो। सूर श्याम तुमको सब दीनों जीवनप्राण हमारो ॥ ११६१ ॥



राग धनाश्री ॥

नंदकुमार कहा यह कीन्हौं। बूझति तुमहि कहौं धौं हमसों दान लियो की मन हरि लीन्हौं ॥ कछू दुराव नही हम राख्यो निकट तुम्हारे आई। येते पर तुमही अब जानौं करनी भली बुराई ॥ जो जासों अंतर नहिं राखै सो क्यों अंतर राखै। सूर श्याम तुम अंतर्यामी वेद उपनिषद भाषै ॥ ११६२ ॥



राग टोड़ी ॥

सुनहु बात युवती इक मेरी। तुमते दूरि होत नहिं कतहूँ

तुम राखौ मोहिं घेरी ॥ तुम कारण बैकुंठ तजतहौं जनमलेत ब्रजआई । वृंदावन राधा सँग गोपी यह नहिं बिसर्‌यो जाई ॥ तुम अंतर अंतर कहा भाषति एक प्राण द्वै देह । क्यों राधा ब्रज बसे बिसार्‌यो सुमिरि पुरातन नेह ॥ अब घर जाहु दान मैं पायो लेखो कियो न जाइ । सूर श्याम हँसि हँसि युवतिन सों ऐसी कहत बनाइ ॥ ११६३ ॥



राग नट ॥

घर तनु मनहिं बिना नहिं जात । आपु हँसि हँसि कहत हौ जू चतुरई की बात ॥ तनहि पर है मनहि राजा जोइ करै सोइ होइ । कहौ घर हम जाहिं कैसे मन धर्‌यो तुम गोइ ॥ नयन श्रवन बिचार सुधि बुधि रहे मनहि लुभाइ । जाहि अबही तनहि लै घर परत नाहिन पाइ ॥ प्रीति करि दुविधा करी कत तुमहि जानौ नाथ । सूर के प्रभु दीजिये मन जाइँ घरलै साथ ॥ ११६४ ॥



राग कान्हरो ॥

मन भीतर है वास हमारो । हमको लैकरि तुमहि छपायो कहा कहति यह दोष तुम्हारो ॥ अजहुँ कहौ रैहैं हम अनतहि तुम अपनो मन लेहु । अब पछितानी लोकलाज डर हमहिं छाँड़ि तैं देहु ॥ घटती होई जाहिते अपनी ताको कीजै त्याग । धोखे कियो बास मनभीतर अब समुझे भइ जाग ॥ मन दीन्हो मोको तब लीन्हों मन लैहो मैं जाउ । सूर श्याम ऐसी जनि कहिये हम यह कही सुभाउ ॥ ११६५ ॥

राग कान्हरो ॥

तुमहि बिना मन धृक अरु धृक घर। तुमहि बिना धृक धृक माता पितु धृक धृक कुलकानि लाजडर ॥ धृक सुत पति धृक जीवन जग को धृक तुमबिन संसार ॥ धृक सो दिवस पहर घटिका पल धृक धृक यह कहि नंदकुमार ॥ धृक धृक श्रवण कथा बिनु हरि के धृक लोचन बिनरूप। सूरदास प्रभु तुम बिनु घर यौवन भीतर के कूप ॥ ११६६ ॥



(इसके बाद सूरदास ने अपनी रीति के अनुसार फिर यही विषय गाया है।)

(अन्त मे गोपियाँ कृष्ण को छोड़ कर घर की ओर चली।)

राग धनाश्री ॥

मन हरिसों तनु घरहि चलावति। ज्यों गजमत्त जाल अंकुशकर घर गुरुजन सुधि आवति ॥ हरिरसरूप इहै मद आवत डरडार्‌यो जु महावत। गेह नेह बंधन पग तोर्‌यो प्रेम सरोवर धावत ॥ रोमावली सूँड़ विविकुच मनों कुंभस्थल छबिपावत। सूर श्याम केहरि सुनिके जोबन गज दर्प नवावत[२] ॥ १२७ ॥



राग धनाश्री ॥

युवती गईं घर नेक न भावत। मात पिता गुरुजन पूछत कछु औरै और बतावत ॥ गारी देति सुनति नहिं नेकहु श्रवन

---

१ दानलीला का वर्णन श्रीमद्भागवत मे विशेष नही है। पर हिन्दी-कवियों ने बहुत किया है ॥

२ यहा बाबू राधाकृष्णदास के संस्करण मे पदों के नम्बर में बड़ा गड़बड़ है। अतएव सक्षिप्त सूरसागर के नम्बरों मे कुछ भेद करना पडा है ॥

शब्द हरि पूरे। नैननही देखत काहू को जो कहु होहिं अधूरे॥ बचन कहति हरिही के गुन को उतही चरण चलावै। सूर श्याम बिन और न भावै कोउ जितनो समुझावै॥ १२७२॥



राग सोरठ॥

लोक सकुच कुलकानि तजी। जैसे नदी सिंधु को धावै तैसे श्यामभजी॥ मात पिता बहु त्रास दिखायो नेक न डरी लजी। हारि मानि बैठे नहिं लागति बहुतै बुद्धि सजी॥ मानत नहीं लोकमर्यादा हरि के रंग मजी। सूर श्याम को मिली चूने हरदी ज्यों रंग रजी[1]॥ १२७३॥



राग सोरठ॥

बार बार जननी समुझावति। काहे को तुम जहँ तहँ डोलति हमको अतिहि लजावति॥ अपने कुल की खबरि करौ धौं सकुच नहीं जिय आवति दधि बेचहु घर सूधे आवहु काहे झेर लगावति॥ यह सुनि कै मन हर्ष बढ़ायो तब इक बुद्धि बनावति। सुनि मैया दधि माट ढरायो तेहि डर बात न आवति॥ जान देहि कितनो दधि डार्‌यो ऐसे तब न सुनावति॥ सुनहु सूर यहि बात डरानी माता उरलै लावति॥ १२७४॥



राग सारंग॥

नेक नहीं घर मों मन लागत। पिता मात गुरुजन परबोधत नीके बचन बाणसम लागत॥ तिनको धृग धृग कहति मनहि

---

१ विहारी ने सतसई में इस विषय के अनेक दोहे कहे हैं॥

मन इनको बनै भलेही त्यागत। श्यामबिमुख नर नारि वृथा सब कैसे मन इनिसों अनुरागत॥ इनको बदन प्रात दरशै जिनि बार बार बिधि सों यह माँगत। यह तनु सूर श्याम को अर्प्यो नेक टरत नहिं सोवत जागत॥ १२७५॥



राग धनाश्री॥

पलक ओट नहिं होत कन्हाई। घर गुरुजन बहुतै बिधि त्रासत लाज करावत लाज न आई॥ नयन जहाँ दरशन हरि अटके श्रवण थके सुनि बचन सोहाई। रसना और नही कछु भाषत श्याम श्याम रट इहै लगाई॥ चित चंचल संगहि सँग डोलत लोकलाज मर्याद मिटाई। मन हरि लियो सूर प्रभु तबही तनु बपुरे की कहा बसाई॥ १२७६॥



राग बिलावल॥

चली प्रातही गोपिका मटुकिन लै गोरस। नयन श्रवन मन चित बुधि ये नहिं काहू के बस॥ तनु लीन्हें डोलत फिरैं रसना अटक्यो जस। गोरस नाम न आवई कोऊ लैहै हरिरस॥ जीव पर्‌यो या ख्याल मे अरु गए दशादस। बझे जाइ खग वृंद ज्यों प्रिय छबि लटकनि लस॥ छाँड़ि देहु डरात नहिं कीन्हो पावै तस। सूर श्याम प्रभु भौंह की मोरनि फाँसी गस॥१२७७॥



राग कान्हरो॥

दधि बेचत ब्रज गलिन फिरैं। गोरस लेन बोलावत कोऊ ताकी सुधि नेकहु न करैं॥ उनकी बात सुनत नहिं श्रवणनि कहति कहा ये घर न जरैं। दूधदह्यो ह्यां लेत न कोऊ प्रातहि ते

सिरलिये ररैं ॥ बोलि उठति पुनि लेहु गोपालहि घर घर लोक लाज निदरैं । सूर श्याम को रूप महारस जाके बल काहू न डरैं ॥ १२७८ ॥



राग कान्हरो ॥

गोरस को निज नाम भुलायो । लेहु लेहु कोऊ गोपालहि गलिन गलिन यह शोर लगायो ॥ कोऊ कहै श्याम कृष्ण कहै कोऊ आजु दरश नाहीं हम पायो । जाके सुधि तन की कछु आवति लेहु दही कहि तिनहि सुनायो ॥ एक कहि उठत दान माँगत हरि कहू भई की तुमहि चलायो । सुनहु सूर तरुणी जोबनमद ता पर श्याम महारस पायो ॥ १२७९ ॥



राग कान्हरो ॥

ग्वालिनि फिरति बेहालहिसों । दधि मटुकी सिर लीन्हे डोलति रसना रटति गोपालहिसों ॥ गेह नेह सुधि देह बिसारे जीव पर्‌यो हरिख्यालहिसों । श्याम धाम निज बास रच्यो रचि रहित भई जंजालहिसों ॥ छलकत तक्र उफनि अँग आवत नहिं जानति तेहि कालहिसों । सूरदास चित ठौर नहीं कहुँ मन लाग्यो नँदलालहिसों ॥ १२८० ॥



राग मलार ॥

कोऊ माई लैहै री गोपालहि । दधि को नाम श्याम सुंदररस बिसरि गई ब्रजबालहि ॥ मटुकी शीश फिरति ब्रज बीथिन बोलत बचन रसालहि । उफनत तक्र चहूँ दिश चितवति चित

लाग्यो नँदलालहि ॥ हँसति रिसाति बोलावति बरजति देखहु उलटी चालहि ॥ सूर श्याम बिनु और न भावै या बिरहनि बेहालहि ॥ १२८१ ॥



राग गौड़ मलार ॥

ग्वालिनि प्रगट्यो पूरन नेहु। दधिभाजन सिर पर धरें कहति गुपालहि लेहु ॥ बन बीथिन निजपुर गली जहीं तहीं हरिनाउँ। समुझाई समुझत नहीं सिखदै विथक्यो गाउँ ॥ कौन सुनै काके श्रवण काके सुरति सकोच। कौन निडर डर आपको को उत्तम को पोच ॥ प्रेम पिये बर बारुनी बलकत बल न सँभार। पग डगमग जित तित धरति मुकुलित अकल लिलार ॥ मंदिर में दीपक दिये बाहेर लखे न कोइ ॥ तिन्है प्रेम परगट भए गुप्त कौनपै होइ ॥ लज्जा तरल तरंगिनी गुरुजन गहै री धार। दुहूँ कूल तरुनी मिली तिहि तरत न लागी बार ॥ बिधि-भाजन ओछो रच्यो शोभा सिंधुअपार। उलटि मगन तामे भई तब कौन निकासनि हार ॥ जैसे सरिता सिंधु में मिली जु कूल बिदारि। नाम मिट्यो सलिलै भई तब कौन निबेरै बारि ॥ चित आकर्ष्यौ नंदसुत मुरली मधुर वजाइ। जिहि लज्जा जग लज्जियो सो लज्जा गई लजाइ। प्रेम मगन ग्वालनि भई सूर सुप्रभु के संग। नैन बैन मुख नासिका ज्यों कैंचुलि तजै भुजंग ॥१२८२॥



राग धनाश्री ॥

माई री गोविंदासों प्रीति करत तबहीं काहेन हट की री। यह तो अब बात फैलि गई बई बीज वट की री ॥ घर घर नित इहै घेर बानी घटघट की। मै तो यह सबै सही लोकलाज पटकी।

मद्के हस्ती समान फिरति प्रेम लटकी ॥ खेलत में चूकि जाति होती कला नट की। जल रजु मिलि गाँठि परी रसना हरि रटकी ॥ छोरे ते नहीं छुटति कइकबेर झटकी ॥ मेटे क्योंहू न मिटति छाप परी टटकी। सूरदास प्रभु की छबि हिरदै मेरे अटकी ॥ १३०० ॥



राग आसावरी ॥

मैं अपनो मन हरि सों जोर्यो। हरि सों जोरि सबनिसों तोर्यो ॥ नाच कछ्यो ब घूंघुट छोर्यो लोकलाज सब फटकि पिछोर्यो ॥ आगे पाछे नीके हेर्यो। माँझबाट मटुकी सिर फोर्यो ॥ कहि कहि कासों करति निहोर्यो। कहा भयो कोऊ मुख मोर्यो ॥ सूरदास प्रभु सों चित जोर्यो। लोकवेद तिनुका सों तोर्यो ॥ १३०१ ॥



(सब गोपियाँ कृष्ण से प्रीति करती थीं पर राधा का प्रेम अद्वितीय था। वह मानों कृष्ण मे ही मिल गई। एक सखी राधा से कहती है.—)

राग धनाश्री ॥

राधे तेरो वदन बिराजत नीको। जब तू इत उत बंक बिलोकति होत निशापति फीको ॥ भ्रुकुटी धनुष नैन शर साधे सिर केसरि को टीको। मनु घूँघटपट मैं दुरि बैठो पारधिपति रतिही को ॥ गति मैं मंत नाग ज्यों नागरि करे कहति हौ लीको। सूरदास प्रभु विविध भाँति करि मन रिझयो हरिपी को ॥१३४१॥



राग धनाश्री ॥

चतुर सखी मन जानि लई। मोसों तौ दुराव यह कीन्हों

थाके जिय कछु त्रास भई ॥ तब यह कह्यो हँसत री तोसों जिनि मन मे कछु आनै । मानी बात कहाँ वै कहाँ तू हमहूँ उनहि न जानै ॥ अबै तनक तू भई सयानी हन आगे की बारी । सूरश्याम ब्रज मे नहिं देखे हँसत कह्यो घर जारी ॥ १३४४ ॥



राग बिलावल ॥

सकुचि सहित घर को गई वृषभानु दुलारी । महरि देखि तासों कह्यो कहँ रही री प्यारी ॥ घर तोहि नैक न देखऊँ मेरी महतारी ॥ डोलत लाज न आवई अजहूँ है बारी । पिता आजु रिस करत है दैदै कहै गारी । सुता बड़े वृषभानु की कुलखोवनहारी ॥ बंधव मारन कहत है तेरे ढंग कारी । सूरश्याम संग फिरति है जोबन मतवारी ॥ १३४५ ॥



राग गुडमल्लार ॥

कहा री कहति तू मातु मोसों । ऐसे बहिगई को श्याम संग फिरै जो वृथा रिस करति कहा कहों तोसों ॥ कही कौने बात बोलिये तेहि मात मेरे आगे कहै ताहि देखो । तात रिस करत भ्राता कहे मारिहों भीति बिन चित्र तुम करति रेखो ॥ तमहु रिस करति कछु कहा मोहिं मारिहो धन्य पितु भ्रात मात अरुनहीं। ऐसे लायक नंदमहर को सुत भयो तिनहि मोहि कहति प्रभु सूर सुनही ॥ १३४६ ॥



राग गूजरी ॥

काहे को परघर छिन छिन जाति । गृह में डाटि देति शिखजननी नाहिं न नेक डराति ॥ राधा कान्ह कान्ह राधा ब्रज ह्वै

रह्यो अतिहि लजाति । अब गोकुल को जैबो छाँडौ अपयशहू न अघाति ॥ तू वृषभानु बड़े की बेटी उनके जाति न पाँति । सूर सुता समुझावति जननी सकुचत नहिं मुसकाति ॥ १३४७ ॥



राग कान्हरो ॥

खेलन को मैं जाउँ नहीं । और लरिकनी घर घर खेलति मोही को पै कहति तुही ॥ उनके मात पिता नहिं कोई खेलति डोलति जही तही । तोसी महतारी बहि जाई न मैं रैहौ तुमही बिनही ॥ कबहूँ मोको कछू लगावति कबहुँ कहति जिन जाहु कही । सूरदास बातैं अनखोही नाहि न मोपै जात सही ॥१३४८॥



राग सारंग ॥

मनही मन रीझति महतारी । कहा भई जो बाढ़ि तनक गई अबहीं तौ मेरी है बारी ॥ झूठेही वह बात उड़ी है राधा कान्ह कहत नर नारी । रिस की बात सुता के मुख की सुनत हँसी मनही मन भारी ॥ अबलौं नहीं कछू इहि जान्यो खेलत देखि लगावै गारी । सूरदास जननी उर लावति मुखचूमति पोछति रिस टारी ॥ १३४९ ॥



राग सुहा ॥

सुता लिये जननी समुझावति । संग बिटिनिअन के मिलि खेलौ श्याम साथ सुनि सुनि रिस पावति ॥ जाते निंदा होइ आपनी जाते कुल को गारी आवति । सुनि लाड़िली कहति यह तासों तोको याते रिस करि धावति ॥ अब समुझी मैं बात

सबनकी झूठेही यह बात उठावति । सूरदास सुनि सुनि यह बातै राधा मन अतिहरष बढ़ावति ॥ १३५० ॥



राग नट ॥

राधा विनय करति मनहीं मन सुनहु श्याम अंतर के यामी। मात पिता कुल कानिहि मानत तुमहिं न जानत हैं जग स्वामी ॥ तुम्हरो नाम लेत सकुचत है ऐसे ठौर रही हौं आनी । गुरु परिजन की कानि मानियो बारंबार कही मुख बानी ॥ कैसे संग रहौं बिमुखन के यह कहि कहि नागरि पछितानी । सूरदास प्रभु को हृदय धरि गृहजन देखि देखि मुसकानी ॥ १३५१ ॥



राग धनाश्री ॥

जब प्यारी मन ध्यान धर्‌यो । पुलकित उर रोमांच प्रगट भए अंचर टरि मुख उघरि पर्‌यो ॥ जननी निरखि रही ता छबि को कहन चहैं कछु कहि नहिं आवै ॥ चकृतभई अँग अंग बिलोकत दुख सुख दोऊ मन उपजावै ॥ पुनि मन कहति सुता काहू की कीधौं यह मेरी है जाई । राधा हरि के रंगहि राची जननी रही जिये भरमाई । तब जानी मेरी यह बेटी जिय अपने तब ज्ञान कियो । सूरदास प्रभु प्यारी की छबि देखि चहति कछु शीख दियो ॥ १३५२ ॥



राग सोरठ ॥

राधा दधिसुत क्यों न दुरावति । हौंजू कहति वृषभानु-नन्दनी काहेको तू जीव सतावति ॥ जलसुत दुखी दुखी है मधुकर द्वै पंछी दुख पावत । सारंग दुखी होत सारंगबिनु तोहि

दया नहिं आवत ॥ सारंग रिपु का नेक ओट कहि ज्यों सारंग सुख पावत ॥ सूरदास सारंग केहि कारण सारंग कुलहि लजावत । १३५३ ॥



राग जयतश्री ॥

राधा जल बिहरत सखियन संग । ग्रीवप्रयंत नीर मे ठाढ़ी छिरकत जल अपने अपने रंग ॥ मुख पर नीर परस्पर डारति शोभा अतिहि अनूप बढ़ी तब । मनहु चंद्र गन सुधा गई खनि डारत है आनंद भरे सब ॥ आई निकसि जानु कटिलों सब अँजुरिनते जल डारत । मनहुँ सूर कनकवल्ली जुरि अमृत पवन मिस झारत ॥ १३६२ ॥



राग नट ॥

जमुनाजल बिहरत ब्रजनारी । तट ठाढ़े देखत नँदनंदन मधुर मुरलि करधारी ॥ मोरमुकुट श्रवणन मणिकुंडल जलज-माल उर भ्राजत । सुंदर सुभग श्याम तनु नव घन बिच बगपाँति बिराजत । उर बनमाल सुभग बहुभाँतिनु श्वेत लाल सित पीत । मनों सूर सरितटि बैठे शुक बरनत बरन जिभीत । पीतांबर कटि मैं छुद्रावलि बाजत परम रसाल । सूरदास मनों कनक भूमि ढिग बोलत रुचिर मराल ॥ १३९३ ॥



(इतने मे श्रीकृष्ण प्रकट हो गये)

राग सारंग ॥

ऐसे गोपाल निरखि तिल तिल तनु वारौं । नवकिशोर मधुर मूरति शोभा उर धारौं ॥ अरुण तरुण कंज नयन मुरली

कर राजै । ब्रजजन मन हरन बेन मधुर मधुर बाजै ॥ ललितबर त्रिभंग सु तन बनमाला सोहै । अति सुदेश कुसुम पाग उपमा को कोहै ॥ चरण रुनित नूपुर कटि किंकिनि कलकूजै । मकराकृत कुंडल छबि सूर कौन पूजै ॥ १३१७ ॥



राग नटनारायण ॥

राधे निरखि भूली अंग । नंदनंदन रूप परगति मति भई तनुपंग ॥ इत सकुच अति सखिन को उत होत अपनी हानि । ज्ञान करि अनुमान कीन्हों अबहि लैहैं जानि ।। चतुर सखियन परखि लीन्ही समुझि भई गँवारि । सबै मिलि इत न्हान लागीं ताहि दियो बिसारि ॥ नागरी मुख श्याम निरखत कबहुँ सखियन हेरि । सूर राधा लखति नाहीं इन दई अब टेरि ॥ १३१८ ॥



राग रामकली ॥

चितवन राकेहूँ न रहीं । श्याम सुंदर सिंधु सन्मुख सरित उमँगि बही ॥ प्रेम सलिल प्रवाह भँवरनि मिलि कबहुँ न थाह लही । लोभ लहरि कटाक्ष घूँघट पट करार ढही ॥ थके पल पथ नाव धीरज परत नहिं न गही । हिलि मिलि सूर स्वभाव श्यामहि फेरीहू न चही ॥



राग जैतश्री ॥

देखी हरि राधा उत अटकी । चितै रही एकटक हरिही तन ना जाइये कौन अँग लटकी ॥ कालि हमैं कैसे निदरतिही मेरे चित वह टरति न खटकी । न्हात रही कैसे सँग मिलिकै चित

चंचल बिरहा की चटकी॥ बात करत तुलसी मुख मेलै नयन सयन दै मुँह मटकी। सूर श्याम के रूप भुलानी राधा के चित सुधि न घटी॥ १४०१॥



राग गूजरी॥

राधा चलन भवनही जाहि कबही की हम यमुना आई कहहीं अरु पछिताहि॥ कियो दरशन श्याम को तुम चलोगी की नाहिं। बहुरि मिलिहो चीन्हि राखहु कहति सब मुसकाहिं॥ हम चली घर तुमहूँ आवहु सोच भयो मन माहि। सूर राधा सहित गोपी चलीं ब्रज समुहाहिं॥ १४०६॥



राग बिलावल॥

कहि राधा हरि कैसे हैं। तेरे मन भाये की नाहीं की सुंदर की नैसे हैं॥ की पुनि हमहि दुराव करोगी की कैहौ वै जैसे हैं। की हम तुमसों कहत रही ज्यों साँच कहौ की तैसे हैं॥ नटवर भेष काछनी काछे अंगनि रतिपति सैसे हैं। सूर श्याम तुम नीके देखे हम जानति हरि ऐसे हैं॥ १४०७॥



राग बिलावल॥

राधा मन में इहै बिचारति। ये सब मेरे ख्याल परी हैं अबहीं बातनलै निरुबारति॥ मोहू ते ये चतुर कहावति ये मनही मन मोको नारति। ऐसे वचन कहौंगी इनको चतुराई इनकी मैं भारति॥ जाके नंदनँदन सिर समरथ बार बार तनु मन धन बारति॥ सूर श्याम के गर्व राधिका सुधे काहू तन न निहारति॥ १४०८॥

राग आसावरी ॥

क्यों राधा फिरि मौन गह्यो री। जैसे नउआ अंध भँवर खर तैसेहि तैं यह मौन कह्यो री॥ बात नहीं मुख ते कहि आवति की तेरो मन श्याम हर्‌यो री। जानि नहीं पहिचानि न कबहूँ देखतही चित तिनहि ठर्‌यो री॥ साँची बात कहौं तुम हमसों कहा सोच सो जियहि पर्‌यो री। सूर श्याम तन देखि रही कहा लोचन इकटक ते न टर्‌यो री॥ १४१०॥



राग धनाश्री ॥

कहा कहति तुम बात अलेखे। मोसो कहति श्याम तुम देखे तुम नीके करि देखे॥ कैसो बरन भेषहै कैसोकैसे अंग त्रिभंग। मों आगे वह भेद कहौ धौं कैसो है तनु रंग॥ मै देखे की नाहीं देखे तुम तो बार हजार। सूर श्याम द्वै अँखियन देखति जाको वार न पार॥ १४११॥



राग कान्हरो ॥

हम देखे यहि भाँति कन्हाई। शीश श्रीखंड अलक बिथुरे मुख श्रवणनि कुंडल चारु सोहाई॥ कुटिल भृकुटि लोचन अनियारे सुभग नासिका राजत। अरुन अधर दशनावलि की द्युति दाड़िम कन तन लाजत॥ ग्रीवहार मुक्ता वनमाला बाहुदंड गजशुंड। रोमावली सुभग बगपंगति जात नाभि ह्रदय झुंड॥ कटि पट पीत मेखला कंचन सुभग जंघ युग जान। चरन कमल नखचंद्र नहीं सम ऐसे सूर सुजान॥

राग बिलावल ॥

बने हैं बिशाल कमल दल नैन । ताहू में अति चारु बिलोकनि गूढ़भाव सूचत सखि सैन ॥ बदन सरोज निकट कुंचित कच मनहु मधुप आए मधुलैन । तिलक तरनि शशि कहत कछुक हँसि बोलत मधुर मनोहर बैन ॥ मदननृपति को देश महामद बुधि बल बसि न सकत उर चैन । सूरदास प्रभु दूत दिनहि दिन पठवत चरित चुनौती दैन ॥



राग देव गन्धार ॥

मोहन बदन बिलोकत अँखियन उपजत है अनुराग । तरनि ताप तलफत चकोरगति पिवत पियूष पराग ॥ लोचन नलिन नये राजत रति पूरण मधुकर भाग । मानहु अलि आनंद मिले मकरंद पिवत रतिफाग ॥ भँवरिभाग भ्रकुटी पर कुमकुम चंदन बिन्दु विभाग । चातक सोम शक्र धनु घन में निरखत मनु बैराग ॥ कुंचित केश मयूर चंद्रिका मंडल सुमन सुपाग । मानहु मदन धनुष शर लीन्हें वरषत है वन बाग ॥ अधरबिंब बिहँसान मनोहर मोहन मुरली राग । मानहु सुधा पयोधि घेरि घन ब्रज पर बरषन लाग ॥ कुंडल मकर कपोलनि झलकत श्रम सीकर के दाग । मानहुँ मीन मकर मिलि क्रीड़त शोभित शरद तड़ाग । नासा तिलक प्रसून पदविपर चिबुक चारु चित खाग । दाड़िम दशन मंदगति मुसकनि मोहत सुर नर नाग ॥ श्रीगोपाल रस रूप भरी है सूर सनेह सोहाग । ऐसी शोभा सिंधु विलोकत इन अँखियन के भाग ॥

राग बिलावल ॥

सुनहु सखी मैं बूझति तुम को काह्न हरि को देखे है। कैसो तन कैसो रँग देखियत कैसी बिधि करि भेषे हैं ॥ कैसो मुकुट कुटिल कच कैसे सुभग भाल भ्रुव नीके हैं । कैसे नैन नासिका कैसी श्रवणनि कुंडल पी के हैं ॥ कैसे अधर दशन दुति कैसी चिबुक चारु चित चोरत हैं । कैसे निरखि हँसत काह्न तन कैसे बदन सकोरत हैं ॥ कैसी उरमाला है शोभित कैसी भुजा बिराजत हैं । कैसे कर पहुँची हैं कैसी कैसी अँगुरिश्रा राजत हैं ॥ कैसी रोमावली श्याम के नाभि चारु कटि सुनियत हैं ॥ कैसी कनक मेखला कैसी कछनी यह मन गुनियत हैं ॥ कैसे जंघ जानु कैसे दोउ कैसे वदन खजानति हैं । सूर श्याम अँग अंग की शोभा देखे की अनुमानति हैं ॥ १४१२ ॥



राग रामकली ॥

ऐसे सुने नंदकुमार । नख निरखि शशि कोटि वारत चरण कमल अपार ॥ जानु जंघ निहारि रंभा करनि डारत वारि । काछनी पर प्राण वारत देखि शोभाभारि ॥ कटि निरखि तनु सिंह वारत किंकिनी जु मराल । नाभि पर ह्रद आपु वारत रोमावली अलिमाल ॥ हृदय मुकुतामाल निरखत वारि अवलि वलाक । करज कर पर कमल वारत चलति जहाँ तहाँ साक ॥ भुजा पर वर नाग वारत गये भागि पताल। ग्रीव की उपमा नही कहुँ लखति परम रसाल ॥ चिबुक पर चित वारि हारत अधर अंबुज लाल । बंधूक बिद्रुम बिंब वारत ते भये बेहाल ॥ बचन सुनि कोकिला वारत दशन दामिनि कांति । नासिका पर कीर वारत चारु लोचन भाँति ॥ कंज खंजन मीन मृग शावकनि

डारति वार। भ्रुकुटि पर सुर चाप वारत तरनि कुंडल हारि॥ अलक पर वारत अँध्यारी तिलक भाल सुदेश। सूर प्रभु सिर मुकुटधारे धरे नटवर भेष॥ १४१३॥



राग सारंग॥

ऐसी बिधि नंदलाल कहत सुने माई री। देखे जो नैन रोम रोम प्रति सुभाई री॥ बिधि ने द्वै नैन रचे अंग ठानि ठान्यो। लोचन नहिं बहुत दिये जानिकै भुलान्यो॥ चतुरता प्रबीनता बिधाता को जानै। अब कैसे लगत हमहि बातें न अयाने॥ त्रिभुवन पति तरुन कान्ह नटवर बपुकाछे। हमको द्वै नैन दिये तेऊ नहिं आछे॥ ऐसो बिधि को विवेक कहाँ कहा वाको। सूर कबहुँ पाऊँ जो कर अपने ताको॥ १४ ४॥



राग नट॥

मुख पर चंद्र डारौं वारि। कुटिल कच पर भौंर वारौं भौंह पर धनु वारि॥ भालकेसरि तिलक छबि पर मदन शत शर वारि। मनु चली वहि सुधा धारा निरखि मनधौं वारि॥ नैन खंजन मृग मीन वारौं कमल के कुलवारि। मनों सुरसति यमुन गंगा उपमा डारौं वारि॥ निरखि कुंडल तरुनि वारौं कूप श्रवननि वारि। झलक ललिता कपोल छबि पर मुकुर शत शत वारि॥ नासिका पर कीर वारौं अधर विद्रुम वारि। दशन पकन वज्र वारौं बीज दाड़िम वारि॥ चिबुक पर चित वित्त वारौं प्राण डारौं वारि। सूर हरि की अंग शोभा को सकै निर-वारि॥ १४१५॥

राग सोरठ ॥

श्याम उर सुधादह मानै। । मलय चंदन लेप कीन्हें बरन यह जानौ ।। मलय तनु मिलि लसति शोभा महाजल गंभीर । निरखि लोचन भ्रमत पुनि २ धरत नहिं मन धीर ।। उरज भँवरी भँवर मानों मीन मणि की कांति । भृगुचरण हृदय चिह्न ये सब जीव जल बहुभाँति ।। श्यामबाहु बिशाल केसरि खोरि बिबिधि बनाइ । सहज निकसे मगर मानों कूल खेलत आइ ।। सुभग रोमावली की छबि चली दहते धार । सूर प्रभु की निरखि शोभा युवति बारंबार ।। १४१६ ॥



राग सोरठ ।।

मनु मधुकर पद कमल लुभान्यो । चित्त चकोर चंद्र नख अटक्यो यकटक पल न भुलान्यो ।। बिनही कहे गये उठि मोते जात नहीं मैं जान्यो । अब देखो तन में वे नाहीं कहा जियहि धौं आन्यो ॥ तब ते फेरी तके नहिं मो तन नखचरणनहित मान्यो ॥ सूरदास वे आपु स्वारथी परवेदन नहि जान्यो ।। १४१७ ।।



राग मारू ।

श्याम सखि नीके देखे नाहीं । चितवतही लोचन भरि आए बार बार पछिताहीं ।। कैसेहू करि यकटक राखति नैकहि में अकुलाहीं । निमिष मनो छबि पर रखवारे ताते अतिहि डराहीं ।। कहा करैं इनको कहा दोष न इन अपनीसी कीन्हीं । सूर श्याम छबि पर मन अटक्यो उन सब शोभा कीन्हीं ।। १४१८ ॥

राग बिलावल ॥

हरि दरशन की साध मुई । उडिये उड़ी फिरति नैननि सँग फर फूटै ज्यों आकरुई ॥ जानों नहीं कहाँ ते आवति वह मूरति मनमाहँ उई । बिन देखे की यथा बिरहनी अति जुर जरति न जाति छुई ॥ कछु वै कहत कछू कहि आवत प्रेमपुलकि श्रमस्वेद चुई । सूखति सूर धान अंकुरसी बिनु बरषा ज्यों मूल तुई ॥ १४३३ ॥



राग धनाश्री ॥

सुन री सखी दशा यह मेरी । जब ते मिले श्याम घन सुंदर संगहि फिरति भई जनु चेरी ॥ नीके दरश देत नहिं मोकों अंगनप्रति अनंग की टेरी । चपला ते अतिही चंचलता दशन चमक चकचौंधि घनेरी ॥ चमकत अंग पीतपट चमकत चमकति माला मोतिनकेरी । सूर समुझि बिधिना की करनी अतिरिस करति सौंह मुँह तेरी ॥ १४३४ ॥



राग मारू ॥

आजु के दिन को सखी अति नहीं जो लाख लोचन अंग अंग होते । पूरति साध मेरे हृदय माँझ देखत सबै छबि श्याम को ते ॥ चित्त लोभी नैन द्वार अतिही सूक्ष्म कहा वह सिंधु छबि है अगाधा । रोम जितने अंग नैन होते संग रूप लेती निदरि कहति राधा ॥ श्रवण सुनि सुनि दहै रूप कैसे लहै नैन कछु गहै रसनान ताके । देखि कोउ रहै कोउ सुनि रहै जीभ बिन सो कहै कहा नहिं नैन जाके ॥ अंग बिनु है सबै नहीं एकौ फबै सुनत देखत

जबै कहन लोरे। कहैं रसना सुनत श्रवन देखत नैन सूर सब भेद गुनि मनहिं तोरे ॥ १४३५ ॥



राग धनाश्री ॥

इनहुँ में घटिताई कीन्हीं। रसना श्रवण नैन के होते की रसनाही को नहिं दीन्ही ॥ बैर कियो बिधना हमको रचि याकी जाति अबै हम चीन्ही। निठुर निर्दयी याते और न श्याम बैर हमसों है लीन्ही ॥ या रसही में मगन राधिका चतुर सखी तबहीं लखि भीनी। सूर श्याम के रंगहि राची टरत नहीं जल ते ज्यों मीनी ॥ १४३६ ॥



राग सोरठ ॥

धन्य धन्य बड़भागिनि राधा। नीके भजी नंदनंदन को मेटि भवन जन बाधा ॥ नवल श्याम नवला तुमहूँ हो दोउ तुम रूप अगाधा। मैं जानी यह बात हृदय की रही नहीं कछु साधा ॥ संगहि रहति सदा पियप्यारी क्रीडत करति उपाधा। कोककला वितपन्न भई हौ कान्हरूप तनु आधा ॥ प्रेम उमँगि तेरे मुख प्रगट्यो अरस परस अवलाधा। सूरदास प्रभु मिले कृपाकरि गये दुरति दुखदाधा ॥ १४३७ ॥



(इस प्रकार राधा और अन्य गोपिया कृष्ण का ध्यान करती थीं, कृष्ण के प्रेम में मग्न रहती थीं। कभी कभी कृष्ण उनको दर्शन देकर आह्लादित करते थे।)

राग धनाश्री ॥

श्याम अचानक आइ गये री। मैं बैठी गुरुजन बिच सजनी

देखतही मेरे नैन नये री ॥ तब इक बुद्धि करी मैं ऐसी बेंदीसों कर परस कियो री । आपु हँसे उत पाग मसकी हरि अंतर्यामी जानि लियो री ॥ लै कर कमल अधर परसायो देखि हरषि पुनि हृदय धर्यो री । चरण छुवै दोउ नैन लगाये मैं अपने भुज अंक भर्यो री ॥ ठाढ़े रहे द्वार अति हित करि तबही ते मन चोरि गयो री । सूरदास कछु दोष न मेरो उत गुरुजन इत हेतु नयो री ॥ १४५५ ॥



राग काफी ॥

मेरो मन न रहै कान्ह बिना नैन तपै माई । नवकिशोर श्याम बरन मोहनी लगाई ॥ बन की धातु चित्रित तनु मोर चंद्र सोहै । बनमाला लुब्ध भँवर सुर नर मुनि मोहै ॥ नटवर वपु भेष ललित कट किंकिनि राजै । मणि कुंडल मकराकृत तरुन तिलक भ्राजै ॥ कुटिलकेश अति सुदेश गोरज लपटानी । तड़ित बसन कुंद दरशन देखिहों भुलानी ॥ अरुन श्वेत कुंभ बज्र खचित पदिक शोभा । मणिकौस्तुभ कंठ लसत चितवत चित लोभा ॥ अधर सधर मधुर बोल मुरली कलगावै । भ्रुवविलास मंद हास गोपिन्ह जिय भावै ॥ कमलनैन चित के चैन निरखि मन वारों । प्रेम अंश अरुझि रहो उर ते नहिं टारों ॥ गोप भेष धरि सखी री संग लग डोलौं । तन मन अनुराग भरी मोहन संग बोलौं ॥ नवकिशोर चित के चोर पलकओट न करिहौं । सुभग चरन कमलअरुन अपने उर धरिहौं ॥ असन वसन शयन भवन हरिबिनु न सुहाइ । बिनु देखे कल न परै कहा करौं माइ ॥ यशोमति सुत सुन्दर तनु निरखि हो लोभानी । हरिदरशन अमल पर्यो लाजन लजानी ॥ रूपराशि सुख

बिलास देखत बनि आवै । सूर प्रभु रूप की सीवा उपमा नहिं पावै ॥ १४६५ ॥



राग अड़ानो ॥

ब्रज की खोरि ठाढ़ो साँवरो ढोटौना तबहीं मोही री हौं मोही री । जब ते मैं देखे श्यामसुंदर री चलि न सकत पगदइहै काम नृप द्रोही री ॥ कोलै आइ कौने चरन चलाइ कौने बहियाँ गही सोधों कोही री । सूरदास प्रभु देखे सुधि रही नहिं अति विदेह भई अब मैं बूझति तोही री ॥



राग सुघराई ॥

आँखिन मे बसै जियरे में बसै हियरे मैं बसत निशि दिन प्यारो। मन मे बसै तन में बसै रसना मे बसै अंग अंग मे बसत नंदवारो ॥ सुधि में बसै बुधिहू में बसै उरजन मे बसत पिय प्रेम दुलारो । सूर श्याम बनहूँ मे बसत घरहू में बसत संग ज्यों जलरंग न होत न्यारो ॥ १४६४ ॥



राग बिलावल ॥

इत ते राधा जाति यमुनतट उत ते हरि आवत घर को । कछि काछिनी भेष नटवर को बीच मिली मुरलीधर को ॥ चितै रही मुख इंदु मनोहर वा छबि पर वारति तन को । दूरिहु तें देखतही जाने प्राणनाथ सुंदर घन को ॥ रोम पुलकि गदगद बाणी कहि कहा जात चोरे मन को । सूरदास प्रभु चोरी सीखे माखन ते चितवित धन को ॥ १५०५ ॥

राग बिलावल ॥

इह न होइ जैसे माखन चोरी। तब वह मुख पहिचानि मानि सुख देती जान हानि हुती थोरी ॥ उन दिननि सुकुँवार हते हरि हौं जानत अपनो मन भोरी। ब्रजबसि बास बड़े के ढोटा गोरसकारण कानि न तोरी ॥ अब भए कुशल किशोर नंदसुत हौं भई सजग समान किशोरी। जात कहा बलि बाँह छुड़ाए मूसे मन संपति सब मोरी ॥ नख शिखलौं चितचोर सकल अँग चीन्हे पर कत करत मरोरी। एक सुनी सूर हस्यो मेरो सर्वस अरु उलटी डोलौं संगडोरी ॥ १५०६ ॥



राग गौरी ॥

भुजा पकरि ठाढ़े हरि कीन्हे। बाँह मरोरि जाहुगे कैसे मैं तुमको नीके करि चीन्हे ॥ माखनचोरी करत रहे तुम अबतो भए मनुचोर। सुनत रही मन चोरत हैं हरि प्रगट लियो मन मोर ॥ ऐसे ढीठ भए तुम डोलत निदरे ब्रज की नारि। सूर श्याम मोहू निदरौगे देत प्रेम की गारि ॥ १५०७ ॥



राग सारंग ॥

बहु बल कितकु जानौ यदुराइ। तुम जो तरकि मो अबला पै तौ चलेहौ भुजा छुड़ाइ ॥ कहिअत हो अति चतुर सकल अँग आवत बहुत उपाइ। तौ जानो जो अबके एढँग कोसकै देते जाइ ॥ सूरदास स्वामी श्रीपति को भावत अंतर भाइ। सहि न सके रति वचन उलटि हँसि लीनी कंठ लगाइ ॥ १५०८ ॥

(राधा के प्रेम मे कृष्ण बिलकुल मग्न हो गये।)

राग आसावरी ॥

श्याम भए वृषभानु सुतावस और नहीं कुछ भावै हो। जो प्रभु तिहूँ भुवन को नायक सुर मुनि अंत न पावै हो॥ जाको शिव ध्यावत निशि बासर सहसानन जेहि गावै हो। सो हरि राधा वदन चंद को नैन चकोर त्रसावै हो। जाको देखि अनंग अनागत नागरि छबि भरमावे हो। सूर श्याम श्यामावस ऐसे ज्यों सँग छाह डुलावै हो॥ १५६०॥



राग जैतश्री ॥

कबहूँ श्याम यमुनतट जात। कबहूँ कदम चढ़त मग देखत मन राधा बिन अति अकुलात॥ कबहूँ जात वन कुंज धाम को देखि रहत कुछ नही सुहात। तब आवत वृषभानु-पुरा को अति अनुराग भरे नँदतात॥ प्यारी हृदय प्रगटही जानति तब मन माँझ सिहात। सूरदास प्रभु नागरि के उर नागर श्यामल गात॥ १५६१॥



राग गूजरी ॥

राधा श्याम श्याम राधारँग। पियप्यारी को हृदय राखत प्यारी रहति सदा हरि के सँग॥ नागरि नैन चकोर वदन शशि पिय मधुकर अंबुज सुंदरि मुख। चाहत अरस परस ऐसे करि हरि नागर नागरि नागर सुख॥ सुख दुख सोचि रहत मनही मन तब जानत तन को यह कारन। सुनहुँ सूर कुलकानि जीय दुख दोऊ फल दोऊ करत बिचारन॥१५६२॥

(कृष्ण का विरह होने पर राधा अत्यन्त व्याकुल होती थी, चारों ओर उन्हें ढूँढ़ती फिरती थी)

राग बिहागरो ॥

श्याम बिरह बन माँझ हेरानी । संगी गये संग सब तजिकै आपु भई देवानी ॥ श्याम धाम मैं गर्वहि राखति दुराचारिनी जानी । ता ते त्याग गये आपुहि सब अंग अंग रति मानी ॥ अहंकार लंपट अपकाजी संग न रह्यो निदानी । सूर श्याम बिन नागरि राधा नागर चित्त भुलानी ॥ १६४७ ॥



राग बिहागरो ॥

महाविरह बन माँझ परी । चकृत भई ज्यों चित्र पूतरी हरि मारग बिसरी ॥ संगवटपार गर्व जब देख्यो साथी छोड़ि पराने । श्याम सहज अँग अंग माधुरी तहाँ वै जाइ लुकाने ॥ यह बन माँझ अकेली व्याकुल संपति गर्व छँड़ाये । सूर श्याम सुधि टरत न उर ते यह मनो जीव बचाये ॥ १६४८ ॥



राग मारू ॥

विरहबन मिलन सुधि त्रास भारी । नैन जल नदी पर्वत उरज येइ मनो सुभग बेनी भइ अहिनि कारी ॥ नैन मृग श्रवन बन कूप जहाँ तहाँ मिले भ्रम गली सघन नहिं पार पावै । सिंह कटि व्याघ्र अंग अंग भूषन मनो दुसह भये भार अतिही डरावै ॥ शरनकारि अत्रडरि डर लहत कोउ नहीं अंग सुख श्याम बिन भये ऐसे । सूर प्रभु नाम करुनाधाम जाउ क्यों कृपा मारग बहुरि मिलैं कैसे ॥ १६४९ ॥

राग टोड़ी ॥

राधा भवन सखी मिलि आई। अति व्याकुल सुधि बुधि कछु नाहीं देहदशा बिसराई॥ बाँह गही तेहि बूझन लागी कहा भयो री माई। एसी विवश भई तुम काहे कहो न हमहि सुनाई॥ कालिहि श्रैार बरन तोहिं देखी आजु गई मुरझाई। सूर श्याम देखे की बहुरो उनहि ठगो री लाई॥ १६५० ॥



राग हमीर ॥

श्याम नाम चकृत भई श्रवन सुनत जागी। आये हरि यह कहि कहि सखिन कंठ लागी॥ मोते यह चूक परी मैं बड़ी अभागी। अबकै अपराध क्षमहु गये मोहिं त्यागी॥ चरण कमल शरन देहु बार बार माँगी। सूरदास प्रभु के वस राधा अनुरागी॥ १६५१ ॥



राग बिहागरो ॥

सखी रही राधा मुख हेरी। चकृत भई कछु कहत न आवै करन लगी अवसेरी॥ बार बार जल परसि वदनसों वचन सुनावत टेरी। आजु भई कैसी गति तेरी ब्रज मे चतुर निवेरी॥ तब जान्यो यह तौ चंद्रावलि लाज सहित मुख फेरी। सूर तबहिं सुधि भई आपनी मेटी मोह अँधेरी॥ १६५२ ॥



राग जैतश्री ॥

कहा भयो तू आजु अयानी। अतिही चतुर प्रवीन राधिका सखियन में तू बड़ी सयानी। कहिधौं बात हृदय की मोसों ऐसी तू काहे वितत्तानी। मुखमलीन तनु की गति औरै बूझति

बार बार सो बानी ॥ कहा दुराव करौं री तोसों मैं तो हरि के हाथ बिकानी ॥ सूर श्याम मोको परत्यागी जा कारण मैं भई देवानी ॥ १६५३ ॥



राग जैतश्री ॥

अब मैं तोसों कहा दुराऊँ। अपनी कथा श्याम की करनी तो आगे कहि प्रगट सुनाऊँ ॥ मैं बैठीही भवन आपने आपुन द्वार दियो दरशाऊँ। जानि लई मेरे जिय की उन गर्व प्रहारन उनको नाऊँ ॥ तबहीं ते व्याकुल भई डोलति चित न रहै कितनो समुझाऊँ। सुनहु सूर गृह वन भयो मोको अब कैसे हरि दरशन पाऊँ ॥ १६५४ ॥



राग नटनारायण ॥

सखी मिलि करौ कछु उपाउ। मार मारन चढ्यो बिरहिनि निदरि पायो दाँउ ॥ हुताशन धुजजात उन्नत बह्यो हरिदिश-वाउ। कुसुमसर रिपुनंद बाहन हरषि हरषित गाउ ॥ बारि भव सुत तासु भावरि अब न करिहौं काउ। बार अब की प्राण प्रीतम बिजै सखी मिलाउ। ऋतुविचारि जु मान कीजै सोउ वहि किन जाउ। सूर सखी सुभाउ रैहौं संग शिरोमणि राउ ॥ १६५५ ॥



(अन्य गोपियों ने भी राधा से सहानुभूति प्रकट की और अपनी दशा का वर्णन किया।)

हमारी सुरति बिसारी बनवारी हम सरबस दैदै हारी।

सखी पै वै न भये अपने सपनेहू वै मुरारी गिरधारी ॥ वे मोहन मधुकर समान अन बोली मनलावत री। धावत हम व्याकुल विरह व्यापि दिन प्रति नीरज नैना ढारि ढारी ॥ हम तन मन दै हाथ बिकानी वै अति निठुर रहत हैं मुरारी। सूरदास प्रभु सुनहु सखी बहु रवनि रवन पिय हम यक व्रतधारि मदन अगिनि तनु जरि जारी ॥ १६६३ ॥



राग गौरी ॥

मैं अपनीसी बहुत करी री। मोसों कहा कहति तू माई मन के संग मैं बहुत लड़ी री ॥ राखौं अटकि उतहि को धावै उनको वैसियैं परन परी री। मोसों बैर करै रति उनसों मोको छाँड़ो द्वार खड़ी री ॥ अजहूँ मान करौ मन पाऊँ यह कहि इत उत चितै डरी री। सुनहु सूर पाँच मत एकै मोमैं मैंही रही परी री ॥ १६६४ ॥



राग गौरी ॥

मन जिनि सुनै बात यह माई। कौरै लग्यो होइगो कितहूँ कहि दैहै को जाई ॥ ऐसे डरति रहति हैं वाको चुगुली जाइ करैगो। उनसों कहि फिरि ह्यां आवैगो मोसों आनि लरैगो ॥ पंच संग लीन्हें वह डोलत कोऊ मोहिं न मानै। सूर श्याम कोउ उनहिं सिखायो वै इतनो कह जानै ॥ १६६५ ॥



राग बिलावल ॥

अबकै जो पिय पाऊँ तो हृदय माँझ दुराऊँ। हरि को दरशन पाऊँ आभूषण अंग बनाऊँ ॥ ऐसो को जो आनि मिलावै ताहि

निहाल कराऊँ। जो पाऊँ तो मंगल गाऊँ मोतिनचौक पुराऊँ॥ रसकरि नाचौं गाऊँ बजाऊँ चंदन भवन लिपाऊँ। जो मोहन वस मेरे होवहिं हीरा लाल लुटाऊँ॥ मणि माणिक न्यवछावरि करिहौं सो दिन सुदिन कहाऊँ। केतकि करनवेलि चम्मेली फूलन सेज बिछाऊँ॥ तापर पिय को पौढ़ाऊँ मैं अचरा वायु डुलाऊँ। चंदन अगर कपूर अरगजा प्रभु के खौरि बनाऊँ॥ जो विधना कबहूँ यह करतो काम को काम पुराऊँ। सूर श्याम बिन देखे सजनी कैसे मन अपनाऊँ॥ १६७८॥



(राधा की एक प्यारी सखी ललिता कृष्ण को लाने के लिए चली और कृष्ण के पास पहुँच गई।)

राग टोड़ी॥

ललिता मुख चितवत मुसुकाने। आपु हँसी पिय मुख अवलोकत दुहुँनि मनहिं मन जाने॥ अति आतुर धाई कहाँ आई कहि वदन झुराये। बूझत है पुनि पुनि नँदनंदन चितवत नैन चुराये॥ तब बोली वह चतुर नागरी अचरज कथा सुनाऊँ। सूर श्याम जो चलौ तुरतही नैननि जाइ दिखाऊँ॥ १६७९॥



राग सारंग॥

अद्भुत एक अनूपम बाग। युगल कमल पर गज क्रीड़त है तापर सिंह करत अनुराग॥ हरि पर सरवर सर पर गिरिवर गिरि पर फूले कंज पराग। रुचिर कपोत बसे ता ऊपर ता ऊपर अमृत फल लाग॥ फल पर पुहुप पुहुप पर पल्लव ता पर शुक पिक मृग मद काग। खंजन धनुष चंद्रमा ऊपर ता ऊपर इक मणि-

धर नाग ॥ अंग अंग प्रति और और छबि उपमा ताको करत न त्याग। सूरदास प्रभु पिवहु सुधारस मानों अधरनि के बड़भाग ॥ १६८० ॥



राग रामकली ॥

पद्मनिसा रँग एक मझारि। आपुहि सारंग नाम कहावै सारंग बरनी वारि ॥ तामें एक छबीलो सारंग अर्ध सारंग उनहारि। अर्ध सारंग परि सकलई सारंग अधसारंग बिचारि ॥ तामहि सारंग सुत शोभित है ठाढ़ी सारंग सँभारि। सूरदास प्रभु तुमहूँ सारंग बनी छबीली नारि ॥ १६८१ ॥



राग रामकली ॥

बिराजत अंग अंग इति बात। अपने कर करिधरे बिधाता षट खग नव जलजात ॥ द्वै पतंग शशि बीस एक फनि चारि विविध रंग धात। द्वै पिक बिंब बतीस बज्रकन एक जलज पर थात ॥ इक सायक इक चाप चपल अति चिबुक मे चित्त बिकात। दुइ मृणाल मातुल ऊभे द्वै कदली खंभ बिन पात ॥ इक केहरि इक हंस गुप्त रहै तिनहि लग्यो यह गात। सूरदास प्रभु तुम्हरे मिलन को अति आतुर अकुलात ॥ १६८२ ॥



(सखी ने कृष्ण को लाकर राधा से मिला दिया।)

राग केदारो ॥

यद्यपि राधिका हरि संग। हावभाव कटाक्ष लोचन करत

नानारंग॥ हृदय व्याकुल धीर नाहीं वदन कमल विलास। तृषा में जल नाम सुनि ज्यों अधिक अधिकहि प्यास॥ श्याम-रूप अपार इत उत लोभ पटु विस्तार। सूर मिलत नहिं लहत कोऊ दुहुँनि बल अधिकार॥ १६६३॥



राग केदारो॥

राधेहि मिलेहु प्रतीत न आवति। यद्यपि नाथ बिधु बदन विलोकति दरशन को सुख पावति॥ भरि भरि लोचन रूप परमनिधि उर में आनि दुरावति। बिरह बिकल मति दृष्टि दुहूँ दिशि सचि सरधा ज्यों धावति॥ चितवत चकित रहति चित अंतर नैन निमेष न लावति। सपनो आहि कि सत्य ईश इह बुद्धि वितर्क बनावति॥ कबहुँक करत विचार कौनहो को हरि केहि यह भावति। सूर प्रेम की बात अटपटी मनतरंग उपजा-वति॥ १६६४॥



(कृष्ण ने गोपियों की मनोकामना पूरी की और अनेक रासलीलायें की।)

राग गुंडमलार॥

सुनत मुरली अलि न धीर धरिकै। चलीं पित मात अप-मान करिकै॥ लरत निकसीं सबै तोरि फरिकै। भईं आतुर वदन दरश हरिकै॥ जाहि जो भजै सो ताहि रातै। कोऊ कछु कहै सब निरस बातै॥ ता बिना ताहि कछु नहीं भावै। और तो जोरि कोटिक दिखावै॥ प्रीति कथा वह प्रीतिहि जानै।

और करि कोटि बातैं बखानै॥ ज्यों सलिल सिंधु बिनु कहुँ न जाई। सूर वैसी दशा इनहुँ पाई[1]॥



राग मलार॥

रासरस रीति नहिं वरणि आवै। कहाँ वैसी बुद्धि कहाँ वह मन कहाँ कहाँ इह चित्त जिय भ्रम भुलावै॥ जो कहौं कौन मानै निगम अगम जो कृपा बिन नहीं यह रसहि पावै। भाव सों भजै बिन भाव में प नहीं भावही माहँ भाव यह बसावै॥ यहै निज मंत्र यह ज्ञान यह ध्यान है दरश दंपति भजन सार गाऊँ। इहै माँग्यो बार बार प्रभु सूर के नैन द्वौ रहैं नर देह पाऊँ॥



राग सूही बिलावल॥

देखि श्याम मन हरष बढ़ायो। तैसिय शरद चाँदनी निर्मल तैसोइ रासरंग उपजायो॥ तैसिय कनकवरन सब सुंदरि यह शोभा पर मन ललचायो॥ तैसी हंस सुता पवित्र तट तैसेइ कल्पवृक्ष सुख दायो। करौं मनोरथ पूरण सबके इहि अंतर इक खेद उपायो। सूर श्याम रचि कपट चतुरई युवतिन के मन यह भरमायो[2]॥ १६६६॥

---

१ बाबू राधाकृष्णदास के संस्करण में यहां फिर नम्बरों में गडबड़ है।

२ गोपियों के विरह का वर्णन बहुत से कवियों ने किया है। हिन्दी में सूरदास से उतर कर सर्वोत्तम वर्णन नन्ददास का है। यथाः—

कहन लगीं यह कुँवर कान्ह ब्रज प्रगटे जब तें,
अवध भूति इन्दिरा अलंकृत होरहीं तब तें।

राग बिहागरो ॥

निशि काहे वन को उठि धाईं। हँसि हँसि श्याम कहत हैं सुन्दरि की तुम ब्रजमारगहि भुलाई ॥ गई रही दधिबेचन मथुरा

सबको सब सुख बरसत ससि जों बढ़त बिहारी,
तिनमें पुनि ये गोपबधू प्रिय निपट तिहारी।
नैन मूँदबो महा अस्त्र लै हाँसी हाँसी,
मारत हो कित सुरतनाथ बिन मोल की दासी।
विष तें जल तें व्याल अनल तें दामिनिझरतैं,
क्यों राखी नहिं मरन दई नागर नगधर तैं।
जसुदा-सुत जनु तुम न भये पिय अति इतराने,
विश्व कुसल कारन बिधना बिनती करि आने।
अहो मित्र अहो प्राननाथ यह अचरज भारी,
अपने जन को मारि करौ काकी रखवारी।
जब पशु चारन चलत चरन कोमल धरि बन में,
सिल तृण कण्टक अटकत कसकत हमरे मन में।
इहि बिधिप्रेम-सुधानिधि बढ़ि गई अधिक कलोल,
विह्वल होगईं बाल लाल सों अलबल बोलैं।
तब तिनही मे प्रगट भये नद नन्दन पिय यों,
दृष्टिबन्द करि दुरै बहुरि प्रगटै नटवर ज्यों।
पीत-बसन वनमाल धरे मंजुल मुरली हथ,
मन्द मधुर मुसिक्यान निपट मन्मथ के मन्मथ।
पियहिँ निरखि तियवृन्द उठीं सब एक बार यों,
फिरि घट आये प्रान बहुरि उफकत इन्द्री ज्यों।
महा छुधित को भोजन सों जो प्रीति सुनी है,
ताहू तें सतगुनी सहस पुनि कोटि गुनी है।

तहाँ आजु अवसेर लगाई। अति भ्रम भयो विपिन क्यों आई मारग वह कहि सबनि बताई॥ जाहु जाहु घर तुरत युवति जन खिझत गुरुजन कहि डरवाई। की गोकुल ते गमन कियो

कोउ चटपट सों झपटि कोउ पुनि उरवर लपटी,
कोइ गर लपटी कहत भले जू कान्हर कपटी।
कोउ नागर नगधर की गहि रहि दोउ कर पटकी,
मनों नव घन ते सटकी दामिनि दामन अटकी।
दौरि लिपटि गई ललित लाल सुख कहत न आवै,
मीन उछलिकै पुलिन परै पुनि पानी पावै।
कोउ पिय भुज सों लटकि मटकि रहि नारि नवेली,
मनो सुन्दर सिङ्गार बिटप लपटी छबि बेली।
कोउ कोमल पद कमल कुचन बिच राखि रही यों,
परम निधन धन पाय हिये सों लाय रहत जों।
कोऊ पिय को रूप नैन भरि उर धरि आवत,
मधुमाखी ज्यों देखि दसो दिस अति छबि पावत।
कोउ दसनन दिये अधर बिंब गोविन्दहिं ताडत,
कोउ एक नैन चकोर चारु मुखचन्द निहारत।
कहुँ काजल कहुँ कुमकुम कहुँ एक पीक लगी बर,
तहँ राजत ब्रजराज कुँवर कन्दर्प-दर्प हर।
बैठे पुनि तिहि पुलिनहि परमानन्द भयो है,
छबिलिन अपनो छादन छवि सुबिछाय दयो है॥ इत्यादि

आनन्दघन ने अपनी विरहलीला में यही चरित्र गाया है। यथाः—

सलोने श्याम प्यारे क्यो न आवो।
दरस प्यासी मरें तिनको जिवावो॥ १॥
कहाँ हो जू कहां हो जू कहाँ हो।
लगे ये प्रान तुम सों हैं जहाँ हो॥ २॥

तुम इन बातन है नहीं भलाई ॥ यह सुनि कै ब्रजबाम कहत भई कहा करत गिरधर चतुराई। सूर नाम लै लै जन जन के मुरली बारंबार लगाई ॥ १६६७ ॥

रहो किन प्रानप्यारे नैन आगे।
तिहारे कारने दिन रात जागें ॥ ३ ॥
सजन हित मान कै ऐसी न कीजै।
भई हैं बावरी सुध आप लीजै ॥ ४ ॥
कहीं तब प्यार सों सुख दैन बातें।
करौ अब दूर तें दुख दैन घातें ॥ ५ ॥
बुरे हौ जू बुरे हौ जू बुरे हौ।
अकेली कै हमैं ऐसे दुरे हौ ॥ ६ ॥
सुहाई है तुम्हें यह बात कैसैं।
सुखी हौं स्यांवरे हम दीन ऐसैं ॥ ७ ॥
दिखाई दीजिए हा हा अमोही।
सनेही है रुखाई क्यो बसोही ॥ ८ ॥
तुम्है बिन स्याँवरे ये नैन सूने।
हिये में लै दिए बिरहा अजूने ॥ ९ ॥
उजारो जो हमें काको बसैहो।
हमें औराय के औरन हँसैहो ॥ १० ॥
कहै अब कौन सों बिरहा कहानी।
न जानी ही न जानी ही न जानी ॥ ११ ॥
लिखैं कैसे पियारे प्रेम पाती।
लगे अँसुवन झरी बैटूक छाती ॥ १२ ॥
परयो है आन कै ऐसो अँदेसो।
जरावे जीव अरु कानन सँदेसो ॥ १३ ॥

राग बिहागरो ॥

यह जिनि कहौ घोषकुमारि। हम चतुरई नही कीन्हीं तुम चतुर सब ग्वारि॥ कहाँ हम कहाँ तुम रहि ब्रज कहाँ मुरली नाद। करति हौ परिहास हमसों तजौ यह रस वाद॥ बड़े की

दसा है अटपटी पिय आय देखो।
न देखो तो परेखो है। परेखो ॥ १४ ॥
अजू ऐसे कहो कैसे बितइये।
अवध बिन हूँ सदा पैंडो चितइये ॥ १५ ॥
अनोखी पीर प्यारे कौन पावे।
पुकारो मौन मे कहि वे न आवे ॥ १६ ॥
अचम्भे की अगिन अन्तर जरो हों।
परोसी री मरो नाही मरो हों ॥ १७ ॥
कहा जानो तुम्हारे जी कहा है।
असोची मोही तोसी सो महा है ॥ १८ ॥
निहारें मिलन की आसा न छूटे।
लग्यौ मन बावरो तोरे न टूटे ॥ १९ ॥
अजों धुन बाँसरी की कान बोलै।
छबीली छैल डोलन सँग डोलै ॥ २० ॥
सलौनी स्याम मूरत फिरै आगे।
कटाछैं बान सी उर आन लागें ॥ २१ ॥
मुकट की लटक हिय में आय हालै।
चितौनी बंक जिय मे आय सालै ॥ २२ ॥
हसन मे दसन दुति की होत कौधै।
वियोगी नैन चेटक चाय चौधै ॥ २३ ॥
अधर को देख प्यासी नैन दौरैं।
अमके प्रान बिनु ह्वै विवस बोरैं ॥ २४ ॥ इत्यादि

तुम बहू बेटी नामले क्यों जाइ। ऐसे ही निशि दौरि आई हमहिं दोष लगाइ ॥ भली यह तुम करी नाहीं अजहुँ घर फिरि जाहु । सूर प्रभु क्यों निडरि आई नहीं तुम्हारे नाहु ॥ १६९८ ॥



राग रामकली ॥

अब तुम कही हमारी मानो । बन में आइ रैनि सुख देख्यो इहै लह्यो सुख जाना ॥ अब ऐसी कीजो जिनि कबहूँ जानति हो मन तुमहूँ । यह ध्वनि सुनै कहूँ जो कोऊ तुमहिं लाज अरु हमहूँ ॥ हम तो आज बहुत सरमाने मुरली टेरि बजायो । जैसो कियो लह्यो फल तैसो हमही दोषन आयो ॥ अब तुम भवन जाहु पति पूजहु परमेश्वर की नाहीं । सूर श्याम युवतिन सों कहि कहि सब अपराध छमाहीं ॥ १७०० ॥



राग सूही बिलावल ॥

यह युवतिन को धर्म न होई । धृग सो नारि पुरुष जो त्यागै धृग सो पति जो त्यागै जोई ॥ पति को धर्म रहै प्रतिपाले युवती सेवा ही को धर्म । युवती सेवा तऊ न त्यागै जो पति कोटि करै अपकर्म ॥ बन में रैनि वास नहिं कीजै देख्यो बन वृंदावन आई । विविध सुमन शीतल यमुना जल त्रिविध समीर परसि सुखदाई ॥ घर ही में तुम धर्म सदा ही सुत पति दुखित होत तुम जाहु । सूर श्याम यह कहि परबोधत सेवा करहु जाइ घरनाहु ॥ १७०१ ॥



राग मारू ॥

श्याम उर प्रीति मुख कपट बानी ॥ युवति व्याकुल भई

धरणि सब गिरि गईं आस गई टूटि नहिं भेद जानी॥ हँसत नँदलाल मन मन करत ख्याल ए भईं बेहाल ब्रजबाल भारी। रुदन जल नदी सम बहिचल्यो उरज बिच मनों गिरी फोरि सरिता पनारी॥ अंग थकि पथिक नहिं चलत कोऊ पंथ नाव-रस भाव हरी नहीं आनै। सूर प्रभु निठुर करि कहा ह्वै रहे हौ इनहिं बिन और को खेइजानै॥ १७०५॥



राग जैतश्री॥

निठुर वचन जिनि बोलहु श्याम। आस निरास करौ जिनि हमरी व्याकुल वचन कहति है वाम॥ अंतर कपट दूरि करि डारौ हम तनु कृपा निहारो। कृपा सिंधु तुमको सब गावत अपनो नाम सँभारो॥ हमको शरण और नहिं सूझै कापै हम अब जाहिं। सूरदास प्रभु निज दासिन को चूक कहा पछु-ताहिं॥ १७०६॥



राग गौरी॥

तुम पावत हम घोष न जाहिं। कहा जाइ लैहैं ब्रज मे यह दरशन त्रिभुवन में नाहिं॥ तुमहूँ ते ब्रजहितू कोउ नहिं कोटि कहौ नहिं मानै। काके पिता मात हैं काके काहू हम नहिं जानै॥ काके पति सुत मोह कौन को घर है कहाँ पठावत। कैसो धर्म पाप है कैसो आस निरास करावत॥ हम जानै केवल तुमहीं को और वृथा संसार। सूर श्याम निठुराई तजिए तजिय वचन बिनसार॥ १७०७॥

राग जैतश्री ॥

तुम हौ अंतर्यामि कन्हाई । निठुर भए कत रहत इते पर तुम नहिं जानत पीर पराई ॥ पुनि पुनि कहत जाहु ब्रजसुंदरि दूरि करौ पिय यह चतुराई । आपुहि कही करौ पति सेवा ता सेवा को हैं हम आई ॥ जो तुम कहौ तुमहिं सब छाजै कहा कहैं हम प्रभुहि सुनाई । सुनहु सूर इहँई तनु त्यागैं हमपै घोष गयो नहिं जाई ॥ १७०८ ॥



राग बिहागरो ॥

कैसे हमको ब्रजहि पठावत । मन तौ रह्यो चरण लपटानो जो एतनी यह देह चलावत ॥ अटके नैन माधुरी मुसकनि अमृत वचन श्रवणन को भावत । इंद्री सबै मनहि के पाछे कहो धर्म कहि कहा बतावत ॥ इनको करी आपनो लायक तौ क्यों हम नाहीं जिय भावत । सूर सैन दै सरवस लूट्यो मुरली लै लै नाम बुलावत ॥ १७०९ ॥



राग कान्हरो ॥

भवन नहीं अब जाहिं कन्हाई । सुजन बंधु ते भईं बाहिरी अब कैसे वे करत बड़ाई ॥ जो कबहूँ वे लेहिं कृपाकरि धृग वै धृग हम नारि । तुम बिछुरत जीवन धृग राखैं कहीं न आपु बिचारि ॥ धृग वह लाज विमुख की संगति धनि जीवन तुम हेत । धृग माता धृग पिता गेह धृग धृग सुत पति को चेत ॥ हम चाहति मृदु हँसनि माधुरी जाते उपज्यो काम । सूर श्याम अधरन रस सींचहु जरति विरह सब बाम ॥ १७१० ॥

राग गुंडमलार ॥

तजौ नँदलाल अति निठुरई गहि रहे कहा पुनि पुनि कहत धर्म हमको। एक ही ढँग रहे वचन सब कटु कहे वृथा युवतिन दहे मेटि प्रन को॥ विमुख तुमते रहे तिनहि हम क्यों गहैं तहाँ कह लहैं दुख देहिं भारी। कहा सुत पति कहा मात पित कुल कहा कहा ससार वन वन बिहारी॥ हमहिं समुझाइ यह कहो मूरख नारि कहो तुम कहाँ नहिं भर्म जानै। सुनहु प्रभु सूर तुम भले की वे भले सत्य करि कहौ हम अबहिं मानै॥ १७१४॥



राग रामकली ॥

तुमहि विमुख धृग धृग नर नारि। हम तौ यह जानति तुव महिमा को सुनिए गिरिधारि॥ साँची प्रीति करी हम तुमसों अंतर्यामी जानो॥ गृह जन की नहिं पीर हमारे वृथा धर्म हम ठानो॥ पाप पुराय दोऊ परित्यागे अब जो होइ सुहोई। आश निराश सूर के स्वामी ऐसी करै न कोई॥ १७१५॥



राग जैतश्री ॥

आस जिनि तोरहु श्याम हमारी। नैन नाद ध्वनि सुनि उठि धाई प्रगटन नाम मुरारी॥ क्यों तुम निठुर नाम प्रगटायो काहे विरद भुलाने। दीन आजु हमते कोउ नाहीं जानि श्याम मुसुकाने॥ अपने भुजदंडन कर गहिए विरह सलिल मे भासी। बार बार कुलधर्म बतावत ऐसे तुम अविनासी॥ प्रीति वचन नवका करि राख्यो अंकम भरि बैठावहु। सूर श्याम तुम बिनु गति नाही युवतिन पार लगावहु॥ ७१६॥

राग बिहागरो ॥

श्याम हँसि बोले प्रभुता डारि। बारंबार बिनय कर जोरत कटिपट गोद पसारि॥ तुम सन्मुख मैं विमुख तुम्हारो मैं असाध तुम साध। धन्य धन्य कहि कहि युवतिन को आप करत अनुराग॥ मोको भजी एक चित्त ह्वै कै निदरि लोक कुलकानि। सुत पति नेह तोरि तिनुकासों मोही निजकरि जानि॥ जाके हाथ पेट फल ताको सो फल लह्यो कुमारि। सूर कृपा पूरण सों बोले गिरिगोवर्धन धारि॥ १७१६ ॥



राग सूही बिलावल ॥

कहत श्याम यह श्रीमुखबानी। धन्य धन्य दृढ़ नेम तुम्हारो बिन दामन मो हाथ बिकानी॥ निर्दय वचन कपट के भाषे तुम अपने जिय नेक न आनी। भजी निसंक आय तुम मोको गुरु जन की शंका नहिं मानी॥ सिंह रहै जंबुक शरणागत देखी सुनी न अकथ कहानी। सूर श्याम अंकम भरि लीन्हीं विरह अग्नि झर तुरत बुझानी॥ १७२० ॥



राग मारू।

कियो जेहि काज तप घोषनारी। देउँ फल हौं तुरत लेहु तुम अब घरी हरष चित करहु दुख देहु डारी॥ रासरस रचौ मिलि संग बिलसहु सबै बिहँसि हरि कह्यो यों निगमबानी। हँसत मुख मुख निरखि वचन अमृत बरषि प्रिया रस भरे सारंगपानी॥ ब्रजयुवती चहुँ पास मध्य सुंदर श्याम राधिका

वाम अति छबि बिराजै । सूर नव जलद् तनु सुभग श्यामलकांति इंद्रबधु पांति बिच अधिक छाजै ॥ १७२१ ॥



(यहा सूरदास ने रासलीला का विस्तार से वर्णन किया है ।)

राग बिहागरो ॥

गति सुगंध नृत्यत ब्रजनारी हाव भाव नैन सैन दैदै रिझवति गिरिधारी ॥ पग पग पटकि भुजनि लटकावति फंदा करनि अनूप । चंचल चलत झूमि ये अंचल अद्भुत है वह रूप ॥ दुरि निरखत अँगरूप परस्पर दोउ मनहि मन रिझवत । हँसि हँसि वदन वचन रस प्रगटत स्वेद अंग जलभीजत ॥ वेनी छूटि लटैं बगरानी मुकुट लटकि लटकानो । फूल खसत सिर ते भए न्यारे सुभग स्वातिसुत मानो ॥ गान करति नागरि रीझे पिय लीन्हीं अंकमलाइ । रसवस है लपटाइ रहे दोउ सूर सखी बलि-जाइ । १७४३ ॥



राग केदारो ॥ -

उघटत श्याम नृत्यत नारि । धरे अधर उपंग उपजै लेत है गिरिधारि ।। ताल मुरज रबाब बीना किन्नरी रस सार । शब्द संग मृदंग मिलवत सुघर नंदकुमार ॥ नागरी सब गुणनि आगरि मिलि चलति पिय सग । कबहुँ गावति कबहुँ नृत्यत कबहुँ उघटति रंग ॥ मंडली गोपाल गोपी अंग अँग अनुहारि । सूर प्रभु धनि नवल भामिनि दामिनी छबिडारि ॥ १७४५ ॥

राग बिहागरो ॥

नृत्यत हैं दोउ श्यामा श्याम। अंग मगन पिय ते प्यारी अति निरखि चकित ब्रजबाम ॥ तिरपलेति चपलासी चमकति झम-कति भूषण अंग। या छबि पर उपमा कहूँ नाहीं निरखत विवस अनंग॥ श्रीराधिका सकल गुणपूरण जाके श्याम अधीन। संग ते होत नहीं कहुँ न्यारी भए रहति अतिलीन ॥ रस समुद्र मानों उछलत भयो सुंदरता की खानि। सूरदास प्रभु रीझि थकित भये कहत न कछू बखानि[1] ॥ १७४६ ॥

---

१ नन्ददास ने भी रासपञ्चाध्यायी मे रासलीला का सुमधुर वर्णन किया है :—

सो पिय भये अनकूल तूल कोउ नाहिं भयो अब,
सब विधि सुख को सूल-मूल उनमूल किये सब।
तब वा रातहिं तेहि सुरतरु-तर सुन्दर गिरधर,
आरंभित अद्भुत सुरास वहि कमल चक्र पर।
एक काल ब्रजबाल लाल तहँ चढ़े जोरि कर,
तिमसन इत उत होत सबै निर्तत विचित्र वर।
मनि-दर्पन सम अवनि रमनि तापर छबि देहीं,
बिलुलित कुण्डल अलक तिलक झुकि झाईं लेहीं।
कमल-कर्णिका मध्य जु स्यामास्याम बनी छबि,
द्वै २ गोपिन बीच जु मोहन लाल रहे फबि।
मूरत एक अनेक देखि अद्भुत सोभा अस,
मञ्जु-मुकुर-मंडल मधि बहु प्रतिबिम्ब बधू जस।
सकल तियन के मध्य सांवरो पिय सोभित अस,
रत्नावलि मधि नीलमणी अद्भुत झलकै जस।
नव-मरकत-मनि स्याम कनक-मणिगण ब्रजबाला,
बृन्दावन कों रीझि मनों पहिराई माला।

(अब सूरदासजी श्रीकृष्ण के गन्धर्व विवाह का विस्तार-पूर्वक वर्णन करते है)।

राग छंद ॥

मोर मुकुट रचि मौर बनायो। माथे पर धरि हरि वर आयो॥ तनु श्यामल पटपीत दुकूले। देखत घन दामिनि मन भूले॥ दामिनी घन कोटि वारौं जब निहारौं वह छबी। कुंडल विराजत गंड मंडल नहीं शोभा शशि रवी॥ और कौन समान त्रिभुवन सकल गुण जेहि माहिआँ। मनो मोर नाचत सँग डोलत मुकुट की परछाहिआँ॥

नूपुर कङ्कन किंकिन करतल मन्जुल मुरली,
    ताल मृदंग उपङ्ग चंग ऐकै सुर जुरली।
मृदुल मधुर टकार ताल झङ्कार मिली धुनि,
    मधुर जन्त्र की तार भँवर गुंजार रली पुनि।
तैसिय मृदुपद पटकनि चटकनि कटतारन की,
    लटकनि मटकनि झलकनि कल कुण्डल हारन की।
सावरे पिय के संग नृतत यो ब्रज की बाला,
    जनु घनमंडल-मन्जुल खेलति दामिनि माला।
छबिलि तियन के पाछें आछें बिलुलित बेनी,
    चञ्चल रूप लसत संग डोलत जनु अलिसेनी।
मोहन पिय की मुसकनि ढलकनि मोर मुकुट की,
    सदा बसौ मन मेरे फरकनि पियरे पट की।
बदन कमल पर अलक छुटी कछु श्रम की झलकनि,
    सदा रहौ मन मेरे मोर मुकुट की ढलकनि।
कोऊ सखी कर पकरत निरतत यों छबिली तिय,
    मानो करतल फिरत देखि नट लट्टू होत पिय।

राग छंद ॥

गोपीजन सब नेवते आईं। मुरली ध्वनि ते पठइ बुलाईं॥ बहु बिधि आनँद मगल गाए। नवफूलन के मंडप छाए॥ छाये जु फूलन कुंज मंडप प्रीति ग्रन्थि हिए परी। अति रुचिर रूप प्रवीण राधिका निकट वृंदा शुभ घरी॥ गाए जु गीत पुनीत बहु बिधि वेद रवि सुंदर ध्वनी। नंदसुत बृषभानुतनया रास में जोरी बनी॥



राग छंद ॥

मिलि मनहै सुख आसन वैसे। चितवनि वार किये सब तैसे॥ तापरि पाणिग्रहण बिधि कीन्ही। तब मंडल भरि भाँवरि दीन्ही॥

देत भाँवरि कुंज मंडप पुलिन में वेदी रची। बैठे जु श्यामा श्याम वर त्रैलोक की शोभा खची॥ उत कोकिला गण करै कोलाहल इत सकल ब्रजनारियाँ। आई जु निवती दुहूँ दिशि मनों देति आनँद गारियाँ॥



राग छंद ॥

भए जो मन्मथ सैन्य बराती। द्रुम फूले वन अनवन भाँती॥ सुर बंदीजन सब यश गाए। मघवा जे मृदंग बजाए॥

बाजहिं जे बाजन सकल नभ सुर पुहुप अंजलि वरषहीं। थकि रहे व्योम विमान मुनिगन जै जै शब्द करि हर्षहीं॥ सूरदासहि भयो आनँद पूजी मन की साधा। श्रीलाल गिरिधर नवल दुलहै दुलहनि श्रीराधा॥

राग बिहागरो ॥

प्रथम व्याह विधि ह्वै रह्यो कंकन चार विचारि । रचि रचि पचि पचि गूँथि बनायो नवल निपुन ब्रजनारि ॥ बड़े होवहु तब छोरियो हो ये गोकुल के राइ । की कर जोरि करौ विनती कै छुवौ श्रीराधाजी के पाइ ॥ इह न होइ गिरि को धरिबो हो सुनहु कुँवर गोपीनाथ । आपुन को तुम बड़े कहावत काँपन लागे हैं दोउ हाथ ॥ बहुरि सिमिटि ब्रजसुंदरी मिलि दीन्ही गाँठि बनाइ । छोरहु वेगि कि आनहु अपनी यशुमति माइ बोलाइ ॥ सहज सिथिल पल्लव ते हरिजू लीन्हों छोरि सवारि । किलकि उठीं सब सखी श्याम की अब तुम छोरौ सुकुमारि ॥ पचिहारी कैसेहु नहिं छूटत बँधी प्रेम की डोरि । देखि सखी यह रीति दुहुँन की मुदित हँसी मुख मोरि ॥ अब जिनि करहु सहाय सखी री छोड़हु सकल सयान । दुलहिन छोरि दुलह को ककन की बोलि बबा बृषभान ॥ कमल कमल करि वरनिपहो पानि पिय गोपाल । अब कवि कुल साँचे से लागे रोमकटीले नाल ॥ लीला रास गोपाललाल की जो रस रसिक बखान । सदा रहो इह अविचल जोरी बलि बलि सूर समान ॥ १७५८ ॥



राग काफी ॥

सनकादिक नारद मुनि शिव विरंचि जान । देव दुंदुभी मृदंग बाजे वर निसान ॥ वारने तोरन बँधाए हरि कीन्हों उछाह । ब्रज की सब रीति भई बरसाने ब्याह ॥ डोरन कर छोरन को आईं सकल धाइ । फूली फिरैं सहचरी आनँद उर न समाइ ॥ गजवर गति आवनि पग धरनि धरत पाँव । लटकत

सिर सेहरो मनो शिखि श्रीखंड सुभाव ॥ शोभित सँग नारि अंग सबै छवि विराज। गज रथ वाजी बनाइ चँवर छत्र साज ॥ दुलहिनि वृषभानु सुता अंग अंग भ्राज। सूरदास प्रभु दुलह देखो श्रीब्रजराज ॥ १७६० ॥



राग बिहागरो ॥

वृषभानुनंदिनी अति छबि बनी। श्रीवृन्दाबन चंद राधा निर्मल चाँदनी ॥ श्याम अलक बिच मोती दुति मंगा। मानहु झलमलित शीश गंगा ॥ श्रवण तार्टंक सोहै चिकुर की कांति। उलटि चल्यो है राहु चक्र की भाँति ॥ गोरे लिलाट सोहै सेंदुर को बिंद। शशि की उपमा देत कवि को है निंद ॥ चपल उनींदे नैन लागत सोहाये। नासिका चंपकली को द्वै अलि धाये॥ बदन मंजन ते अंजन गयो दूरि। कलंक रहित शशि पुनि कला पूरि ॥ गिरि ते लता भई यह हम सुनि। कंचन लता ते द्वै गिरि भए पुनि ॥ कंचन से तनु सोहै नीलांबरसारी। कुहुनिसामध्य जनु दामिनि उजियारी ॥ नख शिख शोभा मोपै वरणि न जाई। तुमसी तुमही राधा श्याम मनभाई ॥ यह छबि सूरदास सदा रहै बानी। नँद नंदनराजा राधिका देरानी ॥ १७६२ ॥



राग देवगंधार ॥

दोउ राजत श्यामा श्याम। ब्रजयुवती मंडली बिराजत देखति सुरगन बाम ॥ धन्य धन्य वृंदावन को सुख सुर पुर कौने काम। धनि बृषभानु सुना धनि मोहन धनि गोपिन को

नाम ॥ इनकी को दासी सरि ह्वै है धन्य शरद की याम। कैसेहु सूर जनम ब्रज पावै यह सुख नहिं तिहुँ धाम ॥ १७६३ ॥



(यहां सूरदास ने फिर श्रीकृष्ण के रास का वर्णन किया है)।

राग बिहागरो ॥

रीझे परस्पर वरनारि। कंठ भुज भुज धरे दोऊ सकत नहिं निरवारि ॥ गौर श्याम कपोल सुललित अधर अमृत सार। परस्पर दोउ पियत प्यारी रीझि लेत उगार ॥ प्राण इक द्वै देह कीन्हें भक्त प्रीति प्रकास। सूर स्वामी स्वामिनी मिलि करत रंग बिलास ॥ १७७५ ॥



राग बिहागरो ॥

गावत श्याम श्यामा रंग। सुघर गति नागरि अलापति सुर धरति पिय संग ॥ तान गावति कोकिला मनो नाद अलि मिलि देत। मोर संग चकोर डोलत आप अपने हेत ॥ भामिनी अंग जोन्ह मानो जलद श्यामलगात। परस्पर दोउ करत क्रीड़ा मनहि मनहि सिहात। कुचनि बिच कच परमशोभा निरखि हँसत गोपाल ॥ सूर कंचन गिरि बिचनि मनों रह्यो है अंधकाल[1] ॥ १७७६ ॥

---

१ रासलीला के लिए देखिए श्रीमद्भागवत दशमस्कन्ध पूर्वार्ध अध्याय २९ ॥ लल्लूजीलाल कृत प्रेमसागर अध्याय ३० ॥

(श्रीकृष्ण ने और भी रासलीलाएँ की। राधा को अभिमान हो गया कि मैंने कृष्ण को अपने बस में कर लिया है, मेरे ही लिए यह सब रासलीला हो रही है, मेरे समान कोई स्त्री नहीं है। राधा का गर्व मिटाने के लिए कृष्ण उसे वन में अकेली छोड कर अन्तर्धान हो गये)।

राग बिहागरो ॥

तब हरि भए अंतर्धान। जब कियो मन गर्व प्यारी कौन मोसी आन॥ अति थकित भई चलत मोहन चलि न मोपै जाइ। कंठ भुज गहि रही यह कहि लेहु जबहि चढ़ाइ॥ गए संग बिसारि रिस में बिरस कीन्हों बाल। सूर प्रभु दुरि चरित देखत तुरत भई बेहाल[1] ॥ १७६१ ॥



राग टोड़ी ॥

श्याम गए युवती सँग त्यागि। चकित भई तरुणिन सँग जागि॥ प्यारी संग लगाइ बिहारी। कुंजलता तर कतहूँ डारी॥ संग नहीं तहँ गिरिवर धारी। दसहु दिशा तन दृष्टि पसारी॥ परी मुरछि धरनी सुकुमारी। कामवैर लीन्हों शरमारी॥ त्राहि त्राहि कहि कहुँ बनवारी। भई व्याकुल तनुदशा बिसारी॥ नैन सलिल भीजी सब सारी। सूर संग तजि गए मुरारी॥१७६२॥

---

१ कृष्ण के अन्तर्धान के लिए देखिए श्रीमद्भागवत दशमस्कन्ध पूर्वार्ध अध्याय २९ ॥ लल्लूजीलाल-कृत प्रेमसागर अध्याय ३० ॥

(कृष्ण के विरह से गोपियाँ व्याकुल हो गईं, राधा की तो सब सुध बुध जाती रही, वह वन में पेड़ के नीचे अकेली सूखी लता की तरह पड़ी रही) ।

गोपीबिरह ॥ राग विहागरो ॥

व्याकुल भईं घोषकुमारि । श्याम तजि सँग ते कहाँ गए यह कहति ब्रजनारि ।। दशौदिश नभ द्रुम न देखति चकित भईं बेहाल । राधिका नहिं तहाँ देखी कह्यो वा के ख्याल ।। कछुक दुख कछु हरष कीन्हों कुंज लेगई श्याम । सूर प्रभुसग मही देखो करे ऐसे काम ।। १७९३ ।।



राग बिलावल ॥

जो देखे द्रुम के तरे मुरछी सुकुमारी । चकित भईं सब सुंदरी यह तौ राधा नारी ।। याही को खोजति सबै यह रही कहाँ री । धाइ परी सब सुंदरी जो जहाँ तहाँ री ।। तन की तनकहु सुधि नहीं व्याकुल भईं बाला । यह तौ अति बेहाल है कहाँ गए गोपाला ।। बार बार बूझति सबै नहिं बोलति बानी । सूर श्याम काहे तजी कहि सब पछितानी ।। १७९९ ।।



राग सारंग ॥

राधे कत निकुंज ठाढ़ी रोवति । इंदु ज्योति मुखारविंद की चकित चहूँ दिशि जोवति ॥ द्रुमशाखा अवलंब बेलि गहि नख सों भूमि खनोवति । मुकुलित कच तन घनकि ओट ह्वै अँसुवनि चीर निचोवति ।। सूरदास प्रभु तजी गर्व ते भये प्रेम गति गोवति ।। १८०० ।।

राग भैरव ॥

क्यों राधा नहिं बोलति है। काहे धरणि परी ब्याकुल ह्वै काहे नैन न खोलति है॥ कनक बेलिसी क्यों मुरझानी क्यों बनमाँझ अकेली है। कहाँ गए मनमोहन तजिकै काहे बिरह दहेली है॥ श्याम नाम श्रवणनि ध्वनि सुनिकै सखियन कंठ लगावति है। सूर श्याम आए यह कहि कहि ऐसे मन हरषावति है॥ १८०१॥



राग बिहागरो ॥

कहाँ रहे अब लौं तुम श्याम। नैन उघारि निहारि रही तहाँ जो देखै ब्रजबाम॥ लागी करन बिलाप सबनसों श्याम गए मोहिं त्यागि। तुमको नही मिले नँदनंदन बूझति है तब जागि॥ निरखि बदन वृषभानु कुँवरि को मनो सुधा बिन चंद। राधा बिरह देखि बिरहानी यह गति बिन नँदनंद॥ या वन में कैसें तुम आई श्याम संग है नाहीं। कछु जानति कहाँ गए कन्हाई तहाँ तोहिं लै जाहीं॥ मैं हठ कियो वृथा री माई जिय उपज्यो अभिमान। सूर श्याम ऊपर मोहिं आनी ह्वै गए अंतर्धान॥ १८०२॥



राग बिहागरो ॥

मैं अपने मन गर्व बढ़ायो। इहै कह्यो पिय कंध चढ़ौंगी तब मैं भेद न पायो॥ यह वाणी सुनि हँसे कंठभरि भुजनि उछंगि लई। तब मैं कह्यो कौन है मो-सी अंतर जानि लई॥ कहाँ गए गिरिधर मोको तजि ह्याँ कैसे मैं आई। सूर श्याम अंतर भए मोते अपनी चूक सुनाई॥ १८०३॥

राग कल्याण ॥

राधिका सों कह्यो धीरमन धरि री । मिलैंगे श्याम व्याकुल दशा जिनि करै हरष जिय करौ दुख दूरि करि री ॥ आपु जहँ तहँ गईं बिरह सब पगिरईं कुँवरि सों कहि गईं श्याम ल्यावै । फिरति बन बन विकल सहस सोरह सकल ब्रह्मपूरन अकल नहीं पावै ॥ कहाँ गए यह कहनि सबै मग जोवही कामतनु दहनि ब्रजनारि भारी । सूर प्रभु श्याम दुरि चरित देखहिं सकल गर्व अंतर हृदय हेत नारी ॥ १८०६ ॥



राग बिलावल ॥

श्याम सबनि को देखही वै देखति नाही । जहाँ तहाँ व्याकुल फिरैं तनु धीरज नाही ॥ कोउ बंशीवट को चली कोउ बन घन ज्याहीं । देखि भूमि वह रास की जहँ तहँ पगछाही ॥ सदा हठीली लाड़िली कहि कहि पछिताही । नैन सजल जल ढारिकै व्याकुल मनमाही ॥ एक एक ह्वै ढूँढ़ही तरुनी बिकलाहीं । सूरज प्रभु कहुँ नहिं मिले ढूँढ़ति द्रुम पाही ॥ १८०७ ॥



राग रामकली ॥

कहिधौं री बन बेलि कहूं तुम देखे है नँदनंदन । बूझहु धौं मालती कहूँ तैं पाए है तनुचंदन ॥ कहिधौं कुंद कदम बकुल वट चंपक लता तमाल । कहिधौं कमल कहाँ कमलापति सुंदर नैन विशाल ॥ श्याम श्याम कहि कहति फिरति यह ध्वनि वृंदावन छायो री ॥ गर्व जानि पिय अंतर ह्वै रहे सो मैं वृथा बढ़ायो री । अब बिन देखे कल न परत छिन श्याम सुंदर गुण गायो

री। मृग मृगनि द्रुम बन सारस खग काहू नहीं बतायो री॥ मुरली अधर सुधारस लै तरु रहे यमुन के तीर। कहि तुलसी तुम सब जानति हौ कहँ घनश्याम शरीर॥ कहिधौं मृगी मयाकरि हमसों कहि धौं मधुप मराल। सूरदास प्रभु के तुम संगी हौ कहाँ परम दयाल॥ १८०८॥



राग रामकली॥

कहूँ न देख्यो री मधुबन में माधौ। कहाँ धौं मृग गमन कीन्हों कहाँ धौं बिलमि रहे नैन मरत दरशन की साधौ॥ जब ते बिछुरे श्याम तब ते रह्यो न जाइ सुनौ सखी मेरोइ अपराधौ। सूरदास प्रभु बिनु कैसे जीवहिं माई घटत घटत घटि रह्यो प्राण आधौ॥ १८०६॥



वागेसरी॥ राग कान्हरो॥

मोहन मोहन कहि कहि टेरै कान्ह हवौ यहि बन मेरे। कहियत हो तुम अंतर्यामी पूरण कामी सब केरे॥ ढूँढ़ति है द्रुम वेली बाला भई बेहाल करति अवसेरैं। सूरदास प्रभु रास विहारी श्रीवनवारी वृथा करत काहे भेरैं॥ १८१३॥



राग परागी॥

केहि मारग मैं जाउँ सखी री मारग मुहिं बिसर्‌यो। ना ज़ानौ कित ह्वै गए मोहिं जात न जानि पर्‌यो॥ अपनो पिय ढूँढ़ति फिरौं री मोहिं मिलबे को चाव। काँटो लाग्यो प्रेम को पिय यह पायो दाव॥ बन डोंगरे ढूँढ़ति फिरी घरमारग तजि

गाउँ । बूझौं द्रुम प्रति रूख राय कोउ कहै न पिय को नाउँ ॥ चकित भई चितवत फिरी व्याकुल अतिहि अनाथ । अबकै जो कैसेहुँ मिलौ तौ पलक न तजिहौं साथ ॥ हृदय माहँ पिय घर करौं री नैनन बैठक देउँ । सूरदास प्रभु सँग मिलौ बहुरि रास रस लेउँ ॥ १८१५ ॥



राग बिहागरो ॥

हो कान्ह मैं तुम्हैं चाहौं तुम काहे ना आवो । तुम धन तुम तन तुम मन भावो ॥ कियो चाहौं अरस परस करौं नहि माना । सुन्यो चाहौं श्रवण मधुर मुरली की ताना ॥ कुंज कुंज जपति फिरी तेरे गुणन की माला । सूरदास प्रभु वेगि मिलौ मोहि मोहन नँदलाला ॥ १८१७ ॥



राग काफी ॥

सखी मोहिं मोहन लाल मिलावै । ज्यों चकोर चंदा को इकटक भृंगी ध्यान लगावै ॥ बिनु देखे मोहि कल न परै री यह कहि सबन सुनावै । बिन कारण मै मान कियो री अपनेहि मन दुख पावै ॥ हाहा करि करि पाँइन परि परि हरि हरि टेर लगावै । सूर श्याम बिनु कोटि करौ जो और नहीं जिय आवै ॥ १८१८ ॥



राग बिलावल ॥

मिलहु श्याम मोहिं चूक परी । तेहि अंतर तनु की सुधि नाहीं रसना रट लागी न टरी ॥ धरणि परी व्याकुल भई बोलति लोचन धारा अंसु झरी । कबहूँ मगन कबहुँ सुधि

आवति शरन शरन कहि बिरह जरी ॥ कृष्ण कृष्ण करि टेरि उठति है युगसम बीतत पलक घरी। सूर निरखि ब्रजनारि दशा यह चकित भई जहँ तहाँ खरी ॥ १८२० ॥



राग बिलावल ॥

देखि दशा सुकुमारि की युवती सब धाईं। तरु तमाल बूझति फिरैं कहि कहि मुरझाईं ॥ नँदनंदन देखे कहूँ मुरली कर-धारी। कुंडल मुकुट बिराजई तनु कुंडल भारी ॥ लोचन चारु बिलास हैं नासा अति लोनी। अरुण अधर दशनावली छबि बरणै कोनी ॥ बिंब पँवारे लाजहीं दामिनि द्युति थोरी। ऐसे हरी हमको कहो कहुँ देखेहौ री ॥ अंग अंग छबि कहा कहै देखे बनि आवै। सूर सुगूंगै खाइ ऊख क्यों स्वाद बतावै ॥ १८२१ ॥



राग बिलावल ॥

अति व्याकुल भई गोपिका ढूँढ़ति गिरिधारी। बूझति है बन बेलिसों देखे बनवारी ॥ जाही जूही सेवती करना कनिआरी बेलि चमेली मालती बूझति द्रुमडारी ॥ खूभा मरुआ कुंद सो कहै गोद पसारी। बकुल बहुलि बट कदम पै ठाढ़ीं ब्रजनारी ॥ बार बार हाहा करैं कहुँ हो गिरिधारी। सूर श्याम को नाम लै लोचन जल ढारी ॥ १८२२ ॥



राग बिहागरो ॥

राधे भूल रही अनुराग। तरु तरु रुदन करत मुरझानी ढूँढ़ि

फिरी बनबाग । कुँवरि ग्रसित श्रीखंड अहित भ्रम चरण शिलीमुख लाग । बाणी मधुर जानि पिक बोलत कदम करारत काग ।। कर पल्लव किसलय कुसुमाकर जानि ग्रसित भए कीर । राका चंद्र चकोर जानकै पिवत नैन को नीर ॥ व्याकुल दशा देख जगजीवन प्रगट भए तेहि काल । सूर श्याम हित प्रेम अंकुर उर लाइ लई भुज बाल ॥ १८२६ ॥



राग कल्याण ॥

न्याय तजी श्यामा गोपाल । थोरी कृपा बहुत करि मानी पाँवर बुधि ब्रजबाल ॥ मैं कछु कपट सबन सों कीन्हों अपयश ते न डेरानी । हम एकही मग एकहि मत सब कोउ नाहिं बिल-गानी ॥ हम चातक घन नँदनंदन बरषन लागे हित कीन्हों । तुबडी प्रबल पवन सम सजनी प्रेमबीच दुख दीनो ॥ जानि दीन दुखी सब सुख के निधि मोहन बेनु बजायो । सूर श्याम तब दरश परश करि मिलि संताप नशायो[1] ॥ १८३० ॥

---

१ गोपियों की कृष्ण-सम्बन्धी खोज और विलाप के लिए देखिए श्रीमद्भागवत दशम स्कंध पूर्वार्ध अध्याय ३० और ३१ ॥ लल्लूजीलाल-कृत प्रेमसागर अध्याय ३१ और ३२ ॥

जैसा कह चुके है, विरहलीला, बहुतेरे कवियों ने गाई है । आनन्द-घन की विरहलीला से कुछ दोहे उद्धृत करते हैं :—

भई सूधी सुनो बाँके बिहारी ।
न करहैं मान फिर सोंहै तुमारी ॥ ४१ ॥
चढाई मूड़ अब पायन परेंगी ।
कहो जोई अजू सोई करेंगी ॥ ४२ ॥

(गोपियों की भक्ति से मोहित होकर कृष्ण प्रकट हुए, उन्होने प्रेमपूर्वक मिल कर राधा का सारा दुख दूर कर दिया। फिर उन्होंने रासलीला की और जलक्रीड़ा की)।

राग सूही ॥

अंतर ते हरि प्रगट भए। रहत प्रेम के वश्य कन्हाई युवतिन को मिलि हर्ष दए॥ वैसहि सुख सबको फिरि दीन्हों उहै भाव सब मानि लियो। वह जानति हरिसंग तबहिते उहैं बुद्धि सब उहै हियो॥ उहै रासमंडल रस जानति बिच गोपी बिच श्याम

दई कों मान कै अब आन ज्यावो।
प्यासी है पियारे सुरस पियावो ॥ ५३ ॥
तिहारी है कछू क्यो हूँ जियेगी।
विरह घायल हियो ज्यो त्यो सियेगी ॥ ५४ ॥
बिसासिन बाँसुरी फिरिहूँ सुनेगी।
कियो ही सीस ऐसे रन धुनेगी ॥ ५५ ॥
न तेरो जू कहो क्यों हूँ बजोरी।
निगोडी प्रीत की दुख दैन डोरी ॥ ५६ ॥
करी तुम तो अजू नष खान हाँसी।
परी गाढ़ें गरे बिसवास फांसी ॥ ५७ ॥
न छूटे जू न छूटे जू न छूटे।
टगोरी रावरी बिरहा बलूटे ॥ ५८ ॥
हमारी एक तुम सों टेक प्यारे।
मिलन मैं कै कपट ह्वै गये न्यारे ॥ ५९ ॥
चकोरी बापुरी ये दीन गोपी।
अहो ब्रजचन्द क्यों पहिचान लोपी ॥ ६० ॥
छबीली छैल तुम को पीर काकी।
बिथा की कथा तें छुतिया जो पाकी ॥ ६१ ॥

धनी। सूर श्याम श्यामा मधि नायक उहै परस्पर प्रीति बनी॥ १८३२॥



अथ जलक्रीडा॥ राग गुंडमलार॥

रैनि रस रास सुख करत बीती। भोर भए गए पावन यमुन के सलिल न्हात सुख करत अति बढ़ी प्रीती॥ एक इक मिलति हँसि एक हरि संग रसि एक जल मध्य इक तीर ठाढ़ी। एक इक डरति एक इक भरि कै चलति एक सुख लरति अति नेह बाढ़ी॥ काहु नहिं डरति जल थलहु क्रीड़ा करति हरति मन निडरि ज्यों कंत नारी। सूर प्रभु श्याम श्यामा संग गोपिका मिटी तनुसाध भईं मगन भारी॥ १८४०॥



राग गौरी॥

यमुनाजल क्रीड़त हैं नँदनंदन। गोपीवृंद मनोहर चहुँ दिश मध्य अरिष्ट निकंदन॥ पकरे पाणि परस्पर छिरकत शिथिल सलिल भुजचंदन। मानों युवति पूजि अहिपति को लग्यो अंक दै वंदन॥ कुच भरि कुटिल सुदेश अंबुकनि चुवति अग्रगति मंदन। मानहु भरि गंडूष कमलते डारत अलि आनंदन॥ भुज भरि अंक अगाध चलत लै ज्यों लुब्धक खग फंदन। सूरदास प्रभु सुयश बखानत नेति नेति श्रुति छंदन॥ १८४१॥



राग कान्हरो॥

बिहरत हैं यमुनाजल श्याम। राजत हैं दोउ बाँहाँ जोरी दंपति अरु ब्रजवाम॥ कोउ ठाढ़ी जल जानु जंघ लौं कोउ कटि

हिरदै ग्रीव। यह सुख बरणि सकै ऐसो को सुंदरता की सीव॥ श्याम अंग चंदन की आभा नागरि केसरि अंग। मलयज पंक कुमकुमा मिलि कै जल यमुना इक रंग॥ निशि श्रम मिट्यो मिट्यो तनु आलस परसि यमुन भई पावन। सूर श्याम जल मध्य युवतिगन जन जन के मनभावन॥ १८४२॥



(रास और जलक्रीड़ा गा कर सूरदास कहते हैं:—)

राग बिलावल॥

गोपी पदरज महिमा बिधि भृगु सों कही। बरष सहस्रन कियो तप मैं ताऊ न लही॥ इह सुनके भृगु कह्यो नारद आदिक हरि भक्ता। माँगे तिनकी चरण रेणु तोहिं यह जुगुता॥ सो निज गोपी चरण रज वांछित हौ तुम देव। मेरे मन संशय भयो कहैा कृपा करि भेव॥ ब्रज सुंदरि नहिं नारि ऋचा श्रुति की सब आहिं। मैं अरु शिव पुनि लक्ष्मी तिनसम कोऊ नाहिं॥ अद्भुत है तिनकी कथा कहों सो मैं अब गाइ। ताहि सुनै जो प्रीति कै सो हरिपदहि समाइ॥ प्राकृत लै भए पुरुष जगत सब प्राकृत समाइ। रहै एक वैकुंठ लोक जहाँ त्रिभुवन राइ॥ अक्षर अच्युत निर्विकार है निरंकार है जोई। आदि अंत नहिं जानिअत आदि अंत प्रभु सोई॥ श्रुति बिनती करि कह्यो सर्व तुमही हैा देवा। दूरि निरंतर तुमहिं हैा तुम निज जानत भेवा॥ या बिधि बहुत अस्तुति करी तब भइ गिरा अकास। माँगो बर मनभावते पुरवों सो तुम आस॥ श्रुतिन कह्यो कर जोरि सने आनंद देह तुम। जो नारायण आदि रूप तुम्हरी सो लखी हम॥ निर्गुण रहित जो निज स्वरूप लख्यो न ताको भेव। मन बाणी ते अगम अगोचर देखरावहु सो

देव ॥ बृंदावन निजधाम कृपा करि तहाँ देखायो। सब दिन जहाँ वसंत कल्पवृक्षन सों छायो॥ कुंज अद्‌भुत रमणीक तहाँ बेलि सुभग रही छाइ। गिरि गोवर्धन धात में झरना झरत सुभाइ॥ कालिंदीजल अमृत प्रफुल्लित कमल सुहाइ। नगन जटित दोउ कूल हंस सारस तहँ छाइ॥ क्रीड़त श्याम किशोर तहाँ लिये गोपिका साथ। निरखि सो छबि अति थकित भए तब बोले यदुनाथ॥ जो मन इच्छा होइ कहो सो मोहिं प्रगट कर। पूरण करौं सो काम देउँ तुमको मैं यह बर॥ श्रुतिन कह्यो ह्वै गोपिका केलि करैं तुम संग। एवमस्तु निज मुख कह्यो पूरण परमानंद॥ कल्पसार सतब्रह्मा जब सब सृष्टि उपावै। अरु तेहि लोग न वर्ण आश्रम के धर्म चलावै॥ बहुरि अधर्मी होहिं नृप जग अधर्म बढ़ि जाइ। तब बिधि पृथ्वी सुर सकल करैं बिनय मोहिं आइ॥ मथुरामंडल भरतखंड निजधाम हमारो। धरौं तहाँ मैं गोप भेष सो पंथ निहारो॥ तब तुम होइकै गोपिका करहो मोसों नेह। करौं केलि तुमसों सदा सत्य बचन मम येह॥ श्रुति सुनिकै हरिबचन भाग्य अपनी बहु-मानी। चितवन लागे समय दिवस सो जात न जानी। भार-भयो जब पृथ्वी पर तब हरि लियो अवतार। वेद ऋचा होइ गोपिका हरि सों कियो बिहार॥ जो कोइ भरता भाव हृदय धरि हरिपद ध्यावै। नारि पुरुष कोउ होइ श्रुति ऋचा गति सो पावै॥ तिनके पद रज जो कोई बृंदावन भूमाहिं। परसै सोऊ गोपिका गति पावे संशय नाहिं॥ भृगु ताते मैं चरण रेणु गोपिन की चाहत। श्रुति मति बारंबार हृदय अपने अवगाहत॥ यह महिमारज गोपिका की जब बिधि दई सुनाइ। तब भृगु आदिक ऋषि सकल रहे हरिपद चितलाइ॥ बंदन रज बिधि

सबै कह्यो बिधि दियो ऋषिन्ह बताइ। व्यास त्रिपद वामन-पुराण कह्यो सूर सोइ अब गाइ॥ १८६१॥

(कृष्ण को अन्य गोपियों से प्रीति करते देख कर राधा ने मान किया। पर कृष्ण ने उनको मना लिया। फिर वही मानलीला होने लगी[1]। परन्तु फिर राधा ने कृष्ण को दूसरी गोपिकाओं से रमते देखा। फिर वह मान करके बैठ रहीं॥)



राग बिलावल॥

यह कहि कै त्रिय धाम गई। रिसनि भरी नख शिख लौं प्यारी जोवन गर्व मई॥ सखी चली गृह देखि दशा यह हठ करि बैठी जाइ। बोलत नहीं मान करि हरि सों हरि अंतर रहे आइ॥ यहि अंतर युवती सब आईं जहाँ श्याम घर द्वारे। प्रिया मान करि बैठि रही है रिस करि क्रोध तुम्हारे॥ तुम आवत अतिही झहरानी कहा करी चतुराई। सुनत सूर ए बात चकित पिय अतिहि गए मुरझाई॥ २०१६॥



राग बिहागरो॥

बहुरि नागरी मान कियो। लोचन भरि भरि डारि दिए दोउ अतितनु बिरह हियो॥ देखत ही देखत भए व्याकुल त्रिय कारण अकुलाने। वै गुन करत होत अब काचे कहियत परम सयाने॥ यह सुनि कै दूती हरि पठई देखि जाय अनुमान। सूर श्याम यह कहतहि पठई तुरत तजहि जेहि मान॥ २०२०॥

---

१ यहाँ सूरदास ने रासलीला अत्यन्त प्रतिभाशाली पदों में गाई है पर उनमें अश्लीलता का स्पर्श है। इसलिए उनको संग्रह में स्थान नहीं दिया।

राग केदारो ॥

दूती दई श्याम पठाइ । और मुख कछु बात न आवै तहाँ बैठी जाइ ॥ प्रिया मन परवाह नाहीं कोटि आवै जाहिं । सौति शाल सलाइ बैठी डुलति इत उत नाहिं ॥ भीति बिन कह चित्र रेखै रही दूती हेरि । सूर प्रभु आतुर पठाई करत मन अवसेरि ॥ २०२१ ॥



राग कान्हरो ॥

दूती मन अवसेर करै । श्याम मनावन मोहिं पठाई यह कतहूँ चितवै न टरै ॥ तब कहि उठी मान अति कीन्हों बहुत करी हरि कहौ करौ । ऐसे बिनवै नहीं जाति हैं अब कबहूँ जनि उनहिं ठगै ॥ मैं आवति यमुनातट ते व्रज सखी एक यह बात कही । सुनहु सूर मैं रहि न सकी गृह कही श्याम की प्रकृति सही ॥ २०२२ ॥



राग बिहागरो ॥

अब द्वारे ते टरत न श्याम । अब पर घर की सौंह करत है भूलि करौ नहिं ऐसे काम ॥ अब तू मान तजै जिनि उनसों इहै कहन आई तेरे धाम । अब समुझी औरैं समुझ्यो वै हम जब कहैं करैं तब ताम ॥ अब मोको यह जानि परी है काहू के न बसे कहुँ याम । सूरदास दूती की बाणी सुनति धरति मनही मन बाम ॥ २०२३ ॥



राग सूही ॥

जब दूती यह वचन कह्यो । तब जाने हरि द्वारे ठाढ़े उर

उमँग्यो रिस नहीं रह्यो ॥ काहे को हरि द्वार खड़े हैं किन राखे कहि जीभ गरै । मौन गहैं मैंही कहि आवौं तू काहे को रिसनि जरै ॥ चतुर दूतिका जान लई जिय अब बोली गयो मान सबै । सूर श्याम पै आतुर आई कहत आन की आन फबै ॥ २०२४ ॥



राग केदारो ॥

काहि मनाऊँ श्यामलाल बाल जोरैं नहिं डीठि । मुखहूँ जो बोलै तौ ममही की लहिये ऐसी तिहारी अहीठि ॥ अपनीसी बहुत कही सुनि सुनि उन सबै सही बारू की बूँद ताको कहा करै बसीठि । सूरदास के पिय प्यारी आपुहीं जाइ मनाय लीजै जैसी बयारि बहै तैसी ओढ़िए जू पीठि ॥ २०२५ ॥



राग केदारो ॥

ललन तुम्हारी प्यारी आजु मनायो न मानति । बूझि न परति जानि का बैठी कियो जु इत रीस तुमही लै कोटि अव-गुण गानति ॥ भरि भरि अँखियन नीर लेति पैढारति नाहीं अति रिस कँपति अधर फरकि करि भ्रकुटी तानति । सूरदास प्रभु रसिक शिरोमणि आपुनि चलिए तौ भली बानति ॥ २०२६ ॥



राग बिहागरो ॥

यह सुनि श्याम विरह भरे । कहुँ मुकुट कहुँ कटि पीतांबर मुरछि धरणि परे ॥ युवति भरि अँकवारि लीन्हों है कहा गिरि-धारि । आपुही चलि बाँह गहिये अंक लीजै नारि ॥ अतिहि

व्याकुल होत काहे धरौ धीरज श्याम। सूर प्रभु तुम बड़े नागर विवश कीन्हें काम॥ २०२६॥



राग रामकली॥

श्यामहि धीरज दै पुनि आई। वाणी इहै प्रकाशत मुख में व्याकुल बड़े कन्हाई॥ बारंबार नैन दोउ ढारत परे मदन जंजाल। धरणि रहे मुरझाइ बिलोके कहा कहौं बेहाल॥ बैठी आइ अनमनी ह्वैकै बारबार पछुतानी। सूर श्याम मिलि कै सुख देहिन जो तुम बड़ी सयानी॥ २०३०॥



राग रामकली॥

तुही प्रिया भावती नाहिन आन। निशि दिन मन मन करत मनोहर रसबस केलि निदान॥ ध्यान विलास दरश संभ्रम मिलि मानत मानिनि मान। अनुनय करत विवस बोलत हैं दै परि-रंभन दान॥ प्रथम समागम ते नानाविधि चरित तिहारे गान। सूर श्याम कह वर अंतर सुनि सुयश आपने कान॥ २०३१॥



राग केदारो॥

तेई नैन सुहावने हो नेक न भावत न्यारे री। पलक ओट प्राण जाते तेरे री ध्यान चकोर चंदा मेरे नैन चितवनि पर चेरे री॥ कमल कुरंग जु मधुप उपमा नहिं आवै चंचल रहत चितेरे री। सूरदास प्रभु की तुहि जीवनि कतहि करत त्रिय भेरे री॥ २०३४॥

राग सारंग ॥

राधे हरि तेरो नाम बिचारै । तुम्हरेइ गुण ग्रंथित करि माला रसना करसों टारै ॥ लोचन मूँदि ध्यान धरि दृढ़ करि नेक न पलक उघारै । अंग अंग प्रति रूप माधुरी उर ते नहीं बिसारै ॥ ऐसो नेम तुम्हारो पिय के कह जिय निठुर तिहारे । सूर श्याम मनकाम पुरावहु उठि चलि कहे हमारे ॥ २०३६ ॥



राग केदारो ॥

जाके दरशन को जग तरसत ताहि दरश नेक दै री । जाकी मुरली की ध्वनि सुर मुनि मोहे ता तन नेक चितै री ॥ शिव विरंचि जाको पार न पावत सो तो तेरे चरणन परसतु है री । सूरदास वस तीनि लोक जाके है सो तो बस माई री तू मुख ध्वनि सुनाइ मोहि लै री ॥ २०४१ ॥



राग सारंग ॥

अति हठ न कीजै री सुनि ग्वारि । हौं जु कहति तू सुन याते शठ सरै न एको द्वारि ॥ एक समय मोतियन के धोखे हंस चुनत है ज्वारि । कीजै कहा काम अपने को जीति मानिए हारि ॥ हौं जो कहति हौं मान सखी री तन को काज सँवारि । कामी कान्ह कुँवर के ऊपर सरवस दीजै वारि ॥ यह जोवन वर्षा की नदी ज्यों बोरति कतहि करारि । सूरदास प्रभु अंत मिलहुगी ए बीते दिन चारि ॥ २०४२ ॥



राग देवगंधार ॥

प्रिया पिय नाहिं मनायो मानै । श्रीमुख वचन मधुर मृदु-

वाणी मादक कठिन कुलिशहू ते जाने ॥ शोभित सहित सुगंध श्याम कच कलकपोल अरुझाने । मनहु विध्वंसज ग्रस्यो कलानिधि तजत नहीं बिनदाने ॥ बालभाव अनुसरति भरति दृग अग्र अंशुकन आनै । जनु खंजरीट युगल जठरातुर लेत सुभष अकुलानै ॥ गोरेगात लसत जो असितपट और प्रगट पहिचानै । नैन निकट तार्टक की शोभा मंडल कविन बखानै ॥ मानो मन्मथ फंद त्रास ते फिरत कुरंग सकानै । नासापुटनि सकोचति लोचति बिकट भ्रुकुटि धनु तानै ॥ जनु शुक निकट निपट शर साये षटपट सुभट पराने । जनु खद्योत चमक चलि शंकित निशि तिमिर हिराने ॥ यह सुनिकै अकुलाइ चले हरि कृत अपराध क्षमानै । सूरदास प्रभु मिले परस्पर मानिनि मिलि मुसुकाने ॥ २०५३ ॥



राग धनाश्री ॥

मानि मनायो मोहन री सकुच समेति चली उठि आतुर वन की गैल गही । बिधिमुख निरखि विमुख करि लोचन पुनि बिधुवदन चही ॥ दरशत परसत रूप आज निज भूमिनख लेखि कही । पुहुप सुरंग सारंग रिपु ओट देखी तब चतुर लही ॥ पानि सुपरसत शीश परस्पर मुसकाने तबही । तृण तोर्‌यो गुनजात जिने गुन काढ़ति रेख मही । सूर श्याम बहुरो मिलि विलसहु जाति अवधि अबही ॥ २०५४ ॥



राग सारंग ॥

चली बन मान मनायो मानि । अंचल ओट पुहुप दिखरायो धर्‌यो शीश पर पानि ॥ शचितन चितै नैन दोउ मूँदे मुख महँ

अँगुरी आनि। यह तौ चरित गुप्त की बातैं मुसकाने जियजानि॥ रेखा तीनि भूमि पर खाँची तृण तोर्‌यो करतानि। सूरदास प्रभु रसिक-शिरोमणि विलसहु श्याम सुजानि ॥ २०५५॥



राग गुड ॥

सैन दै कह्यो बनधाम चलिए श्याम इहै करिकाम अब आनि मिलिहौं। भावही कह्यो मन भाव दृढ़ राखिये दे सुख तुमहिं सँग रंग रलिहौं॥ जानि पिय अतिहि आतुर नारि आतुरी गई वन तीर शुद्धि हेती। सूर प्रभु हरष भए कुंजवन तहाँ गए सजत रतिसेज जे निगम नेती॥ २०५६॥



राग गुडमलार ॥

श्यामवन धाम मगवाम जोवै। कबहुँ रचि सेज अनुमान जिय जिय करत लता संकेत तर बकहुँ सोवै॥ एक छिन इक घरी घरी इक याम सम याम वासर हुने होत भारी। मनहिं मन साध पुरवत अंग भावकरि धन्य भुज धनि हृदय मिले प्यारी॥ कबहिं आवैं साँझ सोच अति जिय माँझ नैन खग इंदु ह्वै रहे दोऊ। सूर प्रभु भामिनी वदन पूरण चन्द्र रस परस मनहिं अकुलात वोऊ॥ २०५७॥



राग नटनारायणी ॥

दूती संग हरि के रही। श्याम अति आधीन ह्वैकै जाहु तासों कही॥ वेगि आनि मिलाइ मोको परम प्यारी नारि। देखि हरि तनुकाम व्याकुल चली मनहिं बिचारि॥ गई तहँ

जहँ करति राधा अंग अंग शृङ्गार । सूर के प्रभु नवल गिरिधर संग जानि विहार ॥ २०५८ ॥



राग बिहागरो ॥

राधा सखी देखि हरषानी । आतुर श्याम पठाई याका अंतर्गति की जानी ॥ वह शोभा निरखत अँग अँग की रही निहारि निहारि । चकित देखि नागरि मुख वाको तुरत शृङ्गार निसारि ॥ ताहि कह्यो सुख दै चलि हरि को मैं आवति हौं पाछे । वैसहि फिरी सूर के प्रभु पै जहाँ कुंज गृह काछे ॥ २०५९ ॥



राग केदारो ॥

दूती देखि आतुर श्याम । कुंजगृह ते निकसि धाए काम कीन्हों ताम ॥ बोलि उठी रसाल बानी धन्य तुव बड़भाग । अबहिं आवति बनी बाला किए मन अनुराग ॥ कहा बरनौं अंग शोभा नैनन देखों आज । सूर प्रभु के नेक धरौ धीरज करौ पूरण काज ॥ २०६० ॥



राग काफी ॥

सुनिहो मोहन तेरी प्राण प्रिया को वरणौं नंदकुमार । जो तुम आदि अंत मेरो गुण मानहु यह उपकार ॥ चंद्रमुखी भौंहैं कलंक बिच चंदन तिलक लिलार । मनु बेनी भुवंगिनि के परसत स्रवत सुधा की धार ॥ नैन मीन सरवर आनन में चंचल करत बिहार । मानों कर्णफूल चारा को रवकत बार-

बार ॥ बेसरि बनि सुभग नासा पर मुक्ता परम सुढार। मनों तिल फूल अधर बिंबाधर दुहुँ बिच बूँद तुषार ॥ सुठि सुठान ठोढ़ी अति सुंदर सुंदरता को सार। चितवत चुअत सुधारस मानों रहि गई बूँद मँझार ॥ कंठशिरी उर पदिक विराजत गजमोतिन को हार। दहिनावर्त्त देत मनो ध्रुव को मिलि नक्षत्र की मार ॥ कुच युग कुंभ शुंडिरोमावलि नाभि सु हृदय अकार। जनु जल सोखि लयो से सविता जोबन गज मतवार ॥ रत्नजटित गजरा बाजूबंद शोभा भुजन अपार। कूँदा सुभग फूल फूले मनो मदन विटप की डार ॥ छीन लंक कटि किंकिणि ध्वनि बाजत अति झनकार। मैार बाँधि बैठो जनु दूलह मन्मथ आसन तार ॥ युगल जंघ जेहरि जराव की राजत परम उदार। राजहंस गति चलति किशोरी अति नितंब के भार ॥ छिटकि रह्यो लहँगा रँग ता सँग तन सुखवत सुकुमार। सूर सुअंग सुगंध समूहनि भँवर करत गुंजार ॥ २०६२ ॥



(श्रीकृष्ण ने राधा तथा अन्य गोपियों के साथ अनेक रासलीलाएँ कीं[1])

राग मारू ॥

वृंदावन श्यामलघन नारि संग सोहै जू। ठाढ़े नवकुंजनतर परमचतुर गिरिधर वर राधा पति अरस परस राधा मन मोहै जू ॥ नीपछाँह यमुनतीर ब्रजललना सुभगभीर पहिरे अंग

---

१ रासलीला और तदन्तर्गत मानलीला का वर्णन अत्यंत प्रतिभाशाली कविता में हुआ है पर अश्लीलता का स्पर्श होने से यहाँ उद्धृत नहीं किया ॥

विविध चीर नवसत सब साजै। बार बार बिनय करति मुख निरखति पाँइ परति पुनि पुनि कर धरति हरति पिय के मन काजै॥ विहँसति प्यारी समीप घनदामिनि संग रूप कंठ गहति कहति कंत झूलन की साधा। यमुना पुलिन अतिही पुनीत पिय इहाँ हिंडोर रचौ सूरज प्रभु हँसति कहति ब्रज तरुनी राधा॥ २२७७॥



(तब श्रीकृष्ण ने हिंडोरलीला की।)

राग मलार॥

यमुना पुलिनहि रच्यो रंग सुरंग हिंडोरनो। रमत राम श्यामसंग ब्रजबालक सुख पावत हँसि बोलनो॥ द्वै खंभ कंचन के मनोहर रत्नजड़ित सुहावनो। पटली बिच विद्रुम लागे हीरा-लाल खचावनो॥ सुंदर डाँड़ी चुनी बहुत लायो कोटिक मदन लजावनो। मरुवा मयारि पिरोजालाल लटकत सुंदर सुढिर ढरावनो॥ मोतिनहिं झालरि झूमका राजत बिच नीलमणि बहुभावनो। पंच रंग पाट कनक मिलि डोरी अतिही सुघर बनावनो॥ स्फटिक सिंहासन मध्य राजत हाटक सहित सजा-वनो। हीरालाल प्रवाल पिरोजा पंगति बहु मणि पचित पचा-वनो॥ मनो सुरपुर तेहि सुरपति पठइ दियो पठावनो। विश्व-कर्मा सुतिहार श्रुतिधरि सुलभ सिलप दिखावनो॥ तेहि देखे त्रय ताप नाशै ब्रजबधू मन भावनो। सुनि श्यामा नवसत संग सखीलै बरसाने तेहि आवनो॥ जब आवत बलराम देख्यो मधु मंगल तन हेरनो। तब मधु मंगल कहि ग्वाल सों गैया हो भैया फेरनो॥ उठे संकर्षण करि शृंग वेणु ध्वनि धौरी काजरी धेनु

टेरनो। गैया गईं बगराइ सघन वृंदावन बंसीवट यमुनातट घेरनो॥ पहिरे चीर सुही सुरंग सारी चुहुचुहु चूनरी बहु-रंगनो। नील लहँगा लाल चोली कसि उबटि केसरि सुरंगनो॥ नवसत साज श्रृंगार नागरि मणिमय भूषण मंगनो। सादर मुख गोपाल लाल को चित्त चकोर रस सगनो॥ श्यामा श्याम मिले ललितादिहि सुख पावत मनमोहनो। गावत मलारी सुराग रागिनी गिरिधरन लाल छबि सोहनो॥ पचरंग बरन पाटहि पवित्रा बिच बिच फोंदा गोहनो। नाचति सखी संगीत परस्पर पहिरि पवित्रा सोहनो॥ माथे मोर मुकुट चंद्रिका राजहिं वृंदा वैजंती माल कंज प्रसावनो। कुंडल लोल कपोलन के ढिग मानो रवि प्रकाश करावनो॥ अधर अरुण छबि कोटि ब्रज द्युति शशि गुण रूप समावनो। मणिमय भूषण कंठ मुक्तावलि देखत कोटि अनंग लजावनो॥ सखि हरषि झूले वृषभानु नंदिनी शोभित सँग नँदलालनो। मणिमय नूपुर कुनित कंकन किंकिनी झनकारनो॥ ललिता विशाखा ब्रजवधू झुलावै सुरुचि सार सार को सारनो। गौर श्यामल नील पीत छबि मानोगन दामिनि संचारनो॥ तैसोइ नन्ही नन्ही बूँदनि बरषै मधुर मधुर ध्वनि घोरनो। जैसिहि हरी हरी भूमि हुलसावनी मोर मरालसुख होत न थोरनो॥ जहाँ त्रिविध मंद सुगंध शीतल पवन गवन सुहावनो। तहँ विहरत उठत सुवासु उड़त मधुप सुहावनो॥ चढ़ि विमानन सुर सुमन बरषैं जैजै ध्वनि नभ पावनो। श्यामा श्याम विह-रत वृंदावन सुरललना ललचावनो॥ शुक शेष शारद नारदा-दिक विधि शिव ध्यान न पावनो। सूर श्याम सुप्रेम उमँग्यो हरि यश सु लीला गावनो॥ २२८०॥

राग मलार ॥

गोपी गोबिंद के हिंडोरे झूलन आय। रंगमहल में जहँ नँदरानी खेलति सावनी तीज सुहाय॥ श्रीखंड खंभ मयारि सहित सु समर मरुवा बनाइ। तापर कितिक जू भ्रमत भँवरा डाँड़ी जटित जराइ॥ हेम पटुली मध्य हीरा पूजि रोचन लाइ। सखी विविध विचित्र राग मलार मंगल गाइ॥ नंदलाल पावसकाल दामिनि नागरी नव संग। बोलत जु दादुर अरु पपीहि करति कोकिल रंग॥ तहँ वरहा नृत्यत बचन मुख दुति अलिचकोर बिहग। बलि भाइ सहित गोपाल झूलत राधिका अर्धंग॥ जलभरित सरवर सघन तरुवर इंद्रधनुष सुदेश। घन श्याम मध्य सफेद बग जुरि हरित महि चहुँ देश॥ गगन गर्जत बीजु तरपति मधुर मेह असेश। झूलहिं ते विट्ठल श्याम श्यामा शीश मुकुलित केश॥ ताटंक तिलक सुदेश झलकत खचित चूनीलाल। अकृत विकृत वदन प्रहसित कमल नैन विशाल॥ करजु मुद्रिका किंकिनी कटि चाल गजगति बाल। सूर मुररिपु रंग रंगे सखी सहित गोपाल॥ २२६७॥



राग कान्हरो ॥

बिहरत कुंजन कुंजबिहारी। बग शुक बिहंग पवन थकि थिर रह्यो तान अलापत जब गिरिधारी॥ सरिता थकित थकित द्रुमवेली अधर धरति मुरली जब प्यारी। रवि अरु शशि देखो दोउ चोरन शंका गहि तब वदन उज्यारी॥ आभूषण सब साजि आपने थकित भईं व्रज की कुलनारी। सूरदास स्वामी की लीला अब जोवै वृषभानुकुमारी॥ २२६५॥

(कृष्ण ने वृन्दावन का विहार करते करते विद्याधर को शाप से मुक्त किया शंखचूड़ नामी राक्षस का वध किया[1])

(सवेरे जसोदा कृष्ण को जगाती है।)

राग बिलावल ॥

जागिए गोपाल लाल ग्वाल द्वार ठाढ़े। रैनि अंधकार गयो चंद्रमा मलीन भयो तारागण देखियत नहिं तरणि किरणि बाढ़े॥ मुकुलित भए कमलजाल गुंज करत भृंगमाल प्रफुलित वन पुहुप डार कुमुदिनि कुँभिलानी। गंधर्व गुण गान करत स्नान दान नेम धरत हरत सकल पाप वदत बिप्र वेद बानी॥ बोलत नंद बार बार मुख देखें तुव कुमार गाइन भई बड़ीबार वृंदावन जैबे। जननी कहति उठो श्याम जानत जिय रजनि ताम सूरदास प्रभु कृपालु तुमको कछु खैबे॥ २३२० ॥



(ग्वालों के साथ श्रीकृष्ण वन में गाय चराने गये। मुरली बजाने लगे। मुरली की तान पर मोहित होकर ग्वालों ने कहा :—)

राग गौरी ॥

छबीले मुरली नेक बजाउ। बलि बलि जात सखा यह कहि कहि अधर सुधारस प्याउ॥ दुर्लभ जन्म दुर्लभ वृन्दावन दुर्लभ प्रेम तरंग। ना जानिये बहुरि कब ह्वैहै श्याम तुम्हारो संग॥ बिनती करहिं सुबल श्रीदामा सुनहु श्याम दै कान। जा रस के सनकादि शुकादिक करत अमर मुनि ध्यान॥ कब पुनि गोप भेष ब्रज धरिहौ फिरिहौ सुरभिन साथ। कब तुम छाक छीनिकै

---

१ शंखचूड के वध के लिए देखिए श्रीमद्भागवत दशम स्कध पूर्वार्ध अध्याय ३४।

लल्लूजीलाल-कृत प्रेमसागर अध्याय ३५॥

खैहो हो गोकुल के नाथ ॥ अपनी अपनी कंध कमरिया ग्वालन दई डसाइ । सौंह दिवाइ नंदबाबा की रहे सकल गहिपाइ॥ सुनि सुनि दीन गिरा मुरलीधर चितए मुख मुसकाइ। गुणगंभीर गोपाल मुरलि कर लीन्हो तबहिं उठाय ॥ धरिकर बेनु अधर मन मोहन कियो मधुर ध्वनि गान । मोहे सकल जीव जल थल के सुनि वार्‌यो तन प्रान ॥ चपलनयन भृकुटी नासापुट सुनि सुंदर मुखबैन । मानहु नृत्यक भाव दिखावत गति लिये नायक मैन ॥ चमकत मोर चंद्रिका माथे कुंचित अलक सुभाल । मानहु कमलकोशरस चाखत उड़िआए अलिमाल ॥ कुंडल लोल कपोलन झलकत ऐसी शोभा देत । मानहु सुधासिंधु में क्रीड़त मकर पान के हेत ॥ उपजावत गावत गतिसुंदर अनाघात के ताल । सरवस दियो मदन मोहन को प्रेम हरषि सब ग्वाल ॥ शोभित वैजंती चरणनपर श्वासा पवन झकोरि । मानहु ग्रीव सुरसरि बहि आवत ब्रह्मकमंडलु फोरि ॥ डुलति लता नहि मरुत मंदगति सुनि सुंदर मुख बैन । खग मृग मीन अधीन भए सब कियो यमुन जल सैन ॥ झलमलात भृगु की पदरेखा सुभग साँवरे गात । मानो षट्‌विधु एकै रथ बैठे उदय कियो अधरात ॥ बाँके चरण कमल भुज बाँके अवलोकनि जु अनूप । मानहु कलपतरोवर बिरवा आनि रच्यो सुरभूप ॥ आयसु दियो गुपाल सबनको सुखदायक जियजान । सूरदास चरणनरज माँगत निरखत रूपनिधान ॥ २३२४ ॥



(इधर गोपियों ने मुरली का स्वर सुना ।)

राग टोड़ी ॥

मुरली सुनत देहगति भूली । गोपी प्रेम हिँडोरे झूली ॥

कबहूँ चकृत होहिं सयानी। स्वेदचलै द्रवै जैसे पानी॥ धीरज धरि इक इकहि सुनावहि। यह कहिकै आपुहि बिसरावहि॥ कबहूँ सुधि कबहूँ बिसराई। कबहूँ मुरली नाद समाई॥ कबहूँ तरुणी सब मिलि बोलैं। कबहूँ रहैं धीर नहिं डोलैं॥ कबहूँ चलैं कबहूँ फिरि आवैं। कबहूँ लाज तजि लाज लजावैं॥ मुरली श्याम सुहागिनि भारी। सूरदास प्रभु की बलिहारी॥ २३२७॥



राग मलार॥

बाँसुरी विधिहू ते प्रवीन। कहिए काहि आहि को ऐसो कियो जगत आधान॥ चारि वदन उपदेश विधाता थापी थिर चरनीति। आठ वदन गर्जित गर्वीली क्यों चलिए यह रीति॥ विपुल विभूति लई चतुरानन एक कमल करि थान। हरिकर कमल युगल पर बैठी बाढ़्यो यह अभिमान॥ एक बेर श्रीपति के सिखये उन लियो सब गुण गान। इनके तौ नँदलाल लाड़िलो लग्यो रहत नितकान॥ एक मराल पीठि आरोहण विधि भयो प्रबल प्रशंस। इन तौ सकल विमान किए गोपीजन मानस हंस॥ श्रीवैकुंठनाथ उर वासिनि चाहत जापद रेन। ताको मुख सुखमय सिंहासन करि वैसी यह पेन॥ अधर सधा पी कुल व्रत टार्‌यो नहीं सिखा नहिं नाग। तदपि सूर या नंदसुवन को याही सों अनुराग॥ २३४०॥



राग सारंग॥

बंसी वैर परी जु हमारी। अधर पियूष अंश तिनहीं को इन पियो सब दिन निज निज प्यारी॥ इकधौं हरि मन हरति

माधुरी दूजे वचन हरत अन्यारी। बाँस बंश हरि वेध महाशुभ अपने छेद न जानत कारी॥ सुन्यो सुपति जानी ब्रज के पति सो अपनाइ लियो रखवारी। सुने अनीत सूरज प्रभु केरी अधर गोपाल जे अपने धारी॥ २३४१॥



(मुरली इस उलहने का जवाब देती है।)

राग मल्लार॥

ग्वालिनि तुम कत उरहन देहु। पूछहु जाइ श्याम सुंदर को जिहि बिधि जुन्यो सनेहु॥ वारे ही ते भई विरत चित तज्यो गाँउ गुणगेह। एकहि चरण रहीहो ठाढ़ी हिम ग्रीषम ऋतु मेह॥ तज्यो मूल शाखा सो पत्रनि सोच सुखानी देहु। अगिनि शुलाकत मोन्यो न अंग मन बिकट बनावत वेहु॥ बकती कहा बाँसुरी कहि कहि करि करि तामस तेहु। सूर श्याम इहि भाँति रिझैकै तुमहु अधर रस लेहु॥ २३४३॥



(श्रीकृष्ण वन से व्रज को आये।)

राग गौरी॥

नटवर भेष धरे ब्रज आवत। मोर मुकुट मकराकृत कुंडल कुटिल अलक मुख पर छबि पावत॥ भ्रुकुटी बिकट नैन अति चंचल यह छबि पर उपमा इक धावत। धनुष देखि खजन विवि डरपत उडि न सकत उठिबे अकुलावत॥ अधर अनूप मुरलि सुर पूरत गौरी राग अलापि बजावत। सुरभीवृंद गोप बालक सँग गावत अति आनंद बढ़ावत॥ कनक मेखला कटि पीतांबर नृत्यत मंद मंद सुर गावत। सूर श्याम प्रति अंग माधुरी निरखत ब्रजजन के मन भावत॥ २३४६॥

राग कान्हरो ॥

ब्रज युवती सब कहत परस्पर बन ते श्याम बने ब्रज आवत। ऐसी छबि मैं कबहुँ न पाई सखी सखी सों प्रगट देखावत॥ मोर मुकुट सिर जलजमाल उर कटि तट पीतांबर छबि पावत। नव जलधर पर इंद्रचाप मानो दामिनि छबि बलाक घन धावत। जेहि जु अंग अवलोकन कीन्हों सो तन मन तहँही बिरमावत॥ सूरदास प्रभु मुरली अधर धरे आवत राग कल्याण बजावत॥ २३४७॥



राग गुणसारंग ॥

मेरे नयन निरख सचुपावैं। बलि बलि जाउँ मुखारबिंद की बनते पुनि ब्रज आवै॥ गुंजाफल अवतस मुकुटमणि वेणु रसाल बजावैं। कोटि किरणि मुख में जो प्रकाशत उडुपति बदन लजावैं॥ नटवर रूप अनूप छबीलो सबहिन के मनभावैं। सूरदास प्रभु चलन मंदगति बिरहिन ताप नसावैं॥ २३४८॥



राग गौरी ॥

बलि बलि मोहन मूरति की बलि बलि कुंडल बलि नैन विशाल। बलि भ्रकुटी बलि तिलक विराजत बलि मुरली बलि शब्द रसाल॥ बलि कुंडल बलि पाग लटपटी बलि कपोल बलि उर बनमाल। बलि मुसुकानि महामुनि मोहत बलि उपरैना गिरिधर लाल। बलि भुज सखा अंग पर मेले बलि कुलही बलि सुंदर चाल। बलि काछनी चोलना की बलि सूरदास बलि चरण गोपाल॥ २३४९॥

राग कल्याण ॥

माधोजू के तनु की शोभा कहत नाहिं बनि आवै । अचवत आदर लोचन पुट दोउ मनु नहि तृपिता पावै ॥ सघन मेघ अति श्याम सुभग वपु तड़ित बसन बनमाल । सिर शिखंड बनधातु बिराजत सुमन सुरंग प्रवाल ॥ कछुक कुटिल कमनीय सघन अति गोरज मंडित केश । अंबुज रुचिर पराग पर मानो राजत मधुप सुदेश ॥ कुंडल लोल कपोल किरिणि गण नैन कमल दल मीन । अधर मधुर मुसकानि मनोहर करत मदन मन हीन ॥ प्रति प्रति अंग अनंग कोटि छवि सुन सखी परम प्रवीन । सूर दृष्टि जहँ जहँ परति तही तही रहति है लीन ॥ २३६० ॥



राग देवगंधार ॥

इक दिन हरि हलधर सँग ग्वालन । प्रातचले गोधनवन चारन ॥ कोउ गावत कोउ वेणु बजावत । कोउ सिंगी कोउ नाद सुनावत ॥ खेलत हँसत गए वन महियाँ । चरन लगीं जित कित सब गैयाँ ॥ हरि ग्वालन मिलि खेलन लाये । सूर अमंगल मन के भाये ॥ २३६७ ॥



वृषभासुर वध ॥ राग सोरठ ॥

यहि अंतर वृषभासुर आयो । देखे नंदभुवन बालक सँग इहै घात है पायो ॥ गयो समाइ धेनुपति ह्वै कै मन में दाउँ बिचारे । हरि तबही लखि लियो दुष्ट को डोलत धेनु बिडारे ॥ गैयाँ बिडरि चलीं जित तित को सखा जहाँ तहाँ घेरैं । वृषभ शृंग सों धरणि उकासत बल मोहन तन हेरैं ॥ आवत चल्यो

श्याम के सन्मुख निदरि आपु अंग सारी। कूदि पर्यो हरि ऊपर आयो कियो युद्ध अति भारी॥ धाइ परे सब सखा हाँक दै वृषभ श्याम को मार्यो। पाउँ पकरि भुज सों गहि फेर्यो भूतल माँह पछार्यो॥ पर्यो असुर पर्वत समान ह्वै चकित भए सब ग्वाल। वृषभ जानिकै हम सब धाए यह कोऊ बिकराल॥ देखि चरित्र यशोमति सुत के मन में करत बिचार। सूरदास प्रभु असुर निकंदन संतन प्राण अधार॥ २३६८॥



राग गौरी॥

धन्य कान्ह धनि धनि ब्रज आए। आजु सबनि धरिकै यह खातो धनि तुम हमहि बचाए॥ यह ऐसो तुम अतिहि तनक से कैसे भुजन फिरायो। पलकहि माँझ सबनके देखत मार्यो धरणि गिरायो॥ अबलौं हम तुमको नहिं जान्यो तुमहिं जगत प्रतिपालक। सूरदास प्रभु असुर निकंदन ब्रज जन के दुख दालक[1]॥ २३६९॥



(इसके बाद कंस ने केशी और भौमासुर दो अन्य राक्षसों को कृष्ण को मारने के लिए भेजा। पर कृष्ण ने उन दोनो को मार डाला[2])।

(श्रीकृष्ण और गोपियाँ वसन्त का उत्सव मनाती है)।

राग वसंत॥

सुंदरवर संग ललना हो बिहरत वसंत समय ऋतु आइ।

---

१ वृषभासुर के वध के लिए देखिए लल्लूजीलाल-कृत प्रेमसागर अध्याय ३७॥

२ देखिए श्रीमद्भागवत दशम स्कंध पूर्वार्ध अध्याय ३७॥

सकल श्रृंगार बनाइ ब्रजसुंदरि कमलनयन पै लाइ॥ सरित शीतल बहत मंदगति रवि उत्तर दिशि आयो। अति रसभरी कोकिला बोली विरहिनि विरह जगायो॥ द्वादश वन रतनारे देखियत चहुँ दिशि टेसू फूले। मौरे अँबुवा अरु द्रुम बेली मधुकर परिमल भूले॥ इत श्रीराधा उत श्रीगिरिधर इत गोपी उत ग्वाल। खेलत फागु रसिक ब्रजवनिता सुंदर श्मामतमाल॥ खावासाखि जवारा कुमकुमा छिरकत भरि केसरि पिचकारी। उड़त गुलाल अबीर जोर तहँ विदिशदीप उजियारी॥ ताल पखावज बीन बाँसुरी डफ गावत गीत सुहाए। रसिक गोपाल नवल ब्रजवनिता निकसि चौहटे आये॥ भूमि भूमि भूमक सब गावति बोलति मधुरी बानी। देति परस्पर गारि मुदितमन तरुनी बाल सयानी॥ सुरपुर नरपुर नाग लोकपुर सबही अति सुखपायो। प्रथम वसंत पंचमी लीला सूरदास यश गायो॥ २३६१॥



राग वसंत॥

सुंदरवर संग ललना विहरी वसंत सरस ऋतु आई। लैलै छरी कुँवरि राधिका कमलनयन पर धाई॥ द्वादश वन रतनारे देखियत चहुँदिशि टेसू फूले। मौरे अँबुवा अरु द्रुम बेली मधुकर परिमल भूले॥ सरिता शीतल बहत मंदगति रवि उत्तरदिशि आयो। प्रेम उमँगि कोकिला बोली विरहिनी विरह जगायो॥ ताल मृदंग बीन बाँसुरि डफ गावत मधुरी बानी। देत परस्पर गारि मुदित ह्वै तरुणी बाल सयानी॥ सुरपुर नरपुर नागलोक जल थल क्रीड़ारस पावै। प्रथम वसंत पंचमी बाला सूरदास गुण गावै॥ २३६२॥

राग वसंत॥

खेलत नवलकिशोर किशोरी। नँदनंदन वृषभानुसुता चित लेत परस्पर चोरी॥ औरौ सखी जाल बिन शोभित सकल ललित तनु गावति होरी। तिनकी नख शोभा देखतही तरनि नाथहू की मति भोरी॥ एक गोपाल अबीर लिये कर इक चंदन एक कुमकुमा रोरी। उपरा उपर छिरकि रस सर भरि बहु कुल क्रीड़ा परमिति फोरी। देति अशीश सकल ब्रज युवती युग युग अविचर जोरी। सूरदास उपमा नहिं सूझत जो कछु कहो सु थोरी॥ २३६२॥



राग आसावरी॥

यमुना के तट खेलति हरि सँग राधा सहित सब गोपी हो। नंद को लाल गोवर्धन धारी तिनके नख मणि ओपी हो॥ चलहु सखी जैये तहाँ छिन जियरा न रहाय हो। वेणु शब्द मन हरि लियो नाना राग बजाइ हो॥ सजल जलद तनु पीतांबर छबि करमुख मुरली धारी हो। लटपटी पाग बने मनमोहन ललना रही निहारी हो॥ नैन सैन सों नैन मिले कर सों कर भुजा ठये हरि ग्रीवा हो। मध्यनायक गोपाल विराजत सुंदरता की सींवा हो॥ करत केलि कौतूहल माधव मधुरी वाणी गावै हो। पूरण-चंद्र शरद की रजनी संतन सुख उपजावै हो॥ सकल शृंगार कियो ब्रजबनिता नख शिख लोभलटानी हो। लोक वेद कुल धर्म केतकी नेक न मानत कानी हो॥ बलि जाउँ बल के वीर त्रिभंगी गोपिन के सुखदाई हो। सकल व्यथा जु हरी या तनु की हरि हँसि कंठ लगाई हो। माधव नारि नारि माधव की छिरकत चोवा चंदन हो॥ ऐसो खेल मच्यो उपरापरि नँदनंदन जग-

वंदन हो। ब्रह्मा इंद्र देव गण गंधर्व सबै एक रस बरषै हो। सूरदास गोपी बड़भागिन हरि सुख क्रीड़ा करषै हो॥ २४०० ॥



(इस प्रकार वसंत का उत्सव हुआ। कृष्ण के रूप पर मुग्ध होकर एक गोपी दूसरी से कहती है :—)

राग काफी ॥

अरी माई मेरो मन हरि लियो नंद के ढुटोना। चितवन में वाके कछु टोना॥ निरखत सुंदर अंग सलोना। ऐसी छबि कहूँ भई न होना॥ काल्हि रहे यमुनातट जौना। देख्यो खोरि साँकरी तौना॥ बोलत नहीं रहत वह मौना। दधिलै छीनि खात रह्यो दौना॥ घर घर माखन चोरत जौना। बाटन धावन देत है धौना॥ खेलत फाग ग्वाल सँग छौना। मुरली बजाय बिसरावत भौना॥ मो देखत अबहीं कियो गौना। नटवर अंग सुभसजे सजौना॥ त्रिभुवन में बस कियो न कौना। सूर नंदसुत मदन लजौना॥ २४२१ ॥



(इसके बाद सूरदास ने बहुत विस्तार से होली के फाग का अत्यंत सरस वर्णन किया है।)

(कृष्ण की बढ़ती हुई प्रभुता को देख कर कंस को बडी चिन्ता हुई।)

राग सारग ॥

मथुरा के निकट चरति हैं गाई। दुष्ट कंस भय करत मनहि मन ज्यों ज्यों सुनै कृष्ण प्रभुताई॥ शीश धुनै नृप रिस न मनै मन बहुत उपाइ करै। घर बैठेहि दशन अधरन धरि चंपै श्वास भरै॥ जानो असुर बाढ़िवो गोकुल ज्यों जन दीप पतंग परै। समुझै वचन कहे जे देवी अरु पहिले आकास परै॥

नारद गिरा सम्हारी पुनि पुनि सिर धुनि आपु सरै। कालरूप देवकीनंदन प्रगट भयो वसुधा के माहीं। कासों कहौं सूर अंतर की सुफलकसुत को वचन सु कही॥ २४६२॥



राग सोरठ॥

महर ढोटौना शात्रि रहै। जन्महि ते अपडाव करत हैं गुणि गुणि हृदय कहै॥ दनुजसुता पहिले संहारी पयपीवत दिन सात। गयो प्रतिज्ञा करि कागासुर आइ गिन्यो मुख छात॥ तृणा शकट छिन में संहारे केशी हतो प्रचारि। जे जे गए बहुरि नहिं देखे सबहिन डारे मारि॥ ज्यों त्यों करि इन दुहुँन सँहारौं बात नहीं कछु और। सूर नृपति अति सोच परो जिय यहै करत मनदौर॥ २४६३॥



राग रामकली॥

नंदसुत सहज बुलाइ पठाऊँ। श्याम राम अतिसुंदर कहियत देखन काज मँगाऊँ। जैहै कौन प्रेमकरि ल्यावै भेद न जानै कोइ। महर महरि सों हित करि ल्यावै महाचतुर जो होइ॥ इहि अंतर अक्रूर बुलायो अति आतुर महराज। सूर चलौ मनसोच बढ़ायो कौन है ऐसो काज॥ २४६४॥



राग धनाश्री॥

अति आतुर नृप मोहि बोलायो। कौन काज ऐसो अटक्यो हैं मन मन सोच बढ़ायो॥ आतुर जाइ पँवारि भयो ठाढ़ो कहो पँवरिआ जाइ। सुनत बुलाइ महलई लीनो सुफलकसुत गयो

धाइ ॥ कछु डर कछु जिय धीरज धारै गयो नृपति के पास। सूर सोच मुख देखि डेरानो ऊरध लेत उसाँस ॥ २४६५ ॥



राग मारू ॥

सोच मुख देखि अक्रूर भरमै। माथकर नाइ कर जोरि दोऊ रहे बोलि लीन्हों निकट बचन नरमै ॥ आपुही कंस तहाँ दूसरो कोउ नहीं त्रास अक्रूर जिय कहा कैहै। नृपति जिय सोच जान्यो हृदय आपने कहत कछु नहीं धौं प्राण लैहै ॥ निकट बैठारि सब बात तेई कही गए जे भाषि नारद सवारैं। सूर सुत नंद के हृदय शालत सदा मंत्र यह उनहिं अब बनै मारैं ॥ २४६६ ॥



राग मारू ॥

सनो अक्रूर यह बात साँची करौ आजु मोहिं भोरते चेत नाहीं। श्याम बलराम यह नाम सुनि ताम मोहिं काहूँ पठावहुगे जाइ तिनहि पाहीं ॥ प्रीति करि नंद सों सहज बातैं कहै तुरत लै आइ तुहुँ नृपति बोले। देखिबे की साध बहुत सुनि गुण बिपुल अतिहि सुंदर सुने दोउ अमोले ॥ कमल जब ते उरग पीठि ल्याए सुने वैहैं बकशीश अब उनहि दैहै। सूर प्रभु श्याम बल-राम को डर नहीं वचन इनके सुनत हरष पैहैं ॥ २४६७ ॥



राग सोरठ ॥

यह वाणी कहि कंस सुनाइ। तब अक्रूर हिए भयो धीरज डरडार्‍यो बिसराइ ॥ मन मन कहत कहा चित बैठो सुनि सुनि वैसी बानी। अपनो काल आपुही बोल्यो इनकी मीचु तुलानी ॥

हरषि वचन अक्रूर कहे तब तुरत काज यह कीजै । सूर जाहि आयसु करि पाऊँ भोर पठै तेहि दीजै ॥ २४६८ ॥



राग बिलावल ।

तब अक्रूर कहत नृप आगे धन्य धन्य नारद मुनि ज्ञानी । बड़े शत्रु ब्रज में दोउ हमको सुनहु देव नीकी चित आनी ॥ महाराज तुम सरि को ऐसो जाते जगत यह चलत कहानी । अब नहिं बचै क्रोध नृप कीन्हों जैहै छुनकि तवा ज्यों पानी ॥ यह सुनि हर्ष भयो गर्वानो जबहि कही अक्रूर सयानी । कालि बुलाइ सूर दोउ मारौं बार बार यह भाषत बानी ॥ २४६९ ॥



राग बिलावल ॥

इहै मंत्र अक्रूर सों नृप रैनि बिचारी । प्रात नंदसुत मारिहौं यह कह्यो प्रचारी ॥ करि बिचार युग यामलौं मंदिरहि पधारे । कह्यो जाहु अक्रूर सों भए आलस भारे ॥ तुरत जाइ पलका पर्‍यो पलकनि झपकानो । श्याम राम स्वपने खड़े तहाँ देखि डरानो ॥ अति कठोर दोउ काल से भरम्यो अति झझक्यो । जागि पर्‍यो तहँ कोउ नहीं जियही जिय सुसक्यो ॥ चौंकि पर्‍यो सँग नारि के रानी सब जागीं । उठीं सबै अकुलाइ कै तब बूझन लागीं ॥ महाराज झझके कहा सपने कह शंके । सूर अतिहि व्याकुल भए घर घर उर दंके ॥ २४७० ॥



राग बिलावल ॥

महाराज क्यों आजुही स्वप्ने झझकाने । पौढ़े जबहीं आनिकै देखे बिलखाने ॥ कहा सोच ऐसो पर्‍यो ऐसे भूमि को । काकी

सुधि मन मे रही कहिय अपजी को ।। रानी सब व्याकुल भईं कछु भेद न पावैं । तब आपुन सहजहि कह्यो वह नही जनावैं ।। सावधान करि पौरिआ प्रतिहार जगायो । सूर त्रास बल श्याम के नहिं पलक लगायो ।। २४७१ ।।



नंदस्वप्न ॥ राग बिलावल ॥

उत नंदहि स्वप्नो भयो हरि कहूँ हिराने । बल मोहन कोउ लै गयो सुनि कै बिलखाने ।। ग्वाल बाल रोवत कहैं हरितौ कहुँ नाही । सगहि सँग खेलत रहे यह कहि पछिताही ॥ दूत एक सँग लै गयो बलराम कन्हाई । कहा ठगौरीसी करी मोहनी लगाई ॥ वाही के दोउ ह्वै गए हम देखत ठाढ़े । सूरज प्रभु वै निठुर ह्वै अतिही गए गाढ़े ॥ २४७२ ॥



राग सोरठ ॥

व्याकुल नंद सुनत हैं बानी । धरणी मुरछिपरे अति व्याकुल विवस यशोदा रानी ॥ व्याकुल गोप ग्वाल सब व्याकुल व्याकुल ब्रज की नारी । व्याकुल सखा श्याम बल के जे व्याकुल अति जियभारी ॥ धरणी परत उठत पुनि धावत इहिअंतर नँद जागे । धकधकात उर नयन स्रवत जल सुत अँग परसन लागे ॥ सुसुकत सुनि यशुमति अतुराई कहा महर भ्रम पायो । सूर नंदघरनी के आगे यह भ्रम नहीं सुनायो ॥ २४७३ ॥



राग कल्याण ॥

एक याम नृप[1] को निशि युगवत भई भारी । आपुनहू जाग्यो

---

१ नृप को अर्थात् कंस को ।

संग जागीं सब नारी ॥ कबहुँ उठत बैठत पुनि कबहूँ सेज सोवै। कबहुँ अजिर ठाढ़े ह्वै ऐसे निशि खोवै ॥ बार बार जोतिक सों घरी बूझि आवै। एक जाइ पहुँचै नहीं अरु एक पठावै॥ जोतिक जिय त्रास पर्‌यो कहा प्रात करिहै। सूर क्रोध भर्‌यो नृपति काके सिर परि है ॥ २४७४ ॥



राग कल्याण ॥

व्याकुल ते रैनि कटी बची घरी बाकी। एक एक छिन याम याम ऐसी गति ताकी ॥ को जैहै ब्रज को मन करै केहि पठाऊँ। जासों कहि नंदसुवन आजु ही मँगाऊँ ॥ अब नहिं राखौं उठाइ वैरी नहिं नान्हों। मारौं गज पै रुँदाइ मनहि यह अनुमान्हो ॥ पठऊँ तौ अक्रूरहि को ऐसो नहिं कोऊ। सूर जाइ गोकुल ते ल्यावै ढिग दोऊ ॥ २४७५ ॥



राग बिलावल।

अरुणोदय उठि प्रात ही अक्रूर बोलाए। आपु कह्यो प्रतिहा-रसों इकसनि शत धाये ॥ सोवत जाइ जगाइकै चलिए नृप पासा। उहै मंत्र मन जानिकै उठि चले उदासा ॥ नृपति द्वार ही पै खरो देखत सिर नायो। कहि खवास को सैन दै सिर पाँव मँगायो ॥ अपने कर करिकै दियो सुफलकसुत लीन्हों। लै आवहु सुत नंद के यह आयसु दीन्हों ॥ मुख अक्रूर हर्षित भयो हृदय बिलखानो। असुरत्रास अति जिय पर्‌यो कह कहै सयानो ॥ तुरतहि रथ पलनाइकै अक्रूरहि दीन्हों। आयसु सिर पर मानिकै आतुर ह्वै लीन्हों ॥ बिलम करौ जिनि नेकहूँ अबहीं ब्रज जाहू। सूर काज करि आवहू जिनि रैनि बसाहू ॥ २४७६ ॥

राग कल्याण ॥

तुम बिन मेरे हितू न कोऊ। सुन अक्रूर पुरत नृप भाषित नंदमहर सुत ल्यावहुँ दोऊ॥ सुनि रुचि वचन रोम हरषित गात प्रेमपुलकि मुख कछू न बोल्यो। यह आयसु पूरव सुकृत वस सो काहूपै जाहि न तौल्यो॥ मौन देखि परिहँसि नृप भीनो मनहुँ सिंह गो आय तुलानो। वहि क्रम बिनु द्वै सुत अहीर के रे कातर कत मन शंकानो॥ आयसु पाइ सुष्ट रथ कर गहि अनुपम तुरंग साजि धृत जोह्यो। सूर श्याम की मिलनि सुरति करि मनु निरधन धन पाइ विमोह्यो॥ २४७८॥



(अक्रूर ने कंस से कहा।—) ॥ राग बिलावल ॥

सुनहु देव इक बात जनाऊँ। आयसु भयो तुरत लै आवहु ताते फिरिहि सुनाऊँ॥ बल मोहन बनजात प्रात ही जो उनको नहि पाऊँ। रैहौं आजु नंदगृह बसिकै कालि प्रात लै आऊँ॥ यह कहि चल्यो नृपतिहु मान्यो सुफलकसुत रथ हाँक्यो। सूरदास प्रभु ध्यान हृदय धरि गोकुल तनको ताक्यो॥ २४७९॥



(अक्रूर गोकुल को चले।) ॥ राग टोड़ी ॥

सुफलकसुत[1] मन पर्‍यो बिचार। कंस निर्वंश होइ हत्यार॥ डगर माँझ रथ कीन्हों ठाढ़ो। सोच पर्‍यो मन मन अति गाढ़ो॥ मंत्रकियो निशि मेरे साथ। मोहिं लेन पठयो व्रजनाथ॥ गज मुष्टिक चाणूर निहार्‍यो। व्याकुल नयन नीर दोउ ढार्‍यो॥ अति बालक बलराम कन्हाई। कहा करौं

---

१ अक्रूर के पिता का नाम सुफलक था।

नहिं कछू बसाई ॥ कैसे आनि देउँ मैं जाई । मो देखत मारैं दोउ भाई ॥ मारैं मोंहि बंदि लै बौलै । आगे को रथ नेक न ठेलै ॥ सूरदास प्रभु अंतर्यामी । सुफलकसुत मन पूरण-कामी ॥ २४८० ॥



राग कल्याण ॥

सुफलकसुत हृदय ध्यान कीन्हो अविनासी । हरन करन समरथ वै सब घट के वासी ॥ धन्य धन्य कंसहि कहि मोहिं जिनि पठायो । मेरो करि काज मीच आपु को बोलायो ॥ यह गुणि रथ हाँकि दियो नगर पऱ्यो पाछे । कछु सकुचत कछु हरष चल्यो स्वाँग काछे ॥ बहुरि सोच पऱ्यो दरश दक्षिण मृगमाला । हरष्यो अक्रूर सूर मिलिहो गोपाला ॥ २४८१ ॥



राग टोड़ी ॥

दक्षिण दरश देखि मृगमाला । अति आनंद भयो तेहि काला ॥ बहु दिन के मेटौं जंजाला । यहि वन मिलिहैं मोहिं गोपाला ॥ श्याम जलद तनु अंग रसाला । ता दरशन ते होउँ निहाला ॥ बहुदिन के मेटो जंजाला । मुख शशि नैन चकोर विहाला ॥ तनु त्रिभंग सुंदर नँदलाला । विविध सुमन हृदय शुभमाला ॥ सारसहू ते नैन विशाला । निहचै भयो कंस को काला ॥ सूरज प्रभु त्रिभुवन प्रतिपाला ॥ २४८२ ॥



राग कान्हरो ॥

आजु वै चरण देखिहौं जाय । जे पद कमल प्रिया श्रीउर से नेक न सके भुलाइ ॥ जे पद कमल सकल मुनि दुर्लभ मैं देखों

सतिभाव। जे पद कमल पितामह ध्यावत गावत नारद जाव॥ जे पद कमल सुरसरी परसे तिहूँ भुवन यश छाव। सूर श्याम पद कमल परसिहौं मन अति बढ़्यो उछाव॥ २४८४॥



राग नट॥

जब सिर चरण धरिहौं जाइ। कृपा करि मोहिं टेकि लेहैं करन हृदय लगाइ॥ कुशल अंग पुलकित वचन गदगद मनहि मन सुखपाइ। प्रेम घट उच्छलित ह्वैहै नैन अंश बहाइ॥ कुशल बूझत कहि न सकिहौं बार बार सुनाइ। सूर प्रभु गुण ध्यान अटक्यो गयो पंथ भुलाइ॥ २४८६॥



राग बिलावल॥

मथुरा ते गोकुल नहिं पहुँचे सुफलकसुत को साँझ भई। हरि अनुराग देह सुधि बिसरी रथवाहन की सुरति गई॥ कहाँ जात किन मोहिं पठायो को हों मै यहि सोच पऱ्यो॥ दशहू दिशा श्याम परिपूरण हृदय हरष आनंद भऱ्यो॥ हरि अंतर्यामी यह जानी भक्तवछल बानो जिनको। सूर मिले जो भाव भक्त के गहर नही कीन्हों तिनको॥ २४८७॥



राग कल्याण॥

वृंदावन ग्वालन सँग गैयन हरि चारै। अपने जनहेत काज ब्रज को पगे धारै॥ यमुना करि पार गाय श्याम देत हेरी। हलधर सँग सखा लए सुरभी गण घेरी॥ धेनु दुहुन सखन कह्यो आपु दुहन लागे। वृंदावन गोकुल बिच यमुना के आगे॥

भक्त हेतु श्रीगोपाल यह सुख उपजायो। सूरज प्रभु को दरशन सुफलकसुत पायो॥ २४८८॥



राग कल्याण॥

सुफलकसुत हरि दर्शन पायो। रहि न सक्यो रथ पर सुख व्याकुल भयो उहै मन भायो॥ भू पर दौरि निकट हरि आयो चरणन चित्त लगायो। पुलक अंग लोचन जलधारा श्रीगृह सिर परसायो॥ कृपासिंधु करि कृपा मिले हँसि लियो भक्त उर लाइ। सूरदास यह सुख सो जानै कहौं कहा मैं गाइ॥ २४८९॥



राग गुंडमलार॥

हरषि अक्रूर हरि हृदय लगायो। मिले तेहि भाव जो भाव चितवनि चित्त भक्तवत्सल नाम तो कहायो॥ कुशल बूझत प्रसन्न वचन अमृत रस श्रवण सुनि पुलक अंग अंग कीन्हों। चितै आनन चारु बुद्धि उर विस्तार दनुज अब दलौं यह ज्वाब दीन्हों॥ भेदही भेद सब दई वाणी कही तुरत बोले हेतु इहै वाके। सूर संग श्याम बलराम अक्रूर सह निपट अति प्रेम के पंथ थाके॥ २४९०॥



राग बिलावल॥

श्याम इहै कहिकै उठे नृप हमैं बोलाये। अतिहि कृपा हम पर करी जो कालि मँगाये॥ संग सखा यह सुनतही चकृत मन कीन्हों। कहा कहत हरि सुनतहौं लोचन भरि लीन्हों॥ श्याम

सखन मुख हेरिकै तब करी सयानी। कालि चलौ नृप देखिए शंका जिय आनी॥ हर्ष भए हरि यह कहे मन मन दुखभारी। सूर संग अक्रूर के हरि ब्रज पग धारी॥ २४११॥



राग रामकली॥

अति कोमल बलराम कन्हाई। दुहुँनि गोद अक्रूर लिए हँसि सुमनहु ते हरुआई॥ ग्वाल संग रथ लीन्हों आए पहुँचे ब्रज की खोरी। देखत गोकुल लोग जहाँ तहँ नंद उठे सुनि शोरी॥ निशि सपने को तृषित भए अति सुन्यो कंस को दूत। सूर नारि नर देखन धाए घर घर शोर अकूत॥ २४१२॥



राग गुंडमलार॥

कंस नृप अक्रूर ब्रज पठाए। गए आगे लेन नंद उपनंद मिलि श्याम बलराम उन हृदय लाए॥ उतरि सदन मिल्यो देखि हरष्यो हियो सोच मन यह भयो कहाँ आयो। राज के काज को नाम अक्रूर यह किधौं कर लेन कौ नृप पठायो॥ कुशल तेहि बूझि लै गए ब्रज निजधाम श्याम बलराम मिलि गए वाको। चरण पखराइकै सुभग आसन दियो विविध भोजन तुरत दियो ताको॥ कियो अक्रूर भोजन दुहुँन संग लै नर नार ब्रज लोग सबै देषै। मनो आप संग देखि ऐसे रंग मनहि मन परस्पर करत मेषै॥ सारि जेवनार अचवन कै भए शुद्ध दियो तंमोर नँद हर्ष आगे। सेज बैठारि अक्रूर सों जोरि कर कृपा करी तब कहन लागे॥ श्याम बलराम को कंस बोले हेत सों नंद लै सुतन हम पास आवैं। सूर प्रभु दरश की साध अतिही करत आजुही कह्यो जिनि गहरु लावैं॥ २४१३॥

राग कान्हरो ॥

सुन्यो ब्रज लोग कहत यह बात। चकृत भए नारि नर ठाढ़े पाँच न आवै सात॥ चकित नंद यशुमति भई चकृत मनहीं मन अकुलात। दैदै सैन श्याम बलरामहि सबै बुलावत जात॥ पारब्रह्म अविगति अविनाशी माया रहित अतीत। मनों नहीं पहिचानि कहूँ की करत सबै मनभीत॥ बोलत नहीं नेक चितवत नहिं सुफलकसुत सों पागे। सूर हमहिं नृपहित करि बोले इहै कहत ता आगे॥ २४६४॥



राग बिहागरो ॥

व्याकुल भए ब्रज के लोग। श्याम मन नहिं नेक आनत ब्रह्म पूरण योग॥ कौन माता पिता को है कौन पति को नारि। हँसत दोउ अक्रूर के संग नवल नेह बिसारि॥ कोउ कहत यह कहाँ आयो क्रूर याको नाम। सूर प्रभु लै प्रात जैहै और संग बलराम॥२४६५॥



गोपिका-विरह-अवस्था-वर्णन ॥ राग बिहागरो ॥

चलन चलन श्याम कहत कोउ लेन आयो। नंदभवन भनक सूनी कंस कहि पठायो॥ ब्रज की नारि गृह बिसारि व्याकुल उठिधाई। समाचार बूझन को आतुर ह्वै आईं॥ प्रीति जानि हेतु मानि बिलखि बदन ठाढ़ी। मानहु वै अति विचित्र चित्र लिखित काढ़ी॥ ऐसी गति ठौर ठौर कहत न बनि आवै। सूर श्याम बिछुरे दुख विरह काहि भावै॥ २४९६॥

राग कान्हरो ॥

चलत जानि चितवत व्रज युवती मानहु लिखी चितेरे। जहाँ सू तहाँ यकटक मग जोवत फिरत न लोचन कोरे॥ बिसरि गई गति भाँति देह की सुनत न श्रवणन टेरे। मिलि जु गये मनोपय पानी है निबरत नहीं निवेरे॥ लागे संग मतंग मत्त ज्यों घिरत न कैसेहु घेरे। सूर प्रेम अंकुर आशा जिय दै बहिं इत उत हेरे॥ २४६७॥



राग सारंग।

सब मुरझानी री चलिबे की सुनत भनक। गोपी ग्वाल नैन जल ढारत गोकुल ह्वै रह्यो मूँद्चनक॥ यह अक्रूर कहाँ ते आयो दाहन लाग्यो देह दनक। सूरदास स्वामी के बिछुरत घट नहिं रैहैं प्राण तनक॥ २४६८॥



राग रामकली॥

अनल ते विरह अग्नि अति ताती। माधो चलन कहत मधुवन को सुने तपै अतिछाती॥ न्याइहि नागरि नारि विरहवस जरत दिया ज्यों बाती। जे जरि मरे प्रगट पावक परि ते त्रिय अधिक सुहाती॥ ढारति नीर नयन भरि भरि सब व्याकुलता मद माती। सूर व्यथा सोई पै जानै श्याम सुभग रँगराती॥२४६६॥



राग आसावरी॥

श्याम गए सखि प्राण रहैंगे। अरसपरस ज्यों बातैं कहि-यत तैसेहि बहुरि कहैंगे॥ इंदुवदन खग नैन हमारे जानति

और चहैंगे। बासर निशि कहुँ होत न न्यारे बिछुरन हृदय सहैंगे॥ एक कहौ तुम आगे वाणी श्याम न जाहिं रहैंगे। सूरदास प्रभु यशुमति को तजि मथुरा कहा लहैंगे॥ २५००॥



राग मलार॥

हरि मोसों गौन की कथा कही। मन गह्वर मोहिं उतर न आयो हौं सुनि सोच रही। सुनि सखि सत्यभाव की बातैं विरह वेलि उलही। करवत चिह्न कहै हरि हमकों ते अब होत सही॥ आजु सखी सपने मैं देख्यो सागर पालि ढही। सूरदास प्रभु तुम्हरो गवन सुनि जल ज्यों जाति बही॥ २५०१॥



राग मारू॥

बहुत दुख पैयतु है यह बात। तुम जु सुनतहौ माधो मधुबन सुफलकसुत सँग जात॥ मनसिज व्यथा दहति दावानल उपजी है या गात। सूधौ कहौ तब कैसे जीहै निज चलिहौं उठि प्रात॥ जो पै यह कियो चाहत है मीचु विरह शरघात। सूर श्याम तौ तब कत राखी गिरिकर लै दिन सात॥ २५०२॥



अक्रूरवचन॥ राग रामकली॥

देखि अक्रूर नरनारि बिलख्यो। धनुभँजन यज्ञहेत बोले इनहि और डर नहीं सबन कहि संतोख्यो॥ महरि व्याकुल दौरि पाँइ गहि लै परी नंद उपनंद संग जाहु लैके। राज को अंश लिखि लेउ दूनो देउँ मैं कहा करौं सुत दुहुँनि देकै॥ कहति ब्रजनारि नैनन नीर ढारिकै इनन को काज मथुरा कहा है।

सूर नृप क्रूर अक्रूर क्रूरै भयो धनुष देखन कहत कपटी महा है ॥ २५०३ ॥



यशोदाविनय अक्रूर प्रति ॥ राग सारंग ॥

मेरे कमलनयन प्राण ते प्यारे। इनको कौन मधुपुरी बैठत राम कृष्ण कोऊ जन वारे ॥ यशुदा कहै सुनहु सुफलकसुत मैं पयपान जतन करि पारे। ए कहा जानहिं सभा राजकी ए गुरुजन विप्रौ न जुहारे ॥ मथुरा असुर समूह बसत हैं करकृपाण योधा हथियारे। सूरदास स्वामी ए लरिका इन कब देखे मल्ल अखारे ॥ २५०४ ॥



राग सारंग ॥

ब्रजवासिन के सरवस श्याम । रे अक्रूर क्रूर बड़वारे जीको जी मोहन बलराम ॥ अपनो लाग लेहु लेखो करि जो कछु राज अंश को दाम। और महरलैं संग सिधारो नगर कहा लरि-कन को काम। संतत साध परम उपकारी सुनियत बड़ो तुम्हारो नाम ॥ २५०५ ॥



यशोदावचन सखी प्रति ॥ राग मलार ।

सखी री हौं गोपालहि लागी। कैसे जियें वदन बिन देखे अनुदिन खिन अनुरागी ॥ गोकुल कान्ह कमल दल लोचन हरि सबहिन के प्राण। कौन न्याव अक्रूर कहत हैं कहै मथुरा लै जान ॥ २५०६ ॥

राग मलार ॥

तुम अक्रूर बड़े के ढोटा अति कुलीन मतिधीर। बैठत सभा बड़े राजन के जानत हो परपीर ॥ लीजै लागु यहाँ ते अपनो जो कछु राज को अंश। नगर बोलि ग्वालन के लरिका कहा करैगो कंस ॥ मेरे तो रामै धन माई माधोई सब अंग। बहुरि सूर हौं का पै माँगों पैठि पराए संग॥ २५०७ ॥



राग रामकली ॥

मेरो माई निधनी को धन माधो। बारंबार निरखि सुख मानत तजत नहीं पल आधो॥ छिन छिन परसत अंग मिलावत प्रेम प्रगट है लाधौ। निशि दिन सुचंद्र चकोर की छबि जनु मिटै न दरश की साधौ॥ करिहै कहा अक्रूर हमारो दैहै प्राण अगाधो। सूर श्याम घनहौं नहिं पठऊँ अबहिं कंस किन बाँधौ॥ २५०८॥



राग सारंग ॥

मनहु प्रीति अति भई पात री। अनुज सहित चले राम हमारे कमलनैन देखौं मिलि न जात री॥ अरस परस कछु समुझत नाहीं या ब्रजपोच भलौ की बात री। कंचन काँच कपूर कपट खरी हीरा सम कैसे पोनि बिकात री॥ वे दोउ हंस मानसरोवर के छील रे क्षुद्र मलीन कैसे न्हात री। सूर श्याम मुक्ताफल भोगी को रति करत ज्वारिकन खात री॥ २५०९॥



राग सोरठ ॥

नहिं कोई श्यामहि राखै जाइ। सुफलकसुत बैरी भयो मोको

कहति यशोदा माइ ॥ मदनगुपाल विना घर आँगन गोकुल काहि सुहाइ । गोपी रही ठगीसी ठाढ़ी कहा ठगोरी लाइ ॥ सुंदर श्याम राम भरि लोचन विन देखे दोउ भाइ । सूर तिनहि लै चले मधुपुरी हृदय शूल बढ़ाइ ॥ २५१० ॥



यशोदावचन श्रीकृष्णप्रति ॥ राग सोरठ ॥

गोपालराइ केहि अवलंबौ प्राण । निठुर वचन कठोर कुलिश से कहत मधुपुरी जान ॥ क्रूर नाम गति क्रूर क्रूर मति काहे को गोकुल आयो । कुटिल कंस नृप वैर जानिकै हरि को लेन पठायो ॥ जिहि मुख तात कहत ब्रजपति सों मोहिं कहत है माइ । तिहि मुख चलन सुनत जीवतिहैं विधि सों कहा बसाइ ॥ को करकमल मथानी धरिहै को माखन अरि खैहै । वर्षत मेघ बहुरि ब्रजऊपर को गिरिवर कर लै है । हौं बलि बलि इन चरण कमल की इहँई रहौ कन्हाई ॥ सूरदास अवलोकि यशोदा धरणि परी मुरझाई ॥ २५१२ ॥



राग सोरठ ॥

मोहन इतनो मोहिं चित धरिये । जननी दुखित जानिकै कबहूँ मथुरागमन न करिये ॥ यह अक्रूर क्रूर कृत रचिकै तुमहिं लेन है आयो । तिरछे भए कर्म कृत पहिले विधि यह ठाठ बनायो ॥ बार बार जननी कहि मोसों माखन माँगत जौन । सूर तिनहिं लेबे को आए करिहौ सूनो भौन ॥ २५१३ ॥

राग सूही ॥

सुफलकसुत के सग ते कहुँ हरि होत न न्यारे। बार बार जननी कहै मोहिं न तजौ दुलारे॥ कहा ठगोरी यहि करी मेरे बालक मोह्यो। हाहा करि करि मरतिहौं मो तन नहिं जोह्यो॥ नंद कह्यो परबोधिकै सँग मैं लै जैहौं। धनुषयज्ञ देखराइकै तुरतहि लै ऐहौं। घर घर गोपन सों कह्यो कर भार जुरावहु। सूर नृपति के द्वार को उठि प्रात चलावहु॥ २५१४॥



नंदवचन यशोदा प्रति॥ राग मलार॥

भरोसो कान्ह कोहै मोहिं। सुन यशोदा कंस भय ते तू जनि व्याकुल होहि॥ पहिले पूतना कपट करि आई स्तननि विष पोहि। वैसी ज्यों प्रबल दुदिन कं बालक मारि देखावत तोहि॥ अघ बक धेनु तृणावर्त केशी को बल देख्यो जोहि। सातदिवस गोवर्धन राख्यो इंद्र गयो द्रपुछोहि॥ सुनि सुनि कथा नंदनंदन की मन आयो अवरोहि। सूरदास प्रभु जा कहिए कछु सो आवै सब सोहि। २५१५॥



राग बिहागरो॥

यशुमति अतिही भई बेहाल। सुफलकसुत यह तुमहि बूझिए हरत हौ मेरो बाल॥ ए दोउ भैया ब्रज के जीवन कहति रोहिणी रोई। धरणी गिरति दुरति अति व्याकुल कहि राखत नहिं कोई॥ निठुर भए जब ते यह आयो घरहू आवत नाहिं। सूर कहा नृप पास तुम्हारो हम तुम बिनु मरिजाहिं॥ २५१६॥

राग सोरठ ॥

कन्हैया मेरी छोह बिसारी। क्यों बलराम कहत तू नाह मैं तुम्हरी महतारी ॥ तब हलधर जननी परबोधत मिथ्या यह संसारी। ज्यों सावन की वेलि प्रफुलिकै फूलति है दिनचारी ॥ हम बालक तुमको कहा सिखवैं कहूँ तुमहिते जात। सूर हृदय धीरज अब धारौ काहे को बिलखात ॥ २५१७ ॥



राग सोरठ ॥

यह सुनि गिरि धरणि झुकि माता। कहा अक्रूर ठगोरी लाई लिये जात दोउ भ्राता ॥ विरध समय की हरत लकुटिया पाप पुण्य डर नाहीं। कछू नफा तुमको है यामें सो शोधो मन-माहीं ॥ नाम सुनत अक्रूर तुम्हारो क्रूर भए हौ आइ ॥ सूर नंद घरनी अति व्याकुल ऐसेहि रैनि बिहाइ ॥ २५१८ ॥



गोपिकावचन परस्पर ॥ राग रामकली ॥

सुने हैं श्याम मधुपुरी जात। सकुचति कहि न सकति काहू सों गुप्त हृदय की बात ॥ शंकित वचन अनागत कोऊ कहि जु गई अधरात। नींद न परै घटै नहिं रजनी कब उठि देखौं प्रात ॥ नँदनंदन तो ऐसे लागे ज्यों जल पुरइन पात। सूर श्याम सँग ते बिछुरत हैं कब ऐहै कुशलात ॥ २५१९ ॥



राग भैरव ॥

भोर भयो ब्रजलोगन को। ग्वाल सखा सखि व्याकुल सुनिकै श्याम चलत हैं मधुवन को ॥ सुफलकसुत स्यंदन पलनावत देखैं तहाँ बल मोहन को। यह सुनि घर घर ते उठि धाईं नदसुवन

मुख जोवन को ॥ रोरि परी गोकुल में जहँ तहँ गाइ फिरत पय दोहन को। सूर बरबस कर भार सजावत महर चलत हरि गोहन को॥ २५२१॥



राग मकली॥

चलन को कहियत है री आजु। अबहीं गई श्रवण सुनि आई करत गमन को साजु॥ कोउ एक कंस कपट कर पठयो कछु संदेश दै हाथ। सो लै चल्यो हमारी जीवननिधि को अपने साथ॥ अब यहि शूल न जाति समुझि सहि रही हिए करि लाज। धीरज अवधि आशदै जननिहि जात चले ब्रजराज॥ करिए विनती कमलनयन सों सूर समो पहिचान। कौने कर्म भयो दुखदारुण रहत न मेरो कान॥ २५२२॥



राग रामकली॥

चलत हरि धृग जु रहत ए प्रान। कहाँ वह सुख अब सहौं दुसह दुख उर करि कुलिश समान॥ कहाँ वह कंठ श्याम सुंदर भुज करति अधर रस पान। अचवत नयन चकोर सुधा विधु देखहु मुख छबि आन॥ जाको जग उपहास कियो तब छाँड्यो सब अभिमान। सूर सु निधि हमते हैं बिछुरत कठिन है करम निदान॥ २५२३॥



राग कल्याण॥

हौं साँवरे के संग जैहौं। होनी होइ सु होइ उभै लै हठ यश अपयश कहूँ न डरैहौं॥ कहा रिसाइ करैगो कोऊ जो रोकि है

प्राण ताहि देहौं । देहौं छाँड़ि राखिहौं यह व्रत हरि हितु बीजु बहुरिको बैहौं ॥ करिहौं सूर अजर अवनी तन मिलि अकास पिय भौन समैहौं । बायबीज वापी जलक्रीड़ा तेज मुकुर मुख सब सुख लैहौं ॥ २५२४ ॥



राग कल्याण ॥

श्याम चलन चहत कह्यो सखी एक आई । बलमोहन रथ बैठे सुफलकसुत चढ़न चहत यह सुनि चकित भई विरहदौं लगाई । धुकि धुकि सब धरणि परी ज्वाला झर लता गिरीं मनो तुरत जलद वरषि सुरति नीर परसी । धाईं सब नंदद्वार बैठे रथ दोउ कुमार यशुमति लोटति भुव पर निठुर रूप दरसी ॥ कौन पिता कौन माता आपु ब्रह्म जगधाता राख्यो नहीं कछू नाता नेक माहीं । आतुर अक्रूर चढ़े रसना हरि नाम रटे सूरज प्रभु कोमल तनु देखि चैन नाहीं ॥ २५२५ ॥



गोपीवचन मोहन प्रति ॥ राग सारङ्ग ॥

विनती एक सुनौ श्रीश्याम । चलन न देत चलो चाहत मन चलन कहौ सो सुनिए श्याम ॥ तुम सर्वज्ञ सकल घट व्यापक जीवन पद सबके विश्राम । संतत रहत कहत ढीठोदै करते सब सोवत सुखधाम ॥ बाहर सरल प्रीति गोपिन को लिये रहत लै लै गुणग्राम । सूरदास प्रभु सकल सुखदाता तिनते न्यारे न ग्राम ॥ २५२६ ॥



राग सारंग ॥

बिनु परवहि उपराग आजु हरि तुम है चलन कह्यो । को

जानै ग्रहि राहु रमापति कतहुँ शोध लह्यो॥ बैतकिचुनित नीच नैनन मिलि अंजन रूप रह्यो। विरह संधि बलपाइ मैनअति है तिय वदन गह्यो॥ दुसह दशन मनो धरत अमित अति परसे परकत न सह्यो। देखो देव अमृत अंतर ते ऊपर जात बह्यो॥ अब यह शशि ऐसो लागत ज्यों बिन माखनहि मह्यो। सूर सकल गुणपति दरशन बिनु मुखछबि अधिक दह्यो॥ २५२७॥



राग धनाश्री॥

मिलि किन जाहु बटाऊनाते। नंद यशोदा के तुम बालक बिनती करतिहौं ताते॥ तुम्हरी प्रीति हमारी सेवा गनियत नाहिन काते। रूप देखि तुम कहा भुलाने भीत भए वनयाते॥ तुम बिछुरत घनश्याम मनोहर हम अबला सरघाते। कहा करौं जु सनेह न छूटे रूप ज्योति गई ताते॥ जब उठि दान माँगते हँसिकै संग गात लपटाते। सूरदास प्रभु कौन प्रबलरिपु बीच पच्यो धौं जाते॥ २५२८॥



राग धनाश्री॥

हरि की प्रीति उरमाहिं करकै। आय क्रूर लै चले श्याम को हित नाहीं कोउ हरिकै॥ कंचन को रथ आगे कीन्हों हरिहि चढ़ाए वरकै। सूरदास प्रभु सुख के दाता गोकुल चले उजरकै॥ २५२९॥



राग सारंग॥

सब ब्रज की शोभा श्याम। हरि के चलत भई हम ऐसी मनहु कुसुम निरमायल दाम॥ देखियत हौ तुम क्रूर विषम केसे

सुनियत हौ अक्रूरहि नाम । विचरति हौ न आन गृह गृह को ते शिशु लायक नृप को कह काम ॥ २५३० ॥



यशोदाविलाप । राग बिलावल ॥

गोपालहि राखहु मधुवन जात । लाज गए कछु काज न सरिहै बिछुरत नँद के तात ॥ रथ आरूढ़ होत बलि गई होइ आयो परभात ॥ सूरदास प्रभु बोलि न आयो प्रेमपुलकि सब गात ॥ २५३१ ॥



राग बिलावल ॥

मोहन नेक बदन तन हेरो । राखो मोहिं नात जननी को मदनगुपाललाल मुख फेरो ॥ पाछे चढ़ो बिमान मनोहर बहुरो यदुपति होत अँधेरो । बिछुरत भेंट देहु ठाढ़े ह्वै निरखो घोष जन्म को खेरो ॥ माधो सखा श्याम इन कहि कहि अपने गाइ ग्वाल सब घेरो । गए न प्राण सूर ता औसर नंद जतन करि रहे घनेरो ॥ २५३२ ॥



अथ श्रीकृष्ण मथुरागमनहेतु अक्रूर साथ । राग सोरठ ॥

जबहीं रथ अक्रूर चढ़े । तब रसना हरि नाम भाषिकै लोचन नीर बढ़े ॥ महरि पुत्र कहि शोर लगायो तरु ज्यों धरनि लुटाइ । देखति नारि चित्रसी ठाढ़ी चितए कुँवर कन्हाइ ॥ इतनेहि में सुख दियो सबनको मिलि हैं अवधि बताइ । तनक हँसे मनदै युवतिन को निठुर ठगोरी लाइ । बोलत नहीं रहीं सब ठाढ़ी श्याम ठगी ब्रजनारी । सूर तुरत मधुवन पग धारे धरणी के हितकारी ॥ २५३३ ॥

राग बिहागरो ॥

चलत हरि फिरि चितये ब्रज पास। इतनेहि धीरज दियो सबनको अवधि गए दै आस ॥ नंदहि कह्यो तुरत तुम आवहु ग्वाल सखा लै साथ। माखन मधु मिष्टान्न महर लै दियो अक्रूर के हाथ ॥ आतुर रथ हाँक्यो मधुवन को ब्रजजन भए अनाथ। सूरदास प्रभु कंस निकंदन देवन करनि सनाथ ॥ २५३४ ॥



राग नटी ॥

रही जहाँ सो तहाँ सब ठाढ़ी। हरि के चलत देखिअत ऐसी मनहुँ चित्र लिखि काढ़ी ॥ सूखे वदन स्रवत नैनन ते जलधारा उरबाढ़ी। कंधनि बाँहधरे चितवति द्रुम मनहु वेलि दवडाढ़ी ॥ नीरस करि छाँड़ी सुफलकसुत जैसे दूध बिन साढ़ी। सूरदास अक्रूर कृपा ते सही विपति तनु गाढ़ी ॥ २५३५ ॥



राग सारंग ॥

चलतहु फेरि न चितए लाल। रथ बैठे दूर ते देखे अंबुज नैन विशाल ॥ मीड़त हाथ सकल गोकुल जन बिरह विकल बेहाल। लोचन पूरि रहीं जल महियाँ दृष्टि परी जो काल ॥ सूरदास प्रभु फिरिकै चितयो अंबुज बैन रसाल ॥ २५३६ ॥



राग बिलावल ॥

बिछुरे श्रीब्रजराज आजु तौ नैनन ते परतीति गई। उठि न गई हरिसंग तबहि ते ह्वै न गई सखी श्याममई ॥ रूपरसिक लालची कहावत सो करनी कछु वै न भई। साँचे क्रूर कुटिल ए लोचन

व्यथा मीन छबि छीनि लई ॥ अब काहे जल मोचत सोचत् समौ गए ते शूल नए । सूरदास याही ते जड़भये इन पलकनही दगा दए ॥ २५३७ ॥



(सखिया आपस मे कहती है.—)

राग धनाश्री ॥

केतिक दूरि गयो रथ माई । नँदनंदन के चलत सखी हे तिनको मिलन न पाई ॥ एक दिवसहों द्वार नंद के नहीं रहति बिनु आई । आजु विधाता मति मेरी गई भौनकाज बिरमाई ॥ जब हरि ऐसो ख्याल करत है काहु न बात चलाई ॰ ब्रजही वसत बिमुख भई हरि सों शूल न उर ते जाई ॥ सूरदास प्रभु बिनु ब्रज ऐसो एको पल न सोहाई ॥ २५३८ ॥



राग मलार ॥

सखी री वह देखौ रथ जात । कमलनैन काँधे पर न्यारो पीत बसन फहरात ॥ लई जाइ जब ओट अटन की चीर न रहत कृशगात । छत्र पत्र ध्वज कनकदल मानो ऊपर पवन विहात ॥ मधु छुड़ाइ सुफलकसुत लैगए ज्यों माछी भयहीन । सूरदास प्रभु बिनु देखियत है सकल बिरह आधीन ॥ २५३९ ॥



राग सारंग ॥

पाछेही चितवत मेरे लोचन आगे परत न पाँइ । मनलै चली माधुरी मूरति कहा करौं ब्रजजाइ ॥ पवनन भई पताका अंबर भई न रथ के अंग । धूरि न भई चरण लपटाती जाती

वहँलौं संग ॥ ठाढ़ी कहा करौ मेरी सजनी जिहि बिधि मिलहिं गोपाल । सूरदास प्रभु पठै मधुपुरी मुरझिपरी ब्रजबाल ॥२५४०॥



राग नट ॥

तब न बिचारी री यह बात । चलत न फेंट गही मोहन की अब ठाढ़ी पछितात ॥ निरखि निरखि मुख रही मौन ह्वै थकित भई पलपात । जब रथ भयो अदृष्ट अगोचर लोचन अति अकुलात ॥ सबै अजान भईं वहि औसर धिगहि यशोमति मात । सूरदास स्वामी के बिछुरे कौड़ी भरि न बिकात ॥ २५४१ ॥



राग सारंग ॥

अब वै बातै इह्याँ रही । मोहन मुख मुसकाइ चलत कछु काहू नहीं कही ॥ सखी सुलाज बस समुझि परस्पर सन्मुख सबै सही ॥ अब वै शालतिहैं उरमहियाँ कैसेहु कढ़ति नही ॥ त्यों ज्यो सलिल करन को सजनी काहे को फिरति वही । हरि चुंबक जहाँ मिलहि सूर प्रभु मो लैजाउँ तही ॥ २५४२ ॥



राग नट ॥

मेरी वज्र की छाती बिदरि करि नहिं जाति । हरिहि चलत चितवत मग ठाढ़ी पछिताति ॥ विद्यमान विरह शूल उर में जु समाति । आवन की आश लागि अवधिही पत्याति ॥ प्रेमकथा प्रगट भई शरद रासराति । प्राणनाथ बिछुरे सखी जीवत न लजाति ॥ पकै पै सुरति रही वदन कमल कांति । ज्यों ठग निधिहि हरत की रंचक गुरदै केहू भाँति ॥ इमि फिरि मुसकानि

सूर मनसागई माति। चितवनि मन मादक भई जागत अकु-लाति ॥ २५४३ ॥



राग गौरी ॥

आजु रैनि नहिं नींद परी। जागत गनत गगन के तारे रसना रटत गोविंद हरी ॥ वह चितवन वह रथ की बैठन जब अक्रूर की बाँह गही। चितवत रही ठगी सी ठाढ़ी कह न सकति कछु काम दही ॥ इतने मान व्याकुल भई सजनी आरज पंथ हुते बिडरी। सूरदास प्रभु जहाँ सिधारे कितिक दूरि मथुरा नगरी ॥ २५४४ ॥



राग सारंग ॥

हरि बिछुरत फाट्यो न हियो। भयो कठोर बज्र ते भारी रहिकै पापी कहा कियो ॥ घोरि हलाहल सुन री सजनी औसर तेहि न पियो। मन सुधि गई सँभारति नाहिंन पूरो दाँव अक्रूर दियो ॥ कछु न सुहाइ गई सुधि तब ते भवन काज को नेम लियो। निशि दिन रटत सूर के प्रभु बिनु मरिवो तऊ न जात जियो ॥ २५४५ ॥



राग अडानो ॥

सुंदर वदन री सुखसदन श्याम को निरखि नैन मन थाक्यो। वारक इन बीथिनह्वै निकसे मैं दूरि झरोखनि झाँक्यो ॥ उन कछु नेक चतुरई कीनी गेंद उछारि गगन मिस ताक्यो। वारों लाज भई मोको वैरनि मैं गँवारि मुख ढाक्यो ॥ कछु करि

गए तनक चितवनि मे याते रहत प्रेम मद छाक्यो। सूरदास प्रभु सर्वसु लै गए हँसत हँसत रथ हाँक्यो॥ २५४६॥



राग सारंग।

अरी मोहिं भवन भयानक लागे माई श्याम बिना। देखहिं जाइ काहि लोचन भरि नंद महर के अँगना॥ लै जु गए अक्रूर ताहि को ब्रज के प्राणधना। कौन सहाय करै घर अपने मेटै बिधिन घना॥ काहि उठाइ गोद करि लीजै करि करि मनमगना। सूरदास मोहन दरशन बिनु सुख संपति सपना॥ २५४७॥



राग मलार॥

सब कोउ कहत गोपाल दोहाई। गोरस बेचन गई बबा की सो हौं मथुरा ते आई॥ जब ते कह्यो कंस सों मनमोहन जीवत मृतक करि लेखो। जागत सोवत आस देवन की कृष्ण कला सब देखो॥ करत ओघ प्रजा लोगै सब नृपति के शंक न मानी। ठकुराई तकियो गिरिधर की सूरदास जनजानी॥ २५४८॥



यशोदा विलाप॥ राग धनाश्री॥

है कोइ ऐसी भाँति देखावै। किंकिणि शब्द चलत ध्वनि रुनु झुनु ठुमक ठुमक गृह आवै॥ कछुक विलाप वदन की शोभा अरुण कोटि गति पावै। कंचन मुकुट कंठ मुक्तावलि मोरपंख छबि छावै॥ धूसर धूरि अंग सँगलीने ग्वाल बाल सँगलावै। सूरदास प्रभु कहति यशोदा भाग्य बड़े ते पावै॥ २५४९॥

राग सोरठ ॥

मनौंहो ऐसे ही मरिजैहौं । इहि आँगन गोपाललाल को कबहुँक कनियाँ लैहौं ॥ कब वह मुखबहुरौं देखौंगी कब वैसो सचु पैहौं । कब मो पै माखन माँगेंगे कब रोटी धरि दैहौं ॥ मिलन आस तनु प्राण रहत है दिन दस मारग चैहौं । जो न सूर कान्ह आइ है तौ जाइ यमुन धँसि लैहौं ॥ २५५० ॥



(इधर अक्रूर अपने मन मे पश्चात्ताप करने लगा) ।

राग गुडमलार ॥

इहै सोच अक्रूर पर्यो । लिए जात इनको मैं मथुरा कंसहि महा डर्यो ॥ धृग मोको धृग मेरी करनी तब ही क्यों न मर्यो ॥ मैं देखों इनको अब हति है अति व्याकुल हहर्यो । यहि अंतर यमुना तट आप स्नान दान कियो खर्यो । सूरदास प्रभु अंतर्यामी भक्त संदेह हर्यो ॥ २५५२ ॥



राग धनाश्री ॥

सुफलकसुत दुख दूरि कर्यो । यमुना तीर कियो रथ ठाढ़ो आपुहि प्रगट हर्यो ॥ तिनहि कह्यो तुम स्नान करौ ह्यां हमहिं कलेऊ देहु । भूँख लगी भोजन करि हैं हम नेम सारि तुम लेहु ॥ तब लौं नंद गोप सब आवैं संग मिले सब जैहैं । सूरदास प्रभु कहत है पुनि पुनि तब अति ही सुख पैहैं ॥ २५५३ ॥



राग गुंडमलार ॥

सुनत अक्रूर यह बात हरषे । श्याम बलराम को तुरत भोजन दियो आपु स्नान को नीर परषे ॥ गये कटिनीरलौं नित्य

संकल्प करि करत स्नान इकभाव देख्यो। जैसोई श्याम बलराम श्रीस्यन्दन चढ़े वहै छबि कुँवर सर माँझ पेख्यो॥ चकृत मनभए कबहुँ तीर पुनि जल निरखि घोष अक्रूर जिय भयो भारी। सूर प्रभु चरित में थकित अति ही भयो तहां दरशे नित स्थल बिहारी॥ २५५४॥



राग कान्हरो॥

कमल पर बज्र धरति उर लाइ। राजतिरमा कुंभरस अंतर पति निज स्थल जलसाइ॥ बैनतेइ संपुट सनकादिक चतुरानन जय विजय सखाइ। औसर बाग विशारद हाहा जित गुण गाइ॥ कनक दंड सारंग बिबिध रव कीरति निगम सिद्ध सुर धाइ। तिनके चरण सरोज सूर अब किए गुरु कृपा सहाइ॥ २५५५॥



राग धनाश्री॥

हरष अक्रूर हृदय नमाइ। नेम भूल्यो ध्यान श्याम बलराम को हृदय आनंद मुख कहि न जाइ॥ ब्रह्म पूरण अकल कला ते रहित ए हरता करता समर्थ और नाही। कहा बपुरो कंस मिट्यो तब मन संस करत है जीको करत है गंग निर्वंशजाहीं॥ हाँकि रथ चढ़ि चल्यो विलम अब कहा प्रभु गयो संदेह अक्रूर जीको। नंद उपनंद सँग ग्वाल बहुभारलै आइ सदनहि मिले सूर पी को॥ २५५६॥



अक्रूर श्रीकृष्णस्तुति॥ राग कल्याण॥

बार बार श्याम राम अक्रूरहि गावै। अबहीं तुम हरष भए तबहीं मन मारि रहे चले जात रथहि बात बूझत हैं वावै॥ कहो

नही साँची सो हमसों जिनि गोपकरो सुनिकै अक्रूर बिमल स्तुति मानै। सूरज प्रभु गुण अथाह धन्य धन्य श्रीप्रियानाह निगमन को अगाध सहसानन नहिं जानै॥ २५५७॥



राग बिलावल॥

बार बार मोसों कहा बूझत तुमहौ पूरण ब्रह्म गुसाँई॥ तुम हर्ता तुम कर्ता एकै तुमहौ अखिल भुवन के साँई॥ महामल्ल चाणूर कुवलिया अब जिय त्रास नही तिन नैको। सूरदास प्रभु कंस निपातहु गहरु न कीजै अब वैसेन को॥ २५५८॥



राग धनाश्री॥

बूझत हैं अक्रूरहि श्याम। तरनि किरनि महलनि पर झाँई इहै मधुपुरी नाम॥ श्रवणन सुनत रहत जाको नित सो दरशन भए नैन। कंचन कोट कँगूरन की छबि मानहु बैठे मैन॥ उपवन बन्यो चहूँधा पुर के अति ही मोको भावत। सूर श्याम बलरामहिं पुनि पुनि कर पल्लवनि देखावत॥ २५५६॥



श्रीकृष्णवचन अक्रूर प्रति॥ राग कल्याण॥

बार बार बलराम को मधुपुरी बतावत। छज्जे महलन देखिकै मन हरष बढ़ावत॥ जन्म थान जिय जानिकै ताते सुख पावत। वन उपवन छाये सघन रथ चढ़े जनावत॥ नगर शोर अकनत सुनत अति रुचि उपजावत। सुनत शब्द घरियार के

नृप द्वार बजावत ॥ बरन बरन मंदिर बने लोचन ठहरावत । सूरज प्रभु अक्रूरसों कहि देखि सुनावत ॥ २५६० ॥



अक्रूरवचन श्रीकृष्णप्रति ॥ राग कल्याण ॥

श्री मथुरा ऐसी आजु बनी । देखहु हरि जैसे पति आगम सजति शृङ्गार घनी ॥ मानहु कोटि कसी कटि किंकिणि उपवन वसन सुरंग । भूषण भवन विचित्र देखियत शोभित सुंदर अंग ॥ सुनत श्रवण घरियार घोर ध्वनि पाँयन नूपुर बाजत । अति संभ्रम अंचल चंचल गति धामन ध्वजा विराजत ॥ ऊँच अटन पर छत्रन की छबि शीशन मानों फूली । कनक कलश कुच प्रगट देखियत आनँद कंचुकि भूली ॥ विद्रुम फटिक पची परदा छवि लाल रंध्र की रेख । मनहुँ तुम्हारे दरशन कारन भूले नैन निमेष ॥ चित दै अवलोकहु नँदनंदन पुरी परम रुचि रूप । सूरदास प्रभु कंस मारिकै होउ यहाँ के भूप ॥ २५६१ ॥



राग कल्याण ॥

मथुरा हरषित आजु भई । ज्यों युवती पति आवत सुनिकै पुलकित अंग मई ॥ नवसत साजि शृंगार बनी सुंदरि आतुर-पंथ निहारति । उड़त ध्वजा तनु सुरति बिसारे अंचल नहीं सँभारति ॥ उरज प्रगट महलन पर कलसा लखति पास बन सारी । ऊँचे अटनि छाज की शोभा शीश उँचाइ निहारी ॥ जालरंध्र इकटक मग जोवति किंकिणि कंचन दुर्ग । वेनी लसति हौक छबि ऐसी महलन चित्रे उर्ग ॥ बाजत नगर बाजने जहँ तहँ और बजत घरिआर । सूर श्याम वनिता ज्यों चंचल पगनूपुर झनकार ॥ २५६२ ॥

(श्रीकृष्ण का आना सुन कर कंस घबरा गया) ।

राग धनाश्री ॥

मथुरापुर मे शोर पर्‌यो । गर्जत कंस वंश सब साजे मुख को नीर हर्‌यो ॥ पीरो भयो फेफरी अधरन हृदय अतिहि डर्‌यो । नंद महर के सुत दोउ सुनिकै नारिन हर्ष भर्‌यो ॥ इंदु वदन नव जलद सुभग तनु दोउ खग नैन कह्यो । सूर श्याम देखत पुर नारी उर उर प्रेम भर्‌यो ॥ २५६४ ॥



राग रामकली ॥

रथ पर देखि हरि बलराम । निरखि कोमल चारु मूरति हृदय मुकुता दाम ॥ मुकुट कुंडल पीत पट छबि अनुज भ्राता श्याम । रोहिणी सुत एक कुंडल गौरतनु सुखधाम ॥ जननि कैसे धर्‌यो धीरज कहति सब पुरवाम । बोलि पठये कंस इनको करै धौं कहा काम ॥ जोरि कर विधिसों मनावति अशीशै दै नाम । न्हात बार न खसै इनको कुशल पहुँचै धाम ॥ कंस को निर्वंश ह्वै है करत इन पर ताम । सूर प्रभु नंदसुवन दोऊ हंस बाल उपाम ॥ २५६५ ॥



राग कल्याण ॥

देख री आजु नैन भरि हरि जू के रथ की शोभा । योग यज्ञ जप तप तीरथ व्रत कीजत है जेहि लोभा ॥ चारु चक्र मणि खचित मनोहर चंचल चमर पताका । श्वेत छत्र मनो शशि प्राची दिशि उदय कियो निशि राका ॥ घन तन श्याम सुदेश पीत पट शीशँ मुकुट उर माला । जनु दामिनि घन रवि तारा

गण प्रगट एक ही काला ॥ उपजत छबि कर अधर शंख मिलि सुनियत शब्द प्रशंसा। मानहु अरुण कमल मंडल मे कूजत हैं कलहंसा ॥ मदन गोपाल देखियत हैं सब अब दुख शोक बिसारी। पैठे हैं सुफलकसुत गोकुल लेन जो इहाँ सिधारी ॥ आनंदित चित जननि तात हित कृष्ण मिलन जिय भाए। सूरदास यदुकुल हित कारण अब माधो मधुपुरी आए ॥२५६६॥



राग मलार ॥

वे देखो आवत हैं ब्रज ते बने वनमाली। घन तन श्याम सुदेह पीत पट सुंदर नैन विशाली ॥ जिनि पहिले पलना पौढ़े पय पीवत पूतना दाली। अघ बक बच्छ अरिष्ट केशी मथि जल ते काढ्यो काली ॥ जिन हति शकट प्रलंब तृणावृत इंद्र प्रतिज्ञा टाली। पते पर नहिं तजत अघोड़ी कपटी कंस कुचाली ॥ अब विधु वदन विलोकि सुलोचन श्रवण सुनत ही आली। धन्य सु गोकुल नारि सूर प्रभु प्रकट प्रीति प्रतिपाली ॥ २५६७॥



राग भैरव ॥

पई माधो जिन मधु मारे री। उन्मत ही गोकुल सुख दीन्हों नंददुलार बहुत सारे री ॥ केशी तृणावर्त्त वृषभासुर हती पूतना जब बारे री। इन्द्र कोप वर्षत गिरि धार्‌यो महाप्रबल ब्रज के टारे री ॥ बल समेत नृप कंस बोलाए रचे रंग अति भारे री। सूर अशीश देति सब सुंदरि जीवहिं अपनी माँ प्यारे री ॥ २५६८ ॥

राग विहागरो ॥

भए सखि नैन सनाथ हमारे। मदनगोपाल देखत ही सजनी सब दुख शोक बिसारे॥ पठए है सुफलकसुत गोकुल लेन जो इहाँ सिधारे। मल्लयुद्ध प्रति कंस कुटिल मति छल करि इहाँ हँकारे॥ मुष्टिक अरु चाणूर शैल सम सुनियत हैं अति भारे। कोमल कमल समान देखियत ये यशुमति के वारे॥ ह्वै यह जीति विधाता इनकी करहु सहाय सवारे। सूरदास चिरजीवहु युग युग दुष्ट दलै दोउ नंददुलारे॥ २५६९॥



राग भैरव ॥

भोर भयो जागे नँदलाल। नंदराइ निरखत मुख हरषे पुनि आये सब ग्वाल॥ देखि पुरी अति परम मनोहर कंचन कोट विशाल। कहन लगे सब सूर प्रभू सों होउ इहाँ भूपाल॥ २५७१॥



राग परज ॥

हरि बल शोभित यों अनुहार। शशि अरु सूर उदय भए मानों दोऊ एकहि वार॥ ग्वाल बाल सँग करत कौतूहल गवन पुरी मंझार। नगर नारि सुनि देखन धाई रति पती गेह बिसार॥ उलटि अंग आभूषण साजत रही न देह सँभार। सूरदास प्रभु दरश देखि कै भई चकृत विचार॥ २५७२॥



राग धनाश्री ॥

वै देखो आवत दोऊ जन। गौर श्याम नट नील पीत पट जनु दामिनी मिली घन॥ लोचन बक विशाल चितै कै रहत

तब हो सबके मन। कुंडल श्रवण कनक मणि भूषित जड़ित लाल अति लोल मीन तन॥ वंदन चित्र विचित्र अंग सिर कुसुम सुवास धरे नँदनंदन। बलि बलि जाउँ चलहि जेहि मारग संग लगाइ लेत मधुकरगन॥ धन्य सु भूमि जहाँ पग धारे जीतहिंगे रिपु आजु रंगरन। सूरदास वै नगर नारि सब लेत बलाइ वारि अंचल सन॥ २५७३॥



अथ रजकवध हेतु॥ राग रामकली॥

नृपति रजक अंबर नृप धोवत। देखे श्याम राम दोउ आवत गर्व सहित तिन जोवत॥ आपुस ही में कहत हँसत है प्रभु हृदय यह शालत। तनक तनक से ग्वाल छोहरन कंस अबहिं वधि घालत॥ तृणावर्त प्रभु आहि हमारो इनही मार्‍यो ताहि। बहुत अचगरी यहि करि राखी प्रथम मारिहै याहि॥ जाको नाम श्याम सोइ खोटो तैसेइ है दोउ बीर। सूर नंद बिनु पुत्र कहाए ऐसे जाए हीर॥ २५७४॥



राग बिलावल॥

अंतर्यामी जानिकै सब ग्वाल बोलाए। परखि लिए पाछेन को तेऊ सब आए॥ सखा वृंद लै तहाँ गए बूझन तेहि लागे। नृपति पास हम जाहिंगे अंबर कछु माँगे॥ हँसे श्याम मुख हेरिकै धोवत गरवानो। मारत मारत सात के दोउ हाथ पिरानो॥

गाइ चरैया। कंसपासहू आइए कामरी वोढ़ैया॥ अरस नाम है महल को जहाँ राजा बैठे। गारी दैदै सब उठे भुज निजकर ऐठे॥ पहिरावन को जुरि चले पैहो मल्लनसों। सूर अजाके भोग ए सुनि लेहु न मोसों॥ २५७५॥



राग बिलावल॥

हम माँगतहैं सहज सों तुम अति रिस कीन्हों। कहा करैं तो जाहिंगे जो तुम हमहि न दीन्हों॥ रिस करियत क्यों सहज हो भुज देखत ऐसे। करि आए नट स्वाँग से मोको तुम वैसे॥ हमहिं नृपति सों नातहै ताते हम माँगे। बसन देहु हमको सबै कहै नृप के आगे॥ नृप आगे लौं जाहुगे बीचहि मरिजैहो। नेक जीवन की आस है ताहू बिन ह्वैहो॥ नृप काहू को मारिहैं तुमहो अब मारत। गहर करत हमको कहा मुख कहा निहारत॥ सूर दुहुँन मे मारिहौं अति करत अचगरी। वसत तहाँ बुधि नैसिये वह गोकुल नगरी॥ २५७६॥



राग बिलावल॥

श्याम गह्यो भुज सहजही क्यों मारत हमको। कंस नृपति की सौंह हैं पुनि पुनि कही तुमको॥ पहुँचा करसों गहि रहे जिय संकट मेल्यो। डारि दियो ताहि शिला पर बालक ज्यों खेल्यो॥ तुरत गयो उड़ि स्वर्ग को ऐसे गोपाला। जन्म मरन ते रहि गयो वह कियो निहाला॥ रजक भजे सब देखिकै नृप जाइ पुकार्‌यो। सूर छोहरन नंद के नृपसेठिहि मार्‌यो॥ २५७७॥

राग गौरी ॥

यह सुनिकै नृप त्रास भर्‌यो । सबन सुनाइ कही यह वाणी इह नँदनंद कह्यो ॥ मारो श्याम राम दोउ भाई गोकुल देउ बहाइ । आगे देकै रजक मरायो स्वर्गहि देहु पठाइ ॥ दिन दिन इनकी करौं बड़ाई अहिर गए इतराइ । तौ मैं जो वाही सों कहिकै उनकी खाल कढ़ाइ ॥ सूर कंस इह करत प्रतिज्ञा त्रिभुवननाथ कहाए ॥ २५७८ ॥



राग बिलावल ॥

रजक मारि हरि प्रथमही नृप वसन लुटाए । रंग रंग बहु भाँति के गोपन पनिराए ॥ आए नगर लगार को सब बने बनाए । इकटक रही निहारिकै तरुणिन मनभाए ॥ जैसी जाके कल्पना तैसेहि दोउ आए । सूर नगर नर नारि के मन चित्त चोराए ॥ २५७९ ॥



राग बिलावल ॥

एइ वसुदेव के दोउ ढोटा गौर श्याम नट नील पीत पट कलहंसन के जोटा ॥ कुंडल एक काम श्रुति जाके श्रीरोहिणी को अंस । उर वनमाल देवकी को सुत जाहि डरत हैं कंस ॥ लै राखे ब्रज सखा नंद गृह बालक भेष दुराइ । सम बल बैस विराट मैनसे प्रगट भए हैं आइ ॥ केशी अघ पूतना निपाती लीला गुणनि अगाध । सूर श्याम खलहरन करन सुख अभयकरन सुरसाध[1] ॥ २५८० ॥

---

१ अक्रूर के गोकुल जाने के लिए, कृष्ण के मथुरा आने के लिए और रजक को मारने के लिए देखिए श्रीमद्भागवत दशम स्कन्ध पूर्वार्ध अध्याय ३८–४१ ॥ लल्लूजीलाल-कृत प्रेमसागर अध्याय ३७–४२ ॥

(श्रीकृष्ण और बलराम धनुषशाला में गये। कंस के योद्धा उनसे कहने लगे कि लो इस महाधनुष को तोड़ो। कृष्ण ने कहाः—)

राग बिहागरो॥

हमको नृप यहि हेतु बोलाए। कहाँ धनुष कहँ हम अति बालक कहि आश्चर्य सुनाए॥ ठाढ़े शूर वीर अवलोकत तिनसों कहौ न तोरैं। हमसों कहौ खेल कछु खेलैं यह कहि कहि मुख मोरैं॥ कंस एक तहाँ असुर पठायो इहै कहत वह आयो। बनै धनुष तोरे अब तुमको पाछे निकट बोलायो॥ बालक देखि गहन भुज लाग्यो ताहि तुरतही मार्यो। तोरि कोदंड मारि सब योधा तब बल भुजा निहार्यो॥ जाके अस्त्र तिनहि तेहि मार्यो चले सामुही खौरी। सूर सु कुबरी चंदन लीन्हें मिली श्याम को दौरी॥ २५८६॥



राग धनाश्री॥

प्रभु तुमको चंदन मैं ल्याई। गह्यो श्याम कर कर अपनेसों लिए सदन को आई॥ धूप दीप नैवेद्य साजिकै मंगल करे बिचारी। चरण पखारि लियो चरणोदक धनि धनि कहि दैत्यारी॥ मेरो जनम कल्पना ऐसी चंदन परसौं अंग। सूर श्याम जन के सुखदायक बंधे भाव रज्जु रंग॥ २५८७॥



राग गुंडमलार॥

कुबरी नारि सुंदरी कीन्ही। भाव मे बास बिन भाव नहिं पाइए जानि हृदय हेतु मानि लीन्ही॥ ग्रीव कर परसि पग पीठि ता पर दियो उर्वशी रूप पटतरहि दीन्ही। चित्त वाके इहै श्याम पति मिलैं मोहिं तुरत सोई भई नहिं जात चीन्ही॥ ताहि

अपनी करि चले आगे हरी गए जहाँ कुवलिया मल्ल द्वार्‌यो। बीच माली मिल्यो दौरि चरणन पर्‌यो पुहुपमाला श्याम कंठ धार्‌यो॥ कुशल प्रसन्ननि कहे तुरत मन काम लहि भक्तवत्सल नाम भक्त गावैं। ताहि सुखदै चले पौरिही ह्वै खरे सूर गजपालसों कहि सुनावैं"[1] ॥ २५८८॥



कुवलियाहस्ती वा मुष्टिक चाणूर वध॥

राग कान्हरो॥

सुनहु महावत बात हमारी। बार बार संकर्षण भाषत लेत नहीं ह्याँते गज टारी॥ मेरो कह्यो मानि रे मूरख गज समेत तेहि डारौं मारी। द्वारे खड़े रहे हैं कबके जिनि रे गर्व करै जिय भारी॥ न्यारो करे गयंद तू अजहूँ जान देहिका अंकुश मारी। सूरदास प्रभु दुष्टनिकंदन धरणी भार उतारनकारी॥ २५८९॥



(कृष्ण के बहुत कहने पर भी महावत ने हाथी नहीं हटाया। उलटी बकझक करने लगा। हलधर बोलेः—)

राग गुंडमलार॥

कहत हलधर कह्यो मानि मेरो। अखिल ब्रह्मण्ड के नाथ हैं ह्याँ खड़े गज मारि जीव अब लेहुँ तेरो॥ यह सुनत रिस भर्‌यो दौरिवे को पर्‌यो सूड़ि झटकत पटकि कूक पार्‌यो। घात मन करत लै डारि हौं दुहुँनि पर दियो गज पेलि आपुन हँकार्‌यो॥

1 कुब्जा नारी को सुन्दरी बनाने की लीला के लिए देखिए श्रीमद्भागवत दशम स्कन्ध पूर्वार्ध अध्याय ४२॥

लल्लूजीलाल-कृत प्रेमसागर अध्याय ४३॥

लपकि लीन्हौं धाइ दबकि उर रहे दोउ भ्रम भयो गजहि कहाँ गए वैधों । अर्‍यो दे दशन धरनी कढ़े बीर दोउ कहत अब ही याहि मारें कैधौं ॥ खेलि हैं संग दै हाँक ठाढ़े भए श्याम पाछे राम भये आगे । उतहि वै पूँछ गहि जात ए शुंडिछ्वै फिरत गज पास चहुँ हँसन लागे ॥ नारि महलन खड़ी सवै अति ही डरी नंद के नंद गज दोउ खिलावै । सूर प्रभु श्याम बलराम देखति नृषित बचै इक बेर बिधि सों मनावैं ॥ २५९२ ॥



राग गुडमलार ॥

खेलत गज सँग कुँवर श्याम बलराम दोऊ । क्रोध द्विरद व्याकुल अति इनको रिस नेक नहीं चक्रत भए योधा तहँ देखत सब कोऊ ॥ श्याम झटकि पूछ लेत हलधर कर शुंडि देत महल महल नारि चरित देखत यह भारी । ऐसे आतुर गोपाल चपल नैन मुखरसाल लिए करन लकुट लाल मनो नृत्यकारी । सुरगण व्याकुल विमान मन मन यह करत ज्ञान बोलत यह वचन अजहुँ मार्‍यो नहिं हाथी । सूरज प्रभु श्याम राम अखिल लोक के विश्राम सुर पूरन काम करन नाम लेत साथी ॥ २५९३ ॥



(महावत ने अत्यंत क्रोध करके हाथी बढाया पर कृष्ण ने हँसते हँसते उसे मार डाला ।)

राग कल्याण ॥

हँसत हँसत श्याम प्रबल कुवलया मार्‍यो । तुरत दाँत लिए उपारि कंध पर चले धारि निरखत नर नारि मुदित चक्रत गज संहार्‍यो ॥ अति ही कोमल अजान सुनत नृपति जिय सकान तनु बिनु जनु भयो प्राण मल्लनिपै आए । देखत ही शंकि गए

काल गुण विहाल भए कंस डरन घेरि लिए दोउ मन मुसुकाए ॥ असुर वरी चहूँ पास जिनके वश भुव अकास मल्लनपै आप न करि गाँस नास जियको बिचारै। सब कहत भिरहु श्याम सुनत रहत सदा नाम हारि जीति घर ही की कौन काहि मारै ॥ हँसि बोले श्याम राम कहा सुनत रहे नाम खेलन को हमहिं काम बालक सँग डोले। सूर नंद के कुमार यह है राजस विचार कहा कहत बार बार प्रभु ऐसे बोले ॥ २६०० ॥



राग कल्याण ॥

रंगभूमि आए अति नंदसुवन वारे। निरखति ब्रजनारि नेह उर ते न बिसारे ॥ देखो री मुष्टिक चाणूरन इनि हकारे। कैसे ये बचै नाथ साँस ऊरध डारे ॥ रजक धनुष जोधा हति दंतगज उपारे। निर्दय इह कंस इनहिं चाहत है मारे ॥ कहाँ मल्ल कहाँ अतिहि कोमल ए भारे। कैसी जननी कठोर कीन्हें जिन न्यारे ॥ बार बार इहै कहति भरि भरि दोउ तारे। सूरज प्रभु बल मोहन उर ते नहिं टारे ॥ २६०१ ॥



(कंस ने धमकी और भर्त्सना करके मुष्टिक और चाणूर नामी अत्यंत बलशाली मल्लों को कृष्ण से लड़ने की आज्ञा दी।)

राग धनाश्री ॥

कहति पुर नर नारि यह मन हमारे। रजक मार्‍यो धनुष तोरि द्वै खंड करे हत्यो गजराज त्यों इनहु मारे ॥ तृषित अति नारि सबै मल्ल ज्यों ज्यों कहै लरत नहिं श्याम हम संग काहे। परस्पर मत करत मारि डारौं इनहिं लखत ए चरित दुहुँ निमिष

न चाहैं ।। कहा ह्वै है दई होन चाहति कहा अबहि मारत दुहुँन हमहि आगे । सूर करजोरि अंचल छोरि विनवै बचै ए आजु बिधि इहै माँगे ।। २६०३ ।।



राग कल्याण ॥

देखो री मल्ल इनहि मारन को लोरैं । अति ही सुंदर कुमार यशुमति रोहिणि वार बिलखति यह कहति सबैं लोचन जल ढोरैं ॥ कैसेहुँ ए बचै आजु पठए धौं कौन काज निठुर हियो वाम ताको लोभ ही पठाए । एतो बालक अजान देखो उनके सयान कहा कियो ज्ञान इहाँ काहे को आए ॥ कहा मल्ल मुष्टिक से चाणूर शिला भंजन कहत भुजा गहि पटकन नंदसुवन हरषैं । नगर नारि ब्याकुल जिय जानत प्रभु सूर श्याम गर्व हतन नाम ध्यान करि करि वै हरषैं ॥ २६०४ ॥



श्रीकृष्णवचन मल्लप्रति ॥ राग गुडमलार ॥

सुनौ हो वीर मुष्टिक चाणूर सबै हमहि नृप पास नहिं जान देहौ । घेरि राखे हमहिं नहिं बूझे तुमहिं जगत मैं कहा उपहास लैहौ ।। सबै कैहैं इहै भली मति तुम यहैं नंद के कुँवर दोउ मल्ल मारे । इहै यश लेहुगे जान नहिं देहुगे खोज ही परे अब तुम हमारे ॥ हम नही कहैं तुम मनहिं जो यह वसी कहत हों कहा तौ करै तैसी । सूर हम तन निरखि देखिए आपु को बात तुम मन हो यह वसी जैसी ॥ २६०५ ॥



राग तोडी ॥

जब ही श्याम कही यह बानी । यह सुनिकै युवती बिल-

खानी ॥ मल्लन कह्यो हमहिं तुम देखो। अपनो बल अपनो तनु पेखो ॥ चितए मल्ल नंदसुत क्रोधा। काल रूप बज्रांगी जोधा ॥ भुजा ठेठि रज अंग चढ़ायो। गाँस धरे हरि ऊपर आयो ॥ श्याम सहज पीताम्बर बाँधे। हलधर निरखत लोचन आधे ॥ तब चाणूर कृष्ण पर धायो। भुजभुज जोरि अंग बल-पायो ॥ प्रथम भए कोमल तन ताको। शिथिल रूप मन मेलत वाको ॥ तब चाणूर गर्व मन लीन्हों। दुर्गप्रहार कृष्ण पर कीन्हों ॥ फूलहु ते अति सम करि मान्यो। तेहि अपने जिय मार्‍यो जान्यो ॥ हरष्यो मल्ल मारि भयो न्यारो। कहनलग्यो मुख अहो बिचारो ॥ हँसत श्याम जब देखत ठाढ़े। सोच पर्‍यो तब प्राणनि गाढ़े ॥ फिरि कहि कहि हरि मल्ल हुकार्‍यो। मनहु गुहा ते सिंह पुकार्‍यो ॥ हाँक सुनत सब कोउ भुलान्यो ॥ थरथराइ चाणूर सकान्यो ॥ सूर श्याम महिमा तब जान्यो। निहचै मीचु आपनो आन्यो ॥ २६०६ ॥



राग धनाश्री ॥

भिर्‍यो चाणूर सों नंदसुत बाँधि कटि पीत पट फेंट रण रंग राजैं। द्विरद दंत कर कलित अरु भेष नटवर ललित मल्ल उर सल्लि तल ताल बाजैं ॥ पीन भुजलीन जे लच्छि रंजित हृदय नीलघन शीत तनु तुंग छाती। देखि रही भेष अति प्रेम नर नारि सब बदति तजि भीर रति रीति राती ॥ मत्त मातंग बल अग दंभोलि दल काछनी लाल गलमाल सोहै। कमल दलनैन मृदुबैन बंदित वदन देखि सुरलोक नरलोक मोहै ॥ बाहु सों बाहु उर जानु सों जानु की चरणन सों चरण धरि प्रगट पेलैं। धम-कदै घूँघरनि भीरभइ बंधुजन सुभट पद पाणिधरि धरनि

मेलैं ॥ चित्त सों चित्त मनबंधु मनबंधु सों दृष्टि सों दृष्टि धरि सिर चपैया। जानि रिपुहानि तजि कानि यदुराज की बबकि उठि फूलि वसुदेव गैया॥ ऐसे ही राम अभिराम सुरशेष वपुगहि वमुष्टिक महामल्ल मार्‌यो। तोरि निज जनक उरकेश गहि कंसनर सूर हरि मंच ते दुष्ट डार्‌यो॥ २६०७॥



राग भैरौ॥

श्याम बलराम रंगभूमि आए। बली लखौ रूप सुंदर परम देखियो प्रबल बल जानि मन मे सकाए॥ कह्यो गजकुवलिया ह्यो भयो गर्व तुम जानि परि है भिरत सँग हमारे। काल सों भिरैं हम कौन तुम बापुरे पै हृदय धर्म रहियो बिचारे। श्याम चाणूर बलिबीर मुष्टिकभिरे शीश सों शीश भुज भुज मिलावैं। वे उनै गहत वे दौरि उनको गहत करत बल छल नहीं दाँव पावैं॥ धरि पछार्‌यो दोउ वीर दुहुँन मल्ल को हरषि कह्यो सुरए नंद दोहाई। सूर प्रभु परस लहिलह्यो निर्वान तेहि सुरन आकास जैजैत यह ध्वनि सुनाई॥ २६०८॥



राग गुडमलार॥

गह्यो कर श्याम भुज मल्ल अपने धाइ झटकि लीन्हों तुरत पटकि धरनी। भटक अति शब्द भयो खुटक नृप के हिए अटक प्राणन पर्‌यो चटक करनी॥ लटकि निरखन लग्यो मटक सब भूलिगयो हटक ह्वैकै गयो गटकि शिलसो रह्यो मीचु जागी॥ मृष्टकौ गद मरदिके चाणूर चुरकुट कर्‌यो कंस को नुकंप भयो उई रंगभूमि अनुरागरागी। मल्ल जे जे रहे सबै मारै

तुरत असुर जोधा सबै तेउ संहारे ॥ धाइ दूतन कह्यो मल्ल कोउ नहिं रहे सूर बलराम हरि सब पछारे[1] ॥ २६०६ ॥



राग गुंडमलार ॥

नंद के नंद सब मल्लमारे । निदरि पौंरिया जाय नृप पै पुकारे ॥ सुनत ठाढ़ो भयो हाँक तिनको दयो दनुज कुल दहन नातन निहारे । सुभट बोले सबै आइहैं पुनि कबै मारि डारे सबै मल्ल मेरे । अवगरी करि रहे बचन एई कहे डर नही करत सुत अहिर केरे ॥ रंग महलनि खर्यो कहा रे तुम कर्यो कहा रे तुम कर्यो ढाल कर खड्ग तहाँ ते चलावै । जिवत अब जाहुगे बहुरि करिहौ राज नहीं जानत सूर कहि सुनावै ॥२६११॥



राग मारू ॥

कंध दंत धरि डोलत रंगभूमि बलहरि । उज्ज्वल साँवल वपु शोभित अंग फिरत फरि ॥ द्वारे पैठत कुंजर मार्यो डुलाय धरनी डार्यो । मुष्टिक चाणूर शिलपसौ शील संहार्यो ॥ जिहिं ज्यों जीय रूप बिचार्यो तैसोई रूप धार्यो । देवकी वसुदेव जीय को संताप निवार्यो ॥ मल्लसुभट परे भगार कृष्ण को परिसाने । देखि यह पराक्रम तब कंस जिय बिलखाने ॥ दुःख दलन अभय दान करै करन दाने । जो जिहि जबहिं कहैं सबै गोवर्धन राने ॥ कंस सुनि अचेत भयो बजन लगे बाजा । कहि

---

१ कुवलयापीड हाथी और चाणूर मुष्टिक आदि के वध के लिए देखिए श्रीमद्भागवत दशम स्कंध पूर्वार्ध अध्याय ४३ । लल्लूजीलाल-कृत प्रेमसागर अध्याय ४४ ॥

अशीश गगन उठे सिद्ध सुर समाजा॥ सुभट रहे देखत ही रोके दरवाजा। सूर नंद नदन गए जहाँ कंस राजा॥ २६१३॥



राग मारु॥

नवल नंदनंदन रंगभूमि राजै। श्याम तन पीत पट मनों घन मे तड़ित मोर के पंख माथे विराजै। श्रवण कुंडल झलक मनों चपला चमकि दृग अरुन कमल दल से विशाला। भौंह सुंदर धनुप बाण सम सिर तिलक केश कुंचित शोभित भृंग माला॥ हृदय वनमाल नूपुर चरण लोल चलत गजचाल अति वुद्धि विराजै। हंस मानों मानसर अरुन अंवुज सुथल निरखि आनंद करि हरपि गाजै॥ ढाल तलवारि आगे धरी रहि गई महल को पंथ खोजत न पावत। लात के लगत सिर ते गयो मुकुट गिरि केश धरि ले चले हरपि सावंत। चारि भुज धारि तेहि चारु दरशन दियो चारि आयुध चहुँ हाथ लीन्हे। असुर तजि प्राण निर्वाण पद को गयो विमल गति भई प्रभु रूप चीन्हें॥ देखि यह पुहुप वर्षा करी सुरन मिलि सिद्धि गंधर्व जै धुनि सुनाई। सुर प्रभु अगम महिमा न कछु कहि परत सुरन की गति तुरत असुर पाई। २६१४॥



राग मारू॥

देखि नृप तमकि हरि चमकि तहाँई गए दमकि लीन्हों गिरह बाज जैसे। धमकि मार्‍यो घाउ गुमकि हृदय रह्यो झमकि गहि केश लै चले ऐसे॥ ठेलि हलधर दियो झेलि तब हरि लियो महल के तरे धरणी गिरायो। अमर जय ध्वनि भई

धाक त्रिभुवन भई कंस मार्‌यो निदरि देवरायो ॥ धन्य वाणि गगन धरणि पाताल धनि धन्य हो धन्य वसुदेव ताता। धन्य अवतार सुर धरनि उपकार को सूर प्रभु धन्य बलराम भ्राता[1] ॥ २६१५ ॥



राग बिलावल ॥

जय जय ध्वनि तिहुँलोक भई। मार्‌यो कंस धरणि उद्धा-र्‌यो ओक ओक आनंद मई ॥ रजक मारिकै दंड बिभंज्यो खेल करत गज प्राण लियो। मल्ल पछारि असुर संहारे तुरत सबनि सुर लोक दियो ॥ पुर नर नारी को सुख दीन्हों जो जैसो फल सोई लह्यो। सूर धन्य यदुवंश उजागर धन्य धन्य ध्वनि घुमरि रह्यो ॥ २६१६ ॥



राग गुंडमलार ॥

हरष नर नारि मथुरा पुरी के। सोच सबको गयो दनुज कुल सब हयो तिहुँ भुवन जै भयो हरष कूबरी के ॥ निदरि मार्‌यो कंस प्रगट देखत सबै अतिहि दिन अल्प के नंद भए ढोटा। नैन दोऊ ब्रह्म से परम सोभात से भक्त को जैसे शुभ हंस जोटा ॥ देव दुंदुभी बजी अमर आनंद भए पुहुप गण वरष ही चैन जान्यो। सूर वसुदेव सुत रोहिणी नंद धनि धनि मिल्यो भुव भार अखिल जान्यो ॥ २६१७ ॥

---

१ कंस के वध के लिए देखिए श्रीमद्‌भागवत दशम स्कंध पूर्वार्द्ध अध्याय ४४। लल्लूजीलाल-कृत प्रेमसागर अध्याय ४५ ॥

राग रामकली ॥

निदरि तुरत मार्‌यो कंस देवनाथा । निदरि मार्‌यो असुर पूतना आदिते धरणि पावन करी भई सनाथा ॥ लोक लोकन विदित कथा तुरत ही गई करन स्तुतिहि जहाँ तहाँ आप । देव दुंदुभी पुहुप वृष्टि जै ध्वनि करै दुष्ट यह मारि सुर पुर पठाए ॥ केश गहि करषि यमुना धार डारिदै सुन्यो नृपनारि पति कृष्ण मार्‌यो । भई व्याकुल सबै हेतु रोवन लगी मरन को तुरत जोहत विचार्‌यो ॥ गए तहाँ श्याम बलराम बोधी सबै कहति तब नारि तुम करी नैसी । नृप सुनहु वाम इह काम ऐसोई रह्यो जानि यह बात क्यों कहति ऐसी । मरति काहे कहा तुमहि को यह भई जानि अज्ञान तुम होति काहे । सूर नृपनारि हरि वचन मान्यो सत्य हरष ह्वै श्याम मुख सबनि चाहे ॥ २६१८ ।



राग कल्याण ॥

रानिन परबोधि श्याम महलद्वारे आए । कालनेमि वंश उग्रसेन सुनत धाए ॥ झुकि चरणन पर्‌यो आइ त्राहि त्राहि नाथा । बहुतै अपराध परे छिनहु में सनाथा ॥ महाराज कहि श्रीमुख लियो उरलाई । हमको अपराध क्षमहुँ करी हम ढिठाई ॥ तबहीं सिंहासन पाउँ उग्रसेन धारे । छत्र सिर धराइ चमर अपने करढारे ॥ ठाढ़े आधीन भए देव देव भाषै । अपने जन को प्रसाद सारी सिर राखै ॥ मोकों प्रभु इती कहा विश्वंभर स्वामी । घट घट की जानत हो तुम अंतर्यामी ॥ तौ नृप कहत कहा तुमको यह केती । सेवा तुम जेती करी पुनि देहौ तेती ॥ रजक धनुष गज मल्लन कंस मारि काजा । सूरज प्रभु कीन्हों तब उग्रसेन राजा ॥ २६१९ ॥

राग बिलावल ॥

उग्रसेन को दियो हरि राज। आनंद मगन सकल पुरवासी चमर ढुरावत श्रीब्रजराज॥ जहाँ तहाँ ते यादव आए डरे डरे जे गए पराइ। मागध सूर करत सब अस्तुति जै जै जै श्री यादवराइ॥ युग युग विरद इहै चलि आयो भए बलि के द्वारे प्रतिहार। सूरदास प्रभु अज अविनासी भक्तन हेतु लेत अव-तार॥ २६२०॥



राग बिलावल ॥

मथुरा लोगनि बात सुनी यह उग्रसेन को राज दियो। सिंहासन बैठारि कृपाकरि आपु हाथ सों चमर लियो॥ मात पिता को संकट हरिहैं देवन जै ध्वनि शब्द कियो। रानी सबै मरत ते राखीं उनतें प्रभु नहिं और बियो॥ अबही सुनि वसुदेव देवकी हरषित ह्वैहै दुहुँनि हियो। सूरदास प्रभु आइ मधुपुरी दरशन ते पुरलोग जियो[1]॥ २६२१॥



(इधर कृष्ण के पिता वसुदेव ने जो वन्दीगृह मे बन्द थे कुछ समाचार सुना और स्वप्न देखा।)

राग रामकली ॥

सुन्यो वसुदेव दोउ नंदसुवन आए। त्रिया सों कहत कछु सुनति हैं री नारि रातिहू सुपन कछू ऐसे पाए॥ गए अक्रूर तिहि नृपति माँगे बोलि तुरत आए आनि कंस मारे। कहा

---

१ उग्रसेन के राज्याभिषेक के लिए देखिए श्रीमद्भागवत दशम स्कंध पूर्वार्ध अध्याय ४५। प्रेमसागर अध्याय ४६॥

पिय कहत सुनिहै बात पौंरिया जाय कैहै रहौ मष्ट धारे ॥ त्रियो लोचन ढारि नारि पति परस्पर कहा हम पाप करि जन्म लीन्हों । सात देखत बधे एक ब्रज दुरि बच्यो इतै पर बाँधि हम पंगु कीन्हों ॥ मारि डारै कहा बंदि को जीवन धृग मीच हमको नहीं मनन भूल्यो । मरै वह कंस निर्वंस विधना करै सूर क्यों हू होइ निर्मूल्यो ॥ २६२४ ॥



राग जैतश्री ॥

इहै कहत वसुदेव त्रिया जिनि रोवहु हो । भाग्य विवस सुख दुख सकल जग जोवहु हो ॥ जल दीन्है कर आनि कहत मुख धोवहु नारी । कहियत है गोपाल हरन दुख गर्वप्रहारी ॥ कबहुँ प्रगट वै होइँगे कृष्ण तुम्हारे तात । आजु कालिह हरि आइहैं यह सपने की बात ॥ अब जिनि होहि अधीर कंस यम आइ तुलानो । देखत जाइ बिलाइ झार तिनुका करि जानों ॥ ऐसो सपनो मोहिं भयो त्रिया सत्य करि मानि । त्रिभु-वनपति तेरे सुवन हैं तोहिं मिलैंगे आनि ॥ यहि अंतर हरि कह्यो मात पितु कहाँ हमारे । तहाँ लै गए अक्रूर श्याम बलराम पधारे ॥ बज्र शिला द्वारे दियो दरशन ते गयौ छूटि । सहज कपाट उघरि गए ताला कूंची टूटि ॥ जो देखे वसुदेव कुँवर दोउ काके ढोटा ए आप । दरश दियो तेहि प्रेम प्रथम जो दरश दिखाए ॥ धाइ मिले पितु मात को यह कहि मैं निजु तात । मधुरे दोउ रोवन लगे जिनि सुनि कंस डरात ॥ तुरत बंदिते छोरि कह्यो मैं कंसहि मार्‍यो । योधा सुभट संहारि मल्ल कुबलया पछार्‍यो ॥ जिय अपने जिनि डर करौ मैं

सुत तुम पितु मात । दुख बिसरौ अब सुख करौ अब काहे पछतात ॥ निहचै जननी जानि कंठधरि रोवन लागी । तब बोले बलराम मातु तुमते को भागी ॥ बार बार देवै कहे कबहूँ गोद खिलाए नाहिं । द्वादस बरसै कहाँ रहे मात पिता बलि जाहिं ॥ पुनि पुनि बोधत कृष्ण लिखौ नाहिं मेटै कोई । जोइ जोइ मन की साध कहौ मैं करिहौं सोई ॥ जे दिन गए सु ते गए अब सुख लूटहु मात । तात नृपति रानी जननि जाके मोसों तात ॥ जो मन इच्छा होइ तुरत देश्रो मैं करिहौं । गगन धरणि पाताल जात कतहूँ नहिं डरिहौं ॥ मात हृदय की जब कही तब मन बढ़्यो आनंद । महर सुवन मैं तौ नहीं मैं वसुदेव को नंद ॥ राजकरौ दिन बहुत जानि को कहैं अब तुमको । अष्टसिद्धि नवनिद्धि देहुँ मथुरा घर घर को ॥ रमा सेवकिनी देउँ करि करजोरैं दिन याम । अब जननी दुख जिनि करौ करौ जु पूरन काम ॥ धनि यदुवंशी श्याम चहुँयुग चलत बड़ाई । शेष रूप मैं राम कहत नहिं बात बनाई ॥ सूरज प्रभु दनुकुलदहन हरन करन संसार । ते पाए सुत तुमहिं करि करौ जु सुख बिस्तार ॥ २६२५ ॥



राग देवगधार ॥

मेरे माथे राखो चरन । दीनदयालु कंस दुखभंजन उग्रसेन दुखहरन ॥ परम मुदित वसुदेव देवकी गई पाइन परन । मेरो दोष मेटि करुणा करि लैचल गोकुल धरन ॥ ते जन पार भए मनमोहन जे आए तुव शरन । आए सूरदास के जीवन भवजल नवका तरन ॥ २६२६ ॥

राग रामकली ॥

तब वसुदेव हरषित गात । श्याम रामहि कंठ लाए हरषि देवै मात । अमर देव दुंदुभि शब्द भयो जैजैकार ॥ दुष्टदलि सुख दियो सतन ए वसुदेवकुमार । दुखगयो वहि हरष पूरन नगर के नर नारि ॥ भयो पूरव फल संपूरन लह्यो सुत दैतारि ॥ तुरत विप्रन बोलि पठए धेनु कोटि मँगाइ । सूर के प्रभु ब्रह्म पूरण पाइ हरषे राइ ॥ २६२७ ॥



राग काफी ॥

आजुहो निसान बाजे वसुदेवराइकै । मथुरा के नर नारि उठे सुखपाइकै ॥ अमर विमान सब कहैं हरषाइकै । फूले मात पिता दोऊ आनंद बढ़ाइकै ॥ कंस को भँडार सब देत हैं लुटाइकै । धेनु जे संकल्प राखीं लईं ते गनाइकै ॥ ताँबे रूपे सोने सजि राखी वै बनाइकै । तिलक विप्रन बंदि दई वै दिवाइकै ॥ मागध मंगन जन लेत मनभाइकै । अष्टसिद्धि नवनिधि आगे ठाढ़ी आइकै ॥ सब पुर नारि आईं मंगलन गाइकै । अंबर भूषण पठै दई पहिराइकै ॥ अखिल भुवन जन कामना पुराइकै । पुरजन धनु देत हैं लुटाइकै ॥ सूर जन दीन द्वारे ठाढ़ो भयो आइकै । कछु कृपाकरि दीजै मोहूकौं दिवाइकै ॥ २६२८ ॥



(कंसलीला के बाद कृष्ण और बलदाऊ का यज्ञोपवीत हुआ । मथुरा में बड़ा आनन्द मंगल हुआ । कृष्ण वहीं रहने लगे, राज-कार्य करने लगे और मानो वहीं के निवासी हो गये । नन्द ने कृष्ण से गोकुल चलने का अनुरोध किया । कृष्ण किसी तरह न मानते थे । नन्द और कृष्ण में बहुत उत्तर प्रत्युत्तर हुआ ।)

राग बिलावल ॥

तब बोले हरि नंद सों मधुरे करि बानी । गर्ग वचन तुमसों

कही नहिं निहचै जानी ॥ मैं आयो संसार में भुव भार उतारन। तिनको तुम धनि धन्य हो कीन्हों प्रतिपारन ॥ मातु पिता मेरे नहीं तुमते अरु कोऊ। एक बेर ब्रज लोग को मिलि हौ सुनौ सोऊ ॥ मिलन हिलन दिन चारि को तुम तो सब जानौं। मोको तुम अति सुख दियो सो कहा बखानौं ॥ मथुरा नर नारी सुनै व्याकुल ब्रजवासी। सूर मधुपुरी आइकै ये भए अविनासी ॥ २६४८ ॥



राग टोड़ी ॥

निठुर वचन जिनि कहौ कन्हाई। अतिही दुसह सह्यो नहिं जाई ॥ तुम हँसिकै बोलत ए बानी। मेरे नयन भरत है पानी ॥ अब ए बोल कबहुँ जिनि बोलौ। तुरत चलौ ब्रज आँगन डोलौ ॥ पंथ निहारत यशुमति ह्वै है। तुम बिन मोको देखि सुखैहै ॥ तब हलधर नंदहि समुझावत। कछु करि काज तुरत ब्रज आवत ॥ जननि अकेली व्याकुल ह्वै है। तुमहिं गए कछु धीरज लैहै ॥ बहुत कियो प्रतिपाल हमारो। जाइ कहौं उर ध्यान तुम्हारो ॥ व्याकुल होन जननि जिनि पावै। बार बार कहि कहि समुझावै ॥ व्याकुल नंद सुनत ए बानी। डसि मानों नागिनी पुरानी ॥ व्याकुल सखा गोप भए व्याकुल। अंतक दशा भयो भय आकुल ॥ सूर श्याम मुख निरखत ठाढ़े। मानों चितेरे लिखि सब काढ़े ॥ २६४९ ॥



राग सोरठ ॥

गोपालराइ हौं न चरण तजि जैहौं। तुमहिं छाँड़ि मधुवन

मेरे मोहन कहा जाइ व्रज लैहैं ॥ कैहौं कहा जाइ यशुमति सों जब सन्मुख उठि ऐहै । प्रात समय दधि मथत छाँड़ि कै काहि कलेऊ दैहैं ॥ बारह वर्ष दयो हम ठाढ़ो यह प्रताप बिनु जाने । अब तुम प्रगट भए वसुदेवसुत गर्ग वचन परमाने ॥ कत हम लागि महारिपु मारे कत आपदा बिनासी । डारि न दियो कमल-करने गिरि दबि मरते व्रजवासी ॥ बासर संग सखा सब लीन्हें टेरि न धेनु चरैहौ । क्यों रहिहैं मेरे प्राण दरश बिनु जब संध्या नहिं ऐहौ ॥ अब तुम राज्य करौ कोटिक युग मात पिता सुख दैहौ । कबहुँक तात तात मेरे मोहन या सुख मोसों कैहौ ॥ ऊरध श्वास चरण गति थाक्यो नैनन नीर न रहाइ । सूर नंद बिछुरे की वेदन मोपै कहिय न जाइ ॥ २६५० ॥



राग बिलावल ॥

बेगि व्रज को फिरिये नंदराइ । हमहिं तुमहिं सुत तात को नातो और पर्यो है आइ ॥ बहुत कियो प्रतिपाल हमारो सो नहिं जीने जाइ । जहाँ रहैं तहँ तहाँ तुम्हारे डारो जिनि बिस-राइ ॥ माया मोह मिलन अरु बिछुरन ऐसे ही जग जाइ । सूर श्याम के निठुर वचन सुनि रहे नयन जल छाइ ॥ २६५१ ॥



राग नट ॥

यह सुनि भए व्याकुल नंद । निठुर बाणी कही जब हरि परि गए दुखफंद ॥ निरखि मुख मुख रहे चकृत सखा अरु सब गोप । चरित ए अक्रूर कीन्हें करत मन मन कोप ॥ धाइ चर-णन परे हरि के चलहु व्रज को श्याम । कंस असुर समेत मारे

सुरन के कारि काम ॥ मोचि वंदन राज दीनों हर्ष भए वसुदेव। सूर यशुमति बिनु तुम्हारे कौन जानै देव॥ २६५२॥



राग सोरठ॥

नंद बिदा ह्वै घोष सिधारौ। बिछुरन मिलन रच्यो बिधि ऐसो यह संकोच निवारौ॥ कहियो जाइ यशोदा आगे नैन नीर जिनि ढारौ। सेवा करी जानि सुत अपने कियो प्रतिपाल हमारौ॥ हमैं तुम्हैं कछू अंतर नाही तुम जिय ज्ञान बिचारौ। सूरदास प्रभु यह बिनती है उर जिनि प्रीति बिसारौ॥ २६५३॥



राग सोरठ॥

मेरे मोहन तुमहिं बिना नहिं जैहौं। महरि दौरि आगे जब ऐहै कहा ताहि मैं कैहौं॥ माखन मथि राख्यो ह्वैहै तुम हेतु चलौ मेरे वारे। निठुर भए मधुपुरी आइकै काहे असुरन मारे॥ सुख पायो वसुदेव देवकी अरु सुख सुरन दियो। यहै कहत नँद गोप सखा सब विदरन चाहत हियो। तब माया जड़ता उपजाई ऐसो प्रभु यदुराई। सूर नंद परबोधि पठावत निठुर ठगोरी लाई॥ २६५४॥



राग नट॥

नंदहि कहत हरि ब्रज जाहु। कितिक मथुरा ब्रजहि अंतर जिय कहा पछिताहु॥ कहा ब्याकुल होत अतिहीं दूरिहूँ कहुँ जात। निठुर उर में ज्ञान बरेत्यो मानि लीन्हों बात॥ नंद भए कर जोरि ठाढ़े तुम कहे ब्रज जाउ। सूर मुख यह कहत वाणी चित नहीं कहुँ ठाउ॥ २६५५॥

राग बिलावल ॥

तुम मेरी प्रभुता बहुत करी । परम गँवार ग्वाल पशुपालक नीच दशा लै उच्च धरी ॥ रोग दोष संताप जनम के प्रगटत ही तुम सबै हरी । अष्ट महासिधि और नवो निधि करजोरे मेरे द्वार खरी ॥ तीनि लोक अरु भुवन चतुर्दश वेद पुराणन सही परी । सूरदास प्रभु अपने जन को देत परम सुख घरी घरी ॥ २६५६ ॥



राग रामकली ॥

उठे कहि माधौ इतनी बात । जेते मान सेवा तुम कीन्हीं बदलो दयो न जात ॥ पुत्र हेतु प्रतिपाल कियो तुम जैसे जननी तात । गोकुल बसत खवावत खेलत दिवस न जान्यो जात ॥ होहु बिदा घरजाहु गुसाईं माने रहिये नात । ठाढो थक्यो उतर नहिं आवै लोचन जल न समात ॥ भए बलहीन खीन तनु कंपित ज्यों बयारि बस पात । धकधकात मन बहुत सूर उठि चले नंद पछितात ॥ २६५७ ॥



राग नट ॥

फिरिकरि नंद न उत्तर दीन्हों । रोम रोम भरि गयो वचन सुनि मनहुँ चित्र लिखि कीन्हों ॥ यह तो परंपरा चलि आई सुख दुख लाभ अरु हानि । हम पर बबा मया करि रहियो सुत अपनो जिय जानि ॥ को जलपै काके पल लागे निरखि वदन सिरनायो । दुख समूह हृदय परि पूरण चलत कंठ भरि आयो ॥ अध अध पद भुव भई कोटि गिरि जौलगि गोकुल

पैठो। सूरदास अस कठिन कुलिशहु ते अजहुँ रहत तनु बैठो ॥ २६५८ ॥



राग धनाश्री ॥

चले नंद ब्रज को समुहाइ। गोप सखा हरि बोधि पठाये सबै चले अकुलाइ ॥ काहू सुधि न रही तन की कछु लटपटात परे पाँइ । गोकुल जात फिरत पुनि मधुवन मन पुनि उतहि चलाइ ॥ विरह सिन्धु में परे चेत बिनु ऐसेहि चले बहाइ। सूर श्याम बलराम छाँड़ि कै ब्रज आये नियराइ ॥ २६५९ ॥



राग भैरव ॥

बार बार मग जोवति माता ॥ व्याकुल बिन मोहन बल भ्राता ॥ आवत देखि गोप नँद साथा। विवि बालक बिनु भई अनाथा ॥ धाई धेनु बच्छा ज्यों ऐसे। माखन बिना रहे धौं कैसे ॥ ब्रजनारी हरषित सब धाईं । महरि जहाँ तहँ आतुर आईं ॥ हरषित मात रोहिणी धाई। उर भरि हलधर लेहुँ कन्हाई ॥ देखे नंद गोप सब देखे। बल मोहन को तहाँ न पेखे ॥ आतुर मिलन काज ब्रजनारी । सूर मधुपुरी रहे मुरारी ॥ २६६० ॥



राग कल्याण ॥

श्याम राम मथुरा तजि नंद ब्रजहि आए। बार बार महरि कहति जनम धृग कहाए ॥ कहूँ कहति सुनी नही दशरथ की करनी। यह सुनि नंद व्याकुल ह्वै परे मुरछि धरनी ॥ टेरि

टेरि पुहुमि परति व्याकुल व्रजनारी । सूरज प्रभु कौन दोष हमको जु बिसारी ॥ २६६२ ॥



राग सारंग ॥

उलटि पग कैसे दीन्हों नंद । छाँड़े कहाँ उभय सुत मोहन धृग जीवन मति मंद ॥ कै तुम धन यौवन मदमाते कै तुम छूटे बंद । सुफलकसुत वैरी भयो हमको लै गयो आनँदकंद ॥ राम कृष्ण बिन कैसे जीजै कठिन प्रीति के फंद । सूरदास प्रभु भई अभागिनि तुम बिनु गोकुल चंद ॥ २६६३ ॥



राग मलार ॥

दोउ ढोटा गोकुल नायक मेरे । काहे नंद छाँड़ि तुम आए प्राण जीवन सब केरे ॥ तिनके जात बहुत दुखपायो रोरि परी यहि खेरे । गोसुत गाइ फिरत हैं दहदिश बने चरित्र न थोरे ॥ प्रीति न करी राम दशरथ की प्राण तजे बिन हेरे । सूर नंद सों कहति यशोदा प्रबल पाप सब मेरे ॥ २६६४ ॥



राग सोरठ ॥

यशोदा कान्ह कान्ह कै बूझै । फूटि न गईं तिहारी चारौ कैसे मारग सूझै ॥ इक तनु जरोजात बिन देखे अब तुम दीने फूक । यह छतियाँ मेरे कुँवर कान्ह बिनु फटि न गए द्वै टूक ॥ धृग तुम धृग वै चरण अहो पति अधबोलत उठि धाए । सूर श्याम बिछुरन की हमपै देन बधाई आए ॥ २६६६ ॥

राग सोरठ ॥

नंद हरि तुमसों कहा कह्यो। सुनि सुनि निठुर वचन मोहन के क्यों करि हृदय रह्यो॥ छाँड़ि सनेह चले मंदिर कत दौरि न चरन गह्यो। फाटि न गई वज्र की छाती कत यहि शूल सह्यो॥ सुरति करत मोहन की बातैं नैनन नीर बह्यो। सुधि न रही अति गलित गात भयो जनु डसि गयो अह्यो॥ कृष्ण छाँड़ि गोकुल कत आए चाखन दूध दह्यो। तजे न प्राण सूर दशरथ लौं हुतो जन्म निबह्यो॥ २६६७॥



राग सोरठ ॥

मेरो अति प्यारो नँदनंद। आए कहाँ छाँड़ि तुम उनको पोच करी मति मंद॥ बल मोहन दोउ पीड़ नयन की निरखत ही आनंद। सरवर घोष कुमोदिनि ब्रज जन श्याम वदन विन चंद॥ काहे न पाँइ परे वसुदेव के घालि पाग गरे फंद। सूर दास प्रभु अबके पठवहु सकल लोक मुनिवंद॥ २६६८॥



अथ नंदवचन यशोदाप्रति ॥ राग रामकली ॥

तब तू मारिबोई करति। रिसनि आगे कहि जो आवत अबलै भाँड़े भरति॥ रोस कै कर दाँवरी लै फिरति घर घर धरति। कठिन हिय करि तब जो बाँध्यो अब वृथा करि मरति॥ नृपति कंस बुलाइ पठयो बहुत कै जिय डरति। इह कछू विपरीत मो मन माँझ देखी परति॥ होनहारी होइहै सोइ अब यहाँ कत अरति। सूर तब किन फेरि राखेइ पाइ अब केहि परति॥ २६६९॥

यशोदावचन नंदप्रति ॥ राग अडानो ॥

कहा ल्यायो तजि प्राण जीवन धन । राम कृष्ण कहि मुरछि परी घर यशोदा देखत लोगन ॥ विद्यमान हरि वचन श्रवण सुनि कैसे गए न प्राण छूटि तन । सुनि यह कथा दशरथ की तऊ नहिं लाज भई तेरे मन ॥ मद हीन अति भयो नंद अति होत कहा पछिताने छिन छिन । सूर नंद फिरि जाहु मधुपुरी ल्यावहु सुत करि कोटि जतन ॥ २६७० ॥



समूह ब्रज लोग वचन ॥ राग केदारो ॥

कहो नंद कहाँ छाँड़े कुमार । कैसे प्राण रहे सुत बिछुरत पूछैं गोपी ग्वार ॥ करुणा करै यशोदा माता नैनन नीर बहै असरार । चितवत नंद ठगे से ठाढ़े मानो हाऱ्यो हेम जुआर ॥ मुरली नहिं सुनिअत ब्रज मे सुर नर मुनि नहि करतहुँ बार । सूरदास प्रभु के बिछुरेते कोऊ नही झाँकते द्वार ॥ २६७१ ॥



अथ ग्वालवचन ॥ राग नट ॥

ग्वालन कही कही ऐसी जाइ । भए हरि मधुपुरी राजा बड़े वंश कहाइ ॥ सूत मागध वदत विरदहि वरणि वसुद्यौ सात । राजभूषण अंग भ्राजत अहीर कहत लजात ॥ मात पितु वसुदेव देवै नंद यशुमति नाहि । यह सुनत जल नैन ढारत मींजि कर पछिताहि ॥ मिली कुबिजा मलै लैकै सो भई अरधंग । सूर प्रभु बसभए ताके करत नाना रंग ॥ २६७२ ॥



अथ गोपीवचन कुबिजाप्रति ॥ राग गौरी ॥

कुबिजा मिली कहौ यह बात । मात पिता बसुदेव देवकी

मन दुख मुख हरषात ॥ सुंदरि भई अंगपरसतहीं करी सुहागिनि भारी। नृपति कान्ह कुबिजा पटरानी हँसति कहति ब्रजनारी ॥ सौतिशाल उर मे अति शाल्यो नखशिख लौं भहरानी। सूरदास प्रभु ऐसेई भाई कहति परस्पर बानी ॥ २६७३ ॥



(इस प्रकार बहुत से ताने देते देते श्यामरंग के विषय में गोपियाँ कहती है .—) राग मलार ॥

सखी री श्याम सबै इक सार। मीठे वचन सुहाये बोलत अंतर जारनहार ॥ भवँर कुरंग काग अरु कोकिल कपटिन की चटसार। कमलनयन मधुपुरी सिधारे मिटि गयो मंगलचार ॥ सुनहु सखी री दोष न काहू जो विधि लिखो लिलार। यह करतूति इन्हैकी नाईं पूरब विविध विचार ॥ उमँगी घटा नाषि आवै पावसप्रेम की प्रीति अपार। सूरदास सरिता सर पोषत चातक करत पुकार ॥ २६८७ ॥



राग मलार ॥

सखीरी श्याम कहा हितु जानै। कोऊ प्रीति करै कैसेहूँ वे अपनो गुण ठानै ॥ देखो या जलधर की करनी वरषत पोषै आनै। सूरदास सरवस जो दीजै कारो कृतहि न मानै ॥२६८८॥



राग सारंग ॥

तिनहि न पतीजै री जे कृतहीन माने । ज्यों भँवरा रस चाखि चाहिकै तहाँ जाइ जहाँ नवतन जाने ॥ कोयल काग पालि कहा कीन्हों मिले कुलहि जब भए सयाने। सोई घात

भई नंदमहर की मधुबन ते जो आने ॥ तब तो प्रेम विचार न कीन्हें होत कहा अबके पछिताने । सूरदास जे मन के खोटे अवसर परे जाहिं पहिचाने ॥ २६८९ ॥



राग धनाश्री ॥

तब ते मिटे सब आनंद । या ब्रज के सब भाग संपदा लैजु गए नँदनंद ॥ विह्वल भई यशोदा डोलत दुखित नंद उपनंद । धेनु नहीं पय स्रवति रुचिर मुख चरति नाहिं तृण कंद ॥ विषम वियोग दहत उर सजनी बाढ़ि रहे दुखदंद । शीतल कौन करे री माई नाहिं इहाँ हरिचंद ॥ रथ चढ़ि चले गहे नहिं काऊ चाहि रही मतिमंद । सूरदास अब कौन छोड़ावै परे बिरह के फंद ॥ २६९० ॥



अथ नंदयशोदावचन परस्पर ॥ राग रामकली ॥

इक दिन नंद चलाई बात । कहत सुनत गुण राम कृष्ण के ह्वै आयो परभात ॥ वैसहि भोर भयो यशुमति को लोचन जल न समात । सुमिरि सनेह विरह उर अंतर ढरि आवत ढरिजात ॥ यद्यपि वै वसुदेव देवकी हैं निज जननी तात । बार एक मिलि जाहु सूर प्रभु धाइहु के नात ॥ २६९४ ॥



राग गौरी ॥

चूक परी हरि की सिवकाई । यह अपराध कहाँ लौं कहिए कहि कहि नंदमहर पछिताई ॥ कोमल चरण कमल कंटक कुश हम उनपै वनगाइ चराई । रंचक दधि के काज यशोदा बाँधे

कान्ह उलूखल लाई ॥ इंद्र कोप जानि ब्रज राखे बरुन फाँस मान मेरी निठुराई । सूर अजहुँ नातो मानत है प्रेमसहित करै नंद दोहाई ॥ २६६५ ॥



राग सोरठ ॥

हरि की एकौ बात न जानी । कहौ कंत कहा तज्यो श्याम को अतिहि विकल पूछति नँदरानी ॥ अब ब्रज सुनो भयो गिरिधर बिनु गोकुल मणि बिलगानी । दशरथ प्राण तज्यो छिन भीतर बिछुरत शारंगपानी ॥ ठाढ़ि रही ठगोरी डारी बोलत गदगद बानी । सूरदास प्रभु गोकुल तजि गए मथुराही मनमानी ॥ २६६६ ॥



राग सारंग ॥

लै आवहु गोकुल गोपालहि । पाँइन परिकै बहु बिनती करि बलि छलि बाह रसालहि ॥ अबकी बार नेक देखरावहु यहि ब्रज नंद आपने लालहि । गाइन गनत ग्वाल गोसुत सँग सिखवत वेणु रसालहि ॥ यद्यपि महाराज सुख संपति कौन गिने मोती मणि लालहि । तदपि सूर वे छिन न तजत हैं वा घुँघुची की मालहि ॥ २६६७ ॥



राग सोरठ ॥

सराहौं तेरो नंद हियो । मोहन सों सुत छाँड़ि मधुपुरी गोकुल आनि जियो ॥ कहा कहौं मेरे लाल लड़ैते जब तू बिदा कियो । जीवन प्राण हमारे ब्रज को वसुदेव छीनि लियो ॥ कह्यो

पुकारि पार पचिहारी बरजत गमन कियो। सूरदास प्रभु श्यामलाल धन ले परहाथ दियो ॥ २६९८ ॥

राग बिलावल ॥

यद्यपि मन समझावत लोग। शूल होत नवनीत देखि मेरे मोहन के मुख योग ॥ निशिबासर छतियाँ लै लाऊँ बालक लीला गाऊँ। वैसे भाग बहुरि फिर ह्वैहैं मोहन मोद खवाऊँ ॥ जा कारण मुनि ध्यान धरैं शिव अंग विभूति लगावै। सो बालकलीला धरि गोकुल ऊखल साथ बँधावै ॥ विदरत नहीं बज्र को हृदय हरिवियोग क्यों सहिए। सूरदास प्रभु कमलनैन बिनु कौने बिधि ब्रज रहिए ॥ २६९९ ॥

राग कान्हरो ॥

नंदब्रज लीजै ठोंकि बजाइ। देहु बिदा मिलि जाहिं मधुपुरी जहँ गोकुल के राइ ॥ नैनन पंथ गयो क्यों सूझयो उलटि दियो जब पाइ। रघुपति दशरथ सुनी है पर मरिबे गुण गाइ ॥ भूमि मशान विदित ए गोकुल मनहु धाइ धाइ खाइ। सूरदास प्रभु पास जाहिं हम देखैं रूप अघाइ ॥ २७०० ॥

राग सोरठ ॥

माई हौं किन संग गई। हो ए दिन जानतही बूड़ी लोगन की सिखई ॥ मोको वैरी भए कुटुँब सब फेरि फेरि ब्रज गाड़ी। जो हौं कैसेहु जान पावती तौ कत आवत छाँड़ी ॥ अबहौं जाइ

यमुनजल बहिहौं कहा करौं मोहिं राखी। सूरदास वा भाइ फिरतहौं ज्यों मधु तोरे माखी॥ २७०१॥



राग मलार॥

हौं तौ माई मथुराही पै जैहौं। दासी ह्वै वसुदेवराइ की दरशन देखत रैहौं॥ राखि राखि एते दिवस मोहि कहा कियो तुम नीको। सोऊ तौ अक्रूर गए लै तनक खिलौना जी को। मोहि देखिकै लोग हँसेंगे अरु किन कान्ह हँसै। सूर अशीश जाइ देहौं जिनि न्हातहु बार खसै॥ २७०२॥



(यशुमति ने पंथी के हाथ मथुरा को संदेसा भेजा।—) राग सारंग॥

पंथी इतनी कहियो बात। तुम बिनु इहाँ कुँवरवर मेरे होत जिते उतपात॥ बकी अघासुर टरत न टारे बालक बनहि न जात। ब्रजपिंजरी रूँधि मनों राखे निकसन को अकुलात॥ गोपी गाय सकल लघु दीरघ पीत वरण कृश गात। परम अनाथ देखियत तुम बिनु केहि अवलंबिये प्रात॥ कान्ह कान्ह कै टेरत तबधौं अब कैसे जिय मानत। यह व्यवहार आजुलौं है ब्रज कपट नाट छल ठानत॥ दसहू दिशि ते उदित होतहै दावानल के कोट। आँखिन मूँदि रहत सन्मुखह्वै नाम कवचदै ओट॥ ए सब दुष्ट हने अरि जेते भए एकही पेट। सत्वर सूर सहाइ करौ अब समुझि पुरातन हेट॥ २७०३॥



राग सारंग॥

कहियो श्याम सों समुझाइ। वह नातो नहिं मानत मोहन मनौ तुम्हारी धाइ॥ एक बार माखन के काजे राखे मैं अटकाई।

वाको बिलग मानो जिनि मोहन लागत मोहिं बलाई ॥ बारहि बार इहै लवलागी गहे पथिक के पाँइ । सूरदास या जननी को जिय राखौ वदन देखाइ ॥२७०४॥



राग बिलावल ॥

यद्यपि मन समुझावत लोग । शूल होत नवनीत देखि मेरे मोहन के मुखयोग ॥ प्रातकाल उठि माखन रोटी को बिनमाँगे देहै । अब उहि मेरे कुँवर कान्ह को छिन छिन अंकम लैहै ॥ कहियो पथिक जाइ घर आवहु रामकृष्ण दोउ भैया । सूर श्याम कत होत दुखारी जिनके मो सी मैया ॥ २७०५ ॥



राग रामकली ॥

मेरो कहा करत ह्वैहै । कहियहु जाइ बेगि पठवहिं गृह गाइनि को द्वैहै ॥ दीजै छाँड़ि नगर वारी सब प्रथम बोरि प्रतिपारो । हमेहूँ जिय समुझैं नहिं कोऊ तुम तहि हितू हमारो ॥ आजुहि आजु काल्हि काल्हिहि करि भलो जगत यश लीन्हों । आजहुँ काल्हि कियो चाहत हो राज्य अटल करि दीन्हों ॥ परदा सूर बहुत दिन चलती दुहुँहुनि फबती लूटि । अंतहु कान्ह आयहौ गोकुल जन्म जन्म की तूटि ॥ २७०६ ॥



राग रामकली ॥

संदेसो देवकी सों कहियो । हौं तौ धाइ तुम्हारे सुत की मया करति रहियो ॥ यद्यपि टेव तुम जानत उनकी तऊ मोहिं कहि आवै । प्रातहि उठत तुम्हारे कान्ह को माखन रोटी भावै ॥ तेल

उबटनो अरु ताता जल ताहि देखि भजिजाते । जोइ जोइ माँगत सोइ सोइ देती क्रम क्रम करि करि न्हाते ॥ सूर पथिक सुनि मोहिं रैनि दिन बढ़्यौ रहत उर सोच। मेरा अलक लड़ैतो मोहन ह्वैहै करत सँकोच ॥ २७०७ ॥



राग सोरठ ॥

मेरो कान्ह कमलदललोचन । अबकी बेर बहुरि फिरि आवहु कहाँ लगे जिय सोचन ॥ यह लालसा होत जिय मेरे बैठी देखत रैहौं । गाइ चरावन कान्हकुँवर सों भूलि न कबहूँ कैहौं ॥ करत अन्याय न बरजौं कबहूँ अरु माखन की चोरी। अपने जियत नैन भरि देखौं हरि हलधर की जोरी । एक बेर ह्वै जाहु इहाँ लौं अनत कहूँ के उत्तर। चारिहु दिवस आनि सुख दीजै सूर पहुनई सूतर ॥ २७०८ ॥



अथ पंथीवाक्य देवकी प्रति ॥ राग आसावरी ॥

हौं इहाँ गोकुलहीं ते आई। देवकी माई पाँइ लागति हौं यशुमति इहाँ पठाई ॥ तुमसों महरि जुहार कह्यो है कहहु तौ तुमहिं सुनाऊँ। बारक बहुरि तुम्हारे सुत को कैसेहुँ दरशन पाऊँ ॥ तुम जननी जग विदित सूर प्रभु हौं हरि को हितधाइ। जो पठवहु तौ पाहुन नाते आवहि बदन दिखाइ ॥ २७०९ ॥



राग सारंग ॥

जो परिराखत हो पहिंचानि । तो अबकै वह मोहन मूरति मोहिं देखावहु आनि ॥ तुम रानी वसुदेव गेहनी हौं गँवारि

ब्रजवासी । पठै देहु मेरो लाड़लड़ैतौ वारौ ऐसी हाँसी ॥ भली करी कंसादिक मारे सब सुरकाज किये। अब इन गैयन कौन चरावै भरि भरि लेत हिये ॥ खान पान परिधान राजसुख जो कोउ कोटि लड़ावै । तदपि सूर मेरो बारो कन्हैया माखनही सचुपावै ॥ २७१० ॥



राग सोरठ ॥

मेरे कुँवर कान्ह बिनि सब कछु वैसेहि धर्‌यो रहै । को उठि प्रात होत लै माखन को कर नेत गहै ॥ सूने भवन यशोदा सुत के गुनि गुनि शूल सहै । दिन उठि घेरतही घर ग्वारनि उरहन कोउ न कहै । जो ब्रज में आनंद हो तो मुनिमन साहु न गहै । सूरदास स्वामी बिनु गोकुल कौड़ीहू न लहै ॥ २७११ ॥



(इधर गोपिया कृष्ण के विरह में व्याकुल हो रहीं और परस्पर कहने लगी —) राग नट ॥

अब तो ऐसेई दिन मेरे । कहा करों सखि दोष न काहू हरि-हित लोनन फेरे ॥ मृगमद मलय कपूर कुमकुमा ए सब संतत चेरे । मादप वन शशि कुसुम सकोमल तेउ देखियत जु कड़ेरे ॥ वन वन बसत मोर चातक पिक आपुन दिए वसेरे । अब सोइ बकत जाहि जोइ भावै बरजे रहत न मेरे ॥ जे द्रुम सींचि सींचि अपने कर कियो बढ़ाय बड़ेरे । तिन सुनि सूर किसल गिरिवर भए आनि नैन मग घेरे ॥ २७२० ॥



राग सारंग ॥

बिनु गोपाल बैरिनि भईं कुंजैं । जे वै लता लगततनु शीतल

अब भईं विषम अनल की पुंजैं ॥ वृथा बहुत यमुनातट खगरो वृथा कमलफूलनि अलि गुंजैं । पवन पानि घनसारि सुमन दै दधिसुत किरिनि भानु भै भुंजैं ॥ प ऊधो कहियो माधो सों मदन मारि कीन्हीं हम लुंजैं । सूरदास प्रभु तुम्हरे दरश को मग जोवत अँखियन भई धुंजैं ॥ २७२१ ॥



राग कान्हरो ॥

सोचति राधा लिखति नखन में वचन न कहत कंठ जल तास । छुति पर कमल कमल पर कदली पंकज कियो प्रकास ॥ तापर अलि सारंग पर सारंग प्रति सारंग रिपु लै कियो वास । तहाँ अरिपंथ पिता युग उदितवारिज विविध रंग भयो अभास ॥ सारंग मुख ते परत अंबु ढरि मन शिव पूजति तपति विनास । सूरदास प्रभु हरि विरहा रिपु दाहत अंग दिखावत वास ॥२७२३॥



राग नट ॥

मैं सब लिखि शोभा जु बनाई । सजल जलद तन वसन कनक रुचि उर बहुदाम रु राई ॥ उन्नतकंध कटि खीन विशद भुज अंग अंग प्रति सुखदाई । सुभग कपोल नासिका नैन छबि अलक लिहित धृतपाई ॥ जानति हीय हलोल लेख करि ऐसेहि दिन विरमाई । सूरदास मृदु वचन श्रवण को अति आतुर अकुलाई ॥ २७२४ ॥



राग गौरी ॥

सुरति करि वहाँ की बात रोइ दियो । पंथी एकु देखि मारग

मे राधा बोलि लियो ॥ कहिधौं वीर कहाँते आयो हम जु प्रणाम कियो। पालागों मंदिर पगु धारो सुनि दुख यान त्रियो॥ गद्गद् कंठ हियो भरि आयो वचन कह्यो न दियो। सूर श्याम अभिराम ध्यान मन भर भर लेत हियो ॥ २७२५ ॥

राग मलार ॥

कहियो पथिक जाइ हरि सों मेरो मन अटको नैनन के लेखे। इहै दोष दैदै झगरत है तब निरखत मुख लगी क्यों न मेखे॥ कैतो मोहि बताय दबकियो लगी पलक जड़ जाके पेखे। ते अब अब इनपै भरि चाहत विधि जो लिखे दरशन सुख रेखे॥ यहि-विधि अनुदिन जुरति जतनकरि गनत गए अँगुरिन अवसेखे। सूरदास मुनि इनि झगरनि ते नहिं चित घटत बदन बिन देखे ॥ २६ ॥



राग इमन ॥

नाथ अनाथन की सुधि लीजै। गोपी गाइ ग्वाल गोसुत सब दीन मलीन दिनहि दिन छीजै॥ नैन सजल धारा बाढ़ी अति बूड़त ब्रज किन करगहि लीजै॥ इतनी बिनती सुनहु हमारी बारकहू पतियाँ लिखि दीजै॥ चरण कमल दरशन नवनौका करुणासिंधु जगत यश लीजै। सूरदास प्रभु आस मिलन की एक बार आवन ब्रज कीजै ॥ २७२७ ॥



राग सारंग ॥

दिशिअति कालिंदी अतिकारी। अहो पथिक कहियो

उन हरि सों भई विरहज्वरजारी ॥ मन पर्यक ते परी धरणिधुकि तरंग तलफ नित भारी । तट बारू उपचार चूरजल परी प्रसेद पनारी ॥ बिगलित कच कुच कास कुलिन पर पंकजु काजल सारी । मन में भ्रमर ते भ्रमत फिरतहैं दिशि-दिशि दीन दुखारी । निशिदिन चकई बादि बकत है प्रेममनोहर हारी । सूरदास प्रभु जोई यमुनगति सोइ गति भई हमारी ॥ २७२८ ॥



राग सारंग ॥

परेखो कौन बोल को कीजै । ना हरि जाति न पाँति हमारी कहा मानि दुख लीजै ॥ नाहिन मोर चंद्रिका माथे नाहिन उर बनमाल । नहिं सोभित पुहुपन के भूषण सुंदर श्यामतमाल ॥ नंद नंदन गोपीजन वल्लभ अब नहीं कान्ह कहावत । वासुदेव यादव कुलदीपक बंदीजन बर भावत ॥ बिसन्यो सुख नातो गोकुल को और हमारे अंग । सूर श्याम वह गई सगाई वा मुरली के संग ॥ २७२९ ॥



राग सारंग ॥

बटाऊ होहिं न काके मीत । संगरहत सिरमेलि ठगौरी हरत अचानक चीत ॥ मोहे नैन रूप दरशन के श्रवण मुरलिका गीत । देखतही हरिले जु सिधारे बाँधि पछौरी पीत ॥ याही ते झुकति इहै मग चितवति सुख जु भए विपरीत । सूरदास वरु भली पिंगला आसा तजि परतीत ॥ २७३० ॥

राग मलार ॥

कहा परदेसी को पतियारो। पीछेही पछिताहि मिलहुगे प्रीति बढ़ाइ सिधारो॥ ज्यो मृगनाद नाद के बांधे लाग्यो वान विसारो। प्रीति के लिए प्राण वस कीनो हरि तुम यहै विचारो॥ बलि अरु बालि सुपनखा बापुरी हरि ते कहाँ दुरायो। सूरदास प्रभु जानि भलेहैा भर्यो भरायो डरायो॥ २७३१॥



राग मलार ॥

कहा परदेसी को पतिआरो। प्रीति बढ़ाय चले मधुवन को विछुरि दियो दुखभारो॥ ज्यों जलहीन मीन तरफत ऐसे विकल प्राण हमारो। सूरदास प्रभु के दरशन बिनु ज्यों बिनु दीपक भौन अँधियारो॥ २७३२॥



राग आसावरी ॥

सखी री हरि को दोष जनि देहु। ताते मन इतनो दुख पावत मेरोई कपट सनेहु॥ विद्यमान अपने इन नैननि सूनो देखति गेहु। तदपि सखी व्रजनाथ विना उर फटि न होत बड़ वेहु॥ कहि कहि कथा पुरातन सजनी अब जिन अंतहि लेहु। सूरदास तन योगकरौंगी ज्यों फिरि फागुन मेहु॥ २७३३॥



राग मलार ॥

अब कछु औरहि चाल चली। मदनगोपाल बिना या तनु की सबै बात बदली॥ गृह कंदरा समान सेज भई चाहि सिंहहू थली। शीतल चंद्र सुनौ सखि कहियत तिनहूँ अधिक

जली ॥ मृगमद मलय कपूर कुमकुमा सींचति आनि अली। पकन फुरत बिरह ज्वर ते कछु लागति नाहिं भली ॥ वह ऋतु अमृत लता सुनि सरज अब विषफलनि फली। हरि विधु मुख नहिं नहिं नै फूलति मनसा कुमुद कली ॥ २७३४ ॥



राग सारंग ॥

इहिविरियाँ बन ते ब्रज आवते। दूरहिते वह बैन अधर धरि बारंबार बजावते ॥ कबहुँक काहू भाँति चतुर चित अति ऊँचे सुरगावते। कबहुँक लैलै नाम मनोहर धवरी धेनु बुलावते ॥ इहि बिधि बचन सुनाय श्याम घन मुरछे मदन जगावते। आगम सुख उपचार विरह ज्वर वासर ताप नसावते ॥ रुचि रुचि प्रेम पियासे नैनन क्रम क्रम बलहिं बढ़ावते। सूरदास स्वामी तिहि अवसर पुनि पुनि प्रगट करावते ॥ २७३५ ॥



राग सोरठा ॥

कहा दिन ऐसेही जैहैं। सुन सखि मदनगोपाल अब किन ग्वालन संग रैहैं ॥ कबहूँ जात पुलिन यमुना के बहुबिहार बिधि खेलत। सुरत होत सुरभी सँग आवत बहुत कठिन करि झेलत ॥ मृदु मुसुकानि आनि राखे पिय चलत कह्यो है आवन। सूर सो दिन कबहूँ तौ ह्वैहै मुरली शब्द सुनावन ॥ २७५२ ॥



राग मलार ॥

श्याम सिधारे कौने देस। तिनको कठिन करे जो सखी री जिनको पिय परदेस ॥ उन ऊधो कछु भली न कीन्ही कौन

तजन को बेस । छिन बिनु प्रान रहत नहिं हरिबिन निशिदिन अधिक अँदेस ॥ अतिहि निठुर पतियाँ नहिं पठई काहू हाथ सँदेस । सूरदास प्रभु यह उपजत है धरिए योगिनिवेस॥२७५३॥



राग मल्हार ॥

गोपालहि पावौं धौं केहि देश । शृंगी मुद्रा कनक खपर करिहौं योगिन भेष ॥ कंथा पहिरि विभूति लगाऊँ जटा बधाऊँ केश । हरि कारण गोरखहि जगाऊँ जैस स्वाँग महेश ॥ तन मन जारों भस्म चढ़ाऊँ बिरहिन गुरु उपदेश । सूरश्याम बिनु हमहैं ऐसी जैसे मणि बिन शेष ॥ २७५४ ॥



राग केदारो ॥

फिरि ब्रज आइए गोपाल । नंद नृपति कुमार कहिहैं अब न कहिहैं ग्वाल ॥ मुरलिका सुर सप्त दिशि दिशि चले निसान बजाइ । दिग्विजय को युवति मंडल भूप परिहैं पाइ ॥ सुरभीसेन सु सखा भट सँग उठैगी खुर रेनु । आवत पत्र मयूर चंद्रिका लसतिहै रवि ऐनु ॥ सदल पति मधुकरनि करवर मदन आयसु पाइ । द्रुम लता बन कुसुम बानकु बसन कुटी बनाइ ॥ सकल खग गण पैक पायक पँवरिया प्रतिहार । समै सुख गोविंद ब्रज को कहत सूर विचार ॥ २७५५ ॥



राग जैतश्री ॥

फिरिकै बसो गोकुलनाथ । अब न तुमहिं जगाय पठवैं गोधनन के साथ ॥ बरजैं न माखन खात कबहूँ दह्यो देत लुढ़ाइ ।

अब न देहिं उराहनों यशुमतिहि आगे जाइ ॥ दौरि दामन देहिंगी लकुटी यशोदा पानि। चोरी न देहिं उघारिकै अवगुण न कहिहैं आनि ॥ कहिहैं न चरणन देन जावक गुहन बेनी फूल। कहिहैं न करन शृंगार कबहीं बसन यमुनाकूल ॥ करिहैं न कबहीं मान हम हठि है न माँगत दान। कहिहैं न मृदु मुरली बजावन करन तुमसों गान ॥ देहु दरशन नंदनंदन मिलनहूँ की आस। सूर हरि के रूप कारन मरत लोचन प्यास ॥२७५६॥



राग जैतश्री ॥

हरि सों प्रीतम क्यों बिसराहि। मिलन दूरि मन बसत चंद्र पर चित चकोर पछताहि ॥ जल मे रहहि जलहि ते उपजहि जलही बिन कुँभिलाहि। जल तजि हंस चुगै मुक्ताफल मीन कहा उड़िजाहि ॥ सोइ गोकुल गोवर्धन सोई सोइ किन करहि अब छाहि। प्रगट न प्रीति करै परदेसी सुख केहि देस समाहि ॥ धरणी दुखित देखि बादर अति वर्षाऋतु बरषाहिं। सूरदास प्रभु तुम्हरे मिलन बिन दुख क्यों हृदय समाहिं ॥ २७५७ ॥



राग जैतश्री ॥

बारक जाइबो मिलि माधो। को जानै तनु छूटि जाइगो शूल रहै जिय साधो ॥ पहुनेहु नंद बबा के आवहु देखि लेउँ पल आधो। मिलेही में विपरीति करी बिधि होत दरश को बाधो ॥ सो सुख शिव सनकादि न पावत सो सुख गोपिन लाधो। सूरदास राधा विलपति है हरि को रूप अगाधो ॥ २७५८ ॥

राग धनाश्री ॥

लोचन लालच ते न टरैं । हरिमुख ए रंग संग विधे दाधौ फिरैं जरैं ॥ ज्यों मधुकर रुचि रच्यो केतकी कंटक कोटि अरैं । तैसोई लोभ तजत नहिं लोभी फिरि फिरि फिरी फिरैं ॥ मृग ज्यों सहत सहज सरदारन सन्मुख ते न टरें । जानत आहि हते तनु त्यागत तापर हितहि करै ॥ समुझि न परै कवन सच पात्रत जीवत जाइ मरै । सूर सुभट हठ छाँड़त नाहीं काटो शीश लरैं ॥ २७७० ॥



राग सारंग ॥

लोचन चातक जीवो नहिं चाहत । अवधि गए पावस की आसा क्रम क्रम करि निरवाहत ॥ सरिता सिंधु अनेक अवर सखी विलसत पति सज्जन सनेह । ए सब जल यदुनाथ जलद विनु अधिक दहत है देह ॥ जब लगि नहिं बरषत ब्रज ऊपर नौघन श्याम शरीर । तौ इह तृषा जाय क्यों सूरज आनि ओस के नीर ॥ २७७१ ॥



राग गौरी ॥

कहा इन नैनन को अपराध । रसना रटत सुनत यश श्रवण इतनी अगम अगाध ॥ भोजन किये विनु भूँख क्यों भाजै विनखाए सब स्वाध । इकटक रहत छुटत नहिं कबहूँ हरि देखन की साध ॥ ये दृग दुखी बिना वह मूरति कहो कहा अब कीजै । एक वेर व्रज आनि कृपाकरि सूर सो दरशन कीजै ॥२७७२॥

राग मलार ॥

चितवतही; मधुवन तन जात। नैनन नींद परति नहिं सजनी सुनि सुनि बात मन अकुलात ॥ अब ए भवन देखिअत सुनो धाइ धाइ हमको ब्रजखात। कवन प्रतीति करै मोहन की जेहि छाँड़े निज जननी तात ॥ अनुदिन नैन तपत दरशन को हरदि समान देखिअत गात। सूरदास स्वामी के बिछुरे ऐसे भए हमारे धात ॥ २७७६ ॥



राग मलार ॥

देख सखी उतहै वह गाउँ। जहाँ बसत नँदलाल हमारे मोहन मथुरा नाउँ ॥ कालिंदी के कूल रहत हैं परम मनोहर ठाउँ। जो तनुपंख होइ सुन सजनी आजु अबहिं उड़िजाउँ। होनो होउ होउ सो अबहीं यहि ब्रज अन्न न खाउँ ॥ सूरदास नँदनंदन सों रति लोगन कहा डराउँ ॥ २७८० ॥



राग गौरी ॥

मथुरा के द्रुम देखिअत न्यारे। वहाँ श्याम हमारे प्रीतम चितवत लोचन हारे ॥ कितिक बीच संदेहु दुर्लभ सुनियत टेर पुकारे। तुव गुण सुमिरि सुमिरि हम मोहन मदन बान उर मारे ॥ तुम बिन श्याम सबै सुख भूलो गृह बन भए हमारे। सूरदास प्रभु तुम्हरे दरश बिनु रैनि गनत गए तारे ॥ २७८१ ॥



राग कान्हरो ॥

मैं जान्यो री आए हैं हरि चौंकि परेते पछितानी। इते मान तन तलफत वहिते जैसे मीन तट बिन पानी ॥ सखी सुदेह ते

जरति विरह ज्वर तनु पुनि पुनि नहिं प्रकृत्यो आनी । कहा करौं अपथि भई मिलि बढ़ी व्यथा दुख दुहरानी ॥ पठवो पथिक सब समाचार लिखि बिपति विरह वपु अकुलानी । सूरदास प्रभु तुम्हरे दरश बिना कैसे घटत कठिन कानी ॥ २७८७ ॥



राग मलार ॥

ज्यों जागो तो कोऊ नाहीं अंत लगी पछितान । हौं जानौं साँचे मिले माधौ भूलो यहि अभिमान ॥ नींद माहिं मुरझाई रहिहो प्रथम पंच संधान । अब उर अंतर मेरी माई सपने छुटी छलिवान ॥ सूर सकत जैन लछिमन तन विह्वल होइ मुरझान । ल्याउ सजीवन मूर श्याम को तौ रहि है प्रान ॥ २७८८ ॥



राग कल्याण ॥

हरि बिछुरन निशि नींद गई री । वन प्रिय विरह शिली-मुख मधुपति वचननि हौं अकुलाई री ॥ वह जु हुती प्रतिमा समीप की सुख संपति दुरंत जई री । ताने भर हरि सुन री सजनी सेज सलिल दृगनीर भई री ॥ अबऊ अधार जु प्राण रहत हैं इनिवसहिन मिलि कठिन ठई री । सूरदास प्रभु सुधा-रस बिना भई सकल तनु बिरह रई री ॥ २७८९ ॥



राग केदारो ॥

बहुन्यौ भूलि न आँखि लगी । सुपनेहु के सुख न सहिसकी नींद जगाइ भगी ॥ बहुत प्रकार निमेष लगाए छूटि नही शठगी । जनु हीरा हरि लिए हाथ ते ढोल बजाइ ठगी ॥ कर मीड़ति

पछिताति बिचारति इहि बिधि निशा जगी। वह मूरत वह सुख दिखरावै सोई सूर सगी ॥ २७१० ॥



राग धनाश्री ॥

मति कोऊ प्रीति के फंग परै। सादर संत देखि मन मानै पेखै प्राण हरै ॥ या पतंग कहा कर्म कीन्हों जीव को त्याग करै। अपने मरबे ते न डरत है पावक पैठि जरै॥ भौ करत नहीं ताहि निपाते केतिक प्रेम धरै। शारंग सुनत नाद रस मोह्यो मरिबे ते न डरै॥ जैसे चकोर चंद्र को चाहत जल बिन मीन मरै। सूर प्रभु सों ऐसे करि मिलिए तौ कहौ का न सरै ॥२८०८॥



राग सारंग ॥

प्रीति करि काहू सुख न लह्यो। प्रीति पतंग करी दीपक सों आपै प्राण दह्यो॥ अलिसुत प्रीति करी जलसुत सों संपति हाथ गह्यो। शारंग प्रीति करी जो नाद सों सन्मुख बान सह्यो॥ हम जो प्रीति करी माधौ सों चलत न कछू कह्यो। सूरदास प्रभु बिनु दुख दूनो नैनन नीर बह्यो॥ २८०९ ॥



राग मलार ॥

प्रीति तो मरनऊ न बिचारै। प्रीति पतंग ज्योति पावक ज्यों जरत न आपु सँभारै ॥ प्रीति कुरंग नाद स्वर मोहित बधिक निकट ह्वै मारै। प्रीति परेवा उड़त गगन ते गिरत न आपु सँभारै॥ सावन मास पपीहा बोलत पिय पिय करि जो पुकारै। सूरदास प्रभु दरशन कारन ऐसी भाँति बिचारै ॥२८१०॥

राग मलार ॥

जिन कोउ काहु के बस होहि । ज्यों चकई दिनकर बस डोलति मोहिं फिरावत मोहिं ॥ हम तौ रीझि लट्टूभई लालन महाप्रेम तिय जानि । बंध अबंध अमति निशिवासर को सरझावति आनि ॥ उरझे संग अंग अंग प्रति बिरह बेलि की नाई । मुकुलित कुसुम नयन निद्रा तजि रूप सुधा सियराई ॥ अति आधीन हीन मति व्याकुल कहा लों कहों बनाई । ऐसी प्रीति करी रचना पर सूरदास बलि जाई ॥ २८११ ॥



राग नट ॥

दिनही दिन को सहै बियोग । यह शरीर नाहिन मेरो सखी इहै बिरह ज्वर योग ॥ रचि स्रक कुसुम सुगंध सेज सजि बसन कुमकुमा बोरि । नलनी दलनि दूरि करि उनते कंचुकि के बँद छोरि ॥ बन बन जाइ मोर चातक पिक मधुवन टेरि सुनाई । उचित चंद चंदन चढ़ाइ उर त्रिबिध समीर बहाई ॥ रटि मुख नाम श्याम सुंदर को तोहिं सुनाइ सुनाई । तो देखत तनु होमि मदन मुख मिलौ माधवहि जाई ॥ सूरदास स्वामी कृपालु भए जानि युवति रस रीति । तिहि छिन प्रगट भए मनमोहन सुमिरि पुरातन प्रीति ॥ २८१२ ॥



राग धनाश्री ॥

बहुरि न कबहूँ सखी मिलैं हरि । कमलनयन के कारण सजनि अपनो सो जतन रही बहुतो करि ॥ जेहि जेहि पथिक जात मधुवन तन तिनहुँ सों व्यथा कहति पाँइनि परि । काहु न

प्रगट करी यदुपति सों दुसह दुरासा गई अवधि ढरि॥ धीर न धरति प्रेम व्याकुल चित लेत उसाँस नीर लोचन भरि। सूरदास तनु थकित भई अब कृष्ण बिरह सों पर न सकति मरि॥ २८१३॥



पावस-समय-वर्णन ॥ रागमलार ॥

ब्रज ते पावस पै न टरी। शिशिर वसंत शरद् गत सजनी बीती औधि करी॥ उनै उनै घन वरषत चष उर सरिता सलिल भरी। कुमकुम कज्जल कीच बहै जनु कुचयुग पारि परी॥ ताहू मे प्रगट विषम ग्रीषम ऋतु इतयो ताप मरी। सूरदास प्रभु कुमुद चंद्र बिनु बिरहा तरनि जरी॥ २८१४॥



राग मलार॥

अब वर्षा को आगम आयो। ऐसे निठुर भयो नँदनंदन संदेसा न पठायो॥ बादर घोर उठे चहुँ दिशि ते जलधर गरजि सुनायो। एकै शूल रही मेरे जिय बहुरि नहीं ब्रजछायो॥ दादुर मोर पपीहा बोलत कोकिल शब्द सुनायो। सूरदास के प्रभु सों कहियो नैनन है झरलायो॥ २८१५॥



राग मलार॥

ब्रज पर बद्रा आए गाजन। मधुवन को पठए सुन सजनी फौज मदन लग्यो साजन॥ ग्रीवारंध्र नैन चातकजल पिक मुख-बाजे बाजन। चहुँदिशि ते तनु बिरहा घेरो अब कैसे पावतु

भाजन ॥ कहियत हुते श्याम परपीरक आप शंकर के काजन। सूरदास श्रीपति की महिमा मथुरा लागे राजन ॥ २८१७ ॥



राग मलार ॥

देखियत चहुँदिशि ते घनघेरो। मानो मत्त मदन के हथियन बलकरि बंधन तोरो ॥ श्याम सुभग तनु चुअत गंडमद वरषत थोरे थोरे। रुकत न पौन महावतहू पै मुरत न अंकुसमोरे ॥ बल बेनी बल निकसि नयन जल कुच कंचुकि बंद बोरे। मनों निकसि बगपाँति दाँत उर अवधि सरोवर फोरे ॥ तब तेहि समै आनि ऐरापति ब्रजपति सों करजोरे। अब सुनि सूर कान्ह के हरि बिन गरत गात जैसे बोरे ॥ २८१८ ॥



राग मलार ॥

ब्रज पर सजि पावस दल आयो। धुरवा धुंधि बढ़ी दसहूँ दिसि गर्जि निसान बजायो ॥ चातक मोर इतर पै दागन करत अवाजैं कोयल। श्याम घटा गज अशन वाजि रथ चित बगपाँति सजोयल ॥ दामिनि कर करवार बूंद शर इहि बिधि साजे सैन। निधरक भयो चल्यो ब्रज आवत अग्र फौज पति मैन ॥ हम अबला जानिकै तुम बल कहौ कौन बिधि कीजे। सूर श्याम अब के इहि औसर आनि राखि ब्रज लीजे ॥ २८१९ ॥



राग मलार ॥

ऐसे बादर ता दिन आये जा दिन श्याम गोवर्धन धार्यो। गरजि गरजि घन बरसन लागे मनो सुरपति निज वैर सँभार्यो ॥

सबै संयोग जुरी है सजनी हठिकरि घोष उजाऱ्यो। अब को सात दिवस राखैगो दूरि गयो ब्रज को रखवाऱ्यो॥ जब बल-राम हुते या ब्रज में काहू देव न ऐसो डाऱ्यो। अब यह भूमि भयानक लागै बिधिना बहुरि कंस अवताऱ्यो॥ अब इह सुरति करै को हमारी या ब्रज कोऊ नाहिं हमाऱ्यो। सूरदास अतिविकल बिरहिनी गोपिन पिछलो प्रेम सँभाऱ्यो॥ २८३२॥



राग मलार॥

बहुरि वन बोलन लागे मोर। करसंभार नंदनंदन की सुनि बादर को घोर॥ जिनको पिय परदेस सिधारो सो तिय परी निठोर। मोहिं बहुत दुख हरि बिछुरे को रहत विरह को जोर॥ चातक पिक चकोर पपीहा ए सबही मिलिचोर। सूरदास प्रभु बेगि न मिलहु जनम परत है बोर॥ २८३७॥



राग मलार॥

यहि वन मोर नहीं ए कामबान। विरह खेद धनु पुहुप भृंग गुन करिल तरैया रिपुसमान॥ लयो घेरि मनो मृग चहुँ दिशि ते अचूक अहेरी नहिं अजान। पुहुपसेन घन रचित युगल तनु क्रीड़त कैसो वन निधान॥ महामुदित मन मदन प्रेमरस उमँगि भरे मे मैं न जान। इहि अवस्था मिले सूरदास प्रभु बद्ऱ्यो नानागदै जीवनदान॥ २८३८॥



राग मलार॥

सखी री चातक मोहिं जियावत। जैसेहि रैनि रटति हौं पिय पिय तैसेही वह पुनि पुनि गावत॥ अतिहि सुकंठ दाहु

प्रीतम को तारुजीभ मनलावत। आपु न पीवत सुधारस सजनी विरहिनि बोलि पिश्रावत ॥ जो ए पंछि सहाय न होते प्राण बहुत दुख पावत। जीवन सफल सूर ताही को काज पराए आवत ॥ २८४५ ॥



राग सारंग ॥

चातक न होइ कोउ विरहिनि नारि। अजहूँ पिय पिय रजनि सुरति करि झूठेहि माँगत वारि॥ अति कृशगात देखि सखि याको अहनिशि वाणी रटत पुकारि। देखौ प्रीति बापुरे पशु की आन जनम मानत नहिं हारि॥ अब पति बिनु ऐसो यह ज्यों लागत सरवर शोभित बिनवारि। त्योंही सूर जानिए गोपी जो न कृपा करि मिलहु मुरारि ।।२८४६।।



राग मलार ॥

बहुत दिन जीवो पपीहा प्यारो। बासर रैनि नाँवलै बोलत भयो विरह ज्वर कारो॥ आपु दुखित पर दुखित जानि जिय चातक नाउँ तुम्हारो। देखो सकल विचारि सखी जिय बिछुरन को दुख न्यारो ॥ जाहि लगै सोई पै जानै प्रेम बाण अनियारो। सूरदास प्रभु स्वाति बूँद लगि तज्यो सिंधु करि खारो ।।२८४८।।



राग मलार ॥

हौं तौ मोहन के बिरह जरी रे तू कत जारत। रे पापी तू पंखि पपीहा पिउ पिउ पिउ अधराति पुकारत ॥ सब जग सुखी दुखी तू जल बिनु तऊ न तनु की बिथहि विचारत।

कहाकठिन करतूति न समुझत कहा मृतक अबलनि शर मारत ॥ तू शठ बकत सतावत काहू होत उहै अपने उर आरत। सूर श्याम बिनु ब्रज पर बोलत हठि अगिलेऊ जनम बिगारत ॥ २८४६ ॥



राग मारू ॥

शरद समैहू श्याम न आए। को जानै काहे ते सजनी कहुँ बिरहिन बिरमाए ॥ अमल अकास कास कुसुमिन क्षिति लक्षण स्वाति जनाए। सर सरिता सागर जल उज्ज्वल अलिकुल कमल सुहाए ॥ अहि मयंक मकरंद कंद हति दाहक गरल जिवाए। त्रिय सब रंग संग मिलि सुंदरि रचि सचि सींच सिराए ॥ सूनी सेज तुषार जमत चिरहास चंदन बाए। अबलहि आस सूर मिलिबे की भए ब्रजनाथ पराए ॥ २८५४ ॥



(चन्द्रमा की ओर देख कर गोपी कहती है :—)

राग कान्हरो ॥

छूटि गई शशि शीतलताई। मनु मोहि जारि भसम कियो चाहत साजत मनो कलंक तनु काई ॥ याही ते श्याम अकास देखिये मानो धूम रह्यो लपटाई। ता ऊपर दौदेत किरनि उर उडुगण कउनै चढ़ि इत आई ॥ राहु केतु दोउ जोरि एक करि कहि इहि समै जरावहि पाई। ग्रसे ते न पचि जात पाप में कहत सूर बिरहिनि दुखदाई ॥२८५५॥



राग केदारो ॥

यह शशि शीतल काहे ते कहियत। मीनकेत अंबुज आनंदित

ताते ताहित लहियत ॥ बिरहिनि अरु कमलनि त्रासत कहुँ अप कारी रथनहिंयत । सूरदास प्रभु मधुबन गैाने तो इतना दुख-सहियत ॥२८८६॥



राग मल्हार ॥

कोऊ बरजो री या चंद्रहि । अतिही क्रोध करत हम ऊपर कुमुदिनि कुल आनंदहि ॥ कहा कहों वर्षारवि तमचर कमल-बलाहक कारे । चलत न चपल रहत थिरकै रथ विरहिनि के तनुजारे ॥ नोदत शैल उदधि पन्नग को श्रीपति कमठ कठोरहि । देति असीस जरा देवी को राहु केतु किनि जोरहि । ज्यों जलहीन मीन तनु तलफति ऐसी गति ब्रजबालहि । सूरदास प्रभु आनि मिलावहु मोहन मदनगुपालहि ॥२८६२॥



राग मलार ॥

अब या तनुहि कहो कहा कीजै । सुन री सखी श्यामसुंदर बिन बाँटि विषम विष पीजै ॥ कै गिरिए गिरि चढ़ि सुनि सजनी कै शीश शंकरहि दीजै । कै दहिए दारुण दावानल जाइ यमुन धसि लीजै ॥ दुसह वियोग विरह माधो को दिनही दिनही छीजै । सूर श्याम प्रीतम बिनु राधे सोचि सोचि जिय जीजै ॥२८६४॥



राग भोपाली ॥

हमहि कहा सखी तन के जतन की अब या यशहि मनोहर लीजै । सकल त्रास सुख याही वपु लौं छाँड़ि दिये ते कछू न छीजै ॥ कुसुमित सेज कुसुम सर सरवर हरि के प्राण प्राणपति जीजै । विरह थाह ब्रजनाथ सबन दै निधरक सकल मनोरथ

कीजै ॥ सबन कहत मन रीस रिसाए नहिंन बसाय प्राण तजि दीजै। सूर सु पति सों चरचि चतुराई तुम यह जाइ बधाई लीजै ॥ २८६५ ॥



राग मलार ॥

हरि परदेस बहुत दिन लाए। कारी घटा देखि बादर की नैननीर भरि आए ॥ वीरबटाऊ पंथी हो तुम कौन देस ते आए। इह पाती हमरी लै दीजो जहाँ साँवरे छाए ॥ दादुर मोर पपीहा बोलत सोवत मदन जगाए। सूरदास गोकुल ते बिछुरे आपुन भए पराए ॥ २८८३ ॥



राग मलार ॥

हमारे हिरदै कुल से जीत्यौ। फटत न सखी अजहुँ उहि आसा बरष दिवस पर बीत्यौ ॥ हमहूँ समुझि परी नीकेकरि यहै असित तनु रीत्यो। बहुरिन जीवन मरन सों साझो करी मधुप की प्रीत्यो ॥ अब तौ बात घरी पहरन सखी ज्यों उद्बस की भीत्यो। सूर श्याम दासी सुख सोवहु भयो उभयमन चीत्यो ॥ २८८४ ॥



राग मारू ॥

किते दिन हरि देखे बिन बीते। एकौ फुरत न श्यामसुदर बिन बिरह सबै सुख जीते ॥ मदन गोपाल बैठि कंचनरथ चिते किए तनुरीते। सुफलकसुत लैगए दगादै प्राणनहीं के

प्रीते ॥ बहुरि कृपालु घोष कब आवहिं मोहन राम समीते। सूरदास प्रभु बहुरि कृपाकरि मिलहु सुदामा मीते ॥ २८९३ ॥



राग सारंग ॥

कान्हधों हमसों कहा कह्यो। निकस्यो बचन सुनाइ सखी री नाहिन परतु रह्यो ॥ मैं मतिहीन मर्म नहिं जान्यो भूली मथत मह्यो। अब कहा करों घोष बसि सजनी दूत दूरि निबह्यो ॥ सबै अजान भईं तेहि औसर काहू रथ न गह्यो। सूरदास प्रभु वृथा लाज करि दुसह वियोग सह्यो ॥ २८९४ ॥



(इधर ब्रज की सुध आने पर कृष्ण ने अपने नीरम सार्था उपगसुत उद्धव को भेजने का विचार किया। उद्धव का चरित्र कहते हैं)

राग नट ॥

यदुपति जानि उद्धव रीति। जिहि प्रगट निज सखा कहियत करत भाव अनीति ॥ विरहदुख जहाँ नाहिं जामत नहीं उपजै प्रेम। रेख न मन रूप बरन जाके यहि धन्यो वह नेम ॥ त्रिगुणतनु करि लखत हमको ब्रह्ममानत और। बिना गुण क्यों पुहुमि उधरै यह करत मन डौर॥ विरहरस के मंत्र कहिए क्यों चलै संसार। कछु कहत यह एक प्रगटत अतिभर्‍यो अहंकार ॥ प्रेमभजन न नेकु याके जाइ क्यों समुझाइ। सूर प्रभु मन इहै आनी ब्रजहि देउँ पठाइ ॥२९०१॥



राग नट ॥

इह अद्योत दरशीरंग। सदा मिलि एकसाथ बैठत चलत

बोलत संग ॥ बात कहत न बनत यासों निठुर योगी जंग। प्रेम सुनि बिपरीत भाषत होतहै रसभंग ॥ सदा ब्रज को ध्यान मेरे रासरंग तरंग। सूर वह रस कहौं कासों मिल्यो सखा भुरंग ॥



राग नट ॥

संग मिलि कहौं कासों बात। यह तो कथत योग की बातै जामें रस उरिजात ॥ कहत कहा पितु मात कौन को पुरुष नारि कहा नात। कहा यशोदासी है मैया कहा नंद सम तात ॥ कहा ब्रज भानुसुता सँग को सुख यह वासर वह प्रात। सखी सखा सुख नहीं त्रिभुवन मे नहिं बैकुंठ सुहात ॥ वै बातैं कहिए केहि आगे यह गुनि हरि पछितात। सूरदास प्रभु ब्रजमहिमा कहि लिखी वदत बलभ्रात ॥२६१०॥



राग धनाश्री ॥

कहाँ सुख ब्रज को सो संसार। कहाँ सुखद बंशीवट यमुना यह मन सदा बिचार ॥ कहाँ बनधाम कहाँ राधा सँग कहाँ संग ब्रजबाम। कहाँ रसरास बीच अंतर सुख कहाँ नारि तनुताम ॥ कहाँ लता तरु तरु प्रति झूलनि कुंज कुंज बनधाम। कहाँ विरह सुख बिनु गोपिन सँग सूर श्याम मम काम ॥ सखा हमको मिले ऊधो बचनन मारत ताम ॥ भाव भजन बिना नहीं सुख कहाँ प्रेम अरु योग। काग हँसहि संग जैसो कहाँ दुख कहाँ भोग ॥ जगत में यह संग देखो वचन प्रति कहै ब्रह्म। सूर ब्रज की कथा सो कहै यह करै जो दंभ ॥२६११॥

राग कान्हरो ॥

हंस काग को संग भयो । कहाँ गोकुल कहाँ गोप गोपिका विधि यह संग दयो ॥ जैसे कंचन काँच संग ज्यों चंदन संग कुगंधि । जैसे खरी कपूर दोउ यक सम यह भई ऐसी संधि ॥ जलबिनु मीन रहत कहुँ न्यारे यह सो रीति चलावत । जब ब्रज की बातैं यहि कहियत तबहिं तबहि उचटावत ॥ याको ज्ञान थापि ब्रज पठऊँ और न याहि उपाव । सुनहु सूर याको बन पठऊँ यहै बनैगो दावँ ॥२६१२॥



राग धनाश्री ॥

याहि और कछु नही उपाइ । मेरो प्रगट कह्यो नहिं वदिहै ब्रजही देउँ पठाइ ॥ गुप्तप्रीति युवतिन की कहिकै याको करौं महंत । गोपिन को परबोधन कारण जैहै सुनत तुरंत ॥ अति अभिमान करैगो मन में योगिन की इह भाँति । सूर श्याम यह निहचै करिकै बैठत है मिलि पाँति ॥२६१३॥



राग धनाश्री ॥

हरि गोकुल की प्रीति चलाई । सुनहु उपँगसुत मोहिं न बिसरत ब्रजवासी सुखदाई ॥ यह चित होत जाउँ मैं अबहीं यहाँ नहीं मन लागत । गोपी ग्वाल गाइ बन चारन अति दुख पायो त्यागत ॥ कहां माखन रोटी कहाँ यशुमति जेवहु कहि कहि प्रेम । सूर श्याम के वचन हँसत सुनि थापत अपनो नेम ॥२६१५॥

राग रामकली ॥

यदुपति लखो तेहि मुसकात। कहत हम मन रहे जोइ सोई भई यह बात ॥ वचन प्रकट करन कारण प्रेमकथा चलाइ। सुनहु ऊधो मोहिं ब्रज की सुधि नहीं बिसराइ ॥ रैनि सोवत दिवस जागत नहीं है मन आन। नंद यशुमति नारि नर ब्रज तहाँ मेरो प्रान ॥ कहत हरि सुनि उपँगसुत यह कहत हैं। रसरीति। सूर चित ते टरत नाहीं राधिका की प्रीति ॥ २९१९ ॥



राग नट ॥

ऊधो मन अभिमान बढ़ायो। यदुपति योग जानि जिय साँचो नयन अकास चढ़ायो ॥ नारिन पै मोको पठवत है कहत सिखावन योग। मन ही मन अपकरत प्रशंसा यह मिथ्या सुख भोग ॥ आयसु मानि लियो सिर ऊपर प्रभु आज्ञा परमान। सूरदास प्रभु गोकुल पठवत मैं क्यों कहौं कि आन ॥ २९२२ ॥



राग कान्हरो ॥

तुम पठवत गोकुल को जैहैं। जो मानिहैं ब्रह्म की बातैं तौ उनसों मैं कैहौं ॥ गदगद वचन कहत मन प्रफुलित बार बार समुझैहौं। आजुइ नहीं करौं तुव कारज कौन काज पुनि लैहौं ॥ यह मिथ्या संसार सदाई यह कहि कै उठि पेहौं। सूर दिना द्वै ब्रजजन सुखदै आइ चरण पुनि गैहौं ॥ २९२३ ॥



राग बिहागरो ॥

तुरत ब्रज जाहु उपँगसुत आजु। ज्ञान बुझाइ खबरि दै

आवहु एक पंथ द्वै काजु ॥ जब ते मधुबन को हम आए फेरि गयो नहिं कोई । युवतिन पै ताही को पठवै जो तुम लायक होई ॥ एक प्रवीन अरु सखा हमारे जानी तुम सरि कौन । सोइ कीजो जैसे व्रजबाला साधन सीखै पौन ॥ श्रीमुख श्याम कहत यह बानी ऊधो सुनत सिहात । आयसु मानि सूरप्रभु जैहैं नारि मानि हैं बात ॥ २६२५ ॥



राग बिहागरो ॥

श्याम कर पत्री लिखी बनाइ । नंदबाबा सों बिनती करी करजोरि यशोदामाइ ॥ गोप ग्वाल सखन गहि मिलि मिलि कंठ लगाइ । और ब्रजनर-नारि जेहैं तिनहि प्रीति जनाइ ॥ गोपिकनि लिखि योग पठयो भाउ जान न जाइ । सूर प्रभु मन और यह कहि प्रेम लेत दृढ़ाइ ॥ २६२६ ॥



राग बिहागरो ॥

उँगसुत हाथ दई हरि पाती। यह कहियो यशुमति मैया सों नहिं बिसरत दिनराती ॥ कहत कहा वसुदेव देवकी तुमको हमहैं जाए । कंसत्रास शिशु अतिहि जानिकै ब्रज में राखि दुराए ॥ कहै बनाइ कोटि कोउ बातैं कहि बलराम कन्हाई । सूर काज करिकै कछु दिन में बहुरि मिलैंगे आई ॥ २६३० ॥



राग बिलावल ॥

ऊधो इतनो कहियो जाइ । हम आवैंगे दोऊ भैया मैया जिनि अकुलाइ ॥ याको विलग बहुत हम मान्यो जब कहि

पठयो धाइ। वह गुण हमको कहा बिसरिहै बड़े किये पय प्याइ॥ औार जु मिल्यो नंदबाबा सों तब कहियो समुझाइ। तौलों दुखी होन नहिं पावैं धवरी धूमरि प्याइ॥ यद्यपि यहाँ अनेक भाँति सुख तदपि रह्यो ना जाइ। सूरदास देखो ब्रजवासिन तबहीं हियो सिराइ॥ २६३१॥



राग आसावरी॥

ऊधो जननी मेरी को मिलिहौ अरु कुशलात कहोगे। बाबानंदहि पालागन कहि पुनि पुनि चरण गहोगे॥ जा दिन ते मधुबन हम आए शोध न तुमही लीनो हो। दैदै सौंह कहोगे हित करि कहा निठुरई कीन्हों हो॥ यह कहियो बलराम श्याम अब आवैंगे दोउ भाई हो। सूर कर्म की रेख मिटै नहिं यहै कह्यो यदुराई हो॥ २६३२॥



राग केदारो॥

बिधना इहै लिख्यो संयोग। जो कहाँ ते मधुपुरी आए तज्यो माखन भोग॥ कहाँ वै ब्रज के सखा सब कहाँ वै मथुरा लोग। देवकीवसुदेवसुत सुनि जननि कैहै सोग॥ रोहिणी माता कृपा करि उछँग लेती आग। सूर प्रभु मुख यह वचन कहि लिखि पठायो योग॥ २६३३॥



राग गौरी॥

पाती लिखि ऊधो कर दीन्ही। नंद यशुदहि हेतु कहि दीजौ हँसि उ गसुत लीन्ही॥ मुख वचनन कहि हेतु जनायो

तुमहौ हितू हमारे। बालक जानि पठै नृप डरते तुम प्रतिपालन हारे॥ कुबिजा सुन्यो जात ब्रज ऊधो महलइ लियो बोलाई। हाथन पाति लिखी राधा को गोपिन सहित बड़ाई॥ मोको तुम अपराध लगावत कृपा भई अन्यास। झुकत कहा मोपर ब्रजनारी सुनहु न सूरजदास॥ २१३४॥



राग गौरी॥

ऊधो ब्रजहि जाहु पालागौं। यह पाती राधाकर दीजौ यह मैं तुमसों माँगौं॥ गारी देहि प्रात उठि मोको सुनत रहत यह बानी। राजा भये जाइ नँदनंदन मिली कूबरी रानी॥ मो पर रिस पावत काहे को बरजि श्याम नहिं राख्यो। लरिकाई ते बाँधति यशुमति कहा जु माखन चाख्यो॥ रजुलै सबै हजूर होति तुम सहित सुता वृषभान। सूर श्याम बहुरो ब्रज जैहैं ऐसे भए अजान॥ २१३६॥



राग धनाश्री॥

ऊधो यह राधा सों कहियो। जैसी कृपा श्याम मोहिं कीन्ही आपु करत सोइ रहियो॥ मोपर रिस पावत वे कारण मैं हौं तुम्हरी दासी। तुमहीं मन में गुणिधौ देखो बिन तप पायो कासी॥ कहाँ श्याम की तुम अर्धंगिनि मैं तुम सर की नाहीं। सूरज प्रभु को यह न बूझिए क्यों न वहाँ लौं जाहीं॥ २१३७॥



राग सारग॥

ऊधो जाइ कहियो राधिकाही तुम इतनी सी बात।

आवन दिए कहो काहे को फिरि पाछे पछितात ॥ अब दुख-मानि कहा धौं करिहौ हाथ रहैगी गारी । हमैं तुम्हैं अंतर है जेतो जानत हैं बनवारी ॥ ए तो मधुप सबै रस भोगी जहीं जहीं रस नीको । जो रस खाइ स्वाद करि छाँड़े सो रस लागत फीको ॥ एक कुँवर हरि हर्‍यो हमारो जगतमाँझ यश लीनो । ताको कहा निहारो हमको त्रैत्रिभंग करि दीनो ॥ तुम सब नारि गँवारि अहीरी कहा चातुरी जानों । राखि न सकी आपु वसकै तब अब काहे दुख मानों ॥ सूरदास प्रभु की ए बातैं ब्रह्म लखै नहिं पारै । जाके चरण पाइकै कमला गति आपनी बिसारै ॥ २६३८ ॥



राग केदारो ॥

सुनियत ऊधो लये सँदेसो तुम गोकुल को जात । पाछे करि गोपिन सो कहियो एक हमारी बात ॥ मात पिता को नेह समुझिकै श्याम मधुपुरी आए । नाहिन कान्ह तुम्हारे प्रीतम ना यशुमति के जाए ॥ देखो बूझि आपने जिय में तुम माधो कौने सुख दीने । ए बालक तुम मत्त ग्वालिनी सबै मुंड करि लीने ॥ तनक दही माखन के कारण यशुदा त्रास दिखावै । तुम हँसि सब बाँधन को दौरी काहू दया न आवै ॥ जो वृषभानुसुता उन कीनी सो सब तुम जिय जानों । ताही लाज तज्यो ब्रजमोहन अब काहे दुख मानों ॥ सूरदास प्रभु सुनि सुनि बातैं रहे श्याम सिर नाए । इत कुबिजा उत प्रेम गोपिका कहत न कछु बनि आए ॥ २६३९ ॥

राग बिहागरो ॥

ऊधो जात ब्रजहि सुने । देवकी वसुदेव सुनिकै हृदय हेत गुने ॥ आपसे पाती लिखी कहि धन्य यशुमति नंद । सुत हमारो पालि पठयो अति दियो आनंद ॥ आइकै मिलि जात कबहूँ न श्याम अरु बलराम । इहाँ कहति पठाइ देहैं तबहि तनु बिनवाम ॥ बाल सुख सब तुमहिं लूट्यो मोहिं मिले कुमार । सूर यह उपकार तुमते कहत बारंबार ॥ २९४० ॥



राग बिलावल ॥

तब ऊधो हरि निकट बुलायो । लिखि पाती दोउ हाथ दई तेहि ए मुख वचन सुनायो ॥ ब्रजवासी जावत नारि नर जल थल द्रुम वन पात । जो जेहि बिधि तासों तैसेही मिलि अरस परस कुशलात ॥ जो सुख श्याम तुमहिंते पावत सो त्रिभुवन कहुँ नाहिं । सूरदास प्रभु दै सौंह आपनी समुझत हौं कै नाहिं ॥ २९४१ ॥



राग सारंग ॥

पहिले प्रणाम नंदराइ सों । ता पीछे मेरो पालागन कहियो यशुमति माइ सों ॥ बार एक तुम बरसाने लों जाइ सबै सुधि लीजौ । कहि वृषभानु महर सों मेरो समाचार सब दीजौ ॥ श्रीदामा आदि सकल ग्वालन को मेरे हित भेटिबो । सुख संदेस सुनाइ सबनको दिन दिन को दुख मेटिबो ॥ मित्र एक मन बसत हमारे ताहि मिलै सुख पाइहौ । करि करि समाधान नीकी बिधि मोहिंको माथो नाइहौ ॥ डरियहु जिनि तुम सघन

कुंज में हैं तहँके तरु भारी। वृंदावन मति रहति निरंतर कबहुँ न होत नियारी॥ ऊधो सों समुझाइ प्रगट करि अपने मन की बीती। सूरदास स्वामी सों छल सों कही सकल ब्रज-प्रीती॥ २६४२॥



राग सारंग।

कही हरि ऊधो सों ब्रज प्रीति। बोले चले योग गोपिन को तहाँ सरन बिपरीति॥ तुरत अंक भरि रथहि चढ़ायो बिनय कह्यो करि ताहि। विरहा जाल मेटि गोपिन को आवहु काज निबाहे॥ लै रज चरण शीश बंदन करि ब्रज रैहौं दिन द्वैक। सूरज प्रभु श्रीमुख कहि पठवत तुम बिनु रहौं न नैक॥२६४३॥



राग गौरी।

गहर जनि लावहु गोकुल जाइ। तुमहिं बिना व्याकुल हम ह्वैहैं यदुपति करी चतुराइ॥ अपनोई रथ तुरत मँगायो दियो तुरत पलनाइ। अपने अंग आभूषण करि करि आपुनही पहिराइ॥ अपनो मुकुट पीतांबर अपनो देत सबै सुख पाये॥ सूर श्याम तदपि उपंगसुत भृगुपद पक बचाये॥ २६४४॥



राग बिलावल॥

ऊधो चले श्याम आयसु सुनि ब्रज नारिन को योग कह्यो। हरि के मन यह प्रेम लहैगो वह तो जिय अभिमान गह्यो॥ आतुर चल्यो हर्ष मन कीन्हें कृष्ण महंत करि पठै दियो। स्यंदन

उहै श्याम सब भूषण जानि परै नंदसुवन वियो ॥ युवती कहा ज्ञान समुझैंगी गर्गवचन मन कहत चल्यो । सूर ज्ञान को मान बढ़ाये मधुवन के मारगहि मिल्यो ॥ २६४५ ॥



राग कल्याण ॥

मथुरा ते निकसि परे गैल माँझ आइ उहै मुकुट पीतांबर श्याम रूप काछे । भृगुपद एक वंचित उर और अंग आछे ॥ ज्ञान को अभिमान किए मोको हरि पठयो । मेरोई भजन थापि माया सुख झुठयो ॥ मधुवन ते चल्यो तबहिं गोकुल नियरान्यो । देखत ब्रजलोग श्याम आयो अनुमान्यो ॥ राधा सों कहति नारि काग सगुन टेरो । मिलि हैं तोहिं श्याम आजु भयो वचन मेरो ॥ वैसोइ रथ देखति सब कहति हरष बानी । सूरज प्रभु से लागत तरुनी मुसकानी ॥२९४६॥



भँवरगीत ॥ राग बिलावल ॥

राधेहि सखी बतावत री । वैसोई रथ लखौं संत मैं को उतहीते आवत री ॥ चढ़िआयो अक्रूर जाहिपर स्यंदन ब्रज तन धावत री । वैसोइ ध्वजा पताका वैसोइ घर घर सबन सुनावत री ॥ कोउ कहै श्याम कहति को ऐहै ब्रजतरुनी हरषावत री । सूर श्याम जेहि मग पगधारे तेहि मारग दरशावत री[1] ॥ २६५० ॥

---

१ उद्धव के गोकुल जाने के लिये देखिए श्रीमद्भागवत दशम स्कंध पूर्वार्द्ध अध्याय ४६ । लल्लूजीलाल-कृत प्रेमसागर अध्याय ४७ ॥

राग बिलावल ॥

घर घर इहै शब्द पन्यो। सुनत यशुमति धाइ निकसी हर्षित हियो भन्यो ॥ नंद हर्षित चले आगे सखा हर्षत अंग। झुंड झुंडन नारि हर्षत चली उदधि तरंग ॥ गाइ हर्षत पय स्रवत थन हुंकरत गउ बाल। उमँगि अंगन मात कोऊ विरध तरुन अरु बाल ॥ कोउ कहत बलराम नाहीं श्याम रथ पर एक। कोउ कहति प्रभु सूर दोऊ रचित बात अनेक ॥२९५४॥



राग बिलावल ॥

सुने ब्रजलोग आवत श्याम। जहाँ तहाँ ते सबै धाईं सुनत दुर्लभ नाम ॥ मानो मृगी वन जरति व्याकुल तुरत बरष्यो नीर। वचन गद्गद प्रेम व्याकुल धरत नहिं मनधीर ॥ एक एक पल युग सबनको मिलन को अतुरात। सूर तरुनी मिलि परस्पर भईं हर्षितगात ॥ २९५५॥



राग धनाश्री ॥

नंदगोप हर्षित ह्वै गए लेन आगे। आवत बलराम श्याम सुनत दौरि चली वाम मुकुट झलक पीतांबर मन मन अनुरागे॥ निहचै आए गोपाल आनंदित भईं बाल मिट्यो बिरह जंजाल जीवत तेहिकाल। गदगद तनु पुलक भयो बिरहा को शूल गयो कृष्णदरश आतुर अति प्रेम के बेहाल ॥ रथ ज्यों ज्यों निकट भयो मुकुट पीत बसन नयो मन में कछु सोच भयो श्याम किधौं कोउ। सूरज प्रभु आवत हैं हलधर को नहीं लखत झंखति कहति तो होते संग बीर दोउ ॥ २९५६ ॥

राग बिलावल ॥

उमँगि ब्रज देखन को सब धाए। एकहि एक परस्पर बूझति जनु मोहन दूलह आए॥ सोई ध्वजा पताका सोई जा रथ चढ़ि ता दिवस सिधाए। श्रुति कुंडल अरु पीत बसन स्रक वैसोई साज बनाए॥ जाइ निकट पहिचान्यो ऊधो नयन जलज जलछाए। सूरज श्याम मिटी दरशन आसा नूतन बिरह जगाए॥२९५९॥



राग बिलावल।

जबही कहो ए श्याम नहीं। परी मुरछि धरणी ब्रजबाला जो जहाँ रही सु तही॥ सपने की रजधानी ह्वै गई जो जागी कछु नाहीं। बार बार रथ ओर निहारहिं श्याम विना अकुलाही॥ कहा आय करिहै ब्रज मोहन मिली कूबरी नारी। सूर कहत सब ऊधो आए गईं श्याम शरमारी॥ २९६०॥



राग रामकली॥

तरुणी गईं सब बिलखाइ। जबहिं आए सुने ऊधो अतिहि गईं झुराइ॥ परीं व्याकुल जहाँ यशुमति गईं तहाँ सब धाइ। नीर नयन बहत धारा लईं पोछि उठाइ॥ एक भई अब चलौं मारग सखा पठयो श्याम। सुनो हरि कुशलात ल्यायो महरि सों कहैं वाम॥ जबहिंलौं रथ निकट आयो तबहुँ ते परतीति। वह मुकुट कुंडल पीतांबर सूर प्रभु अंगरीति॥ २९६१॥



राग बिलावल॥

भली भई हरि सुरति करी। उठौ महरि कुशलात बूझिये आनँद उमँगि भरी॥ भुजा गहे गोपी परबोधत मानहुँ सुफल

घरी। पाती लिखि कछु श्याम पठायो यह सुनि मनहिं ढरी॥ निकट उपंगसुत आइ तुलाने मानों रूप हरी। सूर श्याम को सखा इहै री श्रवणन सुनी परी॥२६६२॥



राग धनाश्री॥

निरखति ऊधो सुख पायो। सुंदर सुजल सुवंश देखियत याते श्याम पठायो॥ नीके हरि संदेस कहैगो श्रवण सुनत सुख पैहै। यह जानति हरि तुरत आय हैं एकहि हृदय सिरै है॥ घेरि लिये रथ पास चहूँधा नंद गोप ब्रजनारी। महर लिवाय गए निज मंदिर हरषित लियो उतारी॥ अरघ देत भीतर तेहि लीन्हों धनि धनि दिन कहि आजु। धनि धनि सूर उपंगसुत आए मुदित कहत ब्रजराजु॥२६६३॥



अथ नंदवचन उद्धवप्रति॥ राग मलार॥

कबहिं सुधि करत गोपाल हमारी। पूँछत नंद पिता ऊधो सों अरु यशुदा महतारी॥ बहुतै चूकपरी अनजानत कहा अब के पछिताने। वासुदेव घर भीतर आए मैं अहीर कै जाने॥ पहिले गर्ग कह्यो हुतो हमसों संग देत गयो भूली। सूरदास स्वामी के बिछुरे राति दिवस भै शूली॥२६६४॥



अथ उद्धववचन॥ राग सारंग॥

कह्यो कान्ह सुनि यशुमति मैया। आवहिंगे दिन चारि पाँच में हम हलधर दोउ भैया॥ मुरली बेत विषाण देखिये शृंगी बेर सबेरो। लै जिनि जाइ चुराइ राधिका कछुक खिलौना मेरो॥ जादिन ते तुम्हसों बिछुरे हम कोउ न कहत कन्हैया।

भोरहि नाहिं कलेऊ कीनो साँझ न पयपीयो नाधैया ॥ कहत न बन्यो सँदेसो मोपै जननि जितो दुख पायो । अब हमसों वसुदेव देवकी कहत आपनो जायो ॥ कहिए कहा नंद-बाबा सों बहुत निठुर मन कीनों । सूर हमहिं पहुँचाइ मधुपुरी बहुरो शोध न लीनों ॥ २९६५ ॥



पुनः नंदवचन ॥ राग सारंग ॥

हमते कछु सेवा न भई । धोखे धोखे रहे धोखही जाने नाहिं त्रिलोक मई ॥ चरणपकरि करि बिनती करिबो सब अपराध क्षमा कीबे । ऐसो भाग होइगो कबहूँ श्याम गोद में लीबे ॥ कहै नंद आगे ऊधो के एक बेर दरशन दीबे । सूरदास स्वामी मिलि अबकै सबै दोष गत कीबे ॥ २९६६ ॥



सखावचन ॥ राग बिलावल ॥

भली बात सुनियत है आज । कोऊ कमलनयन पठयो है तन बनाए अपनो सो साज ॥ पूँछत सखा कहौ कैसे हैं अब नाही कछु करते लाज । कंसमारि वसुदेव गृह आए उग्रसेन को दीन्हों राज ॥ राजा भए ज्ञानही भयो सुख सुरभी सँग बन गोप समाज । अब सुन सूर करै को कौतुक ब्रज में नाहिं बसत ब्रजराज ॥ २९६७ ॥



अथ ब्रजनरनारीवाक्य ॥ राग सारग ॥

वैसोइ रथ वैसोइ सब साज । मानहुँ बहुरि बिचारि कछू मन सुफलकसुत आयो ब्रज आज ॥ पहिलेइ गमन गयो लै हरि को परम सुमति राथो रतिराज । अजहुँ कहा कीयो चाहत है

याते अधिक कंस को काज ॥ व्याध जो मृगन बधत सुन सजनी सो शर काढ़ि संग नहिं लेत । यह अक्रूर कठिनकीना यहि ये इतनो दुख देत ॥ ऐसे बचन बहुत बिधि कहि कहि लोचन भरि सींचत उरगात । सूरदास प्रभु अवधि जानिकै चलीं सबै पूँछन कुशलात ॥ २९६८ ॥



राग रामकली ॥

ब्रज घर घर सब होत बधाए । कंचन कलश दूब दधि रोचन महरि महर बृंदावन आए ॥ मिलि ब्रजनारि तिलक सिर कीनो करि प्रदक्षिणा पास । पूँछत कुशल नारि नर हरषत आए सब ब्रजवास ॥ सकसकात तन धकधकात उर अकबकात सब ठाढ़े । सूर उपंगसुत बोलत नाहीं अतिहिरदै ह्वै गाढ़े ॥ २९६९ ॥



सखीवचन गोपीप्रति ॥ राग धनाश्री ॥

आजु ब्रज कोऊ आयो है । कैधौं बहुरि अक्रूर क्रूर ह्वै जियत जानि उठिधायो है ॥ मैं देख्यो ताको रथ ठाढ़ो तुम सखी शोधन पायो है । कैकरि कृपा दुखित जानिकै हरिसंदेस पठायो है ॥ चलीं मिलि सिमिटि सखी पूछन को ऊधो दरश दिखायो है । तब पहिंचानि सबै प्रभु को भृत कमल जोरि सिर-नायो है ॥ हरिहैं कुशल कुशल है तुमहूँ कुशल लोग जेहि भायो है । है वह नगर कुशल सूरज प्रभु करि सु दृष्टि जहाँ छायो है ॥ २९७० ॥

राग धनाश्री ॥

देख्यो नंद द्वार रथ ठाढ़ो । बहुरि सखी सुफलकसुत आयो पन्यो सँदेह जिय गाढ़ो ॥ प्राण हमारे तबहिं गयो लै अब केहि कारण आयो । मैं जानी यह बात सत्यकै कृपाकरन उठि धायो ॥ इतने अंतर आनि उपंगसुत तिहि क्षण दरशन दीन्हों । तब पहिंचानि जानि प्रभु को भृतु परम सुचित मन कीन्हों ॥ तब परणाम कियो अति रुचि सों अरु सबहीं करजोरे । सुनियत हुते तैसई देखे सुंदर सुमति सो भोरे ॥ तुम्हरो दरसन पाइ आपनो जन्म सुफल करि मान्यो । सूर सु ऊधो मिलत भए सुख ज्यों ज्यों खग पायो पान्यो ॥ २९७१ ॥



राग नट ॥

ऊधो कहो हरि कुशलात । कहो आवन किधौं नाहीं बोलिए मुख बात ॥ एक छिन युग जात हमको बिन सुने हरि प्रीति । आइ आपै कृपा कीनी अब कहो कछु नीति ॥ तब उपंगसुत सबनि बोले सुनो श्रीमुख योग । सूर सुनि सब दौरि आईं हटकि दीनो लोग ॥ २९७३ ॥



अथ उद्धववचन ॥ राग सारंग ॥

गोपी सुनहु हरि कुसलात । कंस नृप को मारि छोन्यो आपनो पितु मात ॥ बहुत विधि व्यवहार करि दियो उग्रसेनहि राज । नगर लोग सुखी वसत हैं भए सुरन के काज ॥ वे इह पाती लिखी अरु मुख कह्यो कछू संदेस । सूर निर्गुण ब्रह्म धरिकै तजहु सकल अंदेस ॥ २९७४ ॥

राग केदारो ॥

गोपी सुनहु हरिसंदेस । गए संग अक्रूर मधुवन हत्यो कंस नरेस ॥ रजक मार्‌यो वसन पहिरे धनुष तोरे जाइ। कुवलया चाणूर मुष्टिक दई धरणि गिराइ ॥ मात पितु के बंदि छोरे वासुदेव कुमार । राज्य दीन्हों उग्रसेनहि चमर निज करढार ॥ कह्यो तुमको ब्रह्म ध्यावो छाँड़ि विषै विकार । सूर पाती दई लिखि मोंहि पढ़ौ गोपकुमार ॥ २६७५ ॥



(पाती की बात सुनते ही गोपिया दौड़ीं ।)

राग सारंग ॥

पाती मधुवनही ते आई । सुंदर श्याम कान्ह लिखि पठई आइ सुनो री माई ॥ अपने अपने गृह ते दौरीं लै पाती उरलाई । नैनन निरखि निमेष न खंडित प्रेमव्यथा न बुझाई ॥ कहा करौं सूनो यह गोकुल हरि बिन कछु न सोहाई । सूरदास प्रभु कौन चूक ते श्याम सुरति बिसराई ॥ २६७६ ॥



राग सारंग ॥

निरखत अंक श्याम सुंदर के बार बार लावत लै छाती। लोचन जल कागज मसि मिलि करि ह्वै गई श्याम श्यामजू की पाती ॥ गोकुल वसत नंदनंदन के कबहुँ बयारि न लागी ताती । अरु हम उती कहा कहैं ऊधो जब सुनि वेणु नाद सँग जाती ॥ प्रभु कै लाड़ वदति नहिं काहू निशि दिन रसिक रास रस राती । प्राणनाथ तुम कबहुँ मिलहुगे सूरदास प्रभु बाल सँघाती ॥ २६७७ ॥

राग सारंग ॥

पाती मधुवन ते आई । ऊधो हरि के परमसनेही ताके हाथ पठाई ॥ कोउ पूछत फिरि फिरि ऊधो को आपुन लिखी कन्हाई । बहुरो दई फेरि ऊधो को तब उन बाँचि सुनाई ॥ मन में ध्यान हमारो राखो सूरदास सुखदाई ॥ २६७८ ॥



राग मारू ॥

लिखि आई ब्रजनाथ की छाप । ऊधो बाँधे फिरत शीश पर देखे आवै ताप ॥ उलटी रीति नंदनंदन की घरि घरि भये संताप । कहियो जाइ योग आराधै अविगत अकथ अमाप ॥ हरि आगे कुबिजा अधिकारिनि को जीवै इहि दाप । सूर सँदेस सुनावन लागे कहौ कौन यह पाप ॥ २६७९ ॥



राग मलार ॥

कोऊ ब्रज बाँचत नाहिंन पाती । कत लिखि लिखि पठवत नँदनंदन कठिन विरह की कांती ॥ नैन सजल कागज अति कोमल कर अँगुरी अतिताती । परसै जरै विलोके भीजै दुहूँ भाँति दुख भाती ॥ क्यों ए वचन सु अंक सूर सुनि विरह मदन शरघाती । मुख मृदु वचन बिना सींचे अब जिवहि प्रेम रस माती ॥ काहे को लिखि पठवत कागर । मदनगोपाल प्रगट दरशन बिनु क्यों राखहि मन नागर ॥ ऊधो योग कहा लै कीबो बिनु जल सूखो सागर ॥ कहियौ मधुप सँदेस सुचित दै मधुवन श्याम उजागर । सूर श्याम बिनु क्यों मन राखौं तन योवन के आगर ॥ २६८० ॥

राग धनाश्री ॥

ऊधो कहा करैं लै पाती । जब नहिं देख्यो गुपाललाल को विरह जरावत छाती ॥ जानति हौं तुम मानति नाहीं तुमहूँ श्याम सँघाती । निमिष निमिष मो बिसरत नाहीं शरद सुहाई राती ॥ यह पाती लैजाहु मधुपुरी जहाँ बसैं श्याम सुजाती । मनुज हमारे उहाँ लै गए काम कठिन शरघाती ॥ सूरदास प्रभु कहा चलत है कोटिक बात सुहाती । एक बेर मुख बहुरि दिखावहु रहैं चरण रजराती ॥ २६८१ ॥



ऊधोवचन ॥ राग धनाश्री ॥

सुनहु गोपी हरि को संदेस । करि समाधि अंतर्गति ध्यावहु यह उनको उपदेस ॥ वै अविगति अविनासी पूरण सब घट रह्यो समाइ । निर्गुण ज्ञान बिनु मुक्ति नहीं है वेद पुराणन गाइ ॥ सगुण रूप तजि निर्गुण ध्यावो इक चित इक मनलाइ । यह उपाव करि विरह तरी तुम मिलै ब्रह्म तब आइ ॥ दुसह सँदेस सुनत माधो को गोपीजन बिलखानी । सूर विरह की कौन चलावै बूड़त मन बिन पानी ॥ २६८८ ॥



गोपीवचन ॥ राग मलार ॥

मधुकर हमही क्यों समुझावत । बारंबार ज्ञान गीता व्रज अबलनि आगे गावत ॥ नँदनंदन बिनु कपट कथाए कत कहि रुचि उपजावत । स्रक चंदन जो अंग जुदारत कहि कैसे सुखपावत ॥ देखि विचारतही जिय अपने नागरहो जु कहावत । सब सुमनन पर फिरी निरख करि काहे को कमल बँधावत ॥

चरणकमल कर नयन कमल कर नयन कमल वर भावत। सूरदास मनु अलि अनुरागी केहि बिधि हो बहरावत ॥२६८९॥



राग मलार ॥

रहु रहु मधुकर मधु मतवारे। कौन काज या निर्गुण सों चिरजीवहु कान्ह हमारे। लोटत पीत पराग कीच में नीचन अंग सम्हारो। बारंबार सरक मदिरा की अपसर रटत उघारे॥ द्रुम बेली हमहूँ जानतहों जिनके हो अलि प्यारे। एक बास लैकै बिरमावत जेते आवत कारे॥ सुंदर वदन कमलदल लोचन यशुमति नंद दुलारे। तन मन सूर अर्पि रही श्यामहि कापै लेहि उधारे॥ २६९० ॥



राग मलार ॥

मधुकर कौन देस ते आए। ब्रजवाते अक्रूर गए लै मोहन ताते भए पराए॥ जानी सखा श्याम सुंदर कै अवधि बन्धन उठि धाए। अंग विभाग नंदनंदन के यहि स्वामित हैं पाए॥ आसन ध्यान वाइ आराधन अलि मन चित तुम ताए। अति बिचित्र सुबुद्धि सुलक्षण गुंजयोग मतिगाए॥ मुद्रा भस्म विषान त्वचा मृग ब्रज युवतिन मनभाए। अतसी कुसुम बरन मुरली मुख सूरज प्रभु किन ल्याए॥ २६९१ ॥



राग मलार ॥

आए माई दुर्ग श्याम के संगी। जे पहिले रँग रँगे श्यामरँग तिनही की बुधिरंगी॥ हमरी उनकीसी मिलवत है। ताते भए विहंगी। सूधी कहै सबन समुझावत ने साँचे सर्वंगी॥ औरन

को सरवसु लै मारत आपुन भए अभंगी । सूर सु नाम शिलीमुख जे पीवैं घन कवच उपंगी ॥ २११७ ॥



राग कान्हरो ॥

प्रकृति जो जाके अंग परी। श्वान पूँछ को कोटिक लागे सूधी कहुँ न करी ॥ जैसे सुभक्त नहीं भक्त छाँड़ै जन्मत जौन घरी। धोए रंग जात नहिं कैसेहु ज्यों कारी कमरी ॥ ज्यों अहि डसत उदर नहिं पूरत ऐसी धरनि धरी। सूर होइ सो होइ सोच नहिं तैसेहैं एऊ री ॥ ३०१० ॥



राग सारंग ॥

ऊधो होहु आगे ते न्यारे। तुमहि देखि तन अधिक जरत है अरु नैनन के तारे ॥ अपनो योग सैंति धरि राखो यहाँ देत कत डारे। सो को जानत अपने मुख है मीठे ते फल खारे ॥ हमरे गिरिधर के जु नाम गुण बसे कान्ह उरवारे। सूरदास हम सबै एक मत ए सब खोटे कारे ॥ ३०११ ॥



राग कल्याण ॥

जाहु जाहु आगे ते ऊधो पति राखति हौं तेरी। काहे को अब रोष दियावत देखति आँखि बरत है मेरी ॥ तुम जो कहतहौ संत हैं गोविंद कहियत है कुबिजा उन घेरी। दोऊ मिले तैसेई तैसे वह अहीर वै कंस की चेरी ॥ तुम सारिखे बसीठ पठाए कहिए कहा बुद्धि उन केरी। सूर श्याम वह सुधि बिसराई गावत हैं ग्वालन सँग हेरी ॥ ३०१२ ॥

राग धनाश्री ॥

ऊधो हम आजु भईं बड़भागी। जिन अँखियन तुम श्याम बिलोके ते अँखियाँ हम लागी॥ जैसे सुमन बास लै आवत पवन मधुप अनुरागी। अति आनंद होत है तैसे अंग अंग सुखरागी॥ ज्यों दर्पण में दरशन देखत दृष्टि परमरुचि लागी। तैसे सूर मिले हरि हमको बिरहव्यथा तनु त्यागी॥ ३०१५॥



राग सारंग ॥

विलग जिनि मानो हमारी बात। डरपत वचन कठोर कहत मति बिनु पानी उड़िजात॥ जो कोउ कहै जरै कछु अपने फिरि पाछे पछितात। जो प्रसाद तुम पावत ऊधो कृष्णनाम लै खात॥ मन जो तिहारो हरिचरणन तर चलत रहत दिनप्रात। सूर श्याम ते योग अधिक है कासों कहि आवै यह बात॥३०१६॥



ऊधो वचन ॥ राग धनाश्री ॥

जानि करि बावरी जिनि होहु। तत्त्व भजै ऐसी ह्वै जैहौ ज्यों पारस परसे लोहु॥ मेरो बचन सत्य करि मानहु छाँड़ो सबको मोहु। जो लगि सब पानी कीचु परी तौलगि अस्तुति द्रोहु॥ अरे मधुप बातैं ए ऐसी क्यों कहि आवत तोहि। सूर सुबस्तुहि छाँड़ि अभागे हमहिं बतावत खोहि॥ ३०२०॥



गोपीवचन ॥ राग सारंग ॥

कहिबे जीय न कछु शक राखो। लावा मेलि दए हैं तुमको बकत रहो दिन आखो॥ जाकी बात कहो तुम हमसों सो धौं कहौ को काँधी। तेरो कहो सो पवन भूस भयो बहो जात ज्यों

आँधी ॥ कत श्रम करत सुनत को इहाँ है होत जो बन को रोयो। सूर इते पर समुझत नाही निपट दई को खोयो ॥ ३०२१ ॥



राग सारंग ॥

मधुकर भली सुमति मति खोई। हाँसी होन लगी है ब्रज मे योगहि राखहु गोई ॥ आतम ब्रह्म लखावत डोलत घट घट व्यापक जोई। चापे काख फिरत निर्गुण गुण इहाँ गाहक नहिं कोई ॥ प्रेमकथा सोई पै जानै जापर बीती होई। अति रस पतो कहा कोइ जानै बूझि देखावै ओई ॥ बड़ो दूत तू बड़ी उमर को बड़िए बुद्धि बड़ोई। सूरदास पूरो है षटपद कहत फिरत हो सोई ॥ ३०२२ ॥



राग सारंग ॥

उलटी रीति तिहारी ऊधो सुनै सु ऐसी को है। अल्प वयस अबला अहीरि शठ तिनहिं योग कत सोहै ॥ कचखुवि-आँधरि काजर कानी नकटी पहिरे वेसरि। मुडली पटिया पारि सँवारै कोढ़ी लावै केसरि ॥ बहिरी पति सों बातै करै तो तैसोई उत्तर पावै। सो गति होइ सबै ताकी जो ग्वारिनि योग सिखावै। सिखई कहत श्याम की बतियाँ तुमको नाहीं दोषु। राजकाज तुमते न सरैगो काया अपनी पोषु ॥ जाते भूलि सबै मारग में इहाँ आनि कहा कहते। भली भई सुधि रही सूर तो मोह धार में बहते ॥ ३०२६ ॥



राग सारंग ॥

राखो सब इह योग अटपटो ऊधो पाँइ परौं। कहाँ रसरीति

कहाँ तनुशोधन सुनि सुनि लाज मरौं ॥ चंदन छाँड़ि विभूति बतावत यह दुख क्यों न जरौं। नासा कर गहि योग सिखावत बेसरि कहाँ धरौं ॥ सगुण रूप रहत उर अंतर निर्गुण कहा करौं। निशि दिन रटना रटत श्याम गुण का करि योग मरौं ॥ मुद्रा न्यास अंग अँगभूषण पतिव्रत ते न मैं टरौं। सूरदास याही व्रत मेरे हरि मिलि नहिं बिछुरौं ॥ ३०२७ ॥



राग सारंग ॥

मधुकर हम अयान मतिभोरी। जानें नेइ योग की बातैं जेहैं नवल किशोरी ॥ कंचन को मृग कवने देख्यो किन बाँध्यो गहि डोरी। बिनही भीत चित्र किन कीनो किन नभ हठ करि घाल्यो भोरी ॥ कहिधौं मधुप बारि मथि माखन काढ़ि जो भरो कमोरी। कहो कौन पै कढ़ो जाइ कन बहुत सरास पछोरी ॥ सब ते ऊँचो ज्ञान तुम्हारो हम अहीरि मति थोरी। सूरज कृष्णचंद्र को चाहत अँखिआँ तृषित चकोरी ॥ ३०२८ ॥



अथ नेत्र अवस्थावर्णन ॥ राग धनाश्री ॥

अँखियाँ हरि दरशन की भूँखी। अब कैसे रहति श्याम रँग राती ए बातैं सुनि रूखी ॥ अवधि गनत इकटक मग जोवत तब ए इत्यें नहिं भूखी। इते मान इहियोग सँदेशन सुनि अकुलानी दूखी ॥ सूर सकत हठ नाव चलावत ए सरिता हैं सूखी। बारक वह मुख आनि देखावहु दुहिपै पिवत पतूखी ॥ ३०२९ ॥

राग धनाश्री ॥

और सकल अंगन ते ऊधो अँखियाँ बहुत दुखारी। अधिक पिराति सिराति न कबहूँ अनेक जतन करि हारी॥ चितवत मग सुनि मेघ न मिलवत विरह बिकल भईं भारी। भरि गई विरह वाइ माधो के इकटक रहत उघारी॥ अलि आली गुरु ज्ञान शलाका क्यों सहि सकति तुम्हारी। सूर सु अंजन आँजि रूप रस आरति हरौ हमारी॥ ३०३९॥



राग रामकली ॥

ऊधो इन नैनन अंजन देहु। आनहु क्यों न श्यामरँग काजर जासों जुर्‌यो सनेहु॥ तपति रहति निशि बासर मधुकर नहिं सुहात बन गेहु। जैसे मीन मरत जल बिछुरत कहा कहौं दुख एहु॥ सब विधि वानि ठानि करि राख्यो खरी कपूर को रेहु। वारक श्याम मिलावहु सूर सुनि क्यों न सुयश यश लेहु[1]॥ ३०४०॥



राग मलार ॥

सखी री मथुरा मे द्वै हंस। वै अक्रूर ए ऊधो सजनी जानत नीके अंस॥ ए दोउ नीर खीर निरवारत इनहि बधायो कंस। इनके कुल ऐसी चलि आई सदा उजागर वंस॥ अब इन कृपा करी ब्रज आए जानि आपनो अंस। सूर सु ज्ञान सुनावत अबलनि सुनत होत मतिभ्रंस ॥३०४१॥



राग सारंग ॥

मानो भरे दोउ एकहि साँचे। नख शिख कमलनयन की

१ नेत्रों की प्रीति के लिए देखिए बिहारी-सतसई, रत्नहज़ारा—पृष्ठ ६०-४ इत्यादि ॥

शोभा एकै भृगुपद बाँचे॥ दारुजात कैसे गुण इनमें ऊपर अंतर श्याम। हमको है गजदंत प्रचारित बचन कहत नहिं काम॥ एई सब असित देह धरे जेते ऐसेई सब जानि। सूर एक ते एक आगरे वा मथुरा की खानि॥ ३०५१॥



राग सारंग॥

सबै खोटे मधुवन के लोग। जिनके संग श्यामसुंदर सखी सीखे सब अपयोग॥ आए है कहियत ब्रज ऊधो युवतिन को लै योग। आसन ध्यान नैन मूँदे सखि कैसे कटै वियोग। हम अहीरि इतनी का जानैं कुबिजा सों संयोग। सूर सु वैद कहा लै कीजै कहे न जाने रोग॥ ३०५२॥



राग नट॥

मधुवन के लोगन को पतिआइ। मुख औरै अंतर्गति औरै पतियाँ लिखि पठवत जो बनाइ॥ ज्यों कोइ लखत काग जिवाए भक्ष अभक्ष खवाइ। कुहुकुहानि सुनि ऋतु वसंत की अंत मिले कुल अपने जाइ॥ ज्यों मधुकर अंबुज रस चाख्यो बहुरि न बूझी बातैं आइ। सूर जहाँ लगि श्यामगात है तिनसे कत कीजे सगाइ॥ ३०५३॥



राग नट॥

माई री मधुवन की यह रीति। निरखि जानि तजत छिन भीतर नवल कुसुम रस प्रीति॥ तिनहूँ के सगिन को कैसे चित आवति परतीति। हमहिं छाँड़ि बिरमहिं कुबिजा सँग आए न रिपुरण जीति॥ जिनि पतियाहु मधुर सुनि बातैं लागे

करन समीति। सूरदास श्यामसँग ऐसो ज्यों भुस पर की भीति ॥ ३०५४ ॥



राग धनाश्री ॥

ऊधो प्रेम रहित योग निरस काहे को गायो। हम अबलनि को निठुर वचन कहे कहा पायो ॥ जिन नैनन कमलनैन मोहन मुख हेर्‌यो। मूँदनते नैन कहत कौन ज्ञान तेर्‌यो ॥ तामें सुनि मधुकर हम कहा लेन जाहीं। जामें प्रिय प्राणनाथ नंदनँदन नाहीं ॥ जिनके तुम सखा साधु बात कहो तिनकी। जीवत कहि प्रेम-कथा दासी हम उनकी ॥ अविनासी निर्गुण मत कहा आनि भाख्यो। सूरदास जीवन प्रभु कान्ह कहा राख्यो ॥३०५७॥



राग सारग ॥

जिनि चालहि अलि बात पराई। नहिं कोउ सुनै न समुझत ब्रज में नई कीरति सब जात हिराई ॥ जाने समाचार सुख पाए मिलि कुल की आरति बिसराई। भले ठौर बसि भली भई मति भले ठौर पहिचानि कराई ॥ मीठी कथा कटुकसी लागति उपजत हैं उपदेस खराई। उलटे न्याउ सूर के प्रभु के बहेजात माँगत उतराई ॥ ३०५८ ॥



ऊधोवचन ॥ राग धनाश्री ॥

ज्ञान बिना कहुँ वै सुख नाहीं। घट घट व्यापक दारु-अग्नि ज्यों सदा बसै उर माहीं ॥ निर्गुण छाँड़ि सगुण को दौरति सोचि कहौ किहि वाहीं। तत्त्व भजौ ज्यों निकट न छूटै त्यों तनु

के सँग छाही ॥ तिनके कहो कौन जस पायो जे अबलौं अवगाहीं । सूरदास ऐसे कर लागत ज्यों कृषि कीन्हे पाही ॥३०६२॥



गोपी वचन ॥ राग सोरठ ॥

ऊधो प्यारे कही सो बहुरि न कहिए । जो तुम हमें जिवायो चाहत अनबोले होइ रहिए ॥ प्राणहमारे घात होत हैं तुमरे भावै हाँसी । या जीवन ते मरन भलो है करवट लेवो कासी ॥ पूरबप्रीति सँभारि हमारे तुमको कहन पठायो । हम तौ जरिबरि भस्म भए तुम आनि मसान जगायो ॥ कै हरि हमको आनि मिलावहु कै ले चलिए साथे । सूर श्याम बिन प्राण तजत हैं बनै तुम्हारे माथे ॥ ३०६३ ॥



राग धनाश्री ॥

रे मधुकर कहा सिखावन आयो । एतौ नैन रूप तस राचे कह्यो न करत परायो ॥ योग युक्ति हम कछू न जानैं ना कछु ब्रह्मज्ञानो । नवकिशोर मोहन मृदुमूरति तासों मन उरझानो ॥ भली करी तुम आए ऊधो देखो दसा बिचारी । दाइ उपाइ मिलाइ सूर प्रभु आरति हरहु हमारी ॥ ३०६४ ॥



राग सारंग ॥

हमको हरि की कथा सुनाउ । ए आपनी ज्ञानगाथा अलि मथुराही लै जाउ ॥ वै नर नारि नीके समुझैंगी तेरो वचन बनाउ । पालागौं ऐसी इन बातनि उनहिं जाइ रिझाउ ॥ जो शुचि सखी श्याम सुंदर को अरु जियअति सतिभाउ । तो बारक

आतुर इन नैनन वह मुख आनि देखाउ ॥ जो कोउ कोटि करै कैसेहू बिधि विद्या व्यौसाउ । तो सुन सूर मीन के जलबिनु नाहिंन और उपाउ ॥ ३०७२ ॥



राग भोपाली ॥

ऊधो हरि बिनु ब्रज रिपु बहुरि जिये । जे हमरे देखत नँद-नंदन हति हति हुते सो दूरि किये ॥ निशि को रूप बकी बनि आवत अति भयकरत सु कंप हिए । तापहते तनु प्राण हमारे रबिहू छिनक छँड़ाइ लिये ॥ उर ऊँचे उसाँस तृणावर्त तिहि सुख सकल उड़ाइ दिए । कोटिक काली समकालिंदी परसत सलिल न जात पिए ॥ बन बकरूप अघासुर समघर कतहू तौन चितै सकिए । कैसो कठिन कर्म कैसो बिन काको सूर शरन तकिए ॥ ३०७३ ॥



राग सोरठ ॥

ऊधो तुम ब्रज की दशा बिचारो । ता पाछे यह सिद्धि आपनी योगकथा विस्तारो ॥ जा कारण तुम पठए माधो सो सोचो जियमाहीं । कितोक बीच बिरह परमारथ जानत हौ किधौं नाहीं ॥ तुम परवीन चतुर कहियत हौ संतन निकट रहत हौ । जल बूड़त अवलंब फेन को फिरि फिरि कहा गहतहौ ॥ वह मुसकानि मनोहर चितवन कैसे उर ते टारौ । योग युक्ति अरु मुक्ति परमनिधि वा मुरली पै वारौ ॥ जिहि उर कमलनैन जु बसतहैं तिहि निर्गुण क्यों आवै । सूरदास सो भजन वहाऊँ जाहि दूसरो भावै ॥ ३०७४ ॥

राग आसावरी ॥

ऊधो कहाँ की प्रीति हमारे। अजहूँ रहत तन हरि के सिधारे॥ छिदि छिदि जात विरह शर मारे। पुरि पुरि आवत अवधि बिचारे॥ फटत न हृदय सँदेस तुम्हारे। कुलिशते कठिन धुकत दोउ तारे॥ वर्षत नैन महा जलधारे। उर पाषाण विदरत न विदारे॥ जीवन बरन दोउ दुखभारे। कहियत सूर लाज पतिहारे॥ ३०७५॥



राग मलार॥

ह्याँ तुम कहत कौनकी बातैं। सुन ऊधो हम समुझत नाही फिरि बूझति हैं तातैं॥ को नृप भयो कंस किन मार्‍यो को वसुदेव सुत आहि। ह्याँ यशुदासुत परममनोहर जीजतु है मुख चाहि॥ नितप्रति जात धेनु वनचारन गोपसखन के संग। वासरगत रजनी मुख आवत करत नैन गति पंग॥ को अविनासी अगम अगोचर को विधि वेद अपार। सूर वृथा बकबाद करत कत इहिब्रज नंदकुमार॥ ३०७६॥



राग मलार॥

ऊधो हरि काहे के अंतर्यामी। अजहुँ न आइ मिले इहि औसर अवधि बतावत लामी॥ कीन्ही प्रीति पुहुप शुंडा की अपने काज के कामी। तिनको कौन परेखो कीजै जे है गरुड़ के गामी॥ आई उघरि प्रीति कलईसी जैसी खाटी आमी। सूर इते पर खुनसनि मरियत ऊधो पीवत मामी॥ ३०८०॥

राग मलार ॥

मधुकर वह जानी तुम साँची । पूरणब्रह्म तुम्हारो ठाकुर आगे माया नाची ॥ यह इहि गाउँ न समुझत कोऊ कैसो निर्गुण होत । गोकुल बाट परे नँदनंदन उहै तुम्हारो पोत ॥ को यशुमति ऊखल सों बाँध्यो को दधिमाखन चोरे । कै ए दोऊ रूख हमारे यमलार्जुन तोरे ॥ को लै बसन चढ़्यो तरुशाखा मुरली मन श्री करषै । कै रसरास रच्यो वृंदावन हरषि सुमन सुर वरषै ॥ ज्यों डाकयों तब कत बिन बूड़े काहे को जीभ पिरावत । तब जु सूर प्रभु गये क्रूरलै अब क्यों नैन सिरावत ॥ ३०८१ ॥



राग कान्हरो ॥

निर्गुण कौन देस को वासी । मधुकर कहि समुझाइ सौंह दै बूझति साँचत हाँसी ॥ को है जनक कौन है जननी कौन नारि को दासी । कैसो बरन भेष है कैसो केहि रस मे अभिलासी ॥ पावैगो पुनि कियो आपनो जोर करैगो गासी । सुनत मौन ह्वै रह्यो बावरो सूर सबै मति नासी ॥ ३०८२ ॥



उद्धववचन ॥ राग बिहागरो ॥

गोपी सुनहु हरि संदेस । कह्यो पूरण ब्रह्म ध्यावो त्रिगुण मिथ्या भेष ॥ मैं कहौं सो सत्य मानहुँ त्रिगुण डारौ नाष । पंचत्रिय गुण सकल देही जगत ऐसो भाष ॥ ज्ञान बिनु नर मुक्ति नाहीं यह विषै संसार । रूप रेख न नाम कुल गुण बरण अवर न सार ॥ मात पितु कोउ नाहिं नारी जगत मिथ्या लाइ । सूर सुख दुख नाहिं जाके भजो ताको जाइ ॥ ३११९ ॥

(गोपियो ने उत्तर दिया.—) राग सारंग ॥

ऐसी बात कहौ जिनि ऊधो नँदनंदन की कान करत न तो आवत आखर मुख ते सूधो ॥ बात नहीं उड़ि जाहि और ज्यों त्यों हम नाहिंन काची। मन क्रम वचन विशुद्ध एकमत कमलनैन रँगराची ॥ सो कछु जतन करौ पालागौं मिटै हृदय को शूल। मुरली धरे आनि दिखरावो बाढ़ै प्रीति दुकूल ॥ इनही बातन भए श्याम तनु अजहुँ मिलावतहो गढ़ि छोलि। सूर वचन सुनि रह्यो ठग्यो सो बहुरि न आयो बोलि ॥ ३१२० ॥



राग धनाश्री ॥

ऊधोजी हमहि न योग सिखैए। जेहि उपदेस मिलै हरि हमको सो व्रत नेम बतैए ॥ मुक्ति रहो घर बैठि आपने निर्गुण सुनत दुख पैए। जिहि सिर केश कुसुम भरि गूदे तेहि कैसे भसम चढ़ैए ॥ जाने जानि सब मगन भए हैं आपुन आपु लखैए। सूरदास प्रभु सुनहु नवोनिधि बहुरि कि या ब्रज अइए ॥ ३१२४ ॥



राग मलार ॥

हम तो तबही ते योग लियो। जबहीं ते मधुकर मधुवन को मोहन गवन कियो ॥ रहित सनेह सरोरुह सबतन श्रीखँड भस्म चढ़ाए। पहिरि मेखला चीर चिरातन पुनि पुनि फेरि सिआए ॥ श्रुति ताटंक नैन मुद्रावलि औधि अधार अधारी। दरशनभिक्षा माँगत डोलत लोचन पत्र पसारी ॥ बाँधो वेणु कंठ शृंगी पिय सुमिरि सुमिरि गुण गावत। कर वर बेंत दंड उर उर तन सुनत श्वान दुख धावत ॥ गोरख शब्द पुकारत आरत

रस रसना अनुराग। भोग भुगति भूलेहु भावनहिं भरी विरह वैराग॥ भूलीभई फिरति भ्रम श्रम के वन बीथिन दिन राति। वारक आवत कुटुंब यात्रा है सोऊ न सोहाति॥ परम गुरू रतिनाथ हाथ सिर दियो प्रेम उपदेस। चतुर चेटकी मथुरानाथ सों कहियो जाइ आदेस॥ भोगी को देखहु या ब्रज मे योग देन जेहि आप। देखी सिद्धि तिहारे सिद्ध की जिनि तुम इहाँ पठाए॥ सूर समति प्रभु तुमहिं लखायो हमरे सोई ध्यान। अलि चलि औरै ठौर देखावहु अपनो फोकट ज्ञान॥ ३१२५॥



राग सोरठ॥

योग की गति सुनत मेरे अंग आगि बई। सुलगि सुलगि हम जरतिही तुम आनि फूँकि दई॥ भोग कुबिजा कूबरी सँग कौन बुद्धि भई। सिंह भष तजि चरत तिनुका सुनी बात नई॥ ध्यान धरत न टरत मूरति त्रिविध ताप तई। सूर हरि की कृपा जापर सकल सिद्धिमई॥ ३१३१॥



राग धनाश्री॥

योग सँदेसो ब्रज में लावत। थाके चरण तुम्हारे ऊधो बार बार के धावत॥ सुनि है कथा कौन निर्गुण की रचि पचि बात बनावत। सगुन सुमेरु प्रगट देखियत तुम तृण की ओट दुरा-वत॥ हम जानत परपंच श्याम के बात नही बौरावत। देखी सुनी न अबलगि कबहूँ जल मथि माखन आवत॥ योगी योग अपार सिंधु में ढूँढेहूँ नहिं पावत। इहाँ हरि प्रगट प्रेम यशुमति के ऊखल आप बँधावत॥ तुम चुपकरि रहो ज्ञान ढकि राखो कतहो विरह बढ़ावत। नंदकुमार कमलदल लोचन कहि को

जाहि न भावत॥ काहे को विपरीत बात काहे सबके प्राण गँवावत। सोहं सकित सूर अबलनि को जिहि निगम नेति यश गावत॥ ३१३५॥



राग सारंग॥

मन तो मथुरा ही जो रह्यो। तब को गयो बहुरि नहिं आयो गहे गुपाल गह्यो॥ राख्यो रूप चुराइ निरंतर सों हरि शोधु लह्यो। आप और मिलावन ऊधो मनदै लेहु मन्यो॥ निर्गुण साटि गुपालहि माँगत क्यों दुख जात सह्यो। यह तनु यहि आधार आजुलगि ऐसे ही निबह्यो। सोई लेत छुड़ाइ सूर अब चाहत हृदय दह्यो॥ ३१४०॥



राग सारंग॥

मुक्तिआनि मंदमो मेली। समुभि सगुन लै चले न ऊधो यह तुमपै सब पुजी अकेली॥ कै लैजाहु अनत ही बेचो कै लैराख्व जहाँ विषवेली। याहि लागि को मरै हमारे वृंदावन चरणन सों ढेली॥ धरे शीश घर घर डोलतहो एकै मति सब भई सहेली। सूरदास गिरिधरन छबीलो जिनकी भुजा कंठ गहि खेली॥ ३१४४॥



राग सारंग॥

ऊधो मन तौ एकै आहि। लै हरिसंग सिधारे ऊधो योग सिखावत काहि॥ सुनि शठनीति प्रसून रस लंपट अबलनि को घाँचाहि। अब काहे को लोन लगावत विरहअनल के दाहि॥ परमारथ उपचार कहत हो विरहव्यथा है जाहि। जाको

राजरोग कफ बाढ़त दह्यो खवावत ताहि॥ अब लगि अवधि अलंबन करि करि राख्यों मनहि सवाहि। सूरदास या निर्गुण सिंधुहि कौन सकै अवगाहि॥ ३१४५॥



राग सारंग॥

ऊधो मन न भए दसबीस। एक हुतो सो गयो श्याम सँग को अवराधे ईस॥ इंद्री सिथिल भई केशो बिन ज्यों देही बिन सीस। आसा लगी रहत तनु श्वासा जीजो कोटि बरीस॥ तुम तौ सखा श्याम सुंदर के सकल योग के ईश। सूरदास वा रस की महिमा जो पूँछै जगदीश॥ ३१४६॥



राग सारंग॥

ऊधो यह मन और न होई। पहिले ही चढ़ि रह्यो श्याम रँग छूटत नहि देख्यो धोई॥ कै तुम बचन बड़े अलि हमसों सोई कह जो मूल। करत केलि वृंदावन कुंजन वा यमुना के कूल॥ योग हमहिं ऐसो लागत ज्यों तो चंपे को फूल॥ अब क्यों मिटत हाथ की रेखें कहौ कौन विधि कीजै। सूर श्याम मुख आनि देखावहु जेहि देखे दिन जीजै॥ ३१४८॥



राग सारंग॥

ऊधो कहिए काहि सुनाइ। हरि बिछुरे हम जिती सहत हैं तिते बिरह के घाइ॥ वरु माधो मधुबनहीं रहते कत यशुमति के आए। कत प्रभु गोपवेष ब्रज धाऱ्यो कत ए सुख उपजाए॥ कत गिरि धाऱ्यो इंद्र प्रण मेट्यो कत वनराशि बनाए। अब कह

निठुर भए अबलनि पर लिखि लिखि योग पठाए ॥ तुम परबीन सबै जानतहौ ताते यह कहि आई । आपन कौन चलावै सूर जिन मात पिता बिसराई ॥ ३१५६ ॥



राग मलार ॥

श्याम अब न हमारे । मथुरा गए पलटि से लीन्हें माधो मधुप तुम्हारे ॥ अब मोहिं आवत पतु पछतावो कैसे वै गुण जात बिसारे । कपटी कुटिल काग अरु कोकिल अंत भए उड़ि न्यारे ॥ करि करि मोह मगन ब्रजवासी प्रेम प्रतीति प्राण धन वारे । सूर श्याम को कौन पत्यै है कुटिलगात तनु कारे ॥३१६७॥



(श्यामरंग की ओर इशारा करके कहती हैः—)

राग धनाश्री ॥

मधुकर कहा कारे की न्याति । ज्यों जल मीन कमल मधुपन को छिन नहिं प्रीति खटाति ॥ कोकिल कपट कुटिल वायस छलि फिरि नहिं वह बन जाति । तैसे ही रसकेलि रस अचयो बैठि एक ही पाँति ॥ सुत हित योग यज्ञव्रत कीजतु बहुविधि नीकी भाँति । देखहु अहि मन मोह मयातजि ज्यों जननी जनि खाति ॥ तिनको क्यों मन विषय में कीजै अवगुण लौं सुखसाति । तैसे सूर सुने यदुनंदन बजी एक रस ताँति ॥ ३१६८ ॥



राग धनाश्री ॥

श्याम सखी कारेहू में कारे । तिनसों प्रीति कहा कहि कीजै मारग छाँड़ि सिधारे ॥ लोक चतुर्दश बिभव कहत है पढ़हि पत्र

जल न्यारे। सरवर त्यागि विहंग उड़े ज्यों फिरि पाछे न निहारे॥ तब चितचोर भोर ब्रजवासिन प्रेम नेम व्रत टारे। लै सरबस नहिं मिले सूर प्रभु कहिअत कुलट बिचारे॥ ३१६६॥



राग मलार॥

संदेसनि विरहव्यथा क्यों जाति। जब ते दृष्टिपरी वह मूरति कमलवदन की कांति॥ अब तो जिय ऐसी बनिआई कहो कोउ केहु भाँति। जोइ वह कहै सोई सो सुनो सखी युग-वर रैनि विहाति॥ जौ लौं न भेंटौं भुजभरि हरि को उर कंचुकी न सोहाति। सूरदास प्रभु कमलनयन बिनु तलफति अरु अकुलाति॥ ३१८४॥



राग मलार॥

गोपालहि लै आवहु मनाइ। अब की बेर कैसेहु करि ऊधो छल बल गहिपाइ॥ दीजो उनहि सु सारि उरहनों संधि संधि समुझाइ। जिनहिं छाँड़ि बटिया महँ आए ते बिकल भए यदुराइ॥ तुमसों कहा कहों हों मधुकर बातै बहुत बनाइ। बहियाँ पकरि सूर के प्रभु की नंद की सौंह दिवाइ॥ ३१८६॥



राग केदारो॥

ऊधो श्याम इहाँ लै आवहु। ब्रजजन चातक मरत पिय से स्वाति बूँद बरषावहु॥ इहाँ ते जाहु बिलंब करहु जिनि हमरी दसा जनावहु। घोषसरोज भए है संपुट होइ दिनमणि बिग-सावहु॥ जो ऊधो हरि इहाँ न आवहिं तौ हमैं वहाँ बुलावहु। सूरदास प्रभु हमहिं मिलावहु तब तिहुँ पुर यश पावहु॥३१८७॥

राग केदारो ॥

कहहु कहा हमते बिगरी। कौने न्याइ योग लिखि पठए हम सेवा कछुए न करी ॥ पाखंड प्रीति करी नँदनंदन अवधि अधार हुतीसो टरी। मुद्रा जटा ऊधो लै आए ब्रजबनिता पहिरो सगरी ॥ जाति स्वभाउ मिटै नहिं सजनी अंतत उबरी कुबरी। सूरदास प्रभु वेगि मिलहु किनि नातरु प्राण जात निकरी ॥ ३१८८ ॥



राग केदारो ॥

बिरही कहालौं आपु सँभारै। जब ते गंग परी हरि पग ते बहिबो नहीं निवारै ॥ नैनन ते बिछुरी भौंहै भ्रम शशि अजहूँ तनु गारै। रोम ते बिछुरी कमल कंठ भए सिंधु भए जारि छारे ॥ बैन ते बिछुरी बिधि अवधि भई वेदहि को निरवारै। सूरदास जाके सब अंग बिछुरे केहि विधा उपचारै॥ ३१८९ ॥



उद्धववचन ॥ राग मलार ॥

वे हरि सकल ठौर के वासी। पूरण ब्रह्म अखंडित मंडित पंडित मुनिनविलासी ॥ सप्तपताल अध ऊर्ध्व पृथ्वीतल जल नभ वरुन बयारी। अभ्यंतर दृष्टी देखन को कारण रूप मुरारी ॥ मन बुधि चित अहंकार दशेन्द्रिय प्रेरक रथमनकारी। ताके काज बियोग बिचारत ये अबला ब्रजनारी ॥ जाको जैसो रूप मन रुचै सो अपवस करि लीजै। आसन वैसन ध्यान धारणा मन आरोहण कीजै ॥ षटदल अष्ट द्वादशदल निर्मल अजपा जाप जपाली। त्रिकुटी संगम ब्रह्म द्वार भिदि यों मिलिहै वनमाली ॥

एकादशगीता श्रति साखी जिहि बिधि मुनि समुझाए। ते संदेस श्रीमुख गोपिन को सूर सु मधुप जनाए॥ ३२६१॥



अथ गोपीवचन॥ राग कर्णाटी॥

देखि रे प्रेम प्रगट द्वादश मीन। ऊधो एक बार नंदलाल राधिका बन ते आवत सखिहि सहित गिरिधर रसभीन॥ गए नव कुंज कुसुमनि के पुंज अलि करैं गुंज सुख हम देखिभई लव-लीन। षट उडुगण षट मनिधर राजत चौबीस घात केहि चित्र कीन॥ षट इंदु द्वादश पतंग मनो मधुप सुनि खग चौअन माधुरी दस पीन। द्वादश बिंबाधर सो बानवै बज्र कन मानो षट दामिनि षट जलज हँसि दीन॥ द्वादश धनुष द्वादशै बिष्का मनमोहन षटै चिबुक चिह्न चित चीन। द्वादश व्याल अधोमुख झूलत मधुमानों कंजदल सों बीसछै बंसीन॥ द्वादशै मृणाल द्वादश कदली खंभ मानो द्वादश दारिम सुमन प्रवीन। चौबीस चतुष्पद शशि सौ बीस मधुकर अंग अंग रस कंद नवीन॥ नील नीलै मिलि घटा विविध दामिनि मनो षोडश शृंगार शोभित हरिहीन। फिरि फिरि चक्र गगन में अभी बतावत युवती योग मौन कहुँ कीन॥ वचन रचन रसरास नंदनंदन ते वही योग पौन हृदये लवलीन। नंद यशोदा दुखित गोपी गाय ग्वाल गोसुत सब मलिन गात दिनही दिन दुखीन॥ बकी बका शकटा तृण केशी वच्छ वृषभ रासभै अलि बिनु गोपाल इनि बैर कीन। उद्धव यहाँ मिलाइ परैं पाँय तेरे सूर प्रभु आरति हरैं भई तनु छीन॥ ३२६२॥

राग गौरी ॥

मधुकर ल्याए योग सँदेसो। भली श्याम कुशलात सुनाई सुनतहि भयो अँदेसो ॥ आश रही जिय कबहुँ मिलै की तुम आवतही नासी। युवतिनि कहत जटा सिर बाँधौ तौ मिलिहैं अविनासी॥ तुमको जिन गोकुलहि पठाए ते वसुदेव कुमार सूर श्याम हमते कहुँ न्यारे होत न करत विहार ॥ ३२६३ ॥



राग रामकली ॥

ऊधो मौनै साधि रहे। योग कहि पछितात मन मन बहुरि कछु न कहे॥ श्याम को यह नहीं बूझे अतिहि रह्यो सिखाइ। कहा मैं कहि कहि लजानो नैन रह्यो नवाइ॥ प्रथमही कहि वचन एकै लियो गुरु करि मानि। सूर प्रभु मोको पठायो इहै कारण जानि ॥ ३२७२ ॥



राग कल्याण ॥

कहा न कीजै अपने काजै। अब दिन दस ऐसो करि देखो जो हरि मिलैं योग के साजै॥ माथे जटा पहिरि उर कंथा लावहु भस्म अंग मुख माजै। सींगी बजाइ पहिरि मृगछाला लोचन मूँदि रहौ किन आजै ॥ सन्मुख ह्वै शर सहौ सयानी नाहिं न वचन आजु के भाजै। योग विरह के बीच परमदुख मरियतुहै यह दुसह दुराजै। ऊधो कहै सत्य करि मानो वर्षा वदत पंचमी गाजै। ज्यों यमुनाजल छाँड़ि सूर प्रभु लीन्हें वसन तजी कुल लाजै॥ ३२७३ ॥

(गोपियों ने फिर कहाः—)

राग सारंग ॥

ऊधो कहा मति दीनो हमहिं गोपाल। आवहु री सखी सब मिलि सोचैं जो पावैं नँदलाल। घर बाहर ते बोलि लेहु सब जावदेक ब्रजबाल। कमलासन बैठहु री माई मूँदहु नैन विशाल॥ षटपद कही सोऊ करि देखी हाथ कछू नहिं आई। सुंदर श्याम कमलदललोचन नेकु न देत दिखाई॥ फिरि भई मगन विरहसागर मे काहुहि सुधि न रही। पूरण प्रेम देखि गोपिन को मधुकर मौन गही॥ कछु ध्वनि सुनि श्रवणन चातक की प्राणपलटि तनुआए। सूर सो अब के टेरि पपीहै विरही मृतक जिवाए॥ ३२७४॥



राग कान्हरो॥

ऊधो सूधे नेकु निहारो। हम अबलनि को सिखवन आए सुनो सयान तिहारो॥ निर्गुण कहो कहा कहियतहै तुम निर्गुण अतिभारी। सेवत सगुण श्याम श्यामसुंदर को मुक्तिलही हम चारी॥ हम सालोक्य स्वरूप सरोज्यो रहत समीप सहाई। सो तजि कहत और की औरै तुम अलि बड़े अदाई॥ हम मूरख तुम बड़े चतुर हो बहुत कहा अब कहिए। वेही काज फिरत भटकत कत अब मारग निज गहिए॥ अहो अज्ञान कतहि उपदेसत ज्ञानरूप हमही। निशिदिन ध्यान सूर प्रभु को अलि देखति जित तितही॥ ३२८०॥



राग कान्हरो॥

ऊधो कोउ नाहिं न अधिकारी। लै न जाहु यह योग

आपनो कत तुम होत दुखारी ॥ यह तौ वेद उपनिषद को मत महापुरुष व्रतधारी । हम अबला अहीरि ब्रजवासिनि देख्यो हृदय बिचारी ॥ को है सुनत कहत कासों हो कौन कथा अनुसारी । सूर श्याम सँगजात भयो मन अहि काँचुली उतारी ॥ ३२९१ ॥



राग सारंग ॥

हरि बिनु यह बिधि है ब्रज जीजतु । पंकज वरषि वरषि उर ऊपर सारंग रिपु जल भीजतु ॥ वायस अजा शब्द की मिलवनि याही दुख तनु छीजतु । चन्द न चौथे जात गोपिन को मधुप परखि यश लीजतु ॥ तारापति अरि के सिर ठाढ़ी निमिष चैन नहिं कीजतु । सूरदास प्रभु वेगि कृपाकरि प्रगट दरश मोहि दीजतु ॥ ३३०१ ॥



राग सारंग ॥

हमारे धनजीवन कृष्णमुकुंद । परमउदार कृपानिधि कोमल पूरण परमानंद ॥ निठुर वचन सुनि फटतु हियो यों रहु रे अलि मतिमंद । ब्रज युवतिन को सुगम जनावत योग युक्ति सुखद्वंद ॥ यहुतौ जाइ उनै उपदेसो सनकादिक स्वच्छंद ।बारक हमैं दरश देखरावा सूर श्याम नँदनंद ॥ ३३०२ ॥



राग मलार ॥

मधुकर मन सुनि योग डरै । तुमहूँ चतुर कहावत अतिही इतनो न समुझि परै ॥ और सुमन जो अनेक सुगंधिका शीतल रुचि जो करै । क्यों तुमको कहि बनै सरै ज्यों और सबै अनरै ॥

दिनकर महाप्रताप पुंजवर सबको तेज हरै। क्यों न चकोर छाँड़ि मृगअंकहि वाको ध्यान धरै॥ उलटोइ ज्ञान सकल उपदेसत सुनि सुनि हृदय जरै। जंबू वृत्त कहो क्यों लंपट फलवर अंबु फरै॥ मुक्ता अवधि मराल प्राण मैं अबलगि ताहि चरै। निघटत निपट सूर ज्यों जल बिनु व्याकुल मीन मरै॥ ३३११॥



राग आसावरी॥

ऊधो योग योग हम नाहीं। अबला सार ज्ञान कहा जानैं कैसे ध्यान धराहीं॥ ते ये मूँदन नैन कहत हैं हरि मूरति जा माहीं। ऐसे कथा कपट की मधुकर हमते सुनी न जाहीं॥ श्रवण चीर अरु जटा बँधावहु ए दुख कौन समाहीं। चंदन तजि अंग भस्म बतावत बिरहअनल अति दाहीं॥ योगी भरमत जेहि लगि भूले सोतो है अपु माहीं। सूर श्याम ते न्यारे न पल छिन ज्यों घट ते परछाहीं॥ ३३१२॥



राग केदारो॥

ऊधो सुनिहो बात नई सी। प्रेमबानि की चोट कठिन है लागि होइ कहे कत ऐसी॥ तुमहिं बिचारि कहा कहि दीजे हा आनि कहत रे जैसी। जानै कहा बाँझ व्यवहार दुख जातक जनहि न पीर है कैसी॥ हम बावरी न आनि बौरावत कहत न तुम्हैं बूझिए ऐसी। सूरदास न्याइ कुबिजा को सरवसु लेइ हमारो वैसी॥ ३३२९॥

यशोमतिवचन ॥ राग केदारो ॥

ऊधो उदित भई सब दुख की करनी। ब्रजबेली सब सूखन लागीं बात कही नँदघरनी ॥ कमलवदन कुँभिलात सबन के गौवन छाड़ी तृण की चरनी। सुख संपति बीति गये नीकी लागी री अलि अनजल की झरनी ॥ देखो चारों चन्द्रमुख शीतल बिन दरशन क्यो मिटती जरनी। सुतसनेह समुझति सु सूर प्रभु फिरि फिरि यशुमति परती धरनी ॥ ३३३० ॥



राग सारंग ॥

जैसे कियो तुम्हारे प्रभु अलि तैसो भयो ततकाल। ग्रंथित सूत धरत तेहिं ग्रीवा जहाँ धरते बनमाल। टेरि देत श्रीदामा द्रुम चढ़ि सरस वचन गोपाल। ते अब श्रवण अक्रूर प्रमुख सब कहत कंस कुशलात ॥ कोमल नील कुटिल अलकावलि रेखी राजत भाल। ऐसे सर त्यागे सुन सूरज फंदा न्याइ मराल ॥ ३३३३ ॥



राग मलार ॥

विरचि मन बहुरि राचो आइ। टूटी जुरै बहुत जतननि करि तऊ दोष नहिं जाइ ॥ कपट हेतु की प्रीति निरंतर नोथि चोखाइ गाइ। दूध फाटि जैसे भइ काँजी कौन स्वाद करि खाइ ॥ केरा पासि ज्यों बेरि निरंतर हालत दुख दै जाइ। स्वाति बूँद जैसे परै फनिक मुख परत विषै ह्वै जाइ ॥ एती केती तुमरी उनकी कहत बनाइ बनाइ। सूरदास दिगंबरपुर ते रजक कहा व्योसाइ ॥ ३३३४ ॥

राग मलार ॥

ऊधो तुमहो अति बड़भागी। अपरस रहत सनेहतगा ते नाहिं न मन अनुरागी॥ पुरइनि पात रहत जल भीतर तारस देह न दागी। ज्यों जल माँह तेल की गागरि बूँदन ताको लागी॥ प्रीतिनदी महँ पाँव न बोन्यो दृष्टि न रूप परागी। सूरदास अबला हम भोरी गुरचेंटी ज्यों पागी॥ ३३३५॥



राग काफी॥

आयो घोष बड़ो व्यापारी। लादि पोष गुणज्ञान योग की ब्रज में आनि उतारी॥ फाटक दैकै हाटक भागत भोरो निपट सुधारी धुरही ते खोटो खायो है लिये फिरत सिर भारी॥ इनके कहे कौन डहकावै ऐसी कौन अनारी। अपनो दूध छाँड़ि को पीवै खारे कूप को वारी॥ ऊधो जाहु सबेरे ह्याँ ते बेगि गहर जनि लावहु। मुख माँगो पैहो सूरज प्रभु साहुहि आनि दिखावहु॥ ३३४०॥



राग धनाश्री॥

ऊधो योग कहा है कीजतु। ओढ़िअत है की दसिअत है कीधौं कहियत कीधौं जु पतीजत॥ की कछु भलो खेलबनी सुंदरि की कछु भूषण नीको। हमरे नँदनंदन जो कहियत जीवन जी को॥ तुम जो कहत हरि निगम निरंतर निगम नेति हैं रीति। प्रगट रूप की राशि मनोहर क्यों छाँड़े परतीति॥ गाइ चरावन गए घोष ते अबहीं हैं फिरि आवत। सोई सूर सहाय हमारे वेणु रसाल बजावत॥ ३३४१॥

राग मलार ॥

हम अलि कैसे कै पतिआहि । वचन तुम्हारे हृदय न आवत क्योंकर धीर धराहिं ॥ वपु आकार भेष नहिं जाको कौन ठौर मन लागे ॥ हाँ करिरही कंठ मे मनिआ निर्गुण कहा रसहि ते काज । सूरदास सगुणमिलि मोहन रोम रोम सुखराज ॥३३५२॥



राग मलार ॥

मधुकर जानत हैं सब कोऊ । जैसे तुम अरु सखा तिहारे गुणन आगरे दोऊ ॥ सुफलकसुत कारे नख शिख ते कारे तुम अरु वोऊ । सरवस हरन करत अपने सुख कोउ कितो गुण होऊ ॥ प्रेम कृपण थोरे वित वपुरी उबरत नाहिं न सोऊ । सूर सनेह करै जो तुमसों सो पुनि आपु बिगोऊ ॥ ३३५३ ॥



राग मलार ॥

मधुकर तुम रसलंपट लोग । कमलकोष नित रहत निरंतर हमहिं सिखावत योग ॥ अपने काज फिरत बन अंतर निमिष नहीं अकुलात । पुहुप गए बहुरौ बल्लिन के नेक निकट नहिं जात ॥ तुम चंचल अरु चोर सकल अँग बातन को पतिआत । सूर बिधाता धन्य रचे पइ मधुप साँवरे गात ॥ ३३५४ ॥



राग मलार ॥

मधुकर नाहिं न काज सँदेसो । इहि व्रज कौने योग लिख्यो है कोटि जतन उपदेसो ॥ रवि के उदय मिलन चकई को शशि के समय अँदेसो । चातक क्यों बन वसत बापुरो बधिकहि काज

बघेसो । नगर आहि नागर बिनु सूनो कौन काज बसिवेसो । सूर स्वभाव मिटै क्यों कारे फनिकहि काज डसे सो ॥ ३३६५॥



राग मलार ॥

ऊधो हम वह कैसे मानैं । धूत धौल लंपट जैसे हरि तैसे और न जानैं ॥ सुनत सँदेस अधिक तनु कंपत जनि कोउ डरं तहाँ आनै । जैसे वधिक गँवहि ते खेलत अंत धनुहिया तानै ॥ निर्गुणवचन कहहु जनि हमसों ऐसी करटि न कानै । सूरदास प्रभु की हौं जानों और कहै औरै कछु ठानै ॥ ३३६६ ॥



राग मलार ॥

ऊधो नंद को गोपाल गिरिधर गयो तृण जो तोर । मीन जल की प्रीति कीनी नाहिं निबही वोर ॥ अबकै जब हम दरश पावैं देहिं लाख करोर । हरि सों हीरा खोइ कैहौं रहि समुंद्र ढँढोर ॥ ऊधो हमारो कछु दोष नाहीं वै प्रभु निपट कठोर । हौं जपौं तुम नाम निशि दिन जैसे चंद्रचकोर ॥ हम दासी बिनमोल की ऊधो ज्यों गुड्डी वस डोर । सूर को प्रभु दरश दीजै नहीं मनसा और ॥ ३३८३ ॥



राग सोरठ ॥

ऊधो अवरै कान्ह भए । जब ते यह ब्रज छाँड़ि मधुपुरी कुबिजा धाम गए ॥ कै वह प्रीति रीति गोकुलबसि दुख सुख प्रीति निबाहत । अब इह करत वियोग देह द्रुम सुनत काम दव डाहत ॥ जहाँ स्वारथ हरि गुण साँवरो निर्गुण कपट

सुनावत। सूर सुमिरि ब्रजनाथ आपने कत न परेखो आवत ॥ ३३८४ ॥



उद्धववचन ॥ राग धनाश्री ॥

यह उपदेस कह्यो है माधो। करि बिचार सन्मुख ह्वै साधो ॥ इंगला पिंगला सुषमना नारी। शून्यो सहज मे बसहिं मुरारी ॥ ब्रह्मभाव करि मैं सब देखो। अलख निरंजन ही को लेखो ॥ पद्मासन इक मन चित ल्यावो। नैन मूँदि अंतर्गति ध्यावो ॥ हृदयकमल में ज्योतिप्रकाशी। सो अच्युत अविगति अविनाशी ॥ यहि प्रकार विष मत्तमतरिये। योगपंथ क्रम क्रम अनुसरिए ॥ दुसह सँदेस सुनत ब्रजबाला। मुरछि परी धरणि बेहाला ॥ अरे मधुप लंपट अनिआई। यह सँदेस कत कहैं कन्हाई ॥ नंदभवन में सदा विराजै। नटवर भेष सदा हरि राजै ॥ रास विलास करैं वृंदावन। बिच गोपी बिच कान्ह श्यामघन ॥ अलि आयो है योग सिखावन। देखि प्रीति लागे सिर नावन ॥ भवँर गीत जो दिन दिन गावै। ब्रह्मानंद परमपद पावै ॥ सूर योग की कथा बहाई। शुद्ध भक्ति गोपी जन पाई ॥ साँचो मतो जौ जिहि बिधि धावै। तैसो भाव हरि हिय भरि पावै ॥३४०८॥



अथ गोपीवचन ॥ राग धनाश्री ॥

इहाँ हरि जी बहु क्रीड़ा करी। सो तो चित ते जात न टरी ॥ इहाँ पय पीवत बकी संहारी। शकट तृणावर्त इहाँ हरि मारी ॥ वत्सासुर को इहाँ निपात्यो। बका अघा इहाँ हरिजी घात्यो ॥ हलधर मार्‌यो धेनुक को इहाँ। देखो ऊधो हत्यो प्रलंब

जहाँ ॥ इहाँ ते ब्रह्मा हमको गयो हरि। और किए हरि लगी न पलक घरि ॥ ते सब राखे संपति नरहरि। तब इहाँ ब्रह्मा आय अस्तुति करि ॥ इहाँ हरि काली उर्ग निकास्यो। लगेउ जरावन अनल सो नास्यो ॥ वस्त्र हमारे हरि जु इहाँ हरि। कहाँ लगि कहिए जे कौतुक करि ॥ हरि हलधर इहाँ भोजन किए। विप्रतियन को अति सुख दिए ॥ इहाँ गोवर्धन कर हरि धार्‍यो। मेघवारि ते हमैं निवार्‍यो ॥ शरद निशा में रास रच्यो इहाँ। सो सुख हमपै बरण्यो जात कहाँ ॥ वृषभ असुर को इहाँ संहार्‍यो। भ्रम अरु केशी इहाँ पछार्‍यो ॥ इहाँ हरि खेलत आँखिमुचाई। कहाँ लगि बरनैं हरिलीला गाई ॥ सुनि सुनि ऊधो प्रेम मगन भयो। लोटत धर पर ज्ञान गर्व गयो ॥ निरखत ब्रज भूमि अतिसुख पावै। सूर प्रभू को पुनि पुनि गावै ॥ ३४०९ ॥



राग धनाश्री ॥

ऊधो जो करि कृपा पाउँ धरत हरि तौ मैं तुमहिं जनावौं। मैान गहे तुम बैठि रहो हो मुरली शब्द सुनावौं ॥ अबहिं सिधारे बन गोचारन हौं बैठी यश गावौं। निषि आगम श्रीदामा के सँग नाचत प्रभुहि देखावौं ॥ को जानै दुबिधा संकोच में तुम डर निकट न आवौं। तब इह द्वंद्व बढ़ै पुनि दारुण सखियन प्राण छोड़ावै ॥ छिन न रहै नँदलाल इहाँ बिनु जो कोउ कोटि सिखावै। सूरदास ज्यों मन ते मनसा अनत कहूँ नहिं धावै ॥ ३४१० ॥

(इतना सुन कर ऊधोजी का भाव बदल गया और वह बोले:—)

राग सारंग ॥

मैं ब्रजवासिन की बलिहारी । जिनके संग सदा है क्रीडत श्रीगोबर्धनधारी ॥ किनहूँ के घर माखन चोरत किनहूँ के सँग दानी । किनहूँ के सँग धेनु चरावत हरि की अकथ कहानी ॥ किनहूँ के सँग यमुना के तट बंसी टेर सुनावत । सूरदास बलि बलि चरणन की इह सुख मोहिं नित भावत ॥ ३४११ ॥



राग सारंग ॥

हों इहि मोरन की बलिहारी । बलिहारी वा बाँस वंश की बंसीसी सुकुमारी । सदा रहत है करज श्याम के नेकहु होत न न्यारी ॥ बलिहारी वा कुंजजात की उपजी जगत उजियारी । सदा रहत हृदय मोहन के कबहूँ टरत न टारी ॥ बलिहारी कुल शैल सर्व बिधि कहत कालिंदिदुलारी । निशि दिन कान्ह अंग आली गण आपुनहूँ भईं कारी ॥ बलिहो वृंदावन के भूमिहि सो तो भागकि सारी । सूरदास प्रभू नाँगे पाँयन दिनप्रति गैया-चारी ॥ ३४१२ ॥



अथ गोपीवचन ॥ राग मारू ॥

अलि तुम जाहु फिरि वहि देस । चीर फारि करिहैं भगौहैं शिखनि शिखि लवलेस ॥ भाल लोचन चंद्र चमकनि कठिन कंठहि सेस । नाद मुद्रा विभूति भारो करौ रावर भेस ॥ वहाँ जाइ सँदेस कहियो जटा धारैं केश । कौन कारण नाथ छाँड़ी सूर इहै अँदेश ॥ ३४१३ ॥

राग मलार ॥

हम पर हेतु किए रहिबो। वा ब्रज को व्यवहार सखा तुम हरि सों सब कहिबो ॥ देखे जात अपनी इन अँखियन या तन को दहिबो। बरनौं कहा कथा या तनु की हिरदै को सहिबो ॥ तब न कियो प्रहार प्राणनि को फिरि फिरि क्यों चहिबो। अब न देह जरिजाइ सूर इन नैनन को बहिबो ॥ ३४१४ ॥



राग मलार ॥

अपने जिय सुरति किए रहिबो। ऊधो हरि सों इहै बीनती समो पाइ कहिबो ॥ घोष बसत की चूक हमारी कछू न चित गहिबो। परमदीन यदुनाथ जानि कै गुण बिचारि सहिबो ॥ अब की बेर दयालु दरश दै दुख की राशि दहिबो। सूर श्याम हम कहैं कहाँ लग वचन लाज बहिबो ॥ ३४१५ ॥



राग कल्याण ॥

यदुपति को सँदेस सखी री कैसे कै कहौं। बिनहीं कहे आपनेहि मन में कब लग शूल सहौं ॥ जो कछु बात बनाऊँ चित में रचि पचि सोचि रहौं। मुख आनत ऊधो तन चितवत नवहु विचार बहौं ॥ सो कछु सीख देहु मोहिं सजनी जाते धीर गहौं। सूरदास प्रभु के सेवक सों बिनती करि निबहौं ॥ ३४१६ ॥



राग बिलावल ॥

कर कंकन ते भुज ठाढ़ भई। मधुवन चलत श्याम मनमोहन आवन अवधि जु निकट दई ॥ जो अति पंथ मनावत शंकर निशिबासर मो गनत गई। पाती लिखत विरह तनु व्याकुल

कागर ह्वै गयो नीर मई॥ ऊधो मुख के वचनन कहियो हरि की शूल नितप्रति नई। सूरदास प्रभु तुम्हरे दरश को विरह वियोगिन विकल भई॥ ३४१७॥



राग कल्याण॥

कहियो मुख सँदेस हाथ लै दोजो पाती। समय पाइ ब्रजबात चलाई सुख ही माँझ सुहाती॥ हम प्रतीत करि सरवस अर्प्यो गन्यो नहीं दिनराती। नँदनंदन यह जुगत न होई लै जु रहे मनु थाती॥ जो तब साधि दीज तौ कोऊ तो अब कत पछुताती। सूरदास प्रभु मुकुर जानती तौ सँग लीन्हें जाती॥ ३४१८॥



राग धनाश्री॥

ऊधो नँदनंदन सों इतनी कहियो। यद्यपि ब्रज अनाथ करि डाऱ्यो तदपि सुरति चित किये रहियो॥ तिनकी ओर करहु जिनि हमसों एक बीत की लाज निबहिबा। गुण अवगुणन देखि नहिं कीजनु दासन दास की इतनी सहियो॥ तुम बिन प्राण त्याग हम करिहैं यह अवलंबन न सुपनेहु लहियो। सूरदास प्रभु लिखिदे पठयो कहाँ योग कहाँ पियनंदहियो॥ ३४१९॥



राग नट॥

ऊधो इतनी जाइ कहो। सबै विरहिनी पाइँ लागति हैं मथुरा कान्ह रहो॥ भूलिहि जिनि आवहिं यहि गोकुल तत रैनि ज्यों चद। सुंदर वदन श्याम कोमलतनु क्यों सहिहैं नँदनंद॥ मधुकर मोर प्रबल पिक चातक वन उपवन चढ़ि

बोलत। मनहुँ सिंह की गर्ज सुनत गो वत्स दुखित तनु डोलत॥ आसन भये अनल विष अहि सम भूषण विविध विहार। जित जित फिरत दुसहु द्रुम द्रुम प्रति धनुष धरे मनु मार॥ तुमहो संत सदा उपकारी जानत हौ सब रीति। सूरदास ब्रजनाथ बचै तौ ज्यों नहिं आवै ईति॥ ३४२०॥



राग मलार॥

मधुकर इतनी कहियहु जाइ। अति कृश गात भई ए तुम बिनु परमदुखारी गाइ॥ जलसमूह बरषति दोउ आँखैं हूँकति लीने नाउँ। जहाँ तहाँ गोदोहन कीनो सूँघति सोइ ठाउँ। परति पछार खाइ छिनही छिन अति आतुर ह्वै दीन। मानहु सूर काढ़ि डारी है वारि मध्य ते मीन॥ ३४२१॥



राग नट॥

तुम बिनु हम अनाथ ब्रजबासी। इतनो सँदेसो कहियो ऊधो कमलनैन बिनु त्रासी॥ जा दिन ते तुम हमसों बिछुरे भूख नींद सब नासी। विह्वल विकल कलहू न परत तनु ज्यों जल मीन निकासी॥ गोपी ग्वाल बाल वृंदावन खग मृग फिरत उदासी। सबई प्राण तज्यो चाहत हैं को करवत को कासी॥ अंचल जोरे करत बीनती मिलिबे को सब दासी। हमरो प्राणघात ह्वै निबरे तुम्हरे जाने हाँसी॥ मधुकर कुसुम न तजत सखी री छाँड़ि सकल अविनासी। सूर श्याम बिन यह बन सूनो शशि बिनु रैनि निरासी॥ ३४२२॥

राग धनाश्री ॥

सबै करति मनुहारि ऊधो कहियो हो जैसे गोकुल आवैं। दिन दस रहे सु भली कीन्ही अब जनि गहरु लगावैं॥ नहि न सोहात कछू हरि तुम बिनु कानन भवन न भावै। धेनु विकल सो चरत नहीं तृण बछा न पीवन धावै॥ देखत अपनी आँखि तुमहिं तन और कहा बात न समुझावैं। सूरदास प्रभु कठिन हीन तन कत अब वै ब्रजनाथ कहावै॥ ३४२३॥



राग गौरी॥

ऊधो हरि वेगहि देहु पठाइ। नँदनंदन दरशन बिनु रटि मरौं ब्रज अकुलाइ॥ मातु यशुमति सहित ब्रजपति परे धरणि मुरझाइ। अति बिकल तनु प्राणत्यागत करै कछु गति आइ॥ सकल सुरभी यूथ दिन प्रति रुदति पुर दिश धाइ। जहाँ जहाँ दुहि बन चराइ मरति तहाँ विललाइ। परमप्यारी शरद राधिका लई गृह दुख छाइ। तजत चक्र नवक्र चखबिनु करै कोटि उपाइ। योगपद लै देहु योगिहि हमहिं योग मिलाइ। मधुप बिछुरे वारि मीनहि अनत कहा सोहाइ॥ आजु जेहि विधि श्याम आवैं कहो तेहि बिधि जाइ। सूरदास विरह ब्रजजन जरत लेहु बुझाइ॥३४२४॥



राग केदारो॥

ऊधो एक मेरी बात। बूझियो हर वाइ हरि सों प्रथम कहि कुशलात॥ तुम जो इह उपदेस पठायो आनि योग मन ज्ञान। सत्यहू सब बचन झूठो मानिये मन न्यान॥ और ब्रज कहि दूसरोहू सुन्यो कहा बलवीर। जाहि बरजन इहाँ पठयो करि

हमारी पीर ॥ आपु जब ते गए मथुरा कहत तुमसों लोग। सहजही ता दिवस ते हम भूलियो भय भोग ॥ प्रगट पति पितु मात प्रभु जन प्राण तुम आधीन। ज्यों चकोरहि संग चकोरी चित्त चंदहि लीन ॥ रूप रसन सुगंध परसन रुचि न इंद्रिन आन। होति हौंस न ताहि विष की कियो जिन मधुपान॥ ह्वै गये मन आपुहि सब गिनत गुन गन ईश। ज्ञान की अज्ञान ऊधो तृणतोरि दीजै शीश॥ बहुत कहा कहैहि केशोराइ परम प्रवीन। सूर सुमत न छाँड़िहै जहाँ जीवत जल बिन मीन ॥ ३४२६ ॥



(ऊधोजी फिर बोलेः—)

राग नट ॥

अब अति चकितवंत मन मेरो। आयो हों निर्गुण उपदेसन भयो सगुन को चेरो॥ मैं कछु ज्ञान कह्यो गीता को तुमहिं न परह्यो नेरो। अति अज्ञान जानिकै अपनो दूत भयो उन केरो॥ निजजन जानि हरि इहाँ पठायो दीनो बोझ घनेरो। सूर मधुप उठि चले मधुपुरी बोरि योग को बेरो॥ ३४३१ ॥



गोपीवचन ॥ राग केदारो ॥

ऊधो तिहारे मैं चरणन लागौं बारक यहिब्रज करियो विभावरी। निशि न नींद आवै दिवस न भोजन भावै चितवत मग भई दृष्टि झावरी ॥ एक श्याम बिन कछू न भावै रटत फिरत जैसे बकत बावरी। या वृंदाबन सघन श्याम बिनु तहाँ यमुना बहै सुभग साँवरी॥ लाज न होति उहै चलिजाती चलि न सकति आवै बिरह ताब री। सूरदास प्रभु आनि मिलावहु ऊधो कीरति होइ रावरी॥ ३४३२ ॥

अथ यशोमति-संदेश उद्धवप्रति ॥ राग धनाश्री ॥

ऊधो तिहारे पाँइ लागतिहौं कहियो श्याम सों इतनी बात। इतनी दूर बसत क्यों बिसरे अपनी जननी तात ॥ जा दिन ते मधुपुरी सिधारे श्याम मनोहर गात। ता दिन ते मेरे नैन पपोहा दरश प्यास अकुलात ॥ जहाँ खेलन को ठौर तुम्हारे नंद देखि मुरझात। जो कबहूँ उठिजात खरिक लौं गाइ दुहावन प्रात ॥ दुहत देखि औरन के लरिका प्राण निकसि नहिं जात। सूरदास बहुरो कब देखों कोमल कर दधि खात ॥ ३४३३ ॥



राग मलार ॥

तब तुम मेरे काहे को आए। मथुरा क्यों न रहे यदुनंदन जोपै कान्ह देवकी जाए ॥ दूध दही काहे को चोऱ्यो काहे को बन गाइ चराए। अघ अरिष्ट काली नहिं काढ़्यो विष जल ते सब सखा जिआए ॥ सूरदास लोगन के भोरए काहे कान्ह अब होत पराए ॥ ३४३४ ॥



राग सोरठ ॥

ऊधो हम ऐसे नहिं जानी। सुत के हेत मर्म नहिं पायो प्रगटे शारँगपानी ॥ निशिवासर छाती सों लाई बालकलीला गाइ। ऐसे कबहूँ भाग होहिंगे बहुरो गोद खेलाइ ॥ को अब ग्वाल सखा सँग लीन्हें साँझ समै ब्रज आवै। को अब चोरि चोरि दधि खैहै मैया कवन बोलावै ॥ बिदरत नाहिं बज्र की छाती हरिवियोग क्यों सहिए। सूरदास अब नँदनंदन बिनु कहो कौन बिधि रहिए ॥ ३४३५ ॥

राग धनाश्री ॥

ऊधो जो अब कान्ह न ऐहैं। जिय जानौ अरु हृदय बिचारो हम अतिही दुख पैहैं ॥ पूँछो जाइ कवन को ढोटा तब कहा उत्तर दैहैं। खायो खेले संग हमारे याको कहा बतैहैं ॥ गोकुल अरु मथुरा के वासी कहाँलौं झूठे कैहैं। अब हम लिखि पठयो चाहत हैं वहाँ पत्त नहिं पैहैं ॥ इन गायन चरवो छाँड़ो है जो नहिं लाल चरैहैं। इतने पर नहिं मिलत सूर प्रभु फिरि पाछे पछितैहैं ॥ ३४३६ ॥



राग सारंग ॥

तब ते छीन शरीर सुभाहु। आधो भोजन सुबल करत है ग्वालन के उर दाहु। नंद गोप पिछवारे डोलत नैनन नीर प्रवाहु। आनँद मिट्यो मिटी सब लीला काहु न मन उत्साहु ॥ एक बेर बहुरो ब्रज आवहु दूध पतूखी खाहु। सूर सुपथ गोकुल जो बैठहु उलटि मधुपुरी जाहु ॥ ३४३७ ॥



राग नट ॥

कहियो यशुमति की आशीस। जहाँ रहो तहाँ नंदलाड़िलो जीवो कोटि वरीस ॥ मुरली दई दोहनी घृत भरि ऊधो धरि लई सीस। इह घृत तौ उनहीं सुरभिन को जो प्यारी जगदीस ॥ ऊधो चलत सखा मिलि आए ग्वालबाल दश बीस। अब के इहाँ ब्रज फेरि बसावो सूरदास के ईस ॥ ३४३८ ॥



अथ सखावचन ॥ राग बिलावल ॥

ऊधो देखत हो जैसे ब्रजवासी। लेत उसाँस नैन जल

पूरित सुमिरि सुमिरि अविनासी॥ भूलि न उठत यशोदा जननी मनो भुअंगम डासी। छूटत नहीं प्राण क्यों अटके कठिन प्रेम की फाँसी॥ आवत नही नंद मंदिर में वह्यो फिरत पनियासी। प्रेम न मिले धेनु दुर्बल भई श्याम विरह की त्रासी॥ गोपी ग्वाल सखा बालक सब कहूँ न सुनियत हासी। काहे दियो सूर सुख मे दुख कपटी कान्ह लवासी॥ ३४३९॥



उद्धववचन॥ राग सारंग॥

धन्य नंद धन यशुमति रानी। धन्य कान्ह प्रकटे सुखदानी॥ धन्य ग्वाल धन्य धन्य गोपिका जेहि खेलाए शारँगपानी॥ धन्य व्रज भूमि धन्य वृंदावन जहाँ अविनासी आए। धन्य धन्य सूर आजु हमहूँ जो तुम सब देखे आए[1]॥ ३४४०॥

---

[1] उद्धव और गोपियों की बातचीत के लिए देखिए श्रीमद्भागवत दशम स्कन्ध पूर्वार्ध अध्याय ४७। लल्लूजीलाल-कृत प्रेमसागर अध्याय ४८।

इसी को भँवरगीत कहते है। कथा है कि जब गोपियाँ उद्धव से बाते कर रही थी तब एक काला भौंरा गूँजता हुआ आ पहुँचा। उसी को सम्बोधन करके गोपियाँ बाते करने लगीं। संस्कृत, हिन्दी एवं अन्य भारतीय भाषाओं मे भँवरगीत गाने मे कवियों ने क़लम तोड़ दी है। हिन्दी में सूरदास से उतर कर नन्ददास का भँवरगीत है। उदाहरणार्थ कुछ पद उद्धृत करते हैं:—

(उद्धव) वै तुमतें नहिं दूरि ज्ञान की आँखिन देखौ,
अखिल विस्व भरि पूरि ब्रह्म सब रूप विसेखौ।

(ऊधोजी मथुरा आये और कृष्ण से मिले। कृष्ण से इस प्रकार वार्तालाप हुआ।)

राग सारंग ॥

ऊधो जब ब्रज पहुँचे जाइ। तब की कथा कृपा करि कहिए हम सुनिहैं मन लाइ॥ बाबा नंद यशोदा मइया मिले सबन हित

लोह दारु पाषाण में जल थल महि आकास,
सचर अचर बरतत सबै ज्योतिहि रूप प्रकास।
सुनो ब्रजनागरी।

(गोपी) कौन ब्रह्म की जोति ज्ञान कासो कहो ऊधो,
हमरे सुन्दर स्याम प्रेम को मारग सूधो।
नैन बैन स्रुति नासिका मोहन रूप लखाय,
सुधि बुधि सब मुरली हरी प्रेम ठगोरी लाय।
सखा सुन स्याम के।

(उद्धव) यह सब सगुण उपाधि रूप निर्गुण है उनको,
निरविकार निरलेप लगत नहिं तीनों गुण को
हाथ न पाय न नासिका नैन बैन नहि कान,
अच्युत ज्योति प्रकासही सकल विस्व को प्रान।
सुनो ब्रजनागरी।

(गोपी) जो मुख नाहिन हतो कहो किन माखन खायो,
पायन बिन गोसंग कहौ बन बन को धायो।
आंखिन में अंजन दयो गोवर्द्धन लयो हाथ,
नन्द-यसोदा-पूत है कुँवर कान्ह ब्रजनाथ।
सखा सुन स्याम के।

(उद्धव) जाहि कहत तुम कान्ह ताहि कोउ पिता न माता,
अखिल अण्ड ब्रह्मण्ड विस्व उनही में जाता।

आइ। कबहूँ सुरति करत माइन की किधौं रहे बिसराइ॥ गोप सखा दधि खात भात वन अरु चाखते चखाइ। गऊ बच्छ

लीला गुण अवतार है धरि आये तन स्याम,
जोग जुगत ही पाइये परब्रह्म पुरधाम,
सुनो ब्रजनागरी।

(गोपी) ताहि बतावो जोग जोग ऊधो तहँ जावौ,
प्रेम सहित हम पास स्यामसुन्दर-गुण गावो।
नैन बैन मन प्रान मे मोहन गुण भरपूर,
प्रेम पियूषै छोड़ि कै कौन समेटै धूर।
सखा सुन स्याम के।

भौंरे को इशारा करके गोपियां कहती हैं:—
कोउ कहै री विस्व माँझ जेते हैं कारे,
कपट कुटिल की कोटि परम मानुष मसिहारे।
एक श्याम तन परसिके जरत आज लौ अङ्ग,
ता पाछे यह मधुपहू लायो जोग भुवंग।
कहाँ इनको दया।
कोई कहै री मधुप भेष उनही को धार्यौ,
स्याम पीत गुञ्जार बैन किंकिणि झनकार्यौ।
बापुर गोरस चोरिकै फिर आयो यहि देस,
इनको जनि मानहु कोऊ कपटी इनको भेस।
चोरि जनि जाय कछु।
कोऊ कहै रे मधुप कहै अनुरागी तुमरो,
कौने गुणधौ जानि एहु अचरज है हमको।
कारो तन अति पातकी मुख पियरौ जगनिन्द,
गुन अवगुन सब आपनो आपुहि जानि अलिन्द
देखि लै आरसी

कोउ कहै रे मधुप कहा तू रस को जानै,
बहुत कुसुम पै बैठि सबै आपन सम मानै।
आपन सम हमको कियो चाहत है मतिमन्द,
दुबिधा ज्ञान उपजाय कै दुखित प्रेम आनन्द।
कपट के छन्द सों।

कोऊ कहै रे मधुप कहा मोहन गुन गावै,
हृदय कपट सों परम प्रेम नाहिन छबि पाव।
जानति हौ सब भाँति कै सरबस लयो चुराय,
यह बैरी ब्रजबासिनी को जो तुम्हे पतियाय।
लहे हम जानिकै।

कोऊ कहै रे मधुप कौन कहै तुम्है मधुकारी,
लिये फिरत मुख जोग गाठ काटत बेकारी।
रुधिर पान कियो बहुत कै अरुन अधर रङ्गरात,
अब ब्रज मे आये कहा करन कौन को घात।
जात किन पातकी।

कोऊ कहै रे मधुप प्रेम षटपद पसु देख्यो,
अबलौं यहि ब्रजदेस माहिं कोउ नाहिं बिसेख्यो।
द्वै सिंह आनन उपर रे कारो पीरो गात,
खल अमृत सम मानही अमृत देखि डरात।
बादि यह रसिकता।

कोऊ कहै रे मधुप ज्ञान उलटो लै आयो,
मुक्ति परे जे फेरि तिन्हे पुनि कर्म्म बतायो।
वेद उपनिषद सार जे मोहन गुन गहि लेत,
तिनके आतम सुद्ध करि फिरि करि सन्धा देत।
जोग चटसार मैं।

व्योहार बिसारे मुख सन्मुख सुखपाइ। पलकवोट निमि पर

कोऊ कहै रे मधुप निगुन इन बहुकरि जान्यो,
तर्क बितर्क नियुक्ति बहुत उनही यह आन्यो।
पै इतनो नहि जानही बस्तु बिना गुन नाहिं,
निर्गुन होहि अतीत के सगुन सकल जग माहि।
सखा सुन स्याम के।

कोऊ कहै रे मधुप तुम्है लज्जा नहिं आवै,
सखा तुम्हारो स्याम कूबरीनाथ कहावै।
यह नीची पदवी हुती गोपीनाथ कहाय,
अब यदुकुल पावन भयो दासी जूठन खाय।
मरत कह बोल को।

कोउ कहै अहो मधुप स्याम योगी तुम चेला,
कुबजा तीरथ जाय कियो इन्द्रिन को मेला।
मधुबन सुधि बिसराय कै आये गोकुल माहिं,
इहां सबै प्रेमी बसैं तुमरो गाहक नाहिं।
पधारो रावरे।

कोउ कहै रे मधुप साधु मधुबन के ऐसे,
और तहाँ के सिद्ध लोग हैहै धौ कैसे।
औगुन गुन गहि लेत है गुन को डारत मेटि,
मोहन निर्गुन को गहे तुम साधन को भेंटि।
गाँठि को खोय कै।

कोउ कहै रे मधुप होहि तुमसे जो सङ्गी,
क्यो न होय तन स्याम सकल बातन चैारङ्गी।
गोकुल के जोरी कोउ पाई नाहिं तुमारि,
मदन त्रिभङ्गी आपुही करी त्रिभङ्गी नारि।
रूप गुन सील की। इत्यादि॥

एक अज्ञात नाम कवि ने इसी विषय पर 'सनेहलीला' लिखी है जो संवत् १६४६ मे जो भारतजीवन यन्त्रालय काशी से प्रकाशित हुई थी। इसमें केवल १३२ दोहे हैं पर बड़ी ऊँची श्रेणी के है। उदाहरणार्थ, ऊधो से योग का सँदेशा और उपदेश पाने पर गोपियाँ कहती हैः—

यद्यपि जोग प्रसिद्ध है तौ तुमही ले जाव।
बहुरौ नाहिन पायहौ ऐसो उत्तम दाँव॥
ऊधौ जाते देखिए तत्त्वरूप मन माहिं।
सो हमको सिखवत कहा तुमही साधत नाहिं॥
ये तौ तिनकौ चाहिए जिनकै अन्तर राय।
दादुर बिन जलहू जियै मीन तुरत मरि जाय॥
हैं दोऊ इकठौर के दादुर मीन समान।
वै जल बिनु मारुन भखै वैं छिन में दै प्रान॥
ऊधौ इतनौ अन्तरौ ब्रज मथुरा के लोग।
बिमुख करावै श्याम ते जार देहु यह जोग॥
पठये आये कौन के कौन मित्र कौ जान।
इहाँ तुम्हारी कौन सौ कहौ कौन पहिचान॥
बचन बचन बाढ़त बिथा नहिं जानत पर हेत।
मधुकर दाधे अङ्ग पर कहा लौन घसि देत॥
तन कारो मन साँवरो कपटी परम पुनीत।
मधुकर लोभी बास को पलक एक को मीत॥
तुम तौ स्वारथ क सगे नहि बेली सों भाय।
भावै तौ तरुवर चढ़ै भावै जरि बरि जाय॥ इत्यादि।

मुसलमान कवि रसखान कहते हैः—

मानस हौं तो वही रसखानि बसौं ब्रज गोकुल गांव के ग्वारन।
जौ पशु हौं तौ कहा बस मेरो चरौ नित नन्द की धेनु मँझारन॥

जब हो इहँते गयो। तब ब्रजराज सहित सब गोपिन आगे है जो लयो॥ उतरे जाइ नंदबाबा के सबही शोध लह्यो। मेरी

पाहन हौं तो वही गिरि को जो धरयो कर छत्र पुरन्दर धारन।
जौ खग हौं तौ बसेरो करौं मिलि कालिंदी कूलकदम्ब की डारन॥१॥
या लकुटी अरु कामरिया पर राज तिहूँ पुर को तजि डारौं।
आठहुँ सिद्धि नवौनिधि को सुखनन्द की गाय चराइ बिसारौं॥
रसखानि कबौं इन आँखिन सों ब्रज के बनबागतड़ाग निहारौं।
कोटिनहूँ कलधौत के धाम करील के कुञ्जन ऊपर वारौं॥२॥
आयो हुतो नियरे रसखानि कहा कहूँ तू न गई वहि ठैया।
या ब्रज में सिगरी बनिता सब वारति प्रानिनि लेन बलैया॥
कोऊ न काहू की कानि करै कछु चेटक सो जु करयो जदुरैया।
गाइगो तान जमाइगो नेह रिझाइगो प्रान चराइगो गैया॥३॥ इत्यादि।

श्रीअयोध्यासिंह उपाध्याय ने 'प्रियप्रवास' के नवम और दशम सर्ग मे इसी विषय का वर्णन किया है। उदाहरणार्थ यशोदा उद्धव से कहती हैः—

मेरे प्यारे स-कुशल सुखी और सानन्द तो हैं?।
कोई चिन्ता मलिन उनको तो नहीं है बनाती?।
ऊधो छाती बदन पर है म्लानता भी नहीं तो?।
हो जाती हैं हृदयतल में तो नहीं वेदनाये?॥२३॥
मीठे-मेवे मृदुल नवनी और पक्वान्न नाना।
धीरे प्यारों-सहित सुत को कौन होगी खिलाती।
प्रातः पीता सु-पय कजरी गाय का चाव से था।
हा! पाता है न अब उसको प्राण-प्यारा हमारा॥२४॥
संकोची है परम अति ही धीर है लाल मेरा।
लज्जा होती अमित उसको माँगने मे सदा थी।
जैसे लेके स-रुचि सुत को अंक में मैं खिलाती।
हा! वैसे ही अब नित खिला कौन बामा सकेगी॥२५॥

सौं साँची कहु ऊधो मैया कछू कह्यो ।। बारंबार कुशल पूँछी मोहिं लै लै तुम्हरो नाम। ज्यों जल तृषा बढ़ी चातक चित

मै थी सारा दिवस मुख को देखते ही बिताती।
हो जाती थीं व्यथित उसको म्लान जो देखती थी।
हा ! ऐसे ही अब बदन को देखती कौन होगी।
ऊधो माता-सदृश-ममता अन्य की है न होती ॥२६॥
खाने पीने शयन करने आदि की एक बेला।
हो जाती थी कुछ टल कभी खेद होता बड़ा था।
ऊधो ऐसी दुखित उसके हेतु क्यों अन्य होगी।
माता की सी अवनितल में है अमाता न होती ॥२७॥
जो पाती हूँ कुँवर—मुख के जोग मैं भोग प्यारा।
तो होती हैं हृदय-तल मे वेदनायें बडी ही।
जो कोई भी सु-फल सुत के योग्य मै देखती हूँ।
हो जाती हूँ व्यथित अति ही दग्ध होती महा हूँ ॥२८॥
जो लाती थीं विविध रङ्ग के मुग्धकारी खिलौने।
वे आती है सदन अब भी कामना में पगी सी।
हा ! जाती है पलट जब वे हो निराशा निमग्ना।
तो उन्मत्ता-सदृश मग की ओर मै देखती हूँ ॥२९॥
आते लीला-निपुण नट है आज भी बाँध आशा।
कोई यों भी न अब उनके खेल को देखता है।
प्यारे होते मुदित जितने कौतुकों से सदा थे।
वे आँखों में विषम-दव है दर्शकों के लगाते ॥३०॥
प्यारा खाता रुचिर नवनी को बड़े चाव से था।
खाते खाते पुलक पड़ता नाचता कूदता था।
ए बातें है सरस नवनी देखते याद आती।
हो जाता है मधुरतर और स्निग्ध भी दग्धकारी ॥३१॥

कृष्ण कृष्ण बलराम ॥ सुंदर परम विचित्र मनोहर वह मुरली देइ घाली । लई उठाइ उरलाइ सूर प्रभु प्रीति आनि उर-शाली ॥ ३४४४ ॥

हा ! जो बंशी सरस रव से विश्व को मोहती थी ।
सो आले मे मलिन बन औ मूक हो के पड़ी है ।
जो छिद्रों से अमिय बरसा मूरि थी मुग्धता की ।
सो उन्मत्ता परम-विकला उन्मना है बनाती ॥३२॥

प्यारे ऊधो सुरत करता लाल मेरी कभी है ? ।
क्या होता है न अब उसको ध्यान बूढ़े-पिता का ।
रो रो हो हो विकल अपने बार जो है विताते ।
हा ! वे सीधे सरल शिशु है क्या नहीं याद आते ॥३३॥
कैसे भूलीं सरस-खनि सी प्रीति की गोपिकायें ।
कैसे भूले सुहृदपन के सेतु से गोपग्वाले ।
शान्ता धीरा मधुरहृदया प्रेम-रूपा रसज्ञा ।
कैसे भूली प्रणय-प्रतिमा-राधिका मोहमग्ना ॥३४॥
कैसे वृन्दा-विपिन बिसरा क्यों लता-बेलि भूली ।
कैसे जी से उतर सिगरी कुंज-पुंजें गई हैं ।
कैसे फूले विपुल-फल से नम्र भूजात भूले ।
कैसे भूला बिकच तरु सो कालिंदी-कूल वाला ॥३५॥
सोती सोती चिहुँक कर जो श्याम को है बुलाती ।
ऊधो मेरी यह सदन की शारिका कान्त कण्ठा ।
पाला पोसा प्रतिदिन जिसे श्याम ने प्यार से है ।
हा ! कैसे सो हृदय-तल से दूर यों हो गई है ॥३६॥
कुंजों कुंजो प्रतिदिन जिन्हे चाव से था चराया ।
जो प्यारी थीं परम, ब्रज के लाड़िले को सदाही ।

राग सारंग ॥

सुनिए ब्रज की दशा गोसाईं। रथ की ध्वजा पीतपट भूषण देखतही उठि धाईं॥ जो तुम कही योग की बातैं ते मैं सबै सुनाईं। श्रवण मूँदि गुण कर्म तुम्हारे प्रेम मगन मनगाईं॥ औरो कछु संदेस सखी इक कहत दूरि लौ आईं। हुतो कछू हमहूसों नातो निपट कहा बिसराईं॥ सूरदास प्रभु वनविनोद करि जो तुम गऊ चराईं। ते गाय ग्वालन हेरि दईं हेरति मानों भईं पराईं॥ ३४४५॥



राग सारंग ॥

ब्रज के विरही लोग दुखारे। बिन गोपाल ठगेसे ठाढ़े अति-दुर्बल तनुकारे॥ नंद यशोदा मारग जोवत नित उठि साँझ सवारे। चहुँ दिशि कान्ह कान्ह करि टेरत अँसुवन बहत पनारे॥ गोपीगाइ ग्वाल गोसुत सब अतिही दीन बिचारे। सूरदास प्रभु बिन यों शोभित चंद्र बिना ज्यों तारे॥ ३४४६॥



राग केदारो ॥

हरिजी सुनो वचन सुजान। विरह व्याकुल छीन तन मन हीन लोचन प्रान॥ इहै है संदेसा ब्रज को माधो सुनहु निदान।

खिन्ना-दीना-विकल वन में आज जो घूमती है।
ऊधो कैसे हृदय-धन को हाय! वे धेनु भूलीं॥३७॥ इत्यादि।

इसी प्रकार सैकड़ों कवियों ने यह संवाद गाया है। अब भी इस विषय पर कविता हो रही है यद्यपि पुरानी कविता से उसे बहुधा कोई समानता नहीं है।

मैं सबै ब्रज दीन देखे ज्यों बिना निर्मान ॥ तुम बिना शोभा न ज्यों गृह बिना दीप भयान। आस श्वास उसाँस घट में अवधि आसाप्रान ॥ जगतजीवन भक्तपालन जगतनाथ कृपाल। करि जतन कछु सूर के प्रभु जो जीवै ब्रजबाल ॥ ३४४७ ॥



राग जैतश्री।

सुनहु श्याम वै सब ब्रजवनिता विरह तुम्हारे भईं बावरी। नाहिंन नाथ और कहि आवत छाँड़ि जहाँ लगि कथा रावरी ॥ कबहुँ कहत हरि माखन खायो कौन वसैया कठिन गाँव री। कबहुँ कहत हरि ऊखल बाँधे घर घर ते लै चलौ दाँव री ॥ कबहुँ कहत ब्रजनाथ बनगए जोवत मगभईं दृष्टि झाँव री। कबहुँ कहत वा मुरली महियाँ लै लै बोलत हमारो नाँउ री ॥ कबहुँ कहत ब्रजनाथ साथ ते चंद्र उग्यो है एहि ठाँव री। सूरदास प्रभु तुम्हरे दरशबिनु अब वह मूरति भई साँवरी ॥ ३४४८ ॥



राग विहागरो ॥

हरि आए सो भली कीन्ही। मोहिं देखत कहि उठी राधिका अंक तिमिर को दीन्ही ॥ तनु अति कँपति विरह अति व्याकुल उर धुकधुकी खेद कीन्ही। चलत चरणगहि रहि गई गिरि खेद सलिल भयभीनी ॥ छूटी वट भुज फूटी बलया टूटी लरफटी कंचुकी झीनी। मानो प्रेम के परन परेवा याही ते पढ़ि लीन्ही ॥ अवलोकति इहि भाँति रमापति मानो छूटी अहिमणि छीनी। सूरदास प्रभु कहौं कहाँ लगि है अयान मति हीनी ॥ ३४४९ ॥

राग मलार ॥

सुनो श्याम यह बात और कोउ क्यों समुझाय कहै। दुहुँ दिशि को रतिविरह विरहिनी कैसे कै जो सहै॥ जब राधे तबहीं मुख माधो माधो रटत रहै। जब माधो वोइजात सकल तनु राधा विरह दहै॥ उभयअग्र दौंदारु कीट ज्यों शीतलताहि चहै। सूरदास अति बिकल विरहिनी कैसेहु सुख न लहै॥ ३४५० ॥



राग केदारो ॥

चित दै सुनो श्याम प्रबीन। हरि तुम्हारे विरह राधा मैं जु देखी छीन॥ तज्यो तेल तमोल भूषण अंग वसन मलीन। कंकना करवाम राख्यो गढ़ी भुजगहि लीन॥ जब संदेसा कहन सुंदरि गवन मो तन कीन। खसि मुद्रावलि चरन अरुझी गिरी धरनि बलहीन॥ कंठवचन न बोल आवै हृदय परिहस भीन। नैन जल भरि रोइ दीनो ग्रसित आपद दीन॥ उठी बहुरि सँभारि भट ज्यों परम साहस कीन। सूर प्रभु कल्याण ऐसे जीवहि आसालीन॥ ३४५१॥



राग केदारो ॥

भरि भरि लेत ऊरध श्वास। साँवरे ब्रजनाथ तुमबिनु दुखित पंचशर त्रास॥ अमित पीर अधीर डोलत समर मीन बिलास। तेई सुख दुख भए दारुण मिलि गए रस रास॥ निगम गुरुजन लोगन डरत जगकरत उपहास। सूर श्याम बिनु विकल विरहिनी मरत दरश बिन प्यास॥ ३४५२॥

राग धनाश्री ॥

उमँगि चले दोउ नैन विशाल। सुनि सुनि यह संदेस श्याम-घन सुमिरि तुम्हारे गुण गोपाल ॥ आनन वपु उरजनि के अंतर जलधारा बाढ़ी तेहिकाल। मनुयुगजलज सुमेर शृंग ते जाइ मिले सम शशिहि सनाल ॥ भीजे विय अंचर उर राजित तिन पर वर मुकुतन की माल। मानों इंदु आये नलिनी दल लंकृत अमी ओस कण जाल ॥ कहा वह प्रीति रीति राधा सों कहाँ यह करनी उलटी चाल। सूरदास प्रभु कठिन कथन ते क्यों जीवै बिरहिनि बेहाल ॥ ३४५३ ॥



राग मारू ॥

तुम्हरे बिरह ब्रजनाथ राधिका नैनन नदी बढ़ी। लीने जाति निमेष कूल दोउ एते यान चढ़ी ॥ गोलकनाउ निमेष न लागत सो पलकनि बर बोरति। ऊरध श्वास समीर तरंगिनि तेज तिलक तरु तोरति ॥ कज्जल कीच कुचील किए तट अंबर अधर कपोल। थकि रहे पथिक सुयश हितहीके हस्त चरण मुख बोल ॥ नाहिंन और उपाय रमापति बिन दरशन जो कीजै। अंशु सलिल बूड़त सब गोकुल सूर सुकर गहि लीजै ॥ ३४५४ ॥



राग मलार ॥

नैन घट घटत न एक घरी। कबहुँ न मिटत सदा पावस ब्रज लागी रहत झरी ॥ विरह इंद्र बरषत निशिबासर इहि अति अधिक करी। उरध उसाँस समीर तेज जल उर भुवि उमँगि भरी ॥ बूड़ति भुजा रोमद्रुम अंबर अरु कुच उच्च थरी।

चलि न सकत पथिक रहे थकि चंद्र की चखरी ॥ सब ऋतु मिटी एक भईं ब्रज महि यहि बिधि उलटि धरी । सूरदास प्रभु तुम्हरे बिछुरे मिटि मर्याद टरी ॥ ३४५५ ॥



राग केदारो ॥

देखी मैं लोचन चुवत अचेत । मनहुँ कमल शशि त्रास ईस को मुक्ता गनि गनि देत ॥ द्वार खड़ी इकटक मग जोवत ऊरध श्वास न लेत । मानहुँ मदन मिले चाहति है मुंचत मरुत समेत ॥ श्रवणन सुनत चित्र पुतरी लौं समुझावत जित नेत । कहुँ कंकन कहुँ गिरी मुद्रिका कहुँ ताटंक कहुँ नेत ॥ मनहु बिरह दव जरत विश्व सब राधा रुचिर निकेत । धुज होइ सूखिरही सूरज प्रभु बधी तुम्हारे हेतु ॥ ३४५६ ॥



राग मलार ॥

नैननि होड़ बदी बरषा सों । राति दिवस बरसत झर लाए दिन दूरी करखा सों ॥ चारि मास बरषे जल खूटे हारि समुझ उनमानी । एतेहू पर धार न खंडित इनकी अकथ कहानी ॥ एते मान चढ़ाइ चढ़ी अति तजी पलक की सीव । मैं दिन दिन उन मानो महाप्रलय की नीव ॥ तुमपै होइ सो करहु कृपा-निधि ए ब्रज के व्यवहार । अब की बेर पाछिले नाते सूर लगावहु पार ॥ ३४५७ ॥



राग गौरी ॥

ब्रज ते द्वै ऋतु पै न गई । ग्रीषम अरु पावस प्रवीन हरि तुम

बिनु अधिक भई ॥ उरध उसाँस समीर नैन घन सब जल योग जुरे । बरषि प्रकट कीन्हें दुख दादुर हुते जु दूरि दुरे ॥ तुम्हरो कठिन वियोग विषम दिनकर सम उदो करै । हरिपद विमुख भए सुनु सूरज को इहि ताप हरै ॥ ३४५८ ॥



राग कान्हरो ॥

नाहिन कछु सुधि रही हिए । सुनो श्याम वै सखिहि राधिकहि युगवति जतन किए ॥ कर कंकन कोकिला उड़ावत बिनमुख नाम लिए । सैन सूचना नखनि नित किसलय श्रवणन शबदबिए ॥ शशिशंका निशि जालनि के मग वसन बनाइ किए । दस दिशि शीत समीरहि रोकत अंबर ओट दिए ॥ मृगमद मलै परस तनु तलफत जनु विष विषम पिए । जो न इते पर मिलहु सूर प्रभु तौ जान बिजए ॥ ३४५९ ॥



राग गौरी ॥

कहाँ लौं कहिए ब्रज की बात । सुनहु श्याम तुम बिनु उन लोगइ जैसे दिवस बिहात ॥ गोपी गाइ ग्वाल गोसुत वै मलिन वदन कृशगात । परमदीन जनु शिशिरहि मीहत अंबुज गन बिनपात ॥ जाकहुँ आवत देखि दूर ते सब पूँछति कुशलात । चलन न देत प्रेम आतुर उर कर चरणन लपटात ॥ पिकचातक बन वसन न पावहि बायस बलिहि न खात । सूर श्याम संदेसन के उर पथिक न उहि मग जात ॥ ३४६० ॥



राग मलार ॥

ब्रज की कही न परतिहै बातैं । गिरितनयापति भूषण जैसे

विरहजरी दिनरातैं॥ मलिन बसन हरिहित अंतर्गति तनु पीरो जनु पाते। गदगदवचन नैन जल पूरित बिलखि वदन कृशगाते॥ मुक्को ताते भवन ते बिछुरे मीन मकर बिललाते। सारंगरिपु सुत सुहृदपति बिना दुख पावति बहु भाँते॥ हरि सुर भषन बिना विरहाने छीन भई तनु ताते। सूरदास गोपिन परतिज्ञा मिलहु पहिल के नाते॥ ३४६१॥



राग कल्याण॥

रहति रैनि दिन हरि हरि हरि रट। चितवत इकटक मग चकार लौं जब ते तुम बिछुरे नागरनट॥ भरि भरि नैन नीर ढारति है सजल करति अति कंचुकि के पट। मनहुँ बिरह की ज्वरता लगि लिये। नेम प्रेम शिव शीशसहसघट॥ जैसे युव के अग्र ओसकण प्राण रहत ऐसे अवधिहि के तट। सूरदास प्रभु मिलौ कृपाकरि जे दिन कहे लेउ आप निकट॥ ३४६२॥



राग सारंग॥

दिन दस घोष चलहु गोपाल। गाइन के अवसेर मिटावहु लेहु आपने ग्वाल॥ नाचत नहीं मोर तादिन ते बोले न वर्षा-काल। मृग दुबरे तुम्हारे दरश बिनु सुनत न वेणु रसाल॥ वृंदावन हर्‍यो होत न भावत देखो श्याम तमाल। सूरदास मइया अनाथ है घर चलिए नँदलाल॥ ३४६३॥



(ऊधो की बात सुन कर श्रीकृष्ण बोलेः—) राग सोरठ॥

ऊधो भलो ज्ञान समुझायो। तुमसों अब यों कहा कहत हैं

मैं कहि कहा पठायो ॥ कहवावत हौ बड़े चतुर पै वहाँ न कछु कहि आयो । सूरदास ब्रजवासिन को हित हरि हिय माँझ दुरायो ॥ ३४६४ ॥



(ऊधो ने उत्तर दिया :—) राग सारग ॥

मैं समुझाई अति अपनो सो । तदपि उन्हें परतीति न उपजी सबै लखो सपनो सो ॥ कह्यो तुम्हारी सबै कही मैं और कछू अपनी श्रवण नवचन सुनत हैं उनके जो घटमाँह अकनी॥ कोई कहै बात बनाइ पचासक उनकी बात जो एक। धन्य धन्य जो नारी ब्रज की बिन दरशन इहि टेक ॥ देखत उमँग्यो प्रेम यहाँ के धरी रही सब रोयो। सूर श्याम हौं रहौं ठगो सो ज्यों मृग चौको भोयो॥ ३४६५ ॥



राग सारंग ॥

बातें सुनहु तौ श्याम सुनाऊँ। वै उमँगी जलनिधि तरंग ज्यों तामें थाह न पाऊँ ॥ कौन कौन को उत्तर दीजै ताते भग्यो अगाऊँ । वे मारे सिर पटिया पारे कंथा काहि उढ़ाऊँ ॥ एक अँधेरो हिये की फूटी दौरत पहिर खराऊँ । सूर सकल षट दरशन वे हैं बारहखरी पढ़ाऊँ ॥ ३४६६ ॥



राग सारंग ॥

सुनि लीन्हों उनहीं को कह्यो। अपनी चाल समुझि मनही मन गुनी अरगाइ रह्यो ॥ अबलनि सो कही परि जापै बात तोरि कनि कानि। अनबोले पूरो दै निबह्यो बहुत दिनन को जानि ॥ जानि बूझि कैहो कत पठयो शठ बावरो अयानो। तुमहूं

बूझि बहुत बातन की वहाँ जाहु तौ जानो॥ आज्ञाभंग होय क्यों मोपै गयउ तुम्हारे ढीले। सूर पठावनही की वोरी रह्यो जु गज सों लीले॥ ३४६७॥



राग मलार॥

हो हरि बहुत दाँउदै हाऱ्यो। आज्ञाभंग होइ क्यों मोपै वचन तुम्हारो पाऱ्यो॥ हारि मानि उठि चल्यो दीनह्वै जानि आपुन पै कैहु। जानिलेहु हरि इतनेही में कहा करैनी मन को वैदु॥ उत्तर को उत्तर नहिं आवत तब उनहीं मिलि जातु। मेरी किती बात ब्रह्मा को अर्ध वचन में मातु॥ अपनो चाल समुझि मनहीं मन घल्यो बसीठी तोरि। सूर एकहू अंग न काची मैं देखी टकटोरि॥ ३४६८॥



राग मलार।

कहिबे में न कछू शक राखी। बुधि विवेक उनमान आपने मुख आई सो भाखी॥ हैा मरि एक कहैां पहरक में वे छिनमाँझ अनेक। हारि मानि उठि चल्यो दीनह्वै छाँड़ि आपनी टेक॥ हैं पठयो कत कौने काजै शठ मूरख जो अयानो। तुमहिं बुझावहु ते बातन की वहाँ जाहु तैा जानो॥ श्रीमुख की सिखई ग्रंथो कत ते सब भई कहानी। एक होइ तैा उत्तर दीजै सूर सु मठी उभानी॥३४६९॥



राग सोरठ॥

माधोजी मैं योग को बोझा भऱ्यो। श्याम उन मुख विधु

वचन सुधारस सुनि सुनि कछु न कह्यो ॥ तौ लौं भार तरंग मो उदधि सखी लोचन उमह्यो। तुम जो कह्यो ज्ञान को मारग सो बातैं जो वह्यो ॥ मोहिं आश्चर्य एक जो लागत तौ कैसे जात सह्यो। सूरदास प्रभु सखा सयानी लै भुज बीच गह्यो ॥३४७०॥



राग नट ॥

कोऊ सुनत न बात हमारी। कहा मानै योग युक्ति यादवपति प्रगट प्रेम ब्रजनारी ॥ कोऊ कहति इंद्र जब बरषे टेकि गोवर्धन लेत। कोउ कहत हरि गए कुंजवन शीश धाम वे देत ॥ कोऊ कहत नागकारे सुनि गए हरि यमुनातीर। कोउ कहै गए अघासुर मारन संग लिए बलवीर ॥ कोउ कहै ग्वाल बाल सँग खेलत बन में जाइ लुकाने। सूर सुमिरि गुण माथे तुम्हारे कोउ कह्यो ना मानै ॥ ३४७१ ॥



राग सारंग ।

हरि तुम्है बारंबार सँभारै। कहहु तौ सब युवतिन के नाम कहो जे हित सों उर धारै ॥ कबहुँक आँखि मूँदिकै चाहति सब सुख अधिक तिहारे। तब प्रसिद्ध लीला सँग विहरत अब चित डोर विहारे ॥ जाको कोऊ जेहि बिधि सुमिरै सोउ तेही हित मानै। उलटी रीति सबै तुम्हरे है हम तो प्रगट कहिजानै ॥ जो पतिआँहो तुम पठवत लिखि बीच समुझि सब पाउ। सूर श्याम है पलक धाम में लखि चित कत बिललाउ ॥ ३४७२ ॥

राग सारंग ॥

माधोजू कहा कहौं उनकी गति। देखत बनै कहत नहिं

आवै परम प्रतीत तुमते रति ॥ यद्यपि हो षडमास रह्यो ढिग लही नहीं उनकी मति । कासों कहौं सबै एकै बुधि पर-बोधी मानै नाहीं अति ॥ तुम कृपालु करुणामय कहियत ताते मिलत कहा क्षति । सूर श्याम सोई पै कीजै जाते तुम पावहु पति॥ ३४७३ ॥



राग सारंग ॥

तुम्हारोइ चित्र बनाउ कियो । तब को इंदु सम्हारि तुरतही मनसिज साजि लियो ॥ अति गहि युग अँगुली के बीचै उन भरि पानि पियो । पुरप्रति करति लेख को प्रारंभ तबहिं प्रहार कियो ।। वै पथ विकल चकित अति आतुर भर्मत हेतु दियो । भृति बिलंबि पृष्ठिदै श्यामा श्यामै श्याम वियो ।। या गति पाइ रही राधा अब चाहति अमृत पियो । सूरदास प्रभु प्रति उलटि परी है कैसे जात जियो ।।३४७४।।



राग केदारो ॥

अब जिनि बाँधि वेहि उराहु। दूध दधि माखन मनोहर डारि देहु अरु खाहु ।। सदा बैठे घोष रहियो बन न दैहै जान। पलकहू भरि दुख न दैहैं राखि है ज्यों प्रान ।। सब तिहारो कहे करिहैं वचन माथे मानि । परम चतुर सुजान ईते माँझ लीजो जानि ॥ अब न कौनो चूक करिहैं यह हमारे बोल। किंकिरिनि की लाज धरि ब्रज सुबस करहु निटोल ।। समुझि निज अपराध करनी नारि नावति नीचि । बहुत दिन ते बरति है कै आँखि दीजै सीचि ॥ मनसि वचन अरु कर्मना कछु

कहति नाहिंन राखि। सूर प्रभु यह बोल हृदय सातराजा साखि[1] ॥३४७५॥

१ श्रीमद्भागवत दशम स्कंध पूर्वार्ध अध्याय ४७ ॥ लल्लूजीलाल-कृत प्रेमसागर अध्याय ४८ ॥

गोकुल से लौटने पर कृष्ण और ऊधो की बातचीत नन्ददास ने भी ख़ूब कराई है। उदाहरणार्थ :—

करुनामयी रसिकता है तुम्हारी सब झूठी,
जबही लौं नहिं लखो तबहिंलो बाँधीं मूँठी।
मै जान्यो ब्रज जायकै तुम्हरो निर्दय रूप,
जौ तुमको अवलम्ब ही वाको मेलो कूप।
कौन यह धर्म्म है।
पुनि पुनि कहै अहो चलौ जाय वृन्दावन रहिए,
प्रेमपुञ्ज को प्रेम जाय गोपन सङ्ग लहिए।
और काम सब छाड़िकै उन लोगन सुख देहु,
नातरु टूट्यो जात है अवही नेह सनेहु।
करौगे तो कहा।
सुनत सखा के बैन नैन भरि आये दोऊ,
बिवस प्रेम आवेष रही नाहीं सुधि कोऊ।
रोम रोम प्रति गोपिका ह्वै रहि साँवरे गात,
कल्पतरोरुह सावरो ब्रजबनिता भई पात।
उलहि अंग अङ्ग ते।
हो सचेत कहि भलो सखा पठयो सुधि ल्यावन,
अवगुन हमरे आनि तहाँ ते लगे बतावन।
मोमें उनमे अन्तरो एकौ छिन भरि नाहि,
ज्यो देखो मो माहिं वे तो मै उनहीं माँहि,
तरङ्गनि बारि ज्यौ।

(ऊधो की बातें सुन कर कृष्ण बोले :—) राग मारू ॥

सुन ऊधो मोहिं नेक न बिसरत वै ब्रजबासी लोग। तुम उनको कछु भली न कीनी निशि दिन दियो वियोग ॥ यदपि वसुदेव देवकी मथुरा सकल राज सुखभोग। तदपि मनहिं बसत बंसीवट ब्रज यमुना संयोग ॥ वै उत रहत प्रेम अवलंबन इतते पठयो योग। सूर उसाँस छाँड़ि भरि लोचन बढ़्यो विरहज्वर शोग ॥ ३४६२ ॥



राग मारू ॥

ऊधो मोहिं ब्रज बिसरत नाहीं। वृंदावन गोकुल तन आवत सघन तृणन की छाहीं ॥ प्रात समय माता यशुमति अरु नंद देखि सुखपावत। माखन रोटी दह्यौ सजायो अतिहित साथ खवावत॥ गोपी ग्वाल बाल सँग खेलत सब दिन हँसत सिरात। सूरदास धनि धनि ब्रजबासी जिनसों हँसत ब्रजनाथ ॥३४६३॥

गोपी रूप दिखाय तबै मोहन बनवारी,
ऊधो भ्रमहि निवारि डारि मुख मोह की जारी।
अपनो रूप दिखायके लीन्हो बहुरि दुराय,
नन्ददास पावन भयो जो यह लीला गाय।
प्रेमरस पुञ्जनी। इत्यादि।

दशम स्कन्ध उत्तरार्ध ।

जरासंध का आना । राग मारू ॥

श्याम बलराम जब कंस मार्‌यो । सुनि जरासंध वृत्तान्त अस सुता से युद्ध हित कटक अपनो हँकार्‌यो ॥ जोरिदल प्रबल सो चल्यो मथुरापुरी सुन्यो भगवान जब निकट आयो । तब दुहू बीर दल साजिकै आपनो नगर ते निकसि रणभूमि छायो ॥ दुहूँ दिशि सुभट बाँके बिकट अति जुरे मनो दोउ दिशि घटा उमड़ि आई । सूर प्रभु सिंहध्वनि करत जोधा सकल जहाँ तहाँ करन लागे लराई ॥ १ ॥



राग मलार ॥

मानहु मेघ घटा अति गाढ़ी । बरषत बाण बूँद सेनापति महानदी रण बाढ़ी ॥ जहाँ बरन बरन बादर बानैत अरु दामिनि करि करि वार । उड़त धूरि धुँरवा धुर दीसत शूल सकल जलधार ॥ गर्जनि पणव निसान शंखरव हय गज हीस चिकार । प्रगटत दुरत देखियत रविसम द्वै वसुदेवकुमार ॥ कुंजर कूल रमित अतिराजत तहँ शोणित सलिल गंभीर । धनुष तरंग भुँवर स्यंदन पग जलचर सुभट शरीर ॥ उड़त ध्वजा पताक छत्र रथ तरुवर टूटत तीर । परम निशंक समर सरिता तट क्रीड़त यादव वीर ॥ सूने किये भुवन भूपति के सुवस किए सुरलोक । छिनक मध्य हरि हन्यो कृपाकरि उन सबहिन के शोक ॥ आनंदे

मधुबन के वासी गई नगर की रोक। जरासंध को जीति सूर प्रभु आये अपने बोक॥ २॥



कालयवनदहन॥ मुचुकुंद उद्धार॥

राग सारंग॥

बार सत्रह जरासंध मथुरा चढ़ि आयो। गयो सो सबदिन हार जात घर बहुत लजायो॥ तब खिसिआइकै कालयवन अपने सँग ल्यायो। हरिजी कियो विचार सिंधुतट नगर बसायो॥ उग्रसेन सब कुटुम्बलै ता ठौर सिधायो। अमरपुरी ते अधिक सुख तहँ लोगन पायो॥ कालयवन मुचुकुंद सो हरि भस्म करायो। बहुरि आइ भरमाइ अचल सब ताहि जरायो॥ जरासंध वहँते बहुरि निज देश सिधायो। श्याम राम गये द्वारका सूरज यश गायो॥ ३॥



अथ द्वारकाप्रवेश॥ राग कल्याण॥

देख री आजु नैन भरि हरिजू के रथ की शोभा। योग यज्ञ जप तप तीरथ व्रत कीजत है जेहि लोभा॥ चारु चक्र मणि खचित मनोहर चंचल चमर पताका। श्वेतछत्र मनो शशि प्राची दिशि उदै कियो निशिराका॥ घन तन श्याम सुदेश पीतपट शीशमुकुट उरमाला। जनु दामिनि घन रबि तारागण प्रगट एकही काला॥ उपजत छबिकर अधर शंखमिलि सुनियत शब्द प्रशंसा। मानहु आसन कमल मंडल में कूजत हैं कलहंसा॥ मदनगोपाल देखियत है अब सब दुख शोक बिसारी। बैठे है सुफलकसुत गोकुल लेन जो वहाँ सिधारी॥ आनंदित चित

जननि तात हित कृष्ण मिलन जिय भाप। सूरदास दुहुँ कुल हित कारण अब माधो मधुपुरी जु आए ॥ ४ ॥



द्वारिका की शोभा ॥ राग कल्याण ॥

दिन द्वारावती देखन आवत। नारदादि सनकादि महामुनि ते अवलोकि प्रीति उपजावत॥ विद्रुम स्फटिक पची कंचन खचि मणिमय मंदिर बने बनावत। जितनेतर नर नारि उपर खग सबहिन को प्रतिबिंब दिखावत॥ जल थल रंग विचित्र बहुत विधि अवलोकत आनंद बढ़ावत। भूलि रहे अति चतुर त्रितै चित कौन सत्य कछु मर्म न पावत॥ वन उपवन फल फूल सुभगसर शुक सारिका हंस पारावत। चातक मोर चकोर वदत पिक मनहु मदन वटसार पढ़ावत॥ धाम धाम संगीत सरल गति बीणा वेणु मृदंग बजावत। अतिआनंद प्रेम पुलकित तनु जहाँ तहाँ यदुपति यश गावत॥ निशिदिन रहत विमान रूठ रुचि सुरवनितानि संग सब आवत। सूर श्याम क्रीड़त कौतूहल अमरन अपनो भवन न भावत॥ ५॥



राग सारंग॥

श्रीमनमोहन खेलत चौगान। द्वारावती कोट कंचन मे रच्यो रुचिर मैदान॥ यादववीर वराइ बटाई इक हलधर इक आपै ओर। निकसे सबै कुँवर असवारी उच्चैःश्रवा के पोर॥ लीले सुरंग कुमैत श्याम तेहि परदे सब मन रंग। बरन अनेक भाँति भाँतिन के चमकति चपलावेग॥ जीन जराइ जु जगमगाइ रहे देखत दृष्टि भ्रमाइ। सुर नर मुनि कौतुक सबै लागे इकटक रहे

लुभाइ ॥ जबहीं हरि लै चले गोइ कुदासौं लाइ । तबहीं औचक ही वेल हलधर पाइ ॥ कुँवर सबै घेरि फेरे फेरत छुड़त नहिनै गुपाल । बलै अछुत छल बल कारि सूरदास प्रभु हाल ॥ ६ ॥



रुक्मिणीपत्रिका आवन ॥ राग बिलावल ॥

हरि हरि हरि हरि सुमिरन करो । हरि चरणारबिन्द उर धरो ॥ हरि सुमिरण जब रुक्मिणि कर्‌यो । हरि करि कृपा ताहि तब बर्‌यो ॥ कहौं सो कथा सुनो चितलाई । कहै सुनै सो रहै सुखपाई ॥ कुंदनपुर को भीषम राई । विष्णुभक्ति को ता मन चाई । रुक्म आदि ताके सुत पाँच । रुक्मिणि पुत्री हरिरँग राच ॥ नृपति रुक्मसों कह्यो सुनाई । कुँवरि योग्यवर श्रीयदुराई ॥ रुक्म रिसाइ पिता सों कह्यो । सुनि ताको अंतर्गत दह्यो । रुक्म चँदेरी विप्र पठायो । ब्याहकाज शिशुपाल बुलायो ॥ सो बरात जोरि तहाँ आयो । श्रीरुक्मिणि के जिय नहिं भायो ॥ कह्यो मेरो पति श्रीभगवान । उनहीं बरौं कै तजौं परान ॥ भीषमसुता रुक्मिणी बाम । सूरजपति निशि दिन वह नाम ॥ ७ ॥



(रुक्मिणी ने कृष्ण को एक ब्राह्मण के हाथ चिट्ठी भेजी और कहा.—)

राग कान्हरो ॥

पतियाँ दीजै श्याम सुजानहि । मुख सँदेस बनाइ बिप्र ज्यों प्रभु न ढीठ करि मानहि ॥ श्रीहरि योग्य रुक्मिणी लिखित बिनती सुनहिं प्रभु धरि कानहि । बाँचत बेगि आइबो माधव जात धरे मेरे प्रानहि ॥ समुझत नहीं दीन दुख कोऊ शृगाल भखहि सिंह के पानहि । मणि कर्मट कर देत मूढ़मति मृगमद

रज में सानहि ॥ कब लगि सहौं दुःख दरश दीन भई मीन बिना जलपानहिं। सूरदास प्रभु अधर सुधाघन बरषि देहु जियदानहिं ॥ ६ ॥



राग मारू ॥

द्विज बेग धावहु कहि पठावहु द्वारकाते जाइ। कुंदनपुर एक होत अजगुत बाघ घेरी गाइ ॥ दीन ह्वै करि करहुँ बिनती पाती दीजहु जाइ। रुक्म बरबस व्याहि देहै गनै पितहि न माइ ॥ लग्न लै जु बरात साजी उनत मंडप छाइ। पैज करि शिशुपाल आप जरासंध सहाइ ॥ हंस को मैं अंश राख्यो काग कत मँडराइ। गरुड़वाहन कृष्ण आवहु सूर बलि बलि जाइ ॥ १३ ॥



(ब्राह्मण ने कृष्ण को रुक्मिणी की चिट्ठी दी और कहा.—)

राग आसावरी ॥

बाल मृगी सी भूली आँगन ठाढ़ी। नवल विरहिनी चित-चिंता बाढ़ी ॥ तुम्हारो पंथ निहारै स्वामी। कबहिं मिलहुगे अन्तर्यामी ॥ मंडपपुर देखे उर थरथर करै। मनु चहुँदिशि दौ लागी धीरज तन न धरै ॥ अपने विवाह के दुंदुभि सुनि सुनि। चकृत मन मानो महासिंह ध्वनि ॥ सखिन की माल जाल जिय जानति। व्याधरूप शिशुपालहि मानति ॥ सूरदास युग-भरि बीतत छिनु। हरि नवरंग कुरंग पीव बिनु ॥ १४ ॥



कुंदनपुर श्रीकृष्ण गये ॥ राग सारंग ॥

सुनत हरि रुक्मिणि को सँदेस। चढ़ि रथ चले विप्र के संग लै कियो न गेह प्रवेस ॥ बारंबार विप्र को पूँछत कुँवरि

वचन सो सुनावत। दीन वचन करुणानिधान सुनि नयननीर भरि आवत॥ कह्यो हलधर सों आवहु दल लै मैं पहुँचत हौं धाई। सूर प्रभू कुंडिनपुर आए विप्रजू जाइ सुनाई॥ १५॥



राग सारंग॥

कुँवरि सुनि पायो अति आनंदन। मनहीं मनहि बिचार करत इह कब मिलिहैं नँदनंदन॥ हार चीर पाटंबर देकरि विप्रहि गेह पठायो। पै इह भेद रुक्मिणी निज मुख काहू कहि न सुनायो॥ हरि आगमन जानिकै भीषम आगे लेन सिधायो। सूरदास प्रभु दरशन कारन नगर लोग सब धायो॥ १६॥



राग आसावरी॥

देख रूप सब नगर के लोग। बारंबार अशीश देत सब यह वर बन्यो रुक्मिणी योग॥ जो कछु चतुराई विधना मों जानत युगरस रीति। तौ अजहूँ लौं राजसुता पति हरि ह्वैहै शिशुपालहि जीति॥ जो राजा कौतुक चलिआए ते मुख निरखि कहत हैं बात। परत न पलक चकोर चंद्र लौं अवलोकत लोचन अकुलात॥ मनसा ता को ही जगजीवन सुन्दर वर वसुदेव कुमार। सूरदास जाके जिय जैसी हरि कीन्हें तैसो व्यवहार॥ १७॥



सखीवचन रुक्मिणी प्रति सुही॥ राग बिलावल॥

सोच सोच तू डार उठि देख दीनदयालु आयो। निरखि लोचन प्रणतमोचन कुँवरि फल बाँछो सो पायो॥ सुनत भइ अकुलाइ ठाढ़ी ज्यों मृतक बिधि दै जिवायो। चढ़ि सदन वह

वदन की छबि परखि दीनो दव बुझायो ॥ ले बलाई सुकर लगायो निरखि मंगलचार गायो। नैन आरति अर्घ्य आँसू पुहुप तन मन धन चढ़ायो ॥ जानि हौं ब्रजनाथ जिय की कियो सो जो तुम बतायो। अपहरन पुन वरन वंश हरि जानि हौं केहि योग भायो ॥ भक्त के वस भक्तवत्सल विदुर सातोसाग खायो। मुदित ह्वै गई गौरि मंदिर जोरि कर बहु बिधि मनायो ॥ प्रगट तेहि छिन सूर के प्रभु बाँह गहि कियो वाम भायो। कृपासागर गुणन आगर दासि दुख दीनहि विहायो। १८ ॥



रुक्मिणीहरन ॥ राग आसावरी ॥

रुक्मिणी देवी मंदिर आई। धूप दीप पूजा सामग्री अली संग सब ल्याई ॥ रखवारी को बहुत महाभट दीन्हें रुक्म पठाई। ते सब सावधान भए चहुँदिशि पंछी इहाँ न जाई ॥ कुँवरि पूजि गौरी बिनती करि वरदेहु यादवराई। मैं पूजा कीन्ही या कारण गौरी सुनि मुसुकाई ॥ पाइ प्रसाद अंबिकामंदिर रुक्मिणि बाहेर आई। सुभट देख सुंदरता मोहे धरणि गिरे मुरझाई ॥ यहिअंतर यादवपति आए रुक्मिणि रथ बैठाई। सूर प्रभू पहुँचे अपने घर तब सबहिन सुधि पाई ॥ १९ ॥



राग आसावरी ॥

याही ते शूल रही शिशुपालहि। सुमिरि सुमिरि पछुताति सदा वह मान भंग के कालहि ॥ दुलहिन कहति दौरि दीजहु द्विज पाती नंद के लालहि। वर सुवरात बुलाइ बड़े हित मनसि

मनोहर बालहि ।। आये हरषि हरन रुक्मिणि रिस लगी दनुज उर शालहि। सूरज दास सिंह बलि अपुनो लीनी दलकि शृगालहि ।। २० ।।



श्रीकृष्ण रुक्मिणीविवाह ॥ राग सोरठ ॥

श्याम जब रुक्मिणि हरि लै सिधारे। सुनि जरासंध शिशुपाल धाए।। शालव दंतवक्र बनारसी को नृपति चढ़े दल-साजि मानो रविहि छाए। सांगकि झलक चहुँदिशि चपला चमकि गजगर्ज सुनत दिग्गज डेराए।। श्याम बलराम सुधि पाइ सन्मुख भये बाणवर्षा करन लगे सारे। रुक्मिणी भय कियो श्याम धीरज दियो बानसों बान तिनके निवारे।। राम हल मूशल सँभारि धायो बहुरि विपुल रथ औ सुभट सब संहारे॥ रुंड पर रुंड धुकि परे धरि धरणि पर गिरत ज्यों संग कर वज्रमारे॥ जरासंग जीव ते भजे रणखेत ते शाल दंतवक्र या बिधि पराई। प्रात के समै ज्यों भानु के उदय ते भलै होइ जात उडगन नशाई॥ गह्यो भगवान शिशुपाल को जीव ते ताहि सो वचन या बिधि उचारे। रुक्मणी लिये मैं जात तुम देखतहि पै नहीं हरष कछु मन हमारे॥ पुरुष को भाजिबे ते मरन है भलो जाइ सुरलोक द्वारे उघारे। पुरुष को हार अरु जीत दोउ होत है हर्ष अरु सोच नहिं चित्तधारे॥ बीज बोइये जोइ अंत लोनिये सोइ समुझि यह बात नहिं चित्त धरई। करन कारण महाराज हैं आपही तिनहिं चित राखि नित धर्म्म करई॥ बहुरि भगवान शिशुपाल को छाँड़ि दियो गयो निज देसो को सो खिसाई। शस्त्र नु छाँड़िके भाजि नरपति गये यादवनहेत हरिदै लुटाई॥ रुक्म सुनि चल्यो सौंह करि नृपन पै श्याम बलराम को बाँधि

ल्याऊँ। आइ इहाँ कह्यो शिशुपाल सो मै नहीं आपनो बल तुम्हें अब दिखाऊँ॥ बाण वर्षा लग्यो करन या भाँति कहि कृष्ण ज्यों तिनहि मग मे निवार्‌यो। आपने बाण को काटि ध्वज रुक्म के असुर औा सारथी तुरत मार्‌यो॥ रुक्म भू पर्‌यो उठि युद्ध हरि सों कर्‌यो हरि सकल शस्त्र ताके निवारे। बहुरि खिसि-आइ भगवान के ढिंग चल्यो ज्यों चलत पतंग दीपक निहारे॥ खड्ग लै ताहि भगवान मारन चले रुक्मिणी जोरि कर बिनय कियो। दोष इन कियो मोहिं क्षमा प्रभु कीजिए भद्र करि शीश जिवदान दीयो॥ राम अरु यादवन सुभट ताके हते रुधिर के नहर सरिता बहाई। सुभट मनो मकर अरु केश सेवार ज्यों धनुष त्वच चर्म कूरम बनाई॥ बहुरि भगवान के निकट आये सकल देखिकै रुक्म को हँसे सारे। कह्यो भगवान सों कहा यह कियो तुम छाँड़िबो हुतो या भलो मारे॥ मरे ते अप्सरा आइ ताको बरति भाजिहै देखि अब गेह नारी। रुक्मिणी सों कह्यो सोच नहिं कीजिए होत है सोइ जो होनिहारी॥ रुक्म सिर नाइ या भाँति बिनती करी नाथ मैं बुद्धि मर्म तुम्हरो न जान्यो। ब्रह्म तुम अनंत तुमहिं कारण करण मैं कैान भाँति तुमको पहिचान्यो॥ दीनबंधु कृपासिंधु करुणाकर सुनि बिनय दयाकरि ताहिको छाँड़ि दीन्हों। बहुरि निज नगरपैठ्यो न सो लाज करि बनहि तिन आपनो बास कीन्हो॥ आइ भीषम दियो दाइज ता ठैार बहु श्याम आनंद सहित पुर सिधाये। सुनत द्वारावती माह उतसों भयो सूर जन मंगलाचार गाये॥ २१॥



राग आसावरी॥

देखहिं दैारि द्वारकावासी। सुनत सकल पुर जीत रुक्मिणी

लै आए यदुपति अविनासी॥ लेति बलाइ करत नवछावरि बलि भुज दंड कनक अति त्रासी। नर नारी के नैन निरखि करि चातक तृषित चकोरि प्यासी॥ कर आरती कलश लै धाई त्रीन्हि न परति कुलवधू दासी। देस देस भयो रहसि सूर प्रभु जरासंध शिशुपाल की हाँसी॥२२॥



राग धनाश्री॥

आवहु री मिलि मंगल गावहु। हरि रुक्मिणिहि लिये आवत हैं इह आनँद यदुकुलहि सुनावहु॥ बाँधो बंदनवार मनोहर कनक कलश भरि नीर भरावहु। दधि अक्षत फल फूल परमरुचि अंगन चन्दन चौक पुरावहु॥ कदली यूथ अनूप कुशल दल सुरंग सुमन लै मंडल छावहु। हरद दूब केशर मग छिरकौ भेरी मृदंग निसान बजावहु॥ जरासंध शिशुपाल नृपति ते जीते हैं उठि अर्घ्य चढ़ावहु। बल समेत तनु कुशल सूर प्रभु हरि आये आरती सजावहु॥ २३॥



विवाहवर्णन॥ राग बिलावल॥ छंद त्रिभंगी॥

श्री यादवपति ब्याहन आया। धन्य धन्य रुक्मिणि हरि वर पाया॥

हरि श्याम घन तन परमसुंदर तड़ित वसन बिराजई। अँग अंग भूषण सुरस शशि पूरणकला मानों भ्राजई॥ कमल मुखकर कमल लोचन कमल मृदुपद सोहहीं। कमल नाभिः कमल सुंदर निरखि सुर मुनि मोहहीं॥ १॥

छंद ॥

सुधा सरोवर छिटकि अनूपम। ग्रीव कपोत मनो नासा कीरसम ॥

कीरनासा इंद्रधनु भ्रू भँवर से अलकावली। अधर विद्रुम बज्रकन दाड़िम किधौं दशनावली ॥ खौर केशरि अति विराजत तिलक मृगमद को दियो। कामरूप बिलोकि मोह्यो वास पद अंबुज कियो ॥ २ ॥



छंद ॥

वसुदेवनंदन त्रिभुवन मनहरन। मुकुट तरुन मनो मकर कुंडल श्रवन ॥

मुकुटकुंडल जडित हीरा लाल शोभा अतिबनी। पन्ना पिरोजा लागे बिच बिच चहूँदिशि लटकत मनी ॥ सेहरो सिर पर मुकुट लटक्यो कंठमाला राजई। हाथ पहुँची बीर कानग जरित मुँदरी भ्राजई ॥ ३ ॥



छंद ॥

उर बैजंती माल शोभा अतिबनी। चरणन नूपुर कटतट किंकिनी ॥

किंकिनी कट चरण नूपुर शब्द सुंदर कुंजही। कोकिला कलहंस बाल रसाल ते नहिं पुंजही ॥ तुरई बाजनि बीना ताजनि चपल चपला सेहरी। जैान जारत जराव वागहि लगे सब मुकुतासरी ॥ ४ ॥

छंद ॥

चढ़ि यदुनंदन बनित बनाइकै । साजि बरात चले यादव चाइकै ।

चले साजि बरात यादव कोटि छप्पन अतिबली । उग्रसेन वसुदेव हलधर करत मन मन अति तली ॥ शंख भेरि निशान बाजहिं नाचहिं शुद्ध सोहावनी । भाट बोलैं बिरद नारी वचन कहैं मनभावनी ॥ ५ ॥



छंद ॥

सुरपति आयो संग है शची । शुद्ध मुहूरत चौरी बिधि रची ॥

रची चौरी आपु ब्रह्मा जरित खंभ लगाइकै । इंद्र सुरदारनि सहित बैठे तहाँ सुख पाइकै ॥ चौक मुक्ताहल पुरायो आइ हरि बैठे तहाँ । निरखि सुर नर सकल मोहे रहिगए जहँके तहाँ ॥६॥



छंद ॥

कुँवरि रुक्मिणि कमला अवतरी । शशि षोडश कला शोभा तनुधरी ॥

कुँवरि शशि षोडशकला शृंगार करि ल्याई अली । बिविध बिधि कियो ब्याह बिधि वसुदेव मन उपजी रली ॥ सुर पुहुप बरसैं हरषि कै गंधर्व किन्नर गावहीं । शारदा नारद आदि सुयश उच्चार जयति सुनावहीं ॥ ७ ॥

छंद ।।

विप्रगणउ दिए बहु युगुति सुरति करि। किए अयाची याचक जन बहुरि ।।

बहुरि निज मंदिर सिधारे करी सुभद्रा आरती। देवकी पीवो वार नीरद दई अशीशा भारती ।। युवा युवती खेलाइ कुल व्यवहार सकल कराइबो। जनन मन भयो सूर आनँद हरषि मंगल गाइबो[1] ।।८।।



(इस प्रकार आनन्दपूर्वक कृष्ण का विवाहोत्सव समाप्त हुआ। रुक्मिणी से प्रद्युम्न नाम पुत्र उत्पन्न हुआ जो साक्षात् कामदेव का अवतार था। शंवर उसे हर ले गया। उसे मार कर कृष्ण रुक्मिणी सहित द्वारका लौट आये। एक बार कृष्ण पर स्यमंतक मणि चुराने का मिथ्या आरोप लगाया गया। कृष्ण ने मणि का पता लगा कर आरोप को दूर किया और जाम्बवती से विवाह किया। सत्राजित की पुत्री सत्यभामा से भी विवाह किया। तत्पश्चात् कृष्ण ने पाँच पटरानियों से और १६,००० रानियों से विवाह किया। तत्पश्चात् अनेक लीलाएं हुईं; रुक्मिणी की भक्ति की परीक्षा हुई; प्रद्युम्न का विवाह हुआ; रुक्म कलिंक राजा का वध हुआ, अनिरुद्ध का विवाह हुआ ।।[2])

---

१ जरासंधपराजय द्वारिकागमन रुक्मिणिहरण और विवाह के लिए देखिए श्रीमद्‌भागवत दशम स्कंध अध्याय ५०-५४ लल्लूजीलाल-कृत प्रेमसागर अध्याय ५१—५५ ।।

महाराज रघुराजसिंह-कृत ग्रन्थ रुक्मिणीपरिणय। सुप्रसिद्ध कवि विद्यापति-कृत नाटक रुक्मिणीपरिणय ।।

२ देखिए श्रीमद्‌भागवत दशम स्कंध अध्याय ५६—६२। प्रेमसागर ५७-६३ ।।

बलभद्र वृंदावन आये ॥ राग बिलावल ॥

श्याम राम के गुण नित गावों। श्याम रामही सों चित लावों॥ एक बार हरि निज पुर छये। हलधरजी वृन्दावन गये॥ यह देखत लोगन सुखपाये। जान्यो राम श्याम दोउ आये॥ नंद यशोमति जब सुधि पाई। देह गेह की सुरति भुलाई॥ आगे ह्वै लेवे को धाये। हलधर दौरि चरण लपटाये॥ बल को हित करि गले लगाये। दै असीस बोले ता भाये॥ तुम तो भली करी बलराम। कहाँ रहे मनमोहन श्याम॥ देखी कान्हर की निठुराई। कबहूँ पातीहू न पठाई॥ आपु जाइ वहाँ राजा भए। हमको बिछुरि बहुत दुख दये॥ कहो कबहुँ हमरी सुधि करत। हमतो उन बिनु बहु दुख भरत॥ कहा करैं वहाँ कोउ न जात। उन बिनु पल पल युगसम जात॥ यहि अंतर आए सब ग्वार। बैठे सबन यथा व्यवहार॥ नमस्कार काहू को कियो। काहू को भर अंकम लियो॥ गोपी जुरीं मिलीं वन आई। अतिहित साथ असीस सुनाई॥ हरि करि सुधि सुधि बुधि बिसराई। तिनको प्रेम कहो नहिं जाई॥ कोउ कहै हरि ब्याही बहु नार। तिनके बढ़्यो बहुत परिवार॥ उनको इह हम देत असीस। सुख सों जीवैं कोटि बरीस॥ कोऊ कहैं हरिहि नहिं चीन्हों। बिन चीन्हें उनको मन दीन्हों॥ निशिदिन रोवत हमैं बिहाइ। कहो कहा हम करैं उपाइ॥ कोउ कहै इहाँ चरावत गाइ। राजा भये द्वारका जाइ॥ काहेको वै आवैं इहाँ। भोग विलास करत नित उहाँ॥ कोउ कहै हरि रीत सब नई। और मित्रन को सब सुख दई॥ विहर हमारो कहाँ रहि गयो। जिन हमको अतिही दुख दयो॥ कोउ कहै जे हरिजी की रानी। कौन भाँति हरि को पतियानी॥ कोउ कहै चतुर नारि जो होई। करिहै नहीं निवारो

सोई ॥ कोउ कहै हम तुम क्यों पतिआई। उनको हित कुल लाज गवाँई ॥ हरि कछु ऐसो टोना जानत। सबको मन अपने वस आनत ॥ कोउ कहै हम हरि सब बिसराइ। कहा कहैं कछु कह्यो न जाइ ॥ हरि को सुमिरि नयनजल ढारे। नेक नहीं मन धीरज धारे ॥ इह सुनि हलधर धीरजधार। कह्यो आइहै हरि निरधार ॥ जब बल इह संदेस सुनायो। तब कछु इक धीरज मन आयो ॥ बलि तहँ रहे बहुरि दुइ मास। ब्रजवासिन सों करत विलास ॥ सबसों मिलि पुनि निजपुर आये। सूरदास हरि को गुण गाये ॥३७॥



(तत्पश्चात् कृष्ण ने पुंडरीक का उद्धार किया, द्विविद और सुतीक्ष्ण नामक राक्षसों का वध किया)

नारदसंशय द्वारका आगमन ॥ राग धनाश्री ॥

हरि की लीला देखि नारद चकृत भये। मन यह करत बिचार गोमती तर गये ॥ अलख निरंजन निर्विकार अच्युत अविनासी। सेवत जाहि महेश शेष सुर माया दासी ॥ धर्म-स्थापन हेतु पुनि धार्‌यो नर ,अवतार। ताको पुत्र कलत्र सों नहिं संभवत पियारे ॥ हरि के षोड़श सहस रहे पतिवर्तानारी। सबसों हरि को हेत सबै हरिजी की प्यारी ॥ जाके गृह दुइ नारि होंइ ताहि कलह नित होइ। हरि बिहार केहि-बिधि करत नैनन देखों जोइ ॥ द्वारावति ऋषि पैठ भवन हरिजू के आयो। आगे होइ हरि नारि सहित चरणन सिर नायो ॥ सिंहासन बैठारिकै प्रभु धोये चरण बनाइ। चरणो-दक सिर धरि कह्यो कृपाकरी ऋषिराइ ॥ तब नारद हँसि

कह्यो सुनो त्रिभुवनपतिराई। तुम देवन के देव देतहौ मोहिं बड़ाई॥ बिधि महेश सेवत तुम्हैं मैं बपुरा केहि माहीं। कहत तुम्हैं ब्राह्मण देवता यामे अचरज नाहीं॥ और गेह ऋषि गये तहाँ देखे यदुराई। चमर ढोरावत नारि करत दासी सेवकाई॥ ऋषि को रूखे देखि हरि बहुरि कियो सन्मान। उहँऊ ते नारद चले करत ऐसो अनुमान॥ जागृह में मैं जाउँ श्याम आगेही आवत। ताते छाँड़ि सुभाउ जाउँ अब धावत॥ जहाँ नारद श्रम करि गये तहाँ देखे घनश्याम। बालनहू क्रीड़ा करत कर जोरे खड़ीं बाम॥ नारद जहाँ जहाँ जाइँ तहाँ तहाँ हरि को देखै। कहुँ कछु लीला करत कहूँ कछु लीला पेखै॥ योंहीं सब गृह मे गये भयो न मन विश्राम। तब ताको व्याकुल निरखि हँसि बोले घनश्याम॥ नारद मन की भर्म तोहिं इतनों भरमायो। मैं व्यापक सब जगत वेद चारों मुख गायो॥ मैं कर्ता मैं भुक्ता मोहिं बिनु और न कोइ। जो मोको ऐसो लखै ताहि नहीं भ्रम होइ॥ बूझो सब घर जाइ सबै जानत मोहि योहीं। हरि की हमसों प्रीति अनत कहूँ जात न क्योंहीं॥ मैं उदास सबसों रहौं इह मम सहज सुभाइ। ऐसो जानै मोहिं जो मम माया न रचाइ॥ तब नारद करजोरि कह्यो तुम अज अनंत हरि। तुमसे तुम बिन द्वितीय कोउ नाही उत्तमदुरि॥ तुम माया तुम कृपा बिनु सकै नहीं तरि कोइ। अब मोको कीजै कृपा ज्यों न बहुरि भ्रम होइ॥ ऋषि चरित्र मम देखि कछू अचरज मतिमानो। मोते द्वितिया और कोऊ मनमाहिं न आनो॥ मैंही कर्ता मैं ही भुक्ता नहिं यामें संदेहु। मेरे गुण गावत फिरौ लोगन को सुख देहु॥ नारद करि परणाम चले हरि के गुण गावत। बार बार उरहेत ध्याय हृदय में ध्यावत॥ इह लीला

करि अचरज की सूरदास कहिगाइ । ताको जो गावै सुनै सो भवजल तरिजाइ ॥ ४७ ॥



(इसके बाद कवि ने श्रीकृष्ण का हस्तिनापुर जाना, जरासंध को मारना, पाण्डवयज्ञ और शिशुपालवध इत्यादि लीलाएँ गाई है)[1]

सुदामा दारिद्रभजन ॥ राग बिलावल ॥

हरि हरि हरि हरि सुमिरन करो । हरि चरणारविंद उर धरो ॥ विप्र सुदामा सुमिरे हरी । ताकी सकल आपदा टरी ॥ कहौं सो कथा सुनो चितधार । कहै सुनै सो लहै सुखसार ॥ विप्र सुदामा परमकुलीन । विष्णुभक्त सो अति लवलीन ॥ भिक्षा-वृत्ति उदर नित भरै । निशिदिन हरि हरि सुमिरन करै ॥ नाम सुशीला ताकी नारी । पतिव्रता अति आज्ञाकारी ॥ पति जो कहै सो करै चितलाइ । सूर कह्यो इक दिन या भाइ ॥



राग बिलावल ॥

कहि न सकति सकुचति इक बात । कितीक दूरि द्वारका नगरी काहे न द्विज यदुपति लौं जात ॥ जाके सखा श्यामसुंदर से श्रीपति सकल सुखन के दात । उनके अछत आपने आलस काहे कंत रहत कृशगात ॥ कहियत परम उदार कृपानिधि अंत-र्यामी त्रिभुवन तात । द्रवत आपु देत दासन को रीझत हैं तुलसी के पात ॥ छाँड़ौ सकुच बाँधि पट तंदुल सूरज संग चलौ उठि प्रात । लोचन सफल करौ प्रभु अपने हरि मुख कमल देखि बिलसात ॥ ५९ ॥

---

१ श्रीमद्भागवत दशम स्कंध अध्याय ७२-७९ । प्रेमसागर ७३-७६ ॥

(सुदामाजी कृष्ण के पास गये)। राग बिलावल।

दूरिहि ते देखे बलवीर। अपने बालसखा सुदामा मलिन बसन अरु छीन शरीर॥ पौढ़ेहु ते प्रयंक परम रुचि रुक्मिणि चमर डोलावत तीर। उठि अकुलाइ अगमने लीने मिलत नैन भरि आये नीर॥ तेहि आसन बैठारि श्यामघन पूँछी कुशल करौ मन धीर। ल्यायेहौ सु देहु किन हमको अब कहा राखि दुरावत चीर॥ दरशन परसि दृष्टि संभाषन रही न उर अंतर कछु पीर। सूर सुमति तंदुल चबात ही कर पकर्‌यो कमला भइ भीर॥ ६१॥



(इसी कथा को फिर कहते है :—) राग धनाश्री॥

यदुपति देखि सुदामा आये। विह्वल बिकल छीन दारिदवश करि प्रलाप रुक्मिणि समुझाये॥ दृष्टि परे ते दिये संभाषण भुजा पसारि अंक लै आये। तंदुल देखि बहुत दुख उपज्यो माँगु सुदामा जो मन भाये॥ भोजन करत गह्यो कर रुक्मिणि सोइ देहु जो मन न डुलावै। सूरदास प्रभु नव निधि दाता जापर कृपा सोइ जन पावै॥ ६२॥



राग बिलावल॥

ऐसी प्रीति की बलिजाउँ। सिंहासन तजि चले मिलन को सुनत सुदामा नाउँ॥ गुरुबांधव अरु विप्र जानिकै चरणन हाथ पखारे। अंकमाल दै कुशल बूझिकै अर्धासन बैठारे॥ अर्धंगी बूझत मोहन को कैसे हितू तुम्हारे। दुर्बलदीन छीन देखति हौं पाँउ कहाँ ते धारे॥ संदीपन के हम औ सुदामा पढ़े एक चटसार। सूर श्याम की कौन चलावै भक्तन कृपाअपार॥ ६३॥

राग धनाश्री ॥

गुरुगृह जब हम वन को जात। तुरत हमारे बदले लकरी ये सब दुख निजगात ॥ एक दिवस वर्षा भई वन मे रहिगये ताही ठौर। इनकी कृपा भयो नाहिं मोहिं श्रम गुरु आये भय भोर ॥ सो दिन मोहिं बिसरत न सुदामा जो कीन्हों उपकार। प्रति-उपकार कहा करौं सूर अब भाषत आप मुरार ॥ ६४ ॥



राग धनाश्री ॥

हरि को मिलन सुदामा आयो। विधि करि अरघ पाँवड़े दीने अंतर प्रेम बढ़ायो ॥ आदर बहुत कियो यादवपति मर्दन करि अन्हवायो। चोवा चंदन अगर कुमकुमा परिमल अंग चढ़ायो ॥ पूरब जन्म अदात जानिकै ताते कछु मँगायो। मूठिक तंदुल बाँधि कृष्ण को बनिता बिनय पठायो ॥ समदै विप्र सुदामा घर को सर्वसु दै पहुँचायो। सूरदास बलि बलि मोहन की तिहूँ लोक पद पायो ॥ ६५ ॥



राग बिलावल ॥

सुदामा गृह को गमन कियो। प्रगट विप्र को कछु न जनायो मन मे बहुत दियो ॥ वोई चीर कुचील वोई बिधि मोको कहा कियो। धरिहौं कहा जाइ त्रिय आगे भरि भरि लेत हियो ॥ भयो संतोष भाव मनहीं मन आदर बहुत कियो। सूरदास कीन्हें करनी बिन कोपति आइ वियो ॥ ६७ ॥



राग बिलावल ॥

सुदामा मंदिर देखि डर्‌यो। शीश धुनै दोऊ कर मीड़ै अंतर

साँच पर्‌यो ॥ ठाढ़ी त्रिया मार्ग जो जोवै ऊँचे चरण धर्‌यो। तोहिं आदर्‌यो त्रिभुवन को नायक अब क्यों जात फिर्‌यो ॥ इहाँ हुती मरी तनिक मड़ैया को नृप आनि छर्‌यो। सूरदास प्रभु करि यह लीला आपद विप्र हर्‌यो ॥ ६८ ॥



राग बिलावल ॥

देखत भूलि रह्यो द्विज दीन। ढूँढ़त फिरै न पूँछन पावै आपुन गृह प्राचीन ॥ किधौं देवमाया बौरायो किधौं अनतही आयो। तृणहु की छाँह गई निधि माँगत अनेक जतन करि छायो ॥ चितवत चकित चहूँदिशि ब्राह्मण अद्भुत रचना रीति। ऊँचे भवन मनोहर छाजा मणि कंचन की भीति ॥ पति पहिचानि धरी मंदिर ते सूर त्रिया अभिराम। आवहु कंत देखि हरि को हित पाउँ धारिये धाम ॥ ६९ ॥



राग बिलावल ॥

भूलो द्विज देखत अपनो घर। औरहि भाँति रची रचना रुचि देखतही उपज्यो हृदय डर ॥ कै यह ठौर छिनाइ लियो कहुँ आइ रह्यो कोऊ समरथ नर। कैहौं भूलि अनतखंड आयो यहु कैलास जहाँ सुनियत हर ॥ बुधजन कहत दुबल घातक बिधि सोइ न आजु लह्यो यह पटतर। ज्यों नलनी बन छाँड़ि वसी जल दाही हेम जहाँ पानी सर ॥ जगजीवन जगदीश जगतगुरु अविगति जानि भर्‌यो। आवो चलैं मंदिर अपनेही कमलाकंत धर्‌यो ॥ ता पीछे त्रिय उतरि कह्यो पति चलिए घरहि गहे कर से कर। सूरदास यह सब हित हरि को रोप्यो द्वार सुभगति कलपतर ॥ ७० ॥

राग बिलावल ॥

कहा भयो मेरो गृह माटी को । होतो गयो गुपालहि भेंटन और खर्च तंडुल गाँठी को ॥ बिनु ग्रीवा कल सुभग न आन्यो हुतो कमंडलु दृढ़ काठी को । घुनो बाँस गत बुन्यो खटोला काहू को पलंग कनक पाटी को ॥ नौतन चीरे दिकुयुगतीपैं भूषण हुते न लोहू माटी को । सूरदास प्रभु कहा निहोरों मानतु रंक त्रास टाटी को ॥ ७१ ॥



राग धनाश्री ॥

कहौ कैसे मिले श्याम संघाती । कैसे गए सु कंत कौन बिधि परसे हुते वस्तर कुचिलकुजाती ॥ सुनि सुंदरि प्रतिहार जनायो हरि समीप रुक्मिणी जहाती । उभै मुठी लीनी तंदुल की संपति संचित करीही थाती ॥ सूर सु दीनबंधु करुणामय करत बहुत जो श्रीनरिसाती ॥ ७२ ॥



राग बिलावल ॥

ऐसे मोहिं और कौन पहिंचानै । सुन सुंदरी दीनबंधु बिन कौन मिताई मानै ॥ कहाँ हम कृपण कुचील कुदरशन कहाँ वै यादवनाथ गुसाँई । भेंटे हृदय लगाइ अंक भरि उठि अग्रज की नाँई ॥ निज आसन बैठारि परमरुचि निजकर चरण पखारे । पूँछी कुशल श्यामघन सुंदर सब संकोच निवारे ॥ लीन्हें छोरि चीर ते चाउर करगहि मुख में मेले । पूरब कथा सुनाइ सूर प्रभु गुरुगृह बसे अकेले ॥ ७३ ॥

राग धनाश्री ॥

हरि बिन कौन दरिद्र हरै। कहत सुदामा सुन सुंदरि जिय मिलन न हरि बिसरै॥ और मित्र ऐसे समया महँ कत पहिं-चान करै। विपति परे कुशलात न बूझै बात नहीं बिचरै। उठिकै मिले तंदुल हरि लीने मोहन वचन फुरै। सूरदास स्वामी की महिमा टारी निधि न टरै॥ ७४॥



राग धनाश्री ॥

और को जानै रस की रीति। कहाँ हौं दीन कहाँ त्रिभुवनपति मिले पुरातन प्रीति॥ चतुरानन तन निमिष न चितवत इती राज की नीति। मोसों बात कही हृदय की गए जाहि युगबीति॥ बिनु गोविंद सकल सुख सुंदरि भुस पर कीसी भीति। हौं कहा कहों सूर के प्रभु के निगम करत जाकी कीर्ति॥ ७५॥



राग धनाश्री ॥

गोपाल बिना और मोहिं ऐसो कौन सँभारै। हँसत हँसत हरि दौरि मिले सु उर ते उर नहिं टारै॥ छीन अंग जीरन वस्त्र दीन मुख निहारै। ममतन रज पथ लागी पीत पट सों झारै॥ सुखद सेज आसन दीन्हों सु हथ पाँय पखारै। हरि हित हर गंग धरे पदजल सिर ढारै॥ कहि कहि गुरु गेह कथा सकल दुख निवारै। न्याय निज वपु सूरदास हरिजी ऊपर वै वारै॥ ७६॥



(सारी कथा को एक पद मे कहते हैः—) राग केदारो ॥

दीन द्विज द्वारे आइ रहो ठाढ़ो। नाम सुदामा कहत नाथ

जो दुखी आहि अति गाढ़ो ॥ सुनतहि वचन कमलदललोचन कमला दल उठि धाए। त्रिभुवन नाथ देखि अपनो प्रिय हित सों कंठ लगाए ॥ आदर करि मंदिर लै आने कनक पलँग बैठाए। कथा अनेक पुरातन कहि कहि गुरु के धाम बताए॥ खइबे को कछु भाभी दीन्हों श्रीपति श्रीमुख बोले। फेंट ऊपर तें अंजुल तंदुल बलकरि हरिजू खोले ॥ दुइ मूठी तंदुल मुख में ले बहुरो हाथ पसार्‍यो। त्रिभुवन दै करि कह्यो रुक्मिणि अपुनो दान निवार्‍यो ॥ बिदा कियो पहुँचे निज नगरी हेरत भवन न पायो। मंदिर रही नारि पहिंचान्यो प्रेम समेत बुलायो ॥ दीनदयालु देवकीनंदन वेद पुकारत चारो। सूर सु भेंटि सुदामा को दुख हरि दारिद्र मिटारो[1] ॥ ७७ ॥

---

१ यह कथा नरोत्तमदास ने अपने सुदामाचरित्र मे गाई है। कृष्ण के पास आकर द्वारपालों ने कहाः—

सीस पगा न झँगा तन मैं प्रभु जानै को आहि बसै केहि गामा।
धोती फटी सी लटी दुपटी अरु पायँ उपानह की नहीं सामा ॥
द्वार खड़ो द्विज दुर्बल एक रहो चकि सो बसुधा अभिरामा।
पूछत दीनदयाल को धाम बतावत आपनो नाम सुदामा ॥
कैसे बिहाल बेंवाँइन सों भये कटक जाल गड़े पग जोये।
हाय महा दुख पाये सखा तुम आये इतै न किते दिन खोये ॥
देखि सुदामा कि दीन दसा करुना करिकै करुनानिधि रोये।
पानी परात को हाथ छुयो नहिँ नैनन के जल सों पग धोये ॥
काँपि उठी कमला जिय सोचत मोते कहा हरि को मन रौंको।
सिद्धि छपै, नव निद्धि चपैं, बसु ऋद्धि कँपै यह बाँभन धोंको ॥
सोर पर्‍यो सुरलोकहु में जब दूसरी बार लियो भरि झोंको।
मेरु डरै बकसैं जनि मोहिँ कुबेर चबात ही चावर चोंको ॥ इत्यादि २ ॥

(इधर ब्रज मे गोपियां कृष्ण के विरह मे कातर रहती थीं। वह एक पथिक से बोलीं:—)

राग मलार ॥

तब ते बहुरि न कोऊ आयो। उहै जु एक बेर ऊधो सों कछु संदेस पायो ॥ छिन छिन सुरति करत यदुपति की परत न मन समुझायो। गोकुलनाथ हमारे हितलगि लिखिहू क्यों न पठायो ॥ यहै विचार करहु धौं सजनी इतौ गहर क्यों लायो। सूर श्याम अब बेगि न मिलहू मेघनि अंबर छायो ॥ ७८ ॥



राग गौरी ॥

बहुर्यो ब्रज बात न चाली। वहै सु एक बेर ऊधो कर कमलनैन पाती दै घाली ॥ पथिक तुम्हारे पाँइन लागति मथुरा जाउ जहाँ बनमाली। कहियो प्रगट पुकार द्वार ह्वै कालिंदी फिरि आयो काली ॥ तबहूँ कृपाहुती नँदनंदन रुचि रुचि रसिक प्रीति प्रतिपाली। माँगत कुसुम देखि ऊँचे द्रुम लेव उछंग गोद करि आली ॥ जब वह सुरति होत उर अंतर लागति काम बाण की भाली। सूरदास प्रभु प्रीति पुरातन सुमिरत उरह शूल अति शाली ॥ ७९ ॥



राग धनाश्री ॥

तुम्हरे देश कागर मसि खूटी। भूँख प्यास अरु नींद गई सब हरि बिन विरह लयो तनु टूटी ॥ दादुर मोर पपीहा बोले अवधि भई सब झूठी। हम अपराधिनी मर्म न जान्यो अरु तुमहू ते टूटी ॥ सूरदास प्रभु कबहुँ मिलहुगे सखी कहत सब झूठी ॥ ८० ॥

(कृष्ण सुदूरवर्ती द्वारका को जायँगे—यह सुन कर गोपियो को और भी क्लेश हुआ था)।

पथिक कहियो ब्रजजाइ सूने हरि जात सिंधु तट। सुनि सब अंग भये शिथिल गयो नहिं बज्रहियो फट॥ नर नारी घर घर सबै इह करति बिचारा। मिलिहैं कैसी भाँति हमैं अब नंद-कुमारा॥ निकट बसत हुती अस कियौ अब दूर पयाना। बिना कृपा भगवान उपाउ न सूर अपाना॥ ८१॥



राग गौरी॥

हमारे श्याम चलन कहत हैं दूरी। मधुवन बसत आसहुती सजनी अब मरिहैं जु बिसूरी। कैाने कहीं कौन सुनि आई किहि रुख रथ की धूरि॥ संगहि सबै चलौ माधव के नातो मरिहैंा झूरि॥ दक्षिणदिशि यह नगर द्वारका सिंधु रह्यो जलपूरि। सूरदास प्रभु बिनु क्यों जीवें जात सजीवन मूरि॥ ८२॥



गोपिकाविरह॥ राग धनाश्री॥

नैना भये अनाथ हमारे। मदनगोपाल वहाँ ते सजनी सुनि-यत दूरि सिधारे॥ वै जलहर हम मीन बापुरी कैसे जिवहिं निनारे। हम चातक चकोर श्यामघन वदन सुधानिधि प्यारे॥ मधुवन बसत आस दरशन की जोइ नैन मगहारे। सूर श्याम करी पिय ऐसी मृतकहुते पुनि मारे[1]॥ ८३॥

---

1 गोपियों के विरह पर सेनापति कवि कहते हैं:—

दामिनी दमक सुर चाप की चमक स्याम
घटा की घमक अति घोर घन घोर ते।

रुक्मिणिवचन श्रीभगवानप्रति ॥ राग धनाश्री ॥

रुक्मिणि बूझत है गोपालहिं। कहो बात अपने गोकुल की केतिक प्रीति ब्रजबालहिं॥ कहा देखि रीझे राधा सों चंचल नैन बिशालहिं। तब तुम गाय चरावन जाते उरधर ते बनमालहिं॥ इतनी सुनत नैन भरि आये प्रेमनंद के लालहिं। सूरदास प्रभु रहे मौनह्वै घोष बात जनि चालहिं॥ १०१॥



राग धनाश्री ॥

रुक्मिणि मोहिं निमेष न बिसरत वै ब्रजबासी लोग।

कोकिला कलापी कल कूजत है जित तित
सीतल है हीतल समीर झकझोर ते॥
सेनापति आवन कह्यो है मनभावन
लगो है तरसावन बिरह जुर जोर ते।
आयो सखी सावन बिरह सरसावन
सु लागो बरसावन सलिल चहुँ ओर ते॥
दूरि जदुराई सेनापति सुखदाई देखो
आई रितु पावस न पाई प्रेमपतियाँ।
धीर जलधर की सुनत धुनि धरकी सुदरकी
सोहागिनी की छोह भरी छतियाँ॥
आई सुधि बर की हिय में आनि खरकी सुमिरि
प्रानप्यारी वह प्रीतम की बतियाँ।
बीती औधि आवन की लाल मन भावन की
डग भई बावन की सावन की रतियाँ॥इत्यादि॥

हम उनसों कछु भली न कीनी निशिदिन मरत वियोग ॥ यदपि कनकमय रची द्वारका सखो सकल संभोग । तदपि मन जो हरत बंशीवट ललिता के संयोग ॥ मैं ऊधो पठयो गोपिनपै देइ सँदेसो योग । सूरदास देखि उनकी गति किन्ह उपदेशे योग ॥ १०२ ॥



राग मलार ॥

रुक्मिणि मोहिं ब्रज बिसरतु नाहीं । वा क्रीड़ा खेलत यमुना तट विमल कदम की छाहीं ॥ गोपवधू की भुजा कंठ धरि विहरत कुंजनमाहीं । अनेक बिनोद कहाँ लौं वरणौं मोमुख वरणि न जाई ॥ सकल सखा अरु नंद यशोदा वे चित ते न टराहीं । सुत हित जानि नंद प्रतिपाले बिछुरत विपति सहाहीं ॥ यद्यपि सुखनिधान द्वारावति तोउ मन कहुँ न रहाहीं । सूरदास प्रभु कुंजविहारी सुमिरि सुमिरि पछिताहीं ॥ १०३ ॥



राग धनाश्री ॥

रुक्मिणि चलहु जनमभूमि जाहीं । यदपि तुम्हारो हतो द्वारका मथुरा के सम नाहीं ॥ यमुना के तट गाय चरावत अमृत जल अचवाहीं । कुंजकेलि अरु भुजा कंधधरि शीतल द्रुमं की छाहीं ॥ सरस सुगंध मंद मलयागिरि विहरत कुंजन माहीं । जो क्रीड़ा श्रीवृन्दावन में तिहूँलोक में नाहीं ॥ सुरभी ग्वाल नंद अरु यशुमति मम चित ते न टराहीं । सूरदास प्रभु चतुर शिरोमणि सेवा तिनकि कराहीं ॥ १०४ ॥

श्रीकृष्णकुरुक्षेत्रआवन ॥ राग सारंग ॥

ब्रजबासिन को हेतु हृदय में राखि मुरारी । सब यादव सों कह्यो बैठिकै सभा मँझारी ॥ बड़ो पर्व रवि गहन कहा कहौं तासु बड़ाई । चलौ सबै कुरुक्षेत्र तहाँ मिलि न्हैये जाई ॥ तात मात निज नारिलै हरिजी सब संगा । चले नगर के लोग साजि रथ तरल तुरंगा ॥ कुरुक्षेत्र में आइ दियो इक दूत पठाई । नंद यशोमति गोपी ग्वाल सब सूर बुलाई ॥ १०५ ॥



सखीवचन राधिकाप्रति शकुनबिचार ॥ राग सारंग ॥

बायस गहगहात शुभवाणी विमल पूर्वदिशि बोली । आजु मिलाओ श्याम मनोहर तू सुनु सखी राधिके भोली ॥ कुच भुज अधर नयन फरकत हैं बिनहि बात अंचल ध्वज डोली । सोचनिवार करो मन आनँद मानो भाग्य दशा बिधि खोली ॥ सुनत सु वचन सखी के मुख ते पुलकित प्रेम तरकि गई चोली । सूरदास अभिलाष नंदसुत हरषीं सुभग नारि अनमोली ॥१०६॥



राग केदारो ॥

माधवजी आवनहार भये । अंचल उड़त मन होत गहगहो फरकत नैन खये ॥ देही देखि सोच जिय अपने चितवत सगुन दये । ऋतुबसंत फूली द्रुमवल्ली उलहे पात नये ॥ करति प्रतीति आपुनते सबन शृंगार ठये । सूरदास प्रभु मिलहु कृपा-

हठि गोपाल पठायो ॥ कहा भयो जो लोग कहत हैं देवकी माता जायो। खान पान परिधान सबै सुख तैहीं लाड़ लड़ायो॥ इतो हमारो राज द्वारका मो जी कछू न भायो। जब जब सुरति होत उहि हित की बिछुर वच्छ ज्यों धायो॥ अब वे हरि कुरुक्षेत्र मे आये सो मैं तुम्हैं सुनायो। सब कुल सहित नंद सूरज प्रभु हितकरि वहाँ बोलायो॥ १०८॥



राधिकावचन सखीप्रति ॥ राग सारग ॥

राधा नैन नीर भरि आई। कब धौं श्याम मिलैं सुंदर सखी यदपि निकट है आई॥ कहा करौं केहि भाँति जाउँ अब पेषहि नहिं तिन पाई। सूर श्यामसुंदर घन दरशे तनु की ताप नशाई॥ १०६॥



सखीवचन राधिकाप्रति ॥ राग केदारो ॥

अब हरि आइहैं जिन सोचै। सुन विधुमुखी वारि नयनन ते अब तू काहे मोचै॥ सत्य जानि चित चेत आनि तू अब नख क्यों तनु नोचै। मदन मुरादि सँभारि सुमिरि सुख तुम समीप-को बोचै॥ लै लेखनि मसि करि करि अपने लिखि संदेस छाँड़ि संकोचै। सूर सु विरह जनाउ करत कित प्रबल मदन रिपु पोचै॥ ११०॥



गोपीसंदेश श्रीभगवान्प्रति ॥ राग सारंग ॥

पथिक कहियो हरि सों यह बात। भक्तवछल है विरद तिहारो हम सब किये सनाथ॥ प्राण हमारे संग तुम्हारे हमहू

हैं अब आवत । सूर श्याम सों कहत संदेसो नयनन नीर बहा-
वत ॥ १११ ॥



कुरुक्षेत्र श्रीभगवानमिलन ॥ राग सारंग ॥

नंद यशोदा सब ब्रजवासी । अपने अपने शकट साजिकै मिलन
चले अविनासी ॥ कोउ गावत कोउ वेणु बजावत कोउ उतावल
धावत । हरि दरशन लालसा कारन विविध मुदित सब आवत ॥
दरशन कियो आइ हरिजी को कहत सपन की साँची ।
प्रेम मानि कछु सुधि न रही अँग रहे श्याम रँग राची ॥ जासों
जैसी भाँति चाहिए ताहि मिल्यो त्यों धाइ । देस देस के नृपति
देखि यह प्राण रहे अरगाइ ॥ उमँग्यो प्रेम समुद्र दसहुँदिशि
परमित कही न जाइ । सूरदास इह सुख सो जानै जाके हृदय
समाइ ॥ ११२ ॥



राग कान्हरो ॥

तेरी जीवनि मूरि मिलहि किन माई । महाराज यदुनाथ
कहावत तबहीं हुते शिशु कुँवर कन्हाई ॥ पानि परे भुज धरे
कमल मुख पेषत पूरब कथा चलाई । परमउदार पानि अवलो-
कत हीन जानि कछु कहत न जाई ॥ फिरि फिरि अब सन्मुखही
चितवति प्रीति सकुच जानी न दुराई । अब हँसि भेटहु कहि
मोहिं निज जन बाल तिहारो हो नंद दोहाई ॥ रोम पुलकि
गदगद तनु तेहि छिन जलधारा नैनन वरषाई । मिले सु तात
मात बंधू सब कुशल कुशल करि प्रश्न चलाई ॥ आसन देइ
बहुत करि बिनती सुत धोखे तब बुद्धि हेराई । सूरदास प्रभु
कृपाकरी अब चितहि धरे पुनि करी बड़ाई ॥ ११३ ॥

राग मलार ॥

माधव या लगि है जग जीजतु। जाते हरि सों प्रेम पुरातन बहुरि नयो करि कीजतु ॥ कहँ रवि राहु भयो रिपु मति रचि बिधि संयोग बनायो। उहि उपकार आज यहि औसर हरि दरशन सचुपायो ॥ कहाँ बसहिं यदुनाथ सिंधु तट कहँ हम गोकुलवासी। वह वियोग यह मिलनि कहाँ अब काल चाल औरासी ॥ सूरदास मुनि चरण चरचि करि सुरलोकनि रुचि मानी। तब अरु अब यह दुसह प्रमानी निमिषो पीर न जानी ॥ ११४ ॥



श्रीभगवान् रुक्मिणि प्रत्युत्तर ॥ राग कान्हरो ॥

हरि जूसों बूझत है रुक्मिणि इनमें को वृषभानुकिशोरी। बारेक हमैं देखावो अपने बालापन की जोरी ॥ जाको हेतु निरंतर लीये डोलत ब्रज की खोरी। अति आतुर होइ गाइ दुहावन जाते पर घर चोरी ॥ रजनी सेज सुकरि सुमनन की नवपल्लव पुट तोरी। बिनु देखे ताके मन तरसै छिन बीते युग मोरी ॥ सूर सोच सुख करि भरि लोचन अंतर प्रीति न थोरी। शिथिल गात मुख वचन फुरत नहिं ह्वै जो गई मति भोरी ॥ ११५ ॥



राग धनाश्री ॥

बूझति है रुक्मिणि पिय इनमें को वृषभानुकिशोरी। नेक हमैं देखरावहु अपनी बालापन की जोरी ॥ परमचतुर जिन कीने मोहन अल्प वैसही थोरी। बारे ते जिहि यहै पढ़ायो बुधि बल कलबिधि चोरी ॥ जाके गुणगनि गुथति माल कबहूँ उर ते नहिं छोरी। सुमिरन सदा बसतहीं रसना दृष्टि न इत उत

मोरी॥ वह देखो युवतिवृंद में ठाढ़ी नीलवसन तनु गोरी। सूरदास मेरो मन वाकी चितवन देखि हर्योरी॥ ११६॥



राग मारू॥

गोबिंद परम कृपा मैं जानी। निगम जु कहत दयालु शिरोमणि सत्य सु निधि बानी॥ अब ये श्रवण वरन कर स्वारथ तुम जु दरश सुख दीनो। या फल योग सुकृत नहिं समुझत दीन देखि हित कीनो॥ यह दिन धन्य धन्य जीवन जस धन्य भाग्य प्रभु पाये। शिव मुनि मन दुर्लभ चरणांबुज जनहि प्रगट परसाए॥ हरषित सुजन सखा त्रिय बालक कृष्णमिलन जिय भाये। सूरदास सकल लोचन जनु शशि चकोर कुलपाए॥ ११७॥



राग सारंग॥

हरिजी इते दिन कहाँ लगाये। तबहिं अवधि मे कहत न समुझी गनत अचानक आये॥ भली करी जु अबहिं इन नैनन सुंदर चरण दिखाये। जानी कृपाराज काजहुँ हम निमिष नहीं बिसराए॥ विरहिनि विकल विलोकि सूर प्रभु धाइ हृदय करलाए। कछु मुसुकाइ कह्यो सारथि सुन रथ के तुरंग छुराए॥ ११८॥



राग मलार॥

हरिजू वै सुख बहुरि कहाँ। यदपि नैन निरखत वह मूरति फिरि मन जात तहाँ॥ मुखमुरली सिर मोरपखौवा गर घुँघुँचनि को हार। आगे धेनु रेनु तनु मंडित चितवन तिरछी

चाल ॥ राति दिवस अंग अंग अपने हित हँसि मिलि खेलत खात । सूर देखि वा प्रभुता उनकी कहि नहिं आवै बात ॥ ११६ ॥



राग धनाश्री ॥

रुक्मिणि राधा ऐसे बैठी । जैसे बहुत दिनन की बिछुरी एक बाप की बेटी ॥ एक सुभाउ एकलै दोऊ दोऊ हरि को प्यारी । एक प्राण मन एक दुहुँन को तनु करि देखिअत न्यारी ॥ निज मंदिर लै गई रुक्मिणी पहुनाई बिधि ठानी । सूरदास प्रभु तहँ पग धारे जहाँ दोऊ ठकुरानी ॥ १२० ॥



राग धनाश्री ॥

राधा माधव भेंट भई । राधा माधव माधव राधा कीट भृंग गति होइ जो गई ॥ माधव राधा के रँग राचे राधा माधव रंगरई । माधो राधा प्रीति निरंतर रसना कहि न गई ॥ बिहँसि कह्यो हम तुम नहिं अंतर यह कहि ब्रज पठई । सूरदास प्रभु राधा माधव ब्रजविहार नित नई नई ॥ १२१ ॥



राधावचन सखी प्रति ॥ राग धनाश्री ॥

करत कछु नाहीं आजु बनी । हरि आए हौं रही ठगीसी जैसे चित्तधनी ॥ आसन हर्षि हृदय नहिं दीन्हों कमलकुटी अपनी । न्यवछावर उर अरघ न अंचल जलधारा जो बनी ॥ कंचुकी कुचकलश प्रगट ह्वै टूटि न तरक तनी । अब उपजी अतिलाज मनहिमन समुझत निजकरनी ॥ मुख देखत न्यारेसी रहिहौं

बिनु बुधिमति सजनी। तदपि सूर मेरी यह जड़ता मंगल माँझ गनी ॥ १२२ ॥



भगवानूवचन ब्रजवासीप्रति ॥ राग सारंग ॥

ब्रजवासिन सों कह्यो सबनते ब्रजहित मेरे। तुमसों मैं न हुं दूर रहतहौं सबहिन के नियरे॥ भजै मोहिं जो कोई भजौं मैं तिनको भाई। मुकुरमाँह ज्यों रूप आपनो आपुन सम दरशाई॥ यह कहिकै समदे सकल जन नयन रहे जलछाई। सूर श्याम को प्रेम कछू मोपै कह्यो न जाई ॥ १२३ ॥



राग सारंग ॥

सबहिन ते सबहै जन मेरो। जन्म जन्म सुन सुबल सुदामा निबह्यो इह प्रण मेरो॥ ब्रह्मादिक इंद्रादि आदि दै जानत बलि बसि केरो। इक उपहास त्रास उठि चलते तजिकै अपनो खेरो॥ कहा भयो जो देस द्वारका कीन्हों दूरि बसेरो। आपु नहीं या ब्रज के कारण करिहौं फिरि फिरि फेरो॥ यहाँ वहाँ हम फिरत साधहित करत असाध अहेरो। सूर हृदय ते टरत न गोकुल अंग छुअत हौं तेरो ॥ १२४ ॥



वचन ब्रजवासी ॥ राग सारंग ॥

हम तो इतनेहीं सचुपायो। सुंदर श्याम कमलदललोचन बहुरो दरश देखायो॥ कहा भयो जो लोग कहतहैं कान्ह द्वारका छायो। सुनि यह दशा विरह लोगन की उठि आतुर होइ धायो॥ रजक धेनु गज कंस मारिकै कियो आपनो भायो। महाराज

होय मातु पिता मिलि तौन ब्रज बिसरायो ॥ गोपी गोप अरु नंद चले मिलि प्रेम समुद्र बहायो। येते मान कृपालु निरन्तर नैननीर ढरिआयो ॥ यद्यपि राज बहुत प्रभुना सुनि हरि हित अधिक जनायो। वैसहि सूर बहुरि नँदनंदन घर घर माखन खायो ॥ १२५ ॥



ऋषिस्तुति ॥ राग बिलावल ॥

हरि हरि हरि सुमिरहु सब कोई। बिनु हरि सुमिरन मुक्ति न होई ॥ श्रीशुक व्यास कह्यो यह गाई। सोई अब कहौं सुनो चितलाई ॥ सूरज गहन पर्व हरि जान। कुरुक्षेत्र मे आए न्हान ॥ तहाँ ऋषि हरि दरशन हित आये। हरि आगे होइ लेन सिधाये ॥ आसन दे पूजा हितकरी। हाथ जोरि विनती उच्चरी ॥ दरश तुम्हारे देवन दुर्लभ। हमको भयो सो अतिही सुर्लभ ॥ यों कहि पुनि लोगन समुझायो। जैसे वेद पुराणन गायो ॥ हरिजी को पूजै हरिजान। ताको होइ तुरत कल्यान ॥ गुरुपूजा बहुविधि सों कीजै। तीरथ जाइ दान बहु दीजै ॥ यह सब किये होइ फल जोइ। संत संग सों छिन में होइ ॥ यह सुनिकै ऋषि रहे लजाइ। पुनि हरि से बोले या भाइ ॥ तुम सबके गुरु सबके स्वामी। तुम सबहिन के अंतर्यामी ॥ तुम्हैं वेद ब्राह्मणहि बखानत। ताते हमरी अस्तुति ठानत ॥ हम सेवक तुम जगत अधार। नमो नमो तुम्हैं बारंबार ॥ तुम परब्रह्म जगत करतारा। नरतनुधर्यौ हरन भूभारा ॥ सुरपूजा औ तीर्थ बतावत। लोगन के मति को भरमावत ॥ तुम रूपहि यहि भाँति छिपायो। काठ माँह ज्यों अग्नि दुरायो ॥ वसुदेव तुमको जानत नाहीं। और लोग बपुरे किन माही ॥ कोउ न मानत कोउ न

जानत। कोऊ शत्रु मित्र करि मानत ॥ सर्व अशक्ति तुम सर्व अधार। तुम्हैं भजै सो उतरै पार॥ जैसे नींद नाहिं कोइ होय। बहु विधि सपनो पावै सोय॥ पै तेहि वहाँ न कछू सम्हार। कहि देखत को देखनहार॥ त्यों जिय रहै विषैरस होइ। तेहिके शुद्धि बुद्धि नहिं कोइ॥ जापर कृपा तुम्हारी होइ। रूप तुम्हारो जानै सोइ॥ घट घट माँह तिहारो बास। सर्व ठौर ज्यों दीप प्रकास॥ बिधि तुमको जानै जोइ। भक्तिरु ज्ञानी कहिये सोइ॥ नाथ कृपा अब हम पर कीजै। भक्ति आपनी हमको दीजै॥ प्रेम भक्ति बिन कृपा न होइ। सर्व शास्त्र में देखे जोइ॥ तपसी तुमको तपकरि पावै। सुनि भागवत गृही गुण गावै॥ कर्मयोग करि सेवत कोई। ज्यों सेवै त्योंही गति होई॥ ऋषि यहि बिधि हरि के गुणगाइ। कह्यो होइ आज्ञा यदुराइ॥ हरि तिनको पुनि पूजा करी। कीरति सकल जगत विस्तरी॥ वेद पुराण सबनको सार। व्यास कह्यो भागवत विचार॥ बिनु हरिनाम नहीं उद्धार। वेद पुराण सबनको सार। सूर जानि यह भजो मुरार॥ १२७॥

(इसके वाद वेदो ने और नारद ऋषि ने कृष्ण की स्तुति की। सुभद्राविवाह, भस्मासुरवध और भृगुपरीक्षा के पश्चात् दशम स्कंध समाप्त होता है।)

एकादश स्कन्ध ।

(११ वें अध्याय में केवल छ पद हैं, हंसावतार का वर्णन है ।)

द्वादश स्कन्ध ।

बौद्धावतारवर्णन ॥ राग बिलावल ॥

हरि हरि हरि हरि सुमिरन करो । हरि चरणारविंद उर धरो ॥ बौद्धरूप जैसे हरि धार्यो । अदिति सुतन को कारज सार्यो ॥ कहौं सो कथा सुनो चित धार । कहै सुनै सो तरै भवपार ॥ असुर एक समय शुक्र पै जाइ । कह्यो सुरन जीतैं केहि भाइ ॥ शुक्र कह्यो तुम जग विस्तरो । करिकै यज्ञ सुरन सों लरो ॥ याही बिधि तुमरी जय होइ । या बिनु और उपाय न कोइ ॥ असुर शुक्र की आज्ञा पाइ । लागे करन यज्ञ बहु भाइ ॥ तब सुर सब हरि जू पै जाइ । कह्यो वृत्तांत सकल सिर नाइ ॥ हरि जू तिनको दुःखित देख । कियो तुरत सेवरि को भेष ॥ असुरन पास बहुरि चलि गए । तिनसों वचन ऐसी विधि कए ॥ यज्ञ माहिं तुम पशुन यों मारत । दया नहीं आवत संहारत ॥ अपनो सो जीव सबनको जानि । कीजै नहिं जीवन की हानि ॥ दया धर्म पालै जो कोइ । मेरी मति ताकी जय होइ ॥ यह सुन असुरन यज्ञ त्यागि । दया धर्म मारग अनुरागि ॥ या विधि भयो बुद्ध अवतार । सूर कह्यो भागवत अनुसार ॥ २ ॥

(भविष्य कल्की अवतार, परीक्षित का मोक्ष और जनमेजयकथा के पश्चात् द्वादश स्कन्ध समाप्त होता है ।)

॥ इति संक्षिप्त सूरसागर ॥

परिशिष्ट

दशम स्कन्ध पूर्वार्ध में सूरदास ने नेत्रों की प्रीति गाई है। उसकी छाया पर भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने 'चन्द्रावली' नाटक में कुछ कविता की है। उदाहरणार्थ :—

लचौहीं चितवनि औरहि होति।
दुरत न लाख दुराओ कोऊ प्रेम झलक की जोति॥
घूँघट में नहिं थिरत तनिकहूँ अति ललचौंही बानि।
छिपत न कैसहुँ प्रीति निगोड़ी अन्त जात सब जानि॥

सखी ये नैना बहुत बुरे।
तब सो भये पराये, हरि सों जब सों जाइ जुरे॥
मोहन के रस बस ह्वै डोलत तलफत तनिक दुरे।
मेरी सीख प्रीति सब छाड़ी ऐसे ये निगुरे॥
जग खीझयौ बरज्यौ पै ये नहिं हठ सों तनिक मुरे।
अमृत भरे देखत कमलन से विष के बुते छुरे॥

होत सखि ये उलझौंहैं नैन।
उरझि परत सुरझ्यो नहिं जानत सोचत समुझत हैं न
कोऊ नाहिं बरजै जो इनको बनत मत्त जिमि गैन।
कहा कहौं इन बैरिन पाछे होत लैन के दैन॥

नैना वह छबि नाहिं न भूले।
दया भरी चहुँ दिसि की चितवनि नैन कमल दल फूले॥
वह आवनि वह हँसनि छबीली वह मुसकनि चित चोरैं।
वह बतरानि मुरनि हरि की वह वह देखन चहुँ कोरैं॥
वह धीरी गति कमल फिरावन कर लै गायन पाछे।
वह बीरी मुख बेनु बजावनि पीत पिछौरी काछे॥
परबस भये फिरत हैं नैना इक छन टरत न टारे।
हरिछबि मुख ऐसी छबि निरखत तन मन धन सब हारे॥ इत्यादि

॥ इति ॥